स्वातंत्र्य-सेतु

(Hindi Translation of the book 'The Bridge at Andau'
By James A. Michener)

मूल-लेखक
जेम्स ए. मिचनर

अनुवादक
विद्याभूषण 'श्रीरश्मि'

पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई-१

मूल्य ७५ नये पैसे

अर्पित

अल्बर्ट एर्सकाइन को

सूची

	आमुख	५
१.	युवा जोसेफ टोथ	७
२.	बुद्धिवादी भी क्रान्ति-पथ पर	२३
३.	किलियन बैरक में	४३
४.	क्षणिक स्वप्न	६०
५.	रूसी आतंक	८४
६.	ए. वी. ओ. का आदमी	१०९
७.	सीपेल का आदमी	१६२
८.	पेटोफी की एक कविता	१८३
९.	ऐंडाऊ का पुल	२०९
१०.	रूसी पराजय	२५५
११.	क्या यह सब सच हो सकता था?	२८२

आमुख

४ नवम्बर, १९५६ का वह उषाकाल था, जब रूसी कम्यूनिज्म ने अपन वास्तविक स्वरूप संसार के समक्ष प्रस्तुत किया। जिस भीषण क्रूरता और बर्बरत के साथ उसने अपने खौफनाक टैंकों का प्रयोग अरक्षित लोगों के विरुद्ध किया, उसकी मिसाल हाल के इतिहास में नहीं मिलेगी। कम्यूनिज्म के आतंक से बचने का प्रयास करनेवाले निर्दोष व्यक्तियों को उसने बड़ी निर्दयता से विनष्ट कर दिया।

एक नगर, जिसका एकमात्र अपराध यह था कि उसने एक भव्य जीवन-यापन की कामना की थी, गोलियों से भून कर क्षत-विक्षत कर डाला गया। माने हुए हंगेरियन कम्यूनिस्टों को, जो यथार्थ रूसी लीक से किंचित् हट गये थे, निर्दयतापूर्वक गोलियों का निशाना बना दिया गया और घर-घर में ढूँढ़कर उन्हें पकड़ा गया। यहाँ तक कि मजदूरों की भी, जिन्हें कम्यूनिज्म का आधार माना जाता है, जानवरों की तरह धर-पकड़ की गयी और मालगाड़ी के डिब्बों में भर-भर कर उन्हें रूस भेज दिया गया। एक अनुगामी राष्ट्र को, जिसने रूसी शासन के औचित्य को चुनौती देने का साहस किया, मिटा दिया गया।

हंगेरी में रूसियों ने जो-कुछ किया, उसे देखने, एक रमणीक नगर का उनके द्वारा विनाश किये जाने और अपने साथी कम्यूनिस्टों के प्रति उन्होंने जो बर्ताव किया, उस पर दृष्टिपात करने के बाद, अब संसार को इस बारे में तनिक भी संशय नहीं रहना चाहिए कि रूस के इरादे क्या हैं। हंगेरी ने रूस के भयंकर मिथ्या स्वरूप का पर्दाफाश कर दिया है।

हंगेरी में, रूस ने दिखाया कि उसका कार्यक्रम बड़ा स्पष्ट और सीधा-सा है। पहले अपने लक्ष्य-राष्ट्र में प्रवेश करना (जैसा कि उसने बल्गेरिया और रुमानिया में किया); पुलिस-व्यवस्था पर शीघ्रातिशीघ्र कब्जा करना (जैसा कि उसने जेकोस्लोवाकिया में किया); एक ऐसा आतंक फैलाना, जिसमें बुद्धिवादी और श्रमिक नेतृत्व समाप्त हो जाये (जैसा कि उसने लताविया और एस्टोनिया में किया); उपद्रवी लोगों को साइबेरिया भेजना (जैसा कि उसने लिथ्वानिया और पोलैण्ड में किया); और इतने पर भी यदि स्वतंत्रता की भावना का लेशमात्र भी

संकेत दिखायी पड़े, तो सम्पूर्ण राष्ट्र को विनष्ट कर देना—यही उसकी नीति है। रूसी योजना की यह अन्तिम कार्रवाई हंगेरी में की गयी।

इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए यह कल्पना भी दुष्कर है कि, इटली, या फ्रांस या अमेरिका के मूलनिवासी ऐसे कम्यूनिस्ट भी हैं, जिन्हें यह अंधविश्वास है कि यदि वे रूसी धुरी में शामिल हो जायेंगे, तो उनका भविष्य कुछ दूसरा हो जायेगा। वैसी स्थिति में, देश के किसी निराश कम्यूनिस्ट-गिरोह के प्रथम निमंत्रण पर ही रूसी टैंक देश के अन्दर प्रविष्ट होंगे, राजधानी को विनष्ट कर देंगे, नागरिकों को प्रताड़ित करेंगे और प्रथम कम्यूनिस्ट-शासन की स्थापना करनेवाले स्थानीय कम्यूनिस्ट नेताओं में से अधिकांश को मध्य-एशिया के गुलाम श्रमिक-शिविरों में भेज देंगे।

इस पुस्तक में मैं एक ऐसे महान् आतंक की गाथा प्रस्तुत करना चाहता हूँ, जो मनुष्य को स्तब्ध कर देगा। मुझे यहाँ मानव-मस्तिष्क में विद्रोह भर देनेवाली एक योजनाबद्ध पाशविकता का विवरण प्रस्तुत करना है; लेकिन मैं इसे केवल इस उद्देश्य से प्रेरित होकर प्रस्तुत कर रहा हूँ कि, मेरे साथ-साथ सम्पूर्ण स्वतंत्र जगत् के लोग भी यह बात समझ लें कि उस राष्ट्र या समुदाय के लिए कहीं कोई आशा की सम्भावना नहीं है, जो अपने को अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म की धुरी में डालना चाहता है। इसका केवल एक नतीजा निकलेगा—आतंक और स्वतंत्रता का सम्पूर्ण अपहरण।

मैं यहाँ उन हजारों हंगेरियनों की कहानी से भी आपको परिचित कराना चाहता हूँ, जिन्होंने आतंक से ऊब कर अपनी जन्मभूमि त्याग दी और अन्यत्र जाकर शरण ली। विशाल पैमाने पर उनके आस्ट्रिया-आगमन को लेकर ही इस पुस्तक के मूल अँग्रेजी-संस्करण का नामकरण किया गया था, 'दि ब्रिज् ऐट् ऐंडाऊ' अर्थात् 'ऐंडाऊ का पुल'—क्योंकि उसी मामूली पुल से होकर उनमें से अधिकांश लोगों ने पलायन किया था और स्वतंत्रता के वातावरण में साँस ली थी।

रूसी टैंकों ने बुडापेस्ट को विनष्ट कर दिया, यह तो एक बड़ी दुःखदायी बात है ही, लेकिन इससे भी बड़ी दुःखदायी घटना पहले ही घट चुकी थी—मानवीय सौजन्य का विनाश। आगे के पृष्ठों में, हंगेरी के लोग—जिनमें से अनेक कम्यूनिस्ट हैं—यह बतलायेंगे कि रूसी कम्यूनिज्म का वास्तविक अर्थ क्या है?

—जेम्स ए. मिचनर

१. युवा जोसेफ थोट

मंगलवार, २३ अक्तूबर १९५६, का दिन शायद दुनिया न भूल सकेगी। संध्या हुई और हंगेरी की राजधानी बुडापेस्ट के कोबनाई स्ट्रीट पर स्थित लोकोमोटिव (एंजिन) कारखाने में एक अठारह-वर्षीय युवक जोसेफ टोथ अपना काम बंद करके फोरमैन के कार्यालय में पहुँचा।

फोरमैन ने, उसे देखते ही कुछ धमकी के स्वर में कहा—"देखो, तुम 'कम्यूनिस्ट-अध्ययन-संघ' की बैठकों में और अधिक भाग लिया करो।"

युवक में जवानी का जोश था। उसकी इच्छा हुई कि वह फोरमैन को मुँहतोड़ जवाब दे; किन्तु फोरमैन की कठोर दृष्टि देखकर वह रुक गया और उस झिड़की को चुपचाप बर्दाश्त कर, धीरे-धीरे कार्यालय के बाहर आ गया। वह सोचता था—"मैं रोज दस घंटे काम करता हूँ, फिर भी भर पेट खाना नहीं पाता, तब काम से छुट्टी पाने पर कम्यूनिस्ट-बैठकों में भाग क्यों लूँ?"

वह युवक भूरी आँखोंवाला एक सुन्दर, गोरा-लम्बा जवान था। उसने एक बहुत मामूली पेन्ट और गंजी पहन रखी थी। गंजी में लगी चेन इतनी घटिया थी कि शायद ही उसने कभी ठीक काम दिया हो। उसके जूते भी बहुत भारी और कष्टकर थे। उन्हें पहनने से बहुत जल्दी पैरों में जलन होने लगती थी। यद्यपि उसके पास एक टोपी और एक ओवरकोट भी था, पर उस ओवरकोट से शरीर को गर्म रख सकना प्रायः असम्भव ही था। हाँ, उसके पिता के पास, रविवार एवं छुट्टियों के दिनों में पहनने के लिए, उसका एक पतला सूट अवश्य था। लगभग चार साल की नौकरी के बाद भी वह इससे अधिक कुछ नहीं जुटा सका था। उसका वेतन इतना कम था कि, मामूली भोजन, 'ट्राली' से आने-जाने का भाड़ा और अपने पिता को देने के लिए थोड़ी-सी रकम की ही व्यवस्था वह कर सकता था।

जोसेफ टोथ के माँ नहीं थी। दो वर्ष पूर्व एक रहस्यमय ढंग से उसकी मृत्यु हो गयी थी। उसकी मृत्यु परिवार के लिए न केवल एक दुःखद घटना ही साबित हुई, बल्कि उसके बाद आर्थिक कठिनाई भी बहुत अधिक बढ़ गयी। बात यों हुई कि उसकी माँ बहुत ही हँसमुख और बातूनी थी। उसे विनोद बहुत

पसन्द था। जोसेफ के होंठोंपर भी जो सदा स्वाभाविक मुस्कान खेलती रहती थी, उसका एक कारण यह था कि वह अपनी प्रफुल्ल-हृदया माँ के सान्निध्य में बहुत दिनों तक रहा था।

एक रात को, कुछ मित्रों के साथ भोजन करते समय, जोसेफ की माँ ने बातचीत के क्रम में विनोदपूर्वक कहा—"जिधर नजर डालो, उधर रूसी झण्डा ही दिखाई पड़ता है। मेरा मन तो अपना पुराना हंगेरियन झण्डा देखने को तरसता है।"

उन विश्वासी मित्रों में से ही किसी ने धोखा दिया। बुडापेस्ट में, उन दिनों, लोगों के सामने रोजी और रोटी की समस्या बहुत विकट रूप में उपस्थित थी। अतः उसने, केवल अपने क्षणिक लाभ के लिए, श्रीमती टोथ की वह बात ए. वी. एच. (अल्लाम वेदेल्मी हातोसाग—राज्य-रक्षा-संघ) के उन लोगों तक पहुँचा दी, जो साधारणतः ए. वी. ओ. (अल्लाम वेदेल्मी ओजतग—राज्य-रक्षा विशेष संघ) के नाम से पुकारे जाते थे। ए. वी. ओ. वस्तुतः ए. वी. एच. में खास चुने हुए लोगों का एक दल था। दूसरे ही दिन एक छोटा-सा ट्रक टोथ के मकान के सामने आकर खड़ा हुआ और ए. वी. ओ. के दो एजेन्ट श्रीमती टोथ को खींच कर ले गये।

इसके बाद छः महीने तक वह लापता रही और जब लौटी, तो उसके चेहरे पर दहशत का भाव स्पष्ट था। फिर भी उसने मुस्करा कर परिवारवालों को आश्वासन दिया कि ए. वी. ओ. के अधिकार में उसे किसी तरह की यातना नहीं मिली। सभी लोगों को वह यही जवाब देती कि उसके साथ किसी तरह का दुर्व्यवहार नहीं हुआ। लेकिन जब वह अपने बंदी-जीवन के कठिन परिश्रम, भूख के कष्ट तथा यातनाओं के कारण बीमार पड़ी और जब उसने यह समझ लिया कि उसकी मृत्यु निश्चित है, तो उसने बातों-ही-बातों में जोसेफ को कुछ ऐसे संकेत दिये, जिनसे उसे इस बात का कुछ-कुछ अन्दाज मिल गया कि उसकी माँ के साथ कैसा व्यवहार हुआ था। ये संकेत देते समय भी श्रीमती टोथ काफी सतर्क थी। उसे शंका थी कि इस समय मित्रों में से कोई खुफिया उपस्थित न हो, जो परिवार को किसी तरह की आपदा में फँसा दे।

एक दिन उसने जोसेफ को बतलाया कि उसे प्रति दिन घंटों एक पैर पर खड़ी रहना पड़ता था। उसने कहा तो केवल इतना ही, पर यह कहते समय उसके चेहरे पर जैसा आतंक का भाव छा गया, वह कभी भुलाया नहीं जा सकता था। इसके बाद शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गयी थी। जोसेफ ने अपनी

माँ की बात सुनकर आजमाना चाहा कि एक पैर पर खड़े होने में कितनी पीड़ा होती है? उसने केवल १५ मिनट ही खड़े रहने की कोशिश की, पर कुछ ही देर में पीड़ा इतनी असह्य हो उठी कि उसने अपना विचार त्याग दिया और सोचने लगा कि भारी शरीरवाली उसकी माँ कैसे घंटों इस प्रकार खड़ी रही होगी?

फोरमैन के कार्यालय से निकलने के बाद उसके मन में विचारों का घोर द्वंद्व चल रहा था, पर उन्हें उसने अपने तक ही सीमित रखा; क्योंकि किसीको मालूम न था कि कारखाने में कौन व्यक्ति ए. वी. ओ. का था। पर इतना वह निश्चित रूप से जानता था कि ए. वी. ओ. के आदमी वहाँ हैं अवश्य; क्योंकि एक बार एक मजदूर ने जब कहा था—"उँह, कितना वाहियात औजार है! अवश्य ही रूसी होगा।" तब उसे बहुत डाँटा-फटकारा गया था और बुरी तरह पीटने के बाद काम पर वापस भेजा गया था।

बुडापेस्ट से दूर, अपनी माँ के गाँव के एक निवासी का हाल भी जोसेफ जानता था, जो कर न चुका सका था। दुर्भाग्यवश, एक दिन उसने अपने मित्रों को बतला दिया कि उसका एक भाई अमेरिका में है। यह खबर किसी तरह ए. वी. ओ. के पास पहुँच गयी। फलतः उसे आदेश मिला कि वह एक सप्ताह के अन्दर अमेरिका से जरूरी रकम मँगा कर, कर चुकता कर दे। और, जब वह ऐसा न कर सका, तो उसे घसीट कर ले जाया गया और फिर किसी ने उसे कभी नहीं देखा। फिर भी विचित्रता यह थी कि उसके साथ क्या बीती, इस बारे में कोई कभी चर्चा तक नहीं करता; क्योंकि ए. वी. ओ. तक उसकी खबर पहुँच जाने का परिणाम बुरी तरह पिटाई होगा, यह सभी जानते थे। अतएव लोगों ने अपना मुँह बन्द रखना ही श्रेयस्कर समझा।

अपने कर्तव्यों का अच्छी तरह पालन करनेवाला व्यक्ति ए. वी. ओ. की कुदृष्टि से बचा ही रहेगा, ऐसी बात नहीं थी। लोकोमोटिव कारखाने के ही एक कर्मचारी को, जो हंगेरी पर कम्यूनिस्टों का कब्जा होने से पहले कालेज का विद्यार्थी था, दुर्भाग्यवश एक अँग्रेजी पत्रिका से लोकोमोटिव एंजिनों के बारे में एक मशीन-सम्बन्धी लेख का अनुवाद करना पड़ा। लेख का शीर्षक था—'लौह आवरण के पीछे नवीन यांत्रिक विकास-कार्य'। उस व्यक्ति ने शीर्षक का भी ज्यों-का-त्यों अनुवाद कर दिया। फलतः ए. वी. ओ. के आदमी उसे पकड़ ले गये और तीन सप्ताह तक रोक रखा। उसके साथ उन्होंने क्या व्यवहार किया, यह किसी को मालूम नहीं हुआ; क्योंकि उस

सम्बन्ध में उसने कभी किसी से कोई चर्चा नहीं की। ए. वी. ओ. का कहना था—"उसने शब्द-व्यवहार में भयानक सैद्धान्तिक भूल की थी। लौह आवरण अथवा किसी प्रकार के परदे या छिपाव नाम की कहीं कोई चीज नहीं है, यह सर्वविदित है; फिर भी उसने पूँजीवादियों के प्रचार को ज्यों-का-त्यों, एक मूर्ख की तरह, ग्रहण कर लिया। इससे स्पष्ट है कि उसके दिमाग में सम्भवतः कुछ भ्रष्टता समा गयी थी। अतः उसके उपचार का एकमात्र उपाय यही था कि उसे तीन सप्ताह के लिए ए. वी. ओ. के सुपुर्द कर दिया जाता।" लेकिन वस्तुतः उस अनुवादक के अतिरिक्त और कोई नहीं जान सका कि वह उपचार किस ढंग का था? यह सम्भव भी नहीं था, क्योंकि इस रहस्य की ओर संकेत करनेवाले का लापता कर दिया जाना प्रायः निश्चित था।

ए. वी. ओ. के भय के मारे जोसेफ टोथ अपनी बातचीत, व्यवहार और धारणाओं के बारे में सदैव सतर्क रहता। उसे इस बात का पूरा विश्वास था कि ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ ए. वी. ओ. के आदमी न हों, इसलिए उसने चुपचाप परिस्थितियों के आगे आत्म-समर्पण कर दिया था। उसे यह मालूम था कि उस कारखाने में बननेवाले अधिकांश एंजिन या तो रूस भेजे जाते हैं अथवा मिस्र-जैसे देशों को; पर यह बात भी उसने किसी से नहीं कही—यहाँ तक कि उस व्यक्ति से भी नहीं, जो एंजिनों पर पते लिखा करता था; क्योंकि हो सकता था कि वह भी ए. वी. ओ. से सम्बन्धित हो।

काम से छूटने के बाद जोसेफ सीधे उस स्थान पर गया, जहाँ उसका कोट टँगा था। उसने उसे पहन लिया। बुडापेस्ट में शीत-ऋतु का आगमन हो चुका था और थोड़ी-थोड़ी ठंड पड़ने लगी थी। कोट पहन कर वह कारखाने के बाहर हो गया और उस 'ट्राली' को पकड़ने के लिए बढ़ा जो उसे शहर के दूसरे छोर पर स्थित उसके पिता के निवास-स्थान तक ले जाती थी। उसने विचार किया कि 'कम्यूनिस्ट-अध्ययन-संघ' की बैठक में कल जाऊँगा। उसने अपने क्रोध और द्वेष को अपने हृदय में दबा रखा। उसका अनुमान था कि वह फोरमैन उन सबके बीच ए. वी. ओ. का खुफिया था।

रात की उस सर्द तेज हवा में वह ज्यों ही कारखाने से बाहर निकला, उसकी नजर कुछ नवजवानों के एक दल पर पड़ी, जो चिल्ला रहा था—"हंगेरियन भाइयो, साथ दो!" दल के सभी लोग लगभग २५ वर्ष से कम उम्र के थे। जोसेफ कुछ समझ तो न सका कि वे लोग क्या करनेवाले हैं, पर सहसा उसके मन में भी एक प्रेरणा हुई और वह बिना कुछ सोचे-समझे उस दल में जाकर

मिल गया। वह भी दूसरे लोगों के साथ कारखाने से निकलनेवाले मजदूरों को लक्ष्य कर चिल्लाने लगा—"हंगेरियन भाइयो, साथ दो!" और, उसी की तरह, बिना कुछ सोचे समझे, दूसरे नवजवान भी उस दल में आकर मिल गये।

इसके बाद उन्हें वह बात बतलायी गयी, जिसकी वे बड़ी देर से उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे और जो भाग्य बदलनेवाली, परम आनंददायिनी तथा आशा से पूर्ण थी। एक छात्र ने घोषणा की—"हमें हंगेरी से ए. वी. ओ. को निकाल बाहर करना है!" यह बात जोसेफ टोथ की समझ में सहज ही आ गयी।

लोगों में उत्साह का एक प्रबल वेग आया और शीघ्र ही वे एक पुलिस-थाने में पहुँच गये। अचानक होनेवाले इस हमले से वहाँ के अफसर बेतरह घबड़ा गये, फिर भी उन्होंने शान्ति-व्यवस्था कायम रखने का प्रयत्न किया। इसी बीच कुछ नवजवानों ने ललकारा—"अपनी बन्दूकें हमें दे दो!" टोथ भी, न-जाने कैसे, एक लाल चेहरेवाले अफसर से कड़कती आवाज में बोल पड़ा—"अपनी बन्दूक मुझे दो!" उसे स्वयं अपने इस साहस पर आश्चर्य हो रहा था।

"किस लिए दे दूँ?"—अफसर ने प्रश्न किया।

टोथ के पास इसका कोई जवाब न था। वह बगलें झाँकने लगा। तभी एक छात्र ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया—"हम ए. वी. ओ. का खात्मा करेंगे।"

यह सुनते ही पुलिस-अफसर की बोलती बन्द हो गयी और जोसेफ ने झपट कर उसकी पिस्तौल छीन ली। पर तुरत ही एक दूसरे अधिक सयाने व्यक्ति ने वह पिस्तौल उसके हाथ से अपने उपयोग के लिए ले ली। इसके बाद, थोड़ी ही देर में, पुलिस का सम्पूर्ण शस्त्रागार नवयुवकों के कब्जे में आ गया और जब वे वहाँ से सड़क की ओर मुड़े, तो उनमें से कई साहसी जवान शस्त्रों से लैस थे।

उसी समय हंगेरियन सैनिकों से भरा एक 'टैंक', जिसका नेतृत्व ए. वी. ओ. के दो आदमी कर रहे थे, उस सँकरी-सी सड़क पर आ पहुँचा और जोरों की घड़घड़ाहट के साथ उसी दिशा में बढ़ा, जिधर टोथ खड़ा था। टैंक टी-३४ किस्मवाला पुराने ढंग का था। उसके चलते समय जोरों से आवाज होती थी। टैंक के ऊपर एक ऊँची बुरजी (टरेट) थी, जो चारों ओर घूम सकती थी। साथ ही, उस टैंक के अगले हिस्से में मशीनगन लगाने के लिए छेद भी बने थे। पिस्तौल-धारी उन जवानों के मुकाबले में वह, निस्संदेह, एक भयानक चीज थी।

जब टैंक उन जवानों के करीब पहुँचा, तो हर कोई एक क्षण के लिए भय से किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। टैंक के सैनिकों का विचार नवजवानों के उस झुंड पर गोली चलाने का नहीं था। उधर वे नवजवान भी अपने उन छोटे हथियारों से टैंक पर हमला करने में डर रहे थे। पर तभी, शायद ए. वी. ओ. के अफसर ने आदेश दिया और टैंक की मशीनगनों से गोलियों की वर्षा होने लगी। कई नवजवान सड़क पर लोट गये।

लड़कों और नवजवानों में बड़ी उत्तेजना फैली और भीषण गर्जना करते हुए वे टैंक पर टूट पड़े। जिन लोगों के पास पिस्तौलें थीं वे टैंक की बुरजी पर गोली चलाने लगे और जिनके पास कुछ नहीं था, वे टैंक के पुरजों पर पत्थरों, डंडों और बोतलों से प्रहार करने लगे। इसी बीच दो साहसी लड़के, जिनकी उम्र १६ वर्ष से कम ही होगी, मशीनगन और बन्दूकों के नीचे से झुककर टैंक के पास पहुँच गये और उसके पहियों से जुड़े हुए पुरजों में ईंट-पत्थर भरने लगे। अन्त में, वे तथा उनके दूसरे साथी अपने प्रयत्नों में सफल हुए। टैंक तो रुक गया, पर उसकी मशीनगनें फिर भी गोलियाँ बरसाती रहीं।

जोसेफ के पास खड़े एक लड़के ने अकस्मात् अपने एक घायल साथी के हाथ से छोटी मशीनगन ले ली और पलक मारते ही वह टैंक की बुरजी पर गोली चलाने लगा। उस क्षण उसके हाथों में असाधारण शक्ति आ गयी थी। सब ओर से उस कछुए की पीठ-सदृश टैंक पर गोलियाँ बरस तो रही थीं, पर वे वस्तुतः उससे टकरा कर फिर भीड़ में ही लौट आती थीं, जिनसे कुछ लोग तो मर जाते थे और कुछ घायल हो जाते थे। इससे उन्हें यह कहने का अवसर तो मिल ही गया कि ए. वी. ओ. के आदमियों ने इतने लोगों को मार दिया।

जिस प्रकार एक घायल गोबरैला हमलावर चीटियों से संघर्ष करता है, उसी प्रकार टैंक अपने आक्रमणकारियों पर गोले बरसा रहा था। पर उसका कोई खास असर उन नवजवानों पर नहीं दिखाई दे रहा था। वे पूर्ववत्, अपने पूरे जोश के साथ, मुकाबला कर रहे थे। एक बहादुर मजदूर हाथ में पिस्तौल लेकर किसी तरह टैंक के ऊपर लगी बुरजी के पास पहुँच गया और सुरक्षा-द्वारों में से एक को खोल कर अन्दर की ओर गोली चलाने लगा। संकट-काल में शीघ्र निकल भागने के उद्देश्य से उन सुरक्षा-द्वारों को सैनिकों ने शायद दृढ़ता से बन्द नहीं किया था। उस बहादुर को वैसा करते देख, तुरत ही एक दूसरा व्यक्ति भी मशीनगन के साथ वहाँ पहुँच गया और टैंक के सैनिकों पर गोली—वर्षा करने लगा। फलतः कुछ ही देर में टैंक के अन्दर पूर्ण शान्ति छा गयी।

जोसेफ टोथ ने, वस्तुतः यह न जानते हुए भी कि उसने कितना बड़ा साहसिक काम हाथ में लिया था, इस प्रकार एक टैंक को रोकने में सहायता पहुँचायी। अब टैंक सड़क के बीच टूटा-फूटा पड़ा था। इस सफलता के बाद उत्तेजित तथा उत्साह से ओतप्रोत भीड़ किसी अन्य बड़े साहसिक कार्य के लिए आगे बढ़ी। टोथ भी साथ ही बढ़ गया। केवल कुछ लोग, जिन्हें मशीनों से दिलचस्पी थी, यह देखने के लिए रुक गये कि वे मरम्मत करके टैंक को काम के योग्य बना सकेंगे या नहीं ? सबसे पहले उन्होंने टैंक में पड़े शवों को निकाल-निकाल कर सड़क पर फेंक दिया। वहाँ पास में ही रहनेवाली एक महिला ने उन शवों में से एक को पहचान लिया और बोली—"यह तो ए. वी. ओ. का आदमी है।" यह सुनते ही मरम्मत के लिए टैंक की जाँच करनेवाले लोगों ने घृणापूर्वक उस शव को देखा, किन्तु भयवश उसके बारे में वे कुछ बोले नहीं; क्योंकि उनके मन में अब भी यह सन्देह था कि कहीं कोई खुफिया उनकी बातें सुन न ले।

रेडियो-बुडापेस्ट हंगेरी में कम्यूनिस्ट-शासन का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र था। वह म्यूजियम पार्क के निकट, ब्राडी सैन्डर स्ट्रीट पर, परस्पर मिली हुई अनेक इमारतों के बीच स्थित था। यहाँ से नित्य ही वे प्रचारात्मक बातें, जिन पर कम्यूनिज्म जिन्दा है, प्रसारित की जाती थीं। अतएव बुडापेस्ट की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण इमारतों में इसका विशेष स्थान था। कम्यूनिस्ट मंत्रि-परिषद् की प्रत्यक्ष देखरेख में इसकी व्यवस्था होती थी। यहाँ १२०० से अधिक कलाकार और कारीगर काम करते थे। पर इनमें से हर एक के लिए यह जरूरी था कि या तो वे कम्यूनिस्ट-पार्टी के सदस्य हों अथवा किसी ऐसे संघ से उनका सम्बन्ध हो, जहाँ पार्टी की भावी सदस्यता के लिए नवजवानों को शिक्षा दी जाती हो।

चूँकि हंगेरी के नियंत्रण में रेडियो-बुडापेस्ट का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था, ए. वी. ओ. के अत्यधिक विश्वासी ८० व्यक्ति सदैव मशीनगनों के साथ वहाँ पहरा देते थे, जिन्हें उस क्षेत्र के लोग, मजाक में, 'रूसी गिटार' के नाम से पुकारते थे। उन इमारतों में असंख्य लिखित अनुमतियों और सुरक्षा-पत्रों के बिना प्रवेश करना प्रायः असंभव ही था। वहाँ ए. वी. ओ. के उन कट्टर आदमियों का पहरा तो था ही, साथ ही सुरक्षा के लिए, दो भीमकाय लकड़ी के फाटक भी लगे थे, जिनमें बलूत की कड़ियाँ और काँटे जड़े थे। हंगेरी के कम्यूनिस्ट नेताओं ने बहुत पहले से ही इस बात की पूरी व्यवस्था

कर रखी थी कि कभी कोई उत्तेजित भीड़ रेडियो-बुडापेस्ट पर अधिकार जमा सकने में समर्थ न हो।

२३ अक्तूबर की गोधूलि-वेला में, नगर-भर में यह खबर फैल गयी कि कुछ कालेज-छात्रों ने आन्दोलन आरम्भ कर दिया है। इस खबर से विचलित कई नवजवान रेडियो-बुडापेस्ट के सामने, सड़क पर, अपने-आप इकट्ठे होने लगे। उन्होंने देखा कि ए. वी. ओ. के ५० सैनिक महत्त्वपूर्ण केन्द्रों पर डटे हैं। उन्होंने दोनों बड़े फाटकों को खोल रखा था, जिससे ए. वी. ओ. द्वारा भेजे हुए नये जवान और शस्त्रास्त्र आसानी से अन्दर आ सकें। अब उस इमारत पर अधिकार कर सकना यथार्थतः पहले से दुगुना कठिन था।

रात के ९ बज गये, फिर भी लोगों की भीड़ वहाँ चहलकदमी करती ही रही। तभी विश्वविद्यालय में पढ़नेवाले कुछ छात्र बड़े फाटकों के पास पहुँचे और बोले कि वे सरकारी नीति में कुछ परिवर्तन चाहते हैं। अतः उस सम्बन्ध में उन्हें हंगेरी की जनता के नाम रेडियो पर बोलने दिया जाये। वे नवजवान जीवन-निर्वाह के लिए कुछ और सुविधाएँ पाना चाहते थे। पहले तो ए. वी. ओ. के आदमियों ने उनकी हँसी उड़ायी, पर तुरत ही स्थिति की गम्भीरता को समझ कर उन्होंने, किंचित् विनम्र हो, यह प्रस्ताव रखा—"हम आपको 'ब्राडकास्ट' तो नहीं करने दे सकते; पर ऐसा हो सकता है कि आपकी शिकायतों को फीते (टेप) पर रिकार्ड कर लें और बाद में रेडियो से प्रसारित कर दें।"

किन्तु छात्र उनकी इस चाल में आनेवाले नहीं थे। अतः वे इमारत के अन्दर प्रवेश पाने की चेष्टा करने लगे। पर तब तक ए. वी. ओ. के आदमियों ने फाटकों को बन्द कर दिया।

इस पराजय से लोग अधिक भड़क उठे और वे छात्रों के साथ मिलकर फाटकों को धक्के देकर खोलने का प्रयत्न करने लगे। ए. वी. ओ. के आदमी भी ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए पूर्णतः तैयार थे। उन्होंने अविलम्ब भीड़ पर अश्रु-गैस छोड़ा। धुएँ से व्याकुल होकर भीड़ पीछे हटती हुई म्यूजियम पार्क में चली गयी। वहाँ लोगों को साफ हवा मिली।

लेकिन उस रात बुडापेस्ट के लोगों में स्वतंत्रता की भावना इतनी प्रबल हो चुकी थी कि कुछ ही देर बाद वे पुनः वापस लौट आये और दरवाजे को धक्के देकर खोलने का प्रयत्न करने लगे। पर अश्रु-गैस का प्रयोग करके उन्हें फिर पीछे हटा दिया गया। साथ ही, इस बार ए. वी. ओ. वालों ने अपने एक नये यंत्र का प्रयोग किया। छत के दोनों कोनों से यंत्रों-द्वारा एक प्रखर प्रकाश भीड़ पर

छोड़ा गया, जिससे ए. वी. ओ. के आदमी उपद्रवकारियों को देखें और पहचान सकें।

भीड़ के लोगों ने ए. वी. ओ. की इस चाल का तीव्र प्रतिवाद किया और वे उन यंत्रों की ओर ईंट-पत्थर फेंकने लगे। यह बात ए. वी. ओ. के आदमियों के लिए असह्य थी। अतः उन्होंने भीड़ पर गोली-वर्षा आरम्भ कर दी।

यह देख, स्त्रियाँ चिल्लायीं—"वे हमारी हत्या कर रहे हैं!"

आगे खड़े छात्र चिल्लाये—"वे पागल कुत्ते हैं! उनका सामना करो।"

इमारत की दीवारों के पीछे इत्मीनान से सुरक्षित बैठे ए. वी. ओ. के आदमी गोली चलाते रहे—लोग हताहत होकर गिरते रहे। यह दृश्य देख, हंगेरियन सेना के एक अफसर ने बड़ा ही कठोर निश्चय किया। उसने हंगेरी की, खास कर कम्यूनिस्ट सरकार की, सभी शत्रुओं से रक्षा करने के लिए शपथ ली थी; पर आज रेडियो-बुडापेस्ट पर हमला करनेवाले शत्रु न तो विदेशी थे और न पूँजीपति कुत्ते, जिनके बारे में उसे सावधान किया गया था। वे तो उसके प्यारे भाई, बच्चे और महिलाएँ थीं। कुछ क्षण तक तो वह, हतप्रभ-सा, लोगों को हताहत होते देखता रहा और फिर वह अपने निर्णय के अनुसार कार्य करने पर उद्यत हो गया।

वह उछल कर एक ट्रक पर चढ़ गया और हत्यारों को सम्बोधित कर चिल्लाया—"अरे जानवरो! किन लोगों को मार रहे हो तुम? पागल तो नहीं हो गये?"

उन यंत्रों के तीव्र प्रकाश में खड़े होकर चिल्लानेवाले उस सैनिक को देखकर लोगों में एक अजीब भयमिश्रित नीरवता छा गयी। वस्तुतः उसने अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी। वह अब भी चिल्ला रहा था—"ओ जानवरो! गोली चलाना बन्द करो!"

तभी उस अंधकारपूर्ण इमारत के किसी भाग से मशीनगन चली और सैनिक अधिकारी एक तीव्र 'आह' के साथ गिर पड़ा। स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए अपनी जान देनेवाला वह कम्यूनिस्ट हंगेरी का पहला सैनिक था।

उसके गिरते ही भीड़ बुरी तरह उत्तेजित होकर चिल्लाने लगी और जो लोग रेडियो-स्टेशन के निकट थे, वे फाटकों और इमारत की दीवारों को पागलों की तरह पीटने लगे। लेकिन विवेकशील नेताओं ने अनुभव किया कि जब तक शस्त्रास्त्र उपलब्ध नहीं होंगे, तब तक भीड़ के लोग (उन्हें 'क्रान्तिकारी' कहना उपयुक्त न होगा।) अपने लक्ष्य को नहीं पा सकेंगे।

इसी समय बुडापेस्ट के इस युद्ध में, बल्कि आधुनिक विश्व के इतिहास में, एक चमत्कारपूर्ण घटना घटी। यह एक ऐसी घटना थी, जिसकी कल्पना कालेज-छात्र तथा बुद्धिवादी लोग कभी सपने में भी नहीं कर सकते थे। नगर के दक्षिणी भाग से आनेवाले ट्रकों का ताँता-सा बँध गया और उनसे मजदूर उतरने लगे। वे लोग अपनी साधारण काम करने की पोशाक में ही थे।

उन मजदूरों के आने से वहाँ उपस्थित जनता में जो आश्चर्य और आनन्द की भावना फैली, उसे समझ सकना किसी विदेशी के लिए कठिन था। वे मजदूर सीपेल के थे और उनके आने से कम्यूनिज्म के बनावटीपन का पर्दाफाश हो गया था।

"वे लोग सीपेल से आये हैं"—एक महिला बोली।

"साथ में शस्त्रास्त्र और गोले-बारूद भी लाये हैं"—एक छात्र बोल उठा।

"जरा उन्हें देखो तो"—किसी और ने कहा।

वास्तव में, उनका आगमन एक चमत्कार ही था; क्योंकि वे कम्यूनिज्म के गढ़, एक निकटवर्ती द्वीप, सीपेल से आये थे, और वह भी कम्यूनिज्म के विरुद्ध मोर्चा लेने! वे लोग उन कारखानों के मजदूर थे, जिनकी स्थापना कम्यूनिस्टों ने सबसे पहले की थी और जहाँ पिछले ११ वर्षों से किसी भी पूँजीपति का पदार्पण नहीं हुआ था। वे कम्यूनिज्म के सुदृढ़ केन्द्र से आये थे। एक समय था, जब वे लोग 'सीपेल के कम्यूनिस्ट' नाम से पुकारे जाते थे और आज वे कम्यूनिज्म से मोर्चा लेने के लिए वहाँ आ पहुँचे थे। पहुँचते ही वे लोग जल्दी-जल्दी ट्रकों से उतर कर उपयुक्त स्थानों पर मशीनगनें लगाने लगे। सीपेल के वे दृढ़संकल्प मजदूर न आते, तो वस्तुतः कुछ ठोस काम हो सकने की आशा न थी। परंतु उनके आ जाने से लोगों में यह विश्वास पैदा हो गया था कि अब तो स्वतंत्रता भी उनकी पहुँच के भीतर ही है।

आते ही उन्होंने जो पहला काम किया, उससे स्पष्ट था कि उस क्रान्ति में उनका कितना महत्त्वपूर्ण सहयोग होगा। उन्होंने एक 'ट्रक' के पिछले हिस्से में एक बड़ी-सी मशीनगन लगायी और इमारत की छत पर निशाना लगा कर बड़े इतमीनान से पूर्वी छोर पर लगे प्रकाश-यंत्र को उड़ा दिया। उनका वह वार एक प्रकार का संकेत था, जो कह रहा था कि अब सम्पूर्ण बुडापेस्ट से कम्यूनिज्म के प्रखर प्रकाश का लोप होना आरम्भ हो गया है।

अब सीपेल के वे दृढ़व्रती स्वातंत्र्य-सैनिक इमारत के पश्चिमी छोर पर लगे प्रकाश-यंत्र को गिराने के लिए निशाना ठीक करने लगे। तभी जोसेफ टोथ

वहाँ आ पहुँचा और उस भारी भीड़ में शामिल हो गया। यहाँ उसने बिल्कुल नयी बात यह देखी कि, जहाँ उसके कारखाने के साथी ए. वी. ओ. शब्द का उच्चारण करने से डरते थे, वहाँ ए. वी. ओ. के साथ वे लड़ रहे थे।

"हम ए. वी. ओ. का नाश करके ही दम लेंगे!"—भीड़ में से एक उत्तेजित प्रदर्शनकारी चिल्लाया।

तभी सीपेल के उन जवानों ने निशाना साध कर गोली चलायी और पश्चिमी ओर का प्रकाश-यंत्र भी नष्ट हो गया।

साथ ही, जोरों से यह नारा गूँज उठा—"ए. वी. ओ. मुर्दाबाद!"

इसी बीच इस बात का एक नया सबूत सामने आया कि कम्यूनिस्ट-शासन में, बुडापेस्ट के लोग किस तरह आतंकित थे। पास के रैकोजी स्ट्रीट से एक साधारण-सी सफेद 'एम्बुलेन्स' गाड़ी, जिस पर लाल 'क्रास' का निशान लगा हुआ था, रेडियो-बुडापेस्ट की ओर आती दिखाई दी। छात्रों ने पल-भर के लिए उसे रोका और प्रसन्न होकर ड्राइवर से कहा—"घायलों की सहायता के लिए आप आ गये—यह देख हमें बड़ी खुशी हुई।" और, इसके बाद भीड़ ने 'एम्बुलेन्स' के लिए रास्ता खाली कर दिया।

लेकिन जब गाड़ी उन घायलों को पार कर आगे निकलने लगी, तो छात्र अधीर हो उठे और चिल्लाये—"आप जा कहाँ रहे हैं? घायल तो यहीं पड़े हैं।"

ड्राइवर ने कुछ सकुचा कर उत्तर दिया—"क्षमा कीजियेगा, मुझे इमारत के अन्दर के घायलों को ले जाने का आदेश मिला है।"

"नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता!"—वहाँ खड़े लोगों ने विरोध किया। उन विरोध करनेवालों में जोसेफ टोथ भी था।

ड्राइवर गिड़गिड़ाया—"मुझे वहाँ जाने दीजिए। आखिर मुझे आदेश का पालन तो करना ही चाहिए।" और, उसने भीड़ के बीच से गाड़ी बढ़ा ले जाने का प्रयत्न किया। उसके इस प्रयत्न में एक व्यक्ति के पैर पर गाड़ी का पहिया चढ़ गया और वह दर्द से चीख उठा। इस पर टोथ और दूसरे कुछ लोगों ने, क्रुद्ध हो, गाड़ी का दरवाजा खोल कर, ड्राइवर को बाहर खींच लिया। पर आश्चर्य! गाड़ी में मरहम-पट्टी और दवाओं के स्थान पर शस्त्रास्त्र और गोला-बारूद भरा था, जो निश्चय ही 'ए. वी. ओ.' के लिए भेजा गया था।

यह देख एक महिला विस्मय से चीख उठी—"हे भगवान्!"

"जरा इन गोलों को तो देखो।"—टोथ अपने पीछे खड़े लोगों को संबोधित कर चिल्लाया।

एक क्षण के लिए वहाँ भयानक निस्तब्धता छा गयी, पर फिर तुरत ही कानाफूसी शुरू हो गयी—"यह ड्राइवर अवश्य ही ए. वी. ओ. का आदमी है!"

बाद में वहाँ क्या हुआ, इसका विवरण देते हुए टोथ ने बतलाया—"उसके बाद हजारों हाथ उसे पकड़ने के लिए लपक उठे। उसे इधर-उधर खींचा जाने लगा।...उसने यह सफाई देने का लाख प्रयत्न किया कि वह ए. वी. ओ. का आदमी नहीं है, पर लोग न माने। वे तो मानो उसके टुकड़े-टुकड़े कर देने के लिए व्यग्र थे।...

"अन्त में, किसी ने 'एम्बुलेन्स' से एक बन्दूक निकाल कर उसे गोली मार दी!...यह अच्छा ही हुआ।"

ए. वी. ओ. के उस आदमी की लाश को एक किनारे फेंक देने के बाद जवानों ने 'एम्बुलेन्स' से सामान उतारना शुरू किया और सारी चीजों को सीपेल के मजदूरों के हवाले कर दिया। उनके पास पहले से तो कुछ शस्त्रास्त्र थे ही, अब इन नये शस्त्रास्त्रों को पाकर वे खिल उठे और बोले—"अब हम मजे में इमारत को उड़ा सकते हैं।"

इतने में ही इमारत की ऊपरी मंजिल की खिड़कियों से ए. वी. ओ. वालों ने पुनः अपनी मशीनगनों से धुआँधार गोली-वर्षा आरम्भ कर दी—मानो सीपेल के जवानों को चेतावनी दी जा रही हो कि काम उतना आसान नहीं है। स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए सीपेल के एक व्यक्ति ने भीड़ का नेतृत्व सम्भाला और घोषणा की—"जिन लोगों के पास बन्दूकें नहीं हैं, वे पीछे हट जायें।" भीड़ पीछे हटने लगी, तभी उसने पुनः घोषणा की—"आप लोगों में से कुछ व्यक्ति रुक जायें और जगह-जगह घेरे तैयार करें।" वस्तुतः रेडियो-स्टेशन के लिए असली लड़ाई अब आरम्भ होने जा रही थी।

अकस्मात् लगभग १६ वर्ष के एक लड़के ने, जो अपनी बन्दूक को लापरवाही से घुमा रहा था, कुहनी से हल्का-सा धक्का देकर जोसेफ टोथ को अपनी ओर आकर्षित किया और जब जोसेफ ने उसकी ओर देखा, तो उसने एक अद्भुत बात कही—"मेरा खयाल है कि इस इमारत में कोई सुरंग भी गयी है।"

टोथ ने भोलेपन से उत्तर दिया—"ना, ना; ए. वी. ओ. वाले भला ऐसा करने दे सकते हैं।"

"लेकिन मेरे पिताजी ने मुझे बतलाया था कि जब जर्मन लोग यहाँ थे, तब सुरंग बनायी गयी थी। उन्होंने यह भी कहा था कि ये सभी इमारतें आपस में सुरंगों-द्वारा सम्बन्धित हैं।"

अपनी बात समाप्त करने के बाद भी वह लड़का टोथ के पास उसकी सम्मति जानने के लिए खड़ा रहा, मानो जोसेफ कोई सयाना और विश्वसनीय व्यक्ति हो। अन्ततः दोनों ने मिलकर सीपेल के एक ऐसे व्यक्ति को ढूँढ़ निकाला, जो था तो लगभग बीस साल का ही, पर अपनी दाढ़ी के कारण पूर्ण वयस्क-सा प्रतीत होता था। टोथ ने उससे झिझकते हुए कहा—"यह लड़का कहता है कि रेडियोवाली इमारत में कोई सुरंग भी जाती है।" जोसेफ ने जान-बूझ कर यह बात कुछ ऐसे अविश्वास के स्वर में कही, जिससे यदि सीपेल का आदमी इस बात पर हँस दे, तो उसे शर्मिंदा न होना पड़े।

पर वह व्यक्ति हँसा नहीं, बोला—"फिर तो देखना चाहिए।" और, वह अपने तीन अन्य साथियों को बुला लाया।

अब ये छः व्यक्ति, जो शस्त्रों से लैस थे, वस्तुस्थिति का पता लगाने के लिए चल पड़े। कुछ दूर जाने के बाद, एक अधूरे बाड़े को पार कर, वे जोजेफ बोलेवार्ड की ओर स्थित एक मकान में प्रविष्ट हुए। पहुँचते ही सीपेल-निवासी ने मकान मालिक से पूछा—"आपके तहखाने से होकर क्या कोई सुरंग गयी है?"

जवाब मिला—"हाँ, हिटलर के जमाने में बनवायी गयी थी।"

"क्या आप बता सकते हैं, सुरंग किधर जाती है?"—तुरत प्रश्न हुआ।

"ना, यह तो मुझे भी नहीं मालूम। आप खुद जाकर देख लीजिए।"

वह उन सबको लेकर तहखाने में गया और उसका दरवाजा खोल दिया। भीतर घोर अन्धकार था।

"कोई बत्ती नहीं है क्या?"—गिरोह के नेता ने प्रश्न किया।

मकान-मालिक ने बत्ती जला दी और उसके प्रकाश में उन लोगों ने देखा कि तहखाने की सतह से काफी नीचे से होकर एक सुरंग गयी है। सीपेल का वह बहादुर जवान अपने साथियों के साथ नीचे, सुरंग में, उतर गया। सुरंग बहुत ही टेढ़ी-मेढ़ी और सर्द थी। सब लोग लगातार आगे की ओर बढ़ते गये। पर अकस्मात् गिरोह का नेता रुका और आहिस्ते से अपने साथियों से बोला—"सम्भवतः यह सुरंग रेडियो स्टेशन को ही गयी है।" और फिर, दो लड़कों से उसने कहा—"तुम दोनों वापस जाओ और पचीस जवानों को मशीनगनों के साथ लिवा लाओ।"

प्रकाश के अभाव में जोसेफ टोथ और उसका नया मित्र, दोनों दीवारों को हाथों से टटोलते वापस लौटने लगे और अन्त में उस मकान के तहखाने में पहुँच गये। मकान-मालिक अब भी वहीं बैठा उन लोगों के वापस लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था। तहखाने में पहुँच कर टोथ को एक नयी बुद्धि सूझी। उसने उस लड़के से कहा-"तुम यहीं ठहरो। देखना, यह कहीं जाने न पाये। कौन जाने, किस पक्ष का आदमी है!"

और, जब वह संघर्ष-स्थल से, सीपेल के कुछ जवानों के साथ लौटा, तो उसका वह मित्र लड़का दीवार से अड़ा, भयभीत मकान मालिक पर अपनी बन्दूक ताने खड़ा था।

"तुम यहीं रहो।"—टोथ ने उसे आदेश दिया और सीपेल के जवानों को सुरंग में उतरने को कहा।

"लेकिन तुम लोग क्या करने जा रहे हो?"—लड़के ने पूछा।

"हो सकता है, लड़ाई करनी पड़े!...मगर तुम यहीं ठहर कर निगरानी रखो!"—कह कर वह भी सुरंग में कूद गया। उसके आगे आगे सीपेल के वे लोग चुपचाप बढ़े जा रहे थे। शीघ्र ही वे पहले आये हुए उन चारों व्यक्तियों के पास पहुँच गये और तब नेता ने उन्हें बतलाया "अभी हम लोग अन्दर से आनेवाली आवाजों को सुन रहे थे। मेरा खयाल है, अंदर ए. वी. ओ. के आदमी हैं।"

अन्दर की आवाजें सुनने के उद्देश्य से वे लोग एकदम चुप हो गये। सामने लगे उस जर्जर दरवाजे के अन्दर से बातचीत की ध्वनि लगातार आ रही थी। सम्भवतः ए. वी. ओ. के कुछ घायल आदमियों ने तहखाने में शरण ली थी। कुछ देर चुप रहने के बाद जवानों का नेता दृढ़ स्वर में बोला - "हमें अन्दर चल कर देखना चाहिए।"

उसने चार जवानों को, जो रैकोजी मेटल वर्क्स के कम्यूनिस्ट थे, साथ लिया और कहा—"पहले मैं दरवाजे पर जोर से धक्का देकर अन्दर प्रवेश करूँगा। इससे वे लोक निश्चय ही घबड़ा जायेंगे। तुम लोग मेरे ऊपर से गोली चलाने के लिए तैयार रहना। मैं प्रवेश करते ही दरवाजे पर गिर पड़ूँगा।"

"हम लोग गोली चलाते ही क्यों न प्रविष्ट हों?"—एक ने प्रश्न किया।

"लेकिन यह भी तो हो सकता है कि वे लोग ए. वी. ओ. के द्वारा बन्दी बनाये गये हों।"—नेता ने अपना सन्देह व्यक्त किया।

"फिर भी गोली तो चलानी ही पड़ेगी।"

नेता ने एक मिनट तक मौन होकर इस कथन पर विचार किया; फिर कहा —"अच्छा, लेकिन पहले कुछ ऊँचाई पर गोली चलाना। इससे वे डर भी जायेंगे और तब तक हमें उन्हें देखने-पहचानने का अवसर भी मिल जायेगा।"

"हम लोग गोली चलाते हुए प्रविष्ट होंगे।"—सीपेल के जवानों ने उत्तर दिया, पर ऊँचाई पर गोली चलाने के बारे में उन्होंने कोई वचन नहीं दिया।

इसके बाद, एक झटके के साथ दरवाजे पर धक्का देकर, सीपेल का जवान अन्दर प्रविष्ट हो गया। वहाँ ए. वी. ओ. के पचास आदमी थे। उन्हें देखते ही, नेता के पीछे आनेवाले सीपेल के जवानों ने, प्रतिहिंसा की भावना के कारण ऊँचाई पर गोली न चला कर सामने ही धुआँधार गोली-वर्षा आरम्भ कर दी। ए. वी. ओ. वाले कुछ भी न कर सके। मुकाबले का अवसर ही न आया।

उनका नेता, कमरे में प्रवेश करते ही, दरवाजे पर गिर पड़ा था। उसने अपने साथियों को तब तक गोली चलाते रहने का आदेश दिया, जब तक बाकी बचे ए. वी. ओ. के आदमी आत्मसमर्पण न कर दें। फलतः गोली-वर्षा होती रही और अन्त में, जब बचे हुए ए. वी. ओ. के आदमियों ने आत्म-समर्पण कर दिया, तब उन्हें गिरफ्तार कर, टोथ तथा अपने अन्य साथियों के हवाले करते हुए, नेता ने कहा—"इन हरामियों को ले जाओ; पर देखना, इनकी हत्या मत कर देना।"

"अब आप क्या करेंगे?"—एक सीपेल-जवान ने प्रश्न किया।

"अभी तक कुछ निश्चय नहीं किया।"—नेता ने जवाब दिया। टोथ ने देखा, वह एक सन्दूक पर बैठा उस दरवाजे की ओर देख रहा था, जो उस कमरे को रेडियो स्टेशन् के स्टूडियो से पृथक् करता था।

टोथ और उसके साथी, ए. वी. ओ. के आदमियों को लिये हुए पहले तहखाने की ओर लौटे। ए. वी. ओ. के कुछ आदमी घाव की पीड़ा से कराह रहे थे। तहखाने में पहुँच कर उन्होंने देखा कि तब भी वह १६ वर्ष का युवक पूर्ववत् दीवार से अड़ा, मकान-मालिक की ओर बन्दूक ताने खड़ा था।

उस पर नजर पड़ते ही टोथ चिल्लाया—"हमें ए. वी. ओ. के पचास आदमी मिले।"

"क्या वे देखने में कुछ विचित्र-से लगते हैं?"—लड़के ने अपनी सहज उत्सुकतावश पूछा।

उत्तर में, टोथ ने गिरफ्तार व्यक्तियों पर एक दृष्टि डाली और फिर जब उस

लड़के की ओर देखा, तो वह भय से बुरी तरह काँप रहा था। उसके जीवन में यह पहला मौका था, जब उसने ए.वी.ओ. के किसी आदमी को देखा था। आज, उस तहखाने में, उसके सामने खौफनाक ए. वी. ओ. के तीस से अधिक आदमी खड़े थे। लेकिन उस समय वे खतरनाक नहीं दीख रहे थे, क्योंकि उनके जरा-सा भी इधर-उधर करने पर उन्हें गोलियों से भून डालने के लिए वे छः सशस्त्र जवान खड़े थे।

जोसेफ टोथ उन्हें साथ लिये हुए सड़क की ओर बढ़ा, जहाँ अब भी लड़ाई जारी थी। संघर्षरत स्थल पर पहुँचते ही, रेडियो-स्टेशन की छत से, ए. वी. ओ. के किसी सदस्य ने, अकस्मात् मशीनगन से गोलियाँ चलायीं और उनमें से एक गोली आकर टोथ के बायें पैर में लगी।

गोली लगते ही टोथ असह्य पीड़ा से कराह उठा और उसका पैंट खून से भीग गया। वह सड़क पर गिर गया और अचेत होने लगा, लेकिन पूर्णतः अचेत होने से पहले उसने देखा कि गिरफ्तार ए. वी. ओ. के आदमियों में से कुछ ने उस गड़बड़ी में भागने का प्रयत्न किया और सीपेल के एक युवक ने उसी क्षण अपनी मशीनगन से उन्हें धराशायी कर दिया। दूसरी ओर, रेडियो-वाली इमारत के बड़े फाटकों पर गोली चलने की जोरदार आवाज आ रही थी। उसे दूर से किसी व्यक्ति के चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी—"दरवाजे टूट रहे हैं!" और, इसके बाद ही ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट पर पड़ा टोथ पूर्णतः अचेत हो गया।

२. बुद्धिवादी भी क्रान्ति-पथ पर

हंगेरी के इस विद्रोह की जिस बात ने सोवियत रूस को, निश्चित रूप से, सबसे अधिक विस्मित किया होगा, वह यह थी कि जिन नवजवानों का कम्यूनिज्म ने सबसे अधिक पक्ष लिया था, वे ही उसके घोर विरोधी हो गये। कम्यूनिज्म के विरुद्ध होनेवाली इस क्रान्ति का नेतृत्व स्वयं प्रमुख कम्यूनिस्ट ही कर रहे थे।

हालाँकि प्रचार यह किया जाता है कि केवल कम्यूनिज्म ही वर्गविहीन समाज की स्थापना करने में समर्थ है, लेकिन सच तो यह है कि यह प्रणाली विलक्षण रूप से वर्ग-विभेदों पर आधारित है। कम्यूनिज्म में पार्टी के कुछ सदस्यों को समाज की सभी सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं—अच्छे निवास-स्थान, अच्छे रेडियो, अच्छा भोजन, अच्छे वस्त्र, आदि—और इसी तरह की रिश्वतों के सहारे कम्यूनिज्म विश्वसनीय नेताओं का एक विशेष दल तैयार करता है। बाकी लोग, जो 'विशिष्ट' की श्रेणी में नहीं आते, मरें या जियें, इसकी कोई परवाह नहीं करता और चूँकि ऐसे लोगों में सत्ता का अभाव होता है, वे अन्यायों के विरुद्ध कुछ नहीं कर पाते।

यहाँ मैं यह बताना चाहूँगा कि दो युवा कम्यूनिस्टों ने, जिन्हें पार्टी ने उच्च पदों के लिए चुना था, जब कम्यूनिज्म और देशभक्ति में से किसी एक को चुनने का अवसर आया, तो किसे पसन्द किया? इन दो व्यक्तियों के इतिहास में एक ओर तो रूस के नेता अपने लिए दुःस्वप्न का कारण पायेंगे और दूसरी ओर, स्वतंत्र देशों के वे बुद्धिवादी युवक, जो कभी-कभी ऐसा सोचते हैं कि वर्तमान शासन-व्यवस्था की बजाय शायद कम्यूनिज्म अधिक आनन्ददायक होगा—यह देख सकेंगे कि यदि सचमुच वे कम्यूनिस्ट-अधिनायकवाद में होते, तो क्या करते?

इस्तवान बालोग को पढ़ाई से बड़ा प्रेम था, अतः कक्षा में वह सर्वप्रथम आया। वह एक मजदूर का लड़का था। उसके परिवारवालों ने उस दिन को एक महान् और स्मरणीय दिन माना, जब पार्टी का एक उच्चाधिकारी आकर बोला—"इस्तवान को हम लोग शुरू से ही ध्यान से देखते आ रहे हैं। वह बहुत प्रतिभाशाली है। वस्तुतः हमें ऐसे नवजवानों की जरूरत है, जो पुस्तक-प्रेमी हों। कितनी उम्र होगी उसकी?"

"१६ वर्ष।"—इस्तवान ने स्वयं ही जवाब दिया।

कम्यूनिस्ट-अधिकारी एक क्षण के लिए मौन रहा, फिर बोला—"विश्व-विद्यालय में प्रवेश पाने के लिए यह आवश्यक है कि तुम्हें काम का भी कुछ अनुभव हो। मैं एक कारखाने......"

बीच में ही इस्तवान पूछ बैठा—"क्या कारखाने में काम करने की उम्र है मेरी?"

जवाब मिला—"तुम दिखते तो कमजोर हो, पर कारखाने में काम का अनुभव प्राप्त किये बिना कुछ सम्भव भी तो नहीं है।......"

बुडापेस्ट के कोनताक्ता बिजली कारखाने में 'ड्रिल प्रेस' मशीन पर काम करने के लिए इस्तवान बालोग नियुक्त किया गया। यद्यपि अपने आसपास काम करनेवालों की तुलना में वह शरीर से कमजोर था, तथापि उसने काम में असाधारण फुर्ती दिखायी और महीने महीने उसका काम बढ़ता गया। फलतः वह अपने कम्यूनिस्ट उच्चाधिकारियों का प्रियपात्र बन गया और शीघ्र ही उसे 'अध्ययन-संघ' का नेता नियुक्त कर दिया गया। अध्ययन-संघ में, काम से छुट्टी मिलने पर, कार्ल मार्क्स, लेनिन और स्टालिन के सिद्धान्तों और विचारों पर मनन किया जाता था।

आगे चल कर वह अपनी पुस्तकों के अध्ययन में अधिक समय देने लगा। सम्भवतः इसीलिए उसका उत्पादन उसके लिए निश्चित 'कोटे' से कम हो गया। फलतः ए. वी. ओ. वाले उसके पीछे लग गये और उसे दो दिनों तक नजरबन्द रख कर, कारखाने तथा सरकार के प्रति उसकी वफादारी की जाँच-पड़ताल की गयी। उससे पूर्णतया संतुष्ट होने पर ए. वी. ओ. वालों ने उसे छोड़ दिया और प्रमाणित कर दिया कि वह विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त करने-योग्य पात्र है। फिर भी उसकी और अधिक जाँच करने के उद्देश्य से, उन्होंने उसे और पाँच वर्षों तक कारखाने में ही रखा। इस अरसे में उसने न तो अपना उत्पादन कम होने दिया और न कम्यूनिस्ट-सिद्धान्तों के प्रति अपने उत्साह में कमी ही आने दी।

बाईस वर्ष का बालोग एक दुबला-पतला, किन्तु गठीले शरीरवाला युवक था। उसके केश गहरे काले रंग के थे, जो कान तक लटकते थे। आँखें गम्भीर और काली थीं। काम करने में तो वह मानो मशीन ही था। वह कम्यूनिस्ट-पार्टी का एक बाकायदा सदस्य था। उसकी प्रशंसा सभी करते थे, इसीलिए उसे बुडापेस्ट-विश्वविद्यालय के कानून-विद्यालय में, जो नगर के पूर्वी हिस्से 'पेस्ट' में

अवस्थित था, प्रवेश पाने की अनुमति दी गयी थी। वह कम्यूनिस्ट-पार्टी-द्वारा निर्वाचित हुआ था, इसलिए विद्यालय में उसके लिए विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की गयी थी। उसके प्राध्यापकों को भी सूचित कर दिया गया था कि उसे एक महत्त्वपूर्ण सरकारी पद दिया जानेवाला है—इसलिए उसकी पढ़ाई-लिखाई पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाये।

इस्तवान को विश्वविद्यालय में सभी प्रकार की सुविधाएँ थीं। जो भी पुस्तक वह पढ़ना चाहता, वह उसको तत्काल मिलती। यही नहीं, विश्वविद्यालय के कुछ अच्छे प्राध्यापक भी सदा उसकी सहायता करने को तैयार रहते। इस्तवान के शब्दों में—"उन्होंने मुझे कानून, मार्क्सवाद, कम्यूनिज्म का इतिहास और सैन्य-शिक्षा दी। वे सब बहुत ही योग्य विद्वान थे।"

इन सबसे कहीं महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि उसे अपने सहपाठियों में से ही कई ऐसे युवक मिले, जिन्हें सांसारिक विषयों का ज्ञान उसकी अपेक्षा कहीं अधिक था। परन्तु कम्यूनिज्म को समझने में वह उन सबसे आगे था और इसीलिए उसे परीक्षाओं में अधिक अंक मिलते थे। कम्यूनिस्ट प्राध्यापक मार्क्सवाद में बहुत दक्ष थे और चाहते थे कि वकील बनने की इच्छा रखनेवाले सभी छात्रों को उस विषय का समान रूप से ज्ञान होना चाहिए।

अध्ययन परायण इस्तवान अब तक धाराबाह रूप से रूसी भाषा नहीं पढ़ सकता था, लेकिन जब उसके प्राध्यापकों ने उसे चेतावनी दी कि वैसा न होने पर उसे उपाधि न मिल सकेगी, तो उसने उस कठिन भाषा के अध्ययन की ओर अधिक ध्यान दिया। अपने पाठ्यक्रम में उस विषय का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान देखकर वह शीघ्र ही उस विषय के मुख्य प्राध्यापक के पास गया। इस प्रकार जब वह एक प्रमुख कम्यूनिस्ट वकील बनने की दिशा में बढ़ रहा था, तब उसे कुछ ऐसी सभाओं में जाने का अवसर मिला, जिन्होंने उसकी सम्पूर्ण जीवन धारा को ही बदल दिया।

इन सभाओं में, जो १९ अक्तूबर, १९५६ से आरम्भ हुईं, बुडा और पेस्ट के छात्रों का समुदाय अवैध रूप से एक होकर पोलैण्ड के उन छात्रों का समर्थन करता था, जो उन दिनों अपने रूसी स्वामियों के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे। चूंकि पोलैण्ड के मामलों में हंगेरियन सदा ही मैत्री-भाव से दिलचस्पी लेते थे और चूंकि पोजनान में हुए उपद्रवों के कारण अनेक छात्र यह सोचने लगे थे कि सम्भवतः हंगेरी भी अपने कंधों से सोवियत जुए को निकाल फेंकने में समर्थ हो सकता है, ये सभाएँ टाली नहीं जा सकती थीं। कानून का

युवा विद्यार्थी इस्तवान बालोग भी स्वभावतः ही इनमें भाग लेता था।

इन सभाओं में उसका भाग लेना कानून पढ़नेवाले उसके दूसरे साथियों से छिपा न रह सका और २१ अक्तूबर को इन्होंने उसे उन वार्ताओं में भाग लेने के लिए अपना प्रतिनिधि चुना, जो बुडापेस्ट के सभी उच्च विद्यालयों के छात्रों की ओर से आरम्भ की जानेवाली थीं। इन नवजवानों के सामने कई ज्वलन्त समस्याएँ थीं—(१) हंगेरी से रूसियों का निष्कासन, (२) जीवन यापन की स्थिति में सुधार, (३) अधिक सस्ती सामग्रियों की व्यवस्था, (४) रूसी भाषा की अनिवार्य शिक्षा का अन्त, और (५) हंगेरी के राष्ट्रचिह्न के रूप में, सम्पूर्ण विश्व-द्वारा घृणित सोवियत रूस के हँसिया-हथौड़े को हटाकर, सन् १८४८ ईसवी के विद्रोह में प्रमुख रूप से भाग लेनेवाले हंगेरियन देशभक्त लुई कोसुथ के शिरस्त्राण का फिर से उपयोग। इसका सम्बन्ध उनके हृदय की भावना से बहुत अधिक था।

२२ अक्तूबर को इस्तवान बालोग, जो इस बात को नहीं जानता था कि वह कम्यूनिज्म के विरुद्ध कितने बड़े विद्रोह का आरम्भ करने जा रहा था, डेन्यूब नदी को पार कर बुडा के टेक्निकल हाईस्कूल में गया। वहाँ दोपहर तक कुछ प्रमुख कम्यूनिस्ट बुद्धिवादियों का एक समुदाय इकट्ठा हो गया था। उन लोगों ने अपनी शिकायतों की एक सूची तैयार की और उसी दिन दोपहर के बाद तीन बजे एक जन-सभा के आयोजन की घोषणा की। बालोग को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि सैकड़ों नवजवान, जिनमें सीपेल के मजदूर भी शामिल थे, उसकी समिति द्वारा किये गये निर्णयों का हर्षध्वनि से स्वागत करने को तैयार खड़े थे। उसने बाद में इस घटना का उल्लेख करते हुए बतलाया—"उस समय पहली बार मुझे इस बात का भान हुआ कि हम लोगों ने जो-कुछ लिखा था, उस पर जनता गम्भीर रूप से कुछ करने जा रही थी।"

लेकिन उसकी यह उत्तेजना उस समय शान्त हो गयी, जब सभी वक्ताओं ने अपने भाषणों में केवल नपी-तुली और नियमों में बँधी हुई कुछ बातें कहीं। बालोग ने सोचा—"इससे विशेष तो कुछ नहीं होगा; पर हाँ, थोड़ी राहत जरूर मिलेगी।" परंतु सन्ध्या होते-होते एक अपरिचित व्यक्ति ने श्रोता-समुदाय के पिछले भाग से उठ कर बड़ी सादगी से किन्तु बलपूर्वक यह प्रश्न किया—"मैं एक ही सवाल पूछता हूँ कि किस अधिकार से हमारे देश में रूसी सैनिकों को जमा कर रखा गया है?"

इस प्रश्न के साथ ही सभा में खलबली मच गयी और छात्र अपने स्थानों

से उठकर चिल्लाने लगे—"रूसियों को निकाल बाहर करो! रूसियों को निकालो!" दूसरे लोग भी सीटियाँ बजाने और चिल्लाने लगे। इन सबसे वक्ताओं को भी प्रेरणा मिली और वे अपने ऊपर जबर्दस्ती लादे गये आतंकपूर्ण शासन पर विचार करने लगे। उस क्षण वहाँ व्याप्त देशभक्ति की भावना ने इस्तवान बालोग को भी अनुप्राणित किया और उसने मंच से उठ कर नारा लगाया—"रूसियों को हंगरी छोड़नी ही पड़ेगी!"

इस प्रकार चारों ओर से प्रेरणा मिलने के कारण, श्रोताओं ने ऐसे प्रश्न करने शुरू किये, जिन्हें अब तक ए. वी. ओ. ने दबा रखा था—जैसे "रूस हमारा सब कीमती यूरेनियम क्यों लिये जा रहा है और बदले में कुछ भी नहीं देता?"; "हम अपना भरण-पोषण कर सकें, इतना भी क्यों नहीं कमा पाते?"; "हमारे पश्चिमी साहित्य पढ़ने पर रोक क्यों है?" आदि।

जब हल्ला-गुल्ला शान्त हो गया, तब इस्तवान बालोग की समिति ने उन प्रश्नों की सूची तैयार करनी शुरू की, जिनका जवाब वे कम्यूनिस्ट-सरकार से चाहते थे। इस सूची में चौथा स्थान उस प्रश्न को मिला, जिसने उसी क्षण से छात्रों के मानस में हलचल-सी मचा दी —"रूसी सैनिक हंगेरी से कब हटेंगे?"

जब सभी शिकायतों को लिख कर विरोधपत्र तैयार कर लिया गया, तब कुछ क्षणों तक सभा में पूर्ण सन्नाटा छाया रहा। इस सन्नाटे को भंग किया, मोटे वस्त्र पहने एक व्यक्ति ने, जो सभा भवन के एक दूसरे भाग से उठ कर खड़ा हुआ और रुक-रुक कर कहने लगा —"मेरे पास आप लोगों की तरह अच्छी भाषा तो नहीं है; क्योंकि मैं सीपेल का एक मजदूर हूँ—फिर भी मैं यह कहना चाहता हूँ कि आज रात यहाँ मैंने जो-कुछ सुना है, उससे मेरे दिल की धड़कन तेज हो गयी है। आप लोग सचमुच बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। इस काम में मेरे-जैसे लोग आपके साथ हैं।"

बालोग ऐसे ही प्रोत्साहन की अपेक्षा कर रहा था। उसने अविलम्ब एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जो निर्विरोध स्वीकृत हुआ। उस प्रस्ताव में कहा गया था कि दूसरे दिन, २३ अक्तूबर को, सहानुभूति व्यक्त करने के लिए, जनरल जोसेफ बेम की प्रतिमा के पास, एक सार्वजनिक सभा होगी। जनरल बेम पोलैण्ड के एक स्वयंसेवक थे, जिन्होंने सन् १८४८ में हंगेरी की उस क्रान्ति में सहयोग दिया था, जो हैप्सबर्ग-द्वारा रूस से स्वयंसेवक मँगाये जाने के विरोध में हुई थी। इसके बाद सभापति ने सभा समाप्त की।

उस रात इस्तवान बालोग जब पेस्ट-स्थित अपने निवास-स्थान पर पहुँचा, तो

वह उत्तेजना से भरा था। "यदि उस सभा में ए. वी. ओ. के भेदिये उपस्थित रहे हों, तो ?" वह अपने-आप से प्रश्न करता रहा। फिर उसने स्मरण करने की कोशिश की कि बिना विचारे कितनी कठोर बातें उसने सभा के मंच से कह दी थीं। "मैं एक कम्यूनिस्ट हूँ!"—वह बुदबुदाया—"रूस हमारा मित्र है और यदि हम उससे मैत्री-सम्बन्ध तोड़ लेंगे, तो तानाशाह लोग फिर से हम लोगों पर अधिकार जमा लेंगे।" अन्त में वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आज की रात उसने बहुत बड़ी गलती की। उसने सोचा—"हम केवल कुछ परिवर्तन ही तो चाहते हैं, जैसे अधिक भोजन और उसी तरह की दूसरी चीजें।"

लेकिन दूसरे दिन यह वफादार युवा कम्यूनिस्ट फिर शक्तिशाली लोक-भावनाओं में खो गया। उस दिन, जोसेफ बेम की प्रतिमा के पास, केवल कुछ छात्र ही नहीं, बल्कि पचास हजार से भी अधिक देशभक्त नागरिक उपस्थित थे। वे नागरिक बहुत अधिक उत्तेजित थे और उनकी उत्तेजना प्रभावकारी भी इतनी थी कि इस्तवान ने सब कुछ भूलकर फिर जोरदार शब्दों में भाषण किया, जिसका सारांश था—"रूसियों को यहाँ से अवश्य ही चले जाना चाहिए।"

और, उसी दिन संध्या-समय अपने निर्णय के विपरीत—जिसे पहले वह अच्छा समझता था—इस्तवान ने अपने को पार्लियामेन्ट के सामने एकत्र एक विशाल जन-समुदाय के बीच खड़ा पाया। वहाँ, डेन्यूब नदी के किनारे पर स्थित, यूरोप की अत्यन्त भव्य इमारतों में से एक, पार्लियामेन्ट-भवन के सामने अस्सी हजार से भी अधिक हंगेरीवासी राजनीतिक न्याय पाने की कामना लिये खड़े थे। इस्तवान ने देखा, उन लोगों के हाथों में सैकड़ों नये झंडे लहरा रहे थे। सोवियत कम्यूनिज्म का प्रतीकधारी एक भी पुराना कम्यूनिस्ट-झंडा उसे दिखाई नहीं पड़ा। उसने देखा, हंगेरी की आजादी के लिए सब भयानक रूप से उत्तेजित थे। स्त्रियाँ चिल्ला रही थीं—"वर्तमान नेता—मुर्दाबाद! स्वतंत्रता—जिन्दाबाद! इम्रे नाज—जिन्दाबाद!"

इस अन्तिम नारे को सुनकर इस्तवान में कुछ आशा का संचार हुआ; क्योंकि इम्रे नाज एक वफादार कम्यूनिस्ट था और एक लम्बे अरसे तक सत्तारूढ़ भी रहा था, पर दो वर्ष पूर्व उसमें 'बहुत उदार' होने का दोष बता कर उसे पद से हटा दिया गया था। यदि इम्रे नाज सत्तारूढ़ रहता, तो हंगेरी, एक अच्छा कम्यूनिस्ट राष्ट्र रहते हुए भी, अधिक स्वतंत्रताओं का उपभोग कर सकता था।

इसीलिए इस्तवान को तब आश्चर्य हुआ, जब पार्लियामेन्ट-भवन के छज्जे पर आकर इम्रे नाज ने जन-समुदाय को 'प्यारे कामरेडो!' कह कर सम्बोधित किया, किन्तु लोगों ने इसका तीव्र प्रतिवाद करते हुए कहा—"हम 'कामरेड' नहीं हैं! हमारे लिए इस शब्द का प्रयोग न कीजिये!"

इस विरोध को स्वीकार करते हुए पुराने कम्यूनिस्ट नाज ने सम्बोधित किया —"प्यारे दोस्तो!" इस सम्बोधन का जन-समुदाय ने हर्ष–ध्वनि से स्वागत किया और इसके बाद नाज ने एक-एक करके उन लोगों की माँगों को स्वीकार करना शुरू कर दिया। यह स्थिति देख कर इस्तवान एक प्रकार की जड़ता-सी अनुभव करने लगा। यह एक अत्यन्त खेदपूर्ण और आश्चर्यजनक बात थी कि एक पुराना कम्यूनिस्ट इस तरह पराजित हो। "यह हो क्या रहा है?"—बालोग ने अपने-आप से ही प्रश्न किया।

इसी बीच लोग एक पुरानी हंगेरियन कविता में प्रयुक्त मुहावरा 'अभी नहीं तो कभी नहीं' चिल्लाने लगे। उन उत्तेजित लोगों को शान्त होने के लिए इम्रे नाज ने अपने हाथ से इशारा किया और तब, जन समुदाय के अपार हर्ष के बीच, इम्रे नाज ने काँपते स्वर में स्वेच्छा से हंगेरियन प्रार्थना "ईश्वर हंगेरी को आबाद रखे!" शुरू की। इस प्रार्थना पर, बहुत समय पहले ही, कम्यूनिस्ट-घोषणापत्र-द्वारा प्रतिबन्ध लगा दिया गया था।

इससे संतुष्ट होकर जब लोग अपने-अपने घर जाने लगे, तभी उन्हें एक अशुभ समाचार प्राप्त हुआ—"रेडियो-स्टेशन में गोली चली।" इस्तवान ने समझा, सम्भवतः उपद्रवियों के किसी दल को शान्त करने के लिए ए. वी. ओ. को गोली चलानी पड़ी होगी। लेकिन तभी एक और समाचार आया—"छात्र और मजदूर ए. वी. ओ. को समूल नष्ट करने पर तुले हैं।"

यह सुनते ही देशभक्त बड़ी तेजीसे रेडियो-स्टेशन की ओर चल पड़े। बाकी लोग, जिनमें दुबला-पतला काली आँखोंवाला इस्तवान बालोग भी शामिल था, पेस्ट के मुख्य उद्यान के दक्षिणी छोर पर स्थित, बुडापेस्ट के सबसे विशाल सभास्थल, 'स्टालिन स्क्वायर' की ओर बढ़े। वहाँ मशालों और गाड़ियों की बत्तियों के प्रकाश में इस्तवान ने देखा—हजारों लोग एकत्र होकर रूसियों के विरुद्ध नारे लगा रहे हैं। सर्वसाधारण में व्याप्त घृणा-भाव का इस प्रकार व्यक्त किया जाना देख कर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे कुछ देर तक तो उनके नारों पर भी विश्वास न हुआ। वे चिल्ला रहे थे—

"रूसी हमारा 'यूरेनियम' चुराये लिये जाते हैं!" यह प्रधान नारा था।

"वे ए. वी. ओ. द्वारा हम पर अत्याचार कराते हैं!"

"रूसी हमें भूखों मारते हैं!"

बालोग इन सब बातों पर सोच ही रहा था कि उसने देखा, दो नवजवान जोसेफ स्टालिन की भारी-भरकम धातु की मूर्ति पर चढ़े जा रहे हैं। उनके हाथों में हल्के रस्से हैं। मूर्ति के शिखर पर पहुँच कर उन्होंने रस्सों को ऊपर खींचना शुरू किया और थोड़ी ही देर में उनके हाथों में एक भारी लोहे की साँकल आ गयी। उन्होंने साँकल को मूर्ति के गले में डाल दिया। नीचे खड़े जन-समुदाय ने हर्ष-ध्वनि की और ज्यों ही दोनों नवजवान नीचे उतरे, त्यों ही सैकड़ों हाथ मूर्ति को ठेलने लगे। दूसरी ओर, अनगिनत बलिष्ठ मजदूरों ने साँकल को खींचना शुरू किया। एक बड़ी संख्या में खड़े लोग तमाशा देखते रहे।

इस काम में उन्हें निराश ही होना पड़ा। रूसियों ने स्टालिन को इतने ठोस लोहे से बनाया था कि उसे खींच कर गिराया नहीं जा सकता था। स्त्रियाँ आवेश में आकर उस भद्दी मूर्ति पर घूँसों से प्रहार करने लगीं। तभी तीन युवा मजदूर आगे बढ़े। उनके पास 'एसिटिलीन टार्च' (जिससे निकलने-वाली सफेद गैस लोहे को गला देती है) देख कर भीड़ ने हर्ष-ध्वनि की और सबके देखते-ही-देखते उन टार्चों ने स्टालिन के घुटनों के पिछले भाग को काट डाला। तदुपरान्त मजदूरों ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा कर फिर खींचना शुरू किया और वह दानवाकार मूर्ति आगे की ओर झुकने लगी, मानो कोई व्यक्ति 'स्केटिंग' करते समय अपने चेहरे के बल झुका हो। घुटनों के पास से मूर्ति कड़की और कुछ युवकों ने उस कड़के हुए स्थान पर कीली ठोंक कर मूर्ति को इधर-उधर हिलाना शुरू किया।

अक्तूबर महीने की उस रात को, जब शीतल पवन बह रहा था, वह बेशकीमती मूर्ति, जिसके निर्माण का सम्पूर्ण व्यय हंगेरी के निवासियों से वसूल किया गया था, धीरे-धीरे झुकने लगी और अन्त में, एक तेज झटके ने उसे भूमि पर ला पटका। अब जाकर वह तानाशाह उस सार्वजनिक स्थान में, सर्वसाधारण के समक्ष, नतमस्तक हुआ।

अपने ऊपर अत्याचार करनेवाले की गर्वीली मूर्ति के टूट कर गिरते ही हंगेरियनों को स्मरण हो आया कि पहले वह विशाल स्टालिन स्क्वायर क्या था? लोग अपने-आप चिल्ला पड़े—"हमें हमारा गिरजाघर चाहिए। हमें हमारा गिरजाघर चाहिए!"

अकस्मात् ही इस्तवान को स्मरण हो आया कि पहले उस स्थान पर एक

विशाल सभागृह था। जब वह बच्चा था, उसकी माँ उसे लेकर उस उद्यान में आयी थी और तभी उसने उसे देखा था। पहले वहाँ एक गिरजाघर भी था। पर आज वहाँ स्टालिन की भग्न मूर्ति पड़ी थी आर भीड़ में खड़े प्रौढ़जन लगातार चिल्ला रहे थे—"हमें हमारा गिरजाघर चाहिए!"

उसके बाद वहाँ जो-कुछ हुआ, उसे देख कर इस्तवान बालोग अचम्भे में डूब गया। लोग अपने गिरजाघर के लिए चिल्लाना बन्द कर धराशायी मूर्ति की ओर बढ़े और उस पर थूकने लगे। स्टालिन के शासन-काल में सताये हुए स्त्री-पुरुषों को, उस गिरे हुए दानव से बदला लेने का अच्छा अवसर मिल गया था।

"उसे उलट दो, जिससे हम उसके मुँह पर थूक सकें।"—लोग चिल्लाये।

"उफ! धक्का मत दो, बूढ़ी माँ। सब किसी को थूकने का अवसर मिलेगा। तुम्हारी भी बारी आयेगी ही।"—किसी ने जरा झुँझलाहट-भरे स्वर में कहा।

तब तक एक मजदूर हथौड़ा लेकर आगे बढ़ा और मूर्ति पर प्रहार करने लगा? "हम इसे गला कर बंदूक की गोलियाँ तैयार करेंगे।"—उसने अपना मतलब बतलाया। लेकिन दूसरे लोगों ने, जिन्हें अब भी उस सोवियत तानाशाह पर थूकना बाकी था, उसे वैसा न करने दिया।

"आप लोग कृपा करके कल आइये।"—कहते हुए एक छात्र ने स्टालिन की मूर्ति के पास से लोगों को हटाना शुरू किया। उसके हाथ में एक रस्सा था। इस्तवान ने उसे पहचाना---वह उसका एक सहपाठी, कानून का विद्यार्थी था।

"क्या करने जा रहे हो तुम?" —इस्तवान ने प्रश्न किया।

"हम लोग इस खूँख्वार डाकू को जरा सैर कराने ले जा रहे हैं।"–विद्यार्थी ने उत्तर दिया।

कुछ ही देर में एक ट्रक वहाँ आकर खड़ा हो गया और मूर्ति को रस्से से उसमें बाँध दिया गया। अनेक लोग ट्रक पर सवार हो गये—उनमें इस्तवान भी था। ट्रक चल पड़ा। आगे आगे ट्रक और पीछे-पीछे लुढ़कती हुई जोसेफ स्टालिन की भद्दी मूर्ति। इस प्रकार लोग एक जुलूस के रूप में, तानाशाह की विशालकाय मूर्ति को लेकर, स्टालिन स्क्वायर से स्टालिन स्ट्रीट होते हुए नगर के मध्य भाग की ओर बढ़े। घुटनों से टूटी होने पर भी वह भीमकाय मूर्ति लोगों की गालियों के साथ झनझनाती हुई चली जा रही थी।

सारे बुडापेस्ट का चक्कर लगानेवाले नगर के मुख्य मार्ग के पास पहुँच कर ट्रक दक्षिण की ओर मुड़ा। इस्तवान बड़े उत्साह से हर्ष-ध्वनि कर रहा था और भीड़ को लक्ष्य कर चिल्ला रहा था—"इस भारी डाकू के लिए यही उचित था!"

मुख्य मार्ग और रैकोजी स्ट्रीट के मोड़ पर पहुँच कर जोसेफ स्टालिन के दर्पदमन का यह क्रम तो समाप्त कर दिया गया, पर शायद इससे भी बड़े अध्याय का सूत्रपात हुआ। कुछ छात्रों का एक गिरोह कम्यूनिस्ट प्रचारवादी समाचार-पत्र 'जबाद नेप' (स्वतंत्र जनता) के कार्यालय के लौह-निर्मित छज्जों की मनोरम शृंखला के पास जमा था। बुडापेस्ट के उस प्रचारमूलक समाचारपत्र के कार्यालय पर ज्यों ही युवकों ने हमला किया कि एक बड़ा दंगा आरम्भ हो गया। वह समाचारपत्र एक लम्बे अरसे से झूठे प्रचारों के द्वारा जनता को गुमराह करता आ रहा था। फलतः उसके प्रति लोगों के मन में बड़ी घृणा पैदा हो गयी थी और यह उसी का परिणाम था कि उस दिन लोग खाली हाथों ही उस भवन को नष्ट करने पर तुले थे।

अब, वही इस्तवान बालोग, जो एक अच्छा कम्यूनिस्ट था और जिसे किसी ऊँचे पद के लिए चुना गया था, कम्यूनिज्म के अत्याचारों और मिथ्या प्रचारों के विरुद्ध चल रहे संघर्ष में पूर्णतः अपने देशवासियों के साथ हो गया। 'जबाद नेप' का कार्यालय शनैः-शनैः ध्वस्त होता जा रहा था। उस इमारत की बगल में ही कम्यूनिस्ट प्रचार-साहित्य की सरकारी दुकान, 'जबाद नेप पुस्तक-भंडार', की इमारत थी। विश्वविद्यालय के कुछ छात्र, जो वहाँ बिकनेवाले वाहियात साहित्य को पढ़-पढ़ कर तंग आ चुके थे, उस इमारत की बड़ी बड़ी खिड़कियों और दरवाजों को तोड़कर अन्दर प्रविष्ट हो चुके थे और कम्यूनिस्ट साहित्य को बाहर सड़कों पर फेंक रहे थे।

इस्तवान बालोग भी उत्साहपूर्वक साथ मिलकर उन घृणित पुस्तकों को बाहर फेंकने लगा। इसी समय एक ट्रक-मजदूर ने पुस्तकों के ढेर पर 'गैसोलिन' डाल कर आग लगा दी और पाँच घंटे तक इस्तवान बालोग तथा दूसरे छात्र, जो निश्चय ही पुस्तक-प्रेमी थे, कम्यूनिस्ट प्रचार-साहित्य को कुरेद-कुरेद कर जलाते रहे।

पुस्तकों को जलाते समय कभी-कभी इस्तवान के मन में एक झिझक पैदा होती और वह सोचने लगता कि वह क्या कर रहा है? पुस्तकों को जला रहा है? लेकिन तभी जलती पुस्तकों के प्रकाश में उसकी नजर नाले में फेंकी हुई स्टालिन की मूर्ति के भद्दे चेहरे पर पड़ जाती और वह पुनः उस अग्नि-ज्वाला में पुस्तको को फेंकना आरम्भ कर देता। वह पुस्तकों को तब तक आग में झोंकता रहा, जब तक उसके हाथ थक नहीं गये।

इस्तवान बालोग न तो विद्रोह का अगुआ था और न हंगेरी की स्वतंत्रता

के लिए लड़नेवाला उत्कट देशभक्त। यह एक संयोग ही था कि वह कम्यूनिज्म से विमुख हो गया था। एक अत्यधिक बुद्धिशाली व्यक्ति होने के कारण उसे इस बात का पता था कि यदि परिस्थितियाँ दूसरे ढंग की होतीं, तो उसके कार्य भी भिन्न प्रकार के होते। अपने काले बालों पर हाथ फेरते हुए, उसने स्वीकार भी किया—"यदि वे उपद्रव नहीं हुए होते, तो मैं कम्यूनिस्ट ही बना रहता और उस शासन का समर्थन करता रहता, जिसके प्रति मेरे मन में कभी किसी प्रकार का आतंक पैदा नहीं हुआ था। मैं ए. वी. ओ. के निर्देशानुसार अपने जीवन को ढालने की कोशिश करता और जितना भी सम्भव होता, उनसे मिलनेवाली सुविधाओं का उपभोग करता रहता।" तदुपरान्त अपने हाथ को बालों से हटाते हुए उसने कहा—"मुझे आज भी यह सोच कर आश्चर्य होता है कि मैंने सड़कों पर होनेवाले संघर्षों में रूसी टैंकों को रोकने में मदद कैसे पहुँचायी?" उसकी बातें सुनकर आप सहज ही सोच सकते हैं कि केवल दुर्भाग्यवश ही रूसियों ने अपने प्रिय शिष्य इस्तवान को खो दिया था।

लेकिन २७—वर्षीय सुन्दर, सुसंस्कृत और बुद्धिवादी नवजवान, पीटर जीजेली, के मामले में भाग्य की ऐसी कोई बात नहीं थी। उसने स्वेच्छा से, बहुत मन लगा कर, कम्यूनिज्म का विवेचनात्मक अध्ययन किया था। इसके फलस्वरूप यद्यपि उसे पर्याप्त धन तथा शक्ति प्राप्त हुई थी, पर अन्त में वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि उक्त प्रणाली हंगरी के लिए सारहीन, कठोर और अपराध-जनक है।

उसका कहना है—"१६ वर्ष की आयु से ही मैं एक पक्का कम्यूनिस्ट था। मेरे माँ बाप अत्यन्त गरीब किसान थे। एक दिन सहसा कार्ल मार्क्स का साहित्य पढ़ने का अवसर मिला। उसके विचार मेरे मन में पैठ गये और मेरे समक्ष सब कुछ स्पष्ट हो गया। सन् १९४६ में, कुछ कम्यूनिस्ट, जो प्रतिभाशाली युवकों की खोज में थे, मेरे गाँव में आये और मेरे बारे में उन्हें खबर लगी।

"वे मुझसे बड़ी देर तक बातें करते रहे और उन्हें यह जान कर आश्चर्य हुआ कि कम्यूनिज्म के सिद्धान्तों की जानकारी उनसे कहीं अधिक मुझे थी। वे बोले—'जैसे आदमी हम ढूँढ रहे हैं, तुम ठीक वैसे ही हो।' उन्होंने मेरे स्कूल जाने की व्यवस्था की, लेकिन शिक्षक ने कहा कि मैं काफी जानता था। अतः मुझे पार्टी में स्थान मिल गया। पार्टी के अत्यन्त कम उम्रवाले सदस्यों में से एक मैं भी हो गया।

पीटर ने बतलाया—"मुझे वैदेशिक सेवा के लिए शिक्षित किया जाने

लगा। अब सर्वाधिक सुन्दर जीवन का क्षेत्र मेरे सामने था। जब मैं १८ वर्ष का था, तभी एक आदर्श कम्यूनिस्ट युवक के रूप में मेरा परिचय दिया जाता था। कई वर्षों तक मैंने कम्यूनिस्ट युवा-संघों की केन्द्रीय समिति में भी काम किया और जब मैं बीस वर्ष का हुआ, तब उस संस्था ने मुझे वैदेशिक सेवा के लिए पूर्ण योग्य घोषित कर दिया। जरूरत की सभी चीजें मेरे लिए उपलब्ध थीं।"

एक ऐसे नवजवान के जीवन में सचमुच अत्यधिक आकर्षण था। उसे खर्च करने के लिए पूरा धन मिलता। विदेशी पुस्तकें पढ़ने की उसे स्वतंत्रता थी। विश्व के घटनाक्रम से परिचित होने की आज्ञा उसे प्राप्त थी। उसके रहने के लिए एक सुन्दर विशाल भवन की भी व्यवस्था कर दी गयी थी। आरम्भ में किसानों के जो पुत्र अत्यधिक प्रतिभावान् थे, उन्हीं में से जीजेती भी एक था, इसीलिए उसे विशेष सुविधाएँ प्रदान की गयी थीं। वे सुविधाएँ उसे तब तक मिलती रहतीं, जब तक वह ए. वी. ओ. के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखता। किन्तु जब कम्यूनिज्म के विरुद्ध क्रान्ति शुरू हुई, तब पीटर जीजेती ने केवल उसमें भाग ही नहीं लिया, बल्कि उसका नेतृत्व भी किया। यह हुआ कैसे, यह कहना कुछ कठिन है।

इस सम्बन्ध में अपने पुराने संस्मरणों को याद करते हुए उसने बतलाया--"जहाँ तक मुझे याद है, कम्यूनिज्म के प्रति मेरे मन में पहली बार निराशा का भाव तब आया, जब मैंने यह समझा कि सत्ता प्राप्त करते समय कम्यूनिस्टों के दिये हुए वचनों में और सत्ता प्राप्त करने के बाद उनके कामों में कितना महान् अन्तर है। सचमुच कम्यूनिस्टों के नारे उस समय बड़े अच्छे लगते हैं, जब वे किसी राष्ट्र को हथियाने का प्रयत्न करते रहते हैं। किन्तु राष्ट्र पर अधिकार हो चुकने के बाद उन नारों के अनुसार कुछ भी नहीं होता।"

विलक्षण नवजवान जीजेती देखने में एक पक्के कम्यूनिस्ट की तरह लगता है। उसकी आँखें बड़ी तीक्ष्ण हैं और दोनों भवें, नाक के ऊपर, आपस में मिली हैं। उसका शरीर गठा हुआ और चुस्त है। जबान भी उसकी बहुत तेज है। उसके समस्त व्यवहारों में एक समर्पण का सा भाव झलकता है, और वह विनोदप्रिय भी है।

"जनता से कितनी झूठी बातें हम किया करते थे, इसकी एक सूची मैं गुप्त रूप से तैयार करने लगा। पहली बात हम कहते थे—'पूँजीवाद के कार्य संयोगवश ही हुआ करते है, किन्तु कम्यूनिज्म के सारे कार्य योजना बना कर

होते हैं।' किन्तु आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि हमारे कार्यक्रम में सदैव हार-जीत का बहुत बड़ा खतरा रहता था। केवल हमारे गलत अनुमान के कारण किसी सम्पूर्ण क्षेत्र के भूखे रह जाने तक की नौबत आ जाती थी। योजना! हाँ, योजना ही बनाते थे हम, परन्तु उसे बनाते समय मिल सकनेवाले आँकड़ों तक का अध्ययन हम नहीं करते थे।

"हमारी दूसरी बात थी—'पूँजीवाद मजदूर को पीस डालता है, जबकि कम्यूनिज्म उसकी उन्नति कराता है।' परन्तु मैंने शीघ्र ही यह बात समझ ली कि कम्यूनिस्ट-शासन में सबसे अधिक दुर्दशा मजदूरों की ही होती है। कम्यूनिस्ट मजदूर होने की बजाय एक कुत्ता होना कहीं अच्छा है। मजदूरों को बड़े-बड़े वादों के सिवाय और कुछ नहीं मिलता। मैं सदा ही मजदूरों से कहा करता था—'आप कम्यूनिज्म के संत-महात्मा हैं।' लेकिन मैं जानता था कि सारी सामग्रियों और भोजन पर मेरे-जैसे लोगों का ही कब्जा रहता था।

"तीसरी बात—'पूँजीवाद आत्माविहीन होता है, लेकिन कम्यूनिज्म हर एक के जीवन में समृद्धि लाता है।' सच तो यह है कि कम्यूनिज्म व्यक्ति को एक अति संकुचित दायरे में ले जाता है। वह उसे बहुत छोटे और चारों ओर से घिरे हुए कम्यूनिज्म जगत् में ले जाकर ढकेल देता है। हंगरी को ही लीजिए! पहले इसका पाश्चात्य संस्कृति से गहरा सम्बन्ध था, पर वे सारे सम्बन्ध कम्यूनिज्म ने नष्ट कर दिये। हमें रूसी किताबें पढ़नी पड़ती थीं, रूसी चित्र देखने होते थे और रूसी दर्शन का अध्ययन करना पड़ता था। हंगरी में कम्यूनिज्म ने सबसे बुरा काम यह किया कि उसने हमारी महान्, स्वतंत्र और अन्वेषणप्रिय आत्मा को बन्दी बना दिया।"

जीजेती ने अपने चेहरे पर कठोर भाव लाते हुए कहा—"मैं अपनी नयी खोजों को, जनता के समक्ष घंटों तक दुहरा सकता था और वैसा करते समय मुझे मन-ही-मन हँसी भी आती थी, लेकिन एक बात पर मैं कभी नहीं हँस सका। जब हम हंगेरी की जनता से कहते थे—'आप महान् रूसी सोवियत जनतंत्र के सगे भाई हैं। हम एक साथ मिलकर शेष विश्व का सामना करेंगे।' तब मेरी हँसी गायब हो जाती थी। मैंने देखा, हम भ्रातृ-भाव में नहीं, बल्कि दासता में बँधे थे।

"इन उपद्रवों में हंगेरीवासी नारे लगा रहे थे—'हमारा यूरेनियम हमें वापस दो। हमारे डीजेल एंजिन हमें वापस दो। हमारे खाद्य-पदार्थ हमें वापस दो।' ये नारे निराधार नहीं थे, बल्कि पूर्णतः सत्य थे।"

जब पीटर जीजेती अपने देशवासियों की निंदनीय गद्दारी और रूसियों के हाथ गुलाम-सदृश समर्पण का स्मरण करता है, तब उसकी मुट्ठियाँ आवेश से बँध जाती है। मैं उसकी बातों से इतना प्रभावित हुआ कि बड़े परिश्रम से मैंने उसकी बातों को दर्ज किया। उससे मैंने सैकड़ों बार मुलाकात की और उन मुलाकातों के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि नीचे दी हुई बातें बिल्कुल सत्य हैं।

"एक मजदूर को ही लीजिये, जिसे मैं जानता हूँ। वह एक महीने में ३३१ घंटे काम करता है और मजदूरी के रूप में उसे १,०५३ फोरिन्ट मिलते हैं यानी २१ अमेरिकन डालर। लगभग ५० फोरिन्ट का एक डालर होता है। और, वस्तुओं की कीमत का यह हाल है कि एक जोड़ा वस्त्र बनाने में ९८० फोरिन्ट लग जाते हैं, अर्थात् लगभग एक महीने की मजदूरी। उसके मुकाबले में एक अमेरिकन मजदूर को लीजिये। यदि वह महीने में ३३१ घंटे काम करता है, तो उसे ७०० डालर मजदूरी मिलती है। इसका मतलब यह हुआ कि यदि कम्यूनिज्म वाला भाव वहाँ भी हो, तो उसे ६८० डालर एक जोड़ा वस्त्र के लिए देने होंगे। किन्तु वह ५० डालर में ही अपनी इस आवश्यकता की पूर्ति कर लेता है।

"कम्यूनिस्ट-शासन में एक दम्पति तब तक जीवन-निर्वाह नहीं कर सकता, जब तक पति-पत्नी दोनों प्रति दिन दस घंटे काम न करें। वहाँ महँगाई इतनी होती है कि इतना काम करने पर भी वे आराम से रहने की आवश्यक चीजें नहीं खरीद सकते। चूँकि मैं एक कम्यूनिस्ट नेता था, इसलिए मुझे उन विशेष दुकानों से सामान खरीदने का अधिकार प्राप्त था, जहाँ भाव कुछ कम होते थे। कभी-कभी यह रियायत ७० प्रतिशत तक होती थी। मजदूर-वर्ग, स्वभावतः, कम भोजन और वस्त्र पाता था।

"लेकिन फिर भी देश की आर्थिक अवस्था को देख कर मुझे कम्यूनिज्म के प्रति असन्तोष और सन्देह हुआ। रूस को मजबूत बनाने के लिए हमारे देश का अवांछित रूप से उपयोग किया जा रहा था। मुझे एक भी ऐसे निर्णय की याद नहीं है, जो हंगरी की भलाई के लिए किया गया हो। हम घोर परिश्रम करके इतना अधिक पैदा करते थे, जिसके फलस्वरूप हमें काफी सुखी जीवन बिताना चाहिए था। पहले हमारा जीवन सुखी था भी, जब कि हमारी जानकारी कुछ कम थी और काम भी हम कम करते थे। लेकिन अब तो हमारा सब-कुछ रूस चला जाता है।"

इस दुःखपूर्ण रहस्योद्घाटन से ही प्रेरित होकर पीटर जीजेती ने गम्भीर रूप से चिंतन आरम्भ किया। फिर भी उसका यह चिंतन उस तक ही सीमित था; क्योंकि विश्वास करने-योग्य किसी ऐसे व्यक्ति को वह नहीं जानता था, जिससे मन की बात कह सकता।

"सबसे पहले मैंने ए. वी. ओ. पर विचार किया। उसकी कई संस्थाएँ थीं, जो एक-दूसरे पर नियंत्रण रखती थीं। उन सबके ऊपर एक सर्वोच्च ए. वी. ओ. गिरोह था, जो अपनी अन्तरवर्ती संस्थाओं पर नियंत्रण रखता था और उस गिरोह पर रूसियों का नियंत्रण था। मुझे आश्चर्य हुआ कि आज के वैज्ञानिक युग में इतने अधिक सन्देह और अविश्वास की क्या आवश्यकता है?

"फिर मैंने स्वयं कम्यूनिज्म पर दृष्टिपात किया और पाया कि वह आततायियों का एक गिरोह है। उसका निर्माण उन लोगों ने अपनी रक्षा तथा देश की सभी अच्छी वस्तुओं को अपने नियंत्रण में करने के लिए किया है। मैंने कभी भी किसी कम्यूनिस्ट को कोई निःस्वार्थ काम करते नहीं देखा।

"अंत में, मैंने अपने भयभीत जीवन पर गौर किया और इस निर्णय पर पहुँचा कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत जीवन में न कोई आशा है, न भविष्य है और न जीवन का कोई अर्थ ही है। इसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सब समाप्त हो जाते हैं। जिस दिन मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा, उसी दिन पेटोफी-क्लब में शामिल हो गया।"

सन् १८४८ में हंगरीवासियों ने अपने आस्ट्रियन स्वामियों के प्रति विद्रोह किया था और इस सिलसिले में होनेवाले रक्तपात के बीच उन्होंने एक नव-जवान कवि, सैण्डर पेटोफी की कविताओं से प्रेरणा प्राप्त की थी। तब से, पेटोफी हंगरियन देशभक्ति का प्रकाश-स्तम्भ और स्वतंत्रता चाहनेवालों का प्रतीक रहा है। उसने रणभूमि में एक वीर का जीवन व्यतीत किया और कुछ ऐसी कविताएँ लिखीं, जो सच्चे अर्थ में एक हंगरियन देशभक्त की स्वाधीनता की अभिलाषा को प्रतिबिम्बित करती हैं। इसलिए जब एक माने हुए युवा कम्यूनिस्ट पीटर जीजेती ने सैण्डर पेटोफी के नाम पर स्थापित हुए क्लब में शामिल होने का निर्णय किया, तो निश्चय ही यह उसके जीवन की एक उल्लेखनीय बात थी।

बुडापेस्ट का पेटोफी-क्लब, निस्संदेह, मार्क्सवादी था और उसके सदस्य कम्यूनिस्ट थे, लेकिन उन सबका यह विचार था कि हंगरी को एक उदार हंगरियन कम्यूनिज्म की आवश्यकता है, जिस पर रूसी आधिपत्य न हो। खास तौर से, वे चाहते थे कि हंगरी की सम्पत्ति हंगरी में ही रहे और सोवियत गुप्त पुलिस

रूस तक ही सीमित रहे। इस क्लब के सदस्य कवि, नाटककार, उपन्यासकार, चित्रकार, अभिनेता और कुछ प्रमुख कम्यूनिस्ट दार्शनिक थे। इसके अधिकांश सदस्यों की उम्र तो ६० वर्ष के आसपास थी, लेकिन कई सदस्य पूर्णतः युवा भी थे। क्लब के सदस्य जोखिम उठानेवालों में से तो नहीं थे, पर एक ऐसे पत्र में इनकी पहुँच थी, जो निष्पक्ष भाव से बड़े बड़े सवालों पर अपने विचार प्रकट करता था। यह एक साहित्यिक पत्र था, जो लेखक-संघ की ओर से प्रकाशित होता था। इस पर नियंत्रण रखनेवाले सभी लेखक गुप्त रूप से पेटोफी क्लब के सदस्य थे। पत्र इतना सनसनीखेज निकलता था कि इसकी ७० हजार प्रतियाँ प्रकाशित होते ही हाथो-हाथ बिक जाती थीं। चूँकि पेटोफी क्लब में, मुख्य रूप से, पक्के कम्यूनिस्ट लोग थे; अतः इसके प्रतिक्रियावादी गिरोह होने के बारे में किसी को कोई सन्देह नहीं हो सकता था।

सन् १९५६ की गर्मियों में, जब पीटर जीजेती ने क्लब में प्रवेश किया, तब क्लब के सदस्य कम्यूनिज्म के अन्तर्गत हंगेरी के आर्थिक और नैतिक विनाश के प्रश्न पर बड़ी गम्भीरता से विचार कर रहे थे। वे लोग क्रान्तिवादी मार्ग न अपना कर दार्शनिक दृष्टिकोण से सरकार पर लगातार दबाव डाल रहे थे। जैसे-जैसे वे इस प्रश्न पर विचार करते थे, वैसे-वैसे उनकी धारणा दृढ़ होती जाती थी कि स्थिति सुधारने के लिए कुछ जबर्दस्त परिवर्तन अनिवार्य है।

पेटोफी क्लब के एक पुराने सदस्य का कहना है—"अपने देश के देहातों का भ्रमण करते समय मुझे यह देख कर दुःख हुआ कि अपनी बातों से नवजवानों को आकर्षित करने की शक्ति मैंने खो दी है। वे प्रतिक्रियावादी भी नहीं थे और 'फासिस्ट' भी नहीं, वरन् वे यह चाहते थे कि मैं उनकी समस्याओं के बारे में कुछ जोरदार और ईमानदारी की बात कहूँ। मैंने अपने-आप से प्रश्न किया—'क्या हम, पुराने कम्यूनिस्ट, लोगों का नेतृत्व सम्भालने की अपनी क्षमता खो बैठे हैं?' और, एक दार्शनिक होने के नाते, अपनी सम्मान-भावना से प्रेरित होकर मैं हंगेरी की शोचनीय स्थितियों का वर्णन करने लगा। ज्यों ज्यों मैं बोलता गया, मैंने देखा कि नौजवान मेरी ओर खिंच रहे हैं। इस प्रकार उन्होंने मुझे पुनः शिक्षित होने के लिए बाध्य किया। वह रात मैं कभी नहीं भूल सकूँगा, जबकि ग्योर-नामक नगर की सभा में मैं घंटों छात्रों के प्रश्नों का उत्तर देता रहा। इस प्रश्नोत्तर के क्रम में धीरे-धीरे मुझे, छात्रों के समक्ष नहीं तो कम से-कम अपने समक्ष, यह स्वीकार करना ही पड़ा कि हमारी वर्तमान प्रणाली दिवालिया हो गयी है।"

ऐसे विचारवालों के संसर्ग में अब पीटर जीजेती आ गया था। उस क्रान्तिकारी स्थिति के प्रति जागरूक रहते हुए, जिधर वे शांत पुरुष उसे लिये जा रहे थे, उसने उनके साथ पूर्ण रूप से सहयोग किया। मजे की बात तो यह, कि उन्होंने अपनी कुछ अत्यधिक उभारनेवाली बैठकें भी कम्यूनिस्ट युवा-संघ की ही इमारत में कीं, जहाँ आसपास में ए. वी. ओ. के आदमी भरे थे।

सन् १९५६ के अक्तूबर महीने के मध्य तक पेटोफी क्लब के सभी सदस्यों के समक्ष यह बात स्पष्ट हो गयी कि कुछ परिवर्तन अब अवश्यम्भावी हो गया है। हंगेरियन कम्यूनिस्टों को रूस से सम्बन्ध तोड़ना पड़ेगा और अपनी सरकार को इतना उदार बनाना पड़ेगा कि वह कम्यूनिस्ट राज्य न रह कर एक उदार समाजवादी राज्य बन जाये। इस बात को पहले-पहल खुले रूप से स्वीकार करने-वालों में पीटर जीजेती भी एक था।

जीजेती का कहना है—"मैं क्रान्ति के पक्ष में था। इतना ही नहीं, उसके आरम्भ के लिए भी मैं तैयार था।"

२३ अक्तूबर को, जब विश्वविद्यालय के छात्र अपनी शिकायतों की सूची को संशोधित करके अन्तिम रूप दे रहे थे, पेटोफी क्लब के प्रमुख सदस्य भी अपनी माँगों को तैयार कर रहे थे और उन्होंने उसे ठीक से लिख कर तैयार करने का भार पीटर जीजेती को सौंपा था। "हम ऐसे सुझाव प्रस्तुत कर रहे थे, जिनसे हंगरी की अवस्था में सुधार होता और वह रहने-योग्य एक अच्छी जगह बन जाता।" लेकिन सरकार ने उन सुझावों पर गम्भीरता से विचार नहीं किया।

इसीलिए जब जीजेती को रेडियो-स्टेशन और 'जबाद् नेप' के कार्यालय के उपद्रवों का समाचार मिला, तब उसे किंचित् सन्तोष हुआ। उसने सोचा—"हमने तो समस्या के शांतिपूर्ण समाधान का मार्ग बतलाया था, पर अब युद्ध होगा।"

२५ अक्तूबर को पार्लियामेण्ट-भवन के सामने आजादी के नारे लगाती हुई विशाल भीड़ में जब जीजेती शामिल हुआ, तब उसे इस बात की पूरी सम्भा-वना दीख रही थी कि दोपहर तक संघर्ष छिड़ जायेगा। उसने सोचा—"इस बार जनता सरकार से कोई निश्चित आश्वासन पाये बिना मानेगी नहीं।"

उस समय कोई सरकारी अधिकारी दिखाई नहीं पड़ रहा था, इसलिए सुबह का समय उसने भवन के सामनेवाले मैदान में स्थिति का अध्ययन करने में बिताया। "मैंने देखा कि पार्लियामेण्ट-भवन की छत पर ए. वी. ओ. के

आदमी मशीनगनों से लैस तैयार थे। उस भवन के उत्तर में स्थित सर्वोच्च न्यायालय-भवन की छत पर भी मशीनगनों की पंक्तियाँ सजी थीं। जहाँ मैं खड़ा था, वहाँ से दाहिनी ओर कृषि मंत्रणालय के कार्यालय में भी मशीनगनों की व्यवस्था थी। मैं सोच रहा था—"रेडियो-भवन में जिस ढंग से ए. वी. ओ. के आदमी पराजित हुए, उसे देखते हुए, यह निश्चित है कि आज वे लोगों को दंगा शुरू करने का अवसर नहीं देंगे। वे तुरत ही अपनी कार्रवाई शुरू कर देंगे।" जीजेती भीड़ के पीछे खड़ा था, इसलिए वह तो नहीं देख सका, पर पार्लियामेण्ट-भवन के नीचे भी शक्तिशाली रूसी टैंकों की एक पंक्ति खड़ी थी और उन पर रूसी सैनिक तैनात थे। उनके अधिकारी यह सोच रहे थे कि, कहीं उनके अपने आदमी 'ड्यूटी' के सिलसिले में उस क्षेत्र में परिभ्रमण के बाद हंगरीवासियों को आवश्यकता से अधिक चाहने तो नहीं लगे!

उन खूँख्वार मशीनगनों के होते हुए भी भीड़ के लोगों ने इम्रे नॉज को बुलाने के लिए नारे लगाना आरम्भ किया। वे नॉज के समक्ष अपने कई निवेदनपत्र प्रस्तुत करना चाहते थे। जीजेती की तरह भीड़ के पीछे खड़े लोग रह-रह कर आगे बढ़ने का प्रयत्न करते थे और परिणामस्वरूप आगे खड़े लोग रूसी टैंकों के बहुत करीब पहुँच जाते, लेकिन फिर तुरत ही थोड़ा पीछे हट जाते। भीड़ कोई विशेष हल्ला-गुल्ला नहीं मचा रही थी और न कोई उपद्रव ही कर रही थी, किन्तु फिर भी सर्वोच्च न्यायालय-भवन की छत पर खड़े एक सैनिक ने घबड़ा कर भीड़ पर एक गोली चला दी।

दुर्भाग्यवश वह गोली भीड़ में खड़ी एक महिला की गोद की बच्ची को जाकर लगी और वह अपनी मृत बच्ची को लिये-दिये भूमि पर गिर पड़ी, लेकिन फिर उस महान् दुःख में उसने अपनी बच्ची को हाथों पर ऊपर उठा लिया और यह कहती हुई एक सोवियत टैंक की ओर बढ़ी—"तुमने बच्ची को मार डाला—मुझे भी मार दो।" किन्तु यह संतप्त पुकार भीड़ पर गोलियाँ बरसाने-वाली ए. वी. ओ. की मशीनगनों की हुंकार में दब गयी। इसी समय एक टैंक-कप्तान ने, जो हंगरीवासियों को प्यार करने लगा था, अपनी टोपी उठा कर अपनी सहानुभूति प्रकट की और मुड़ कर अपनी आँखों के आँसू पोंछ लिये। और, उसके बाद उसने जो-कुछ किया, उससे बुडापेस्ट में आम संघर्ष का होना निश्चित हो गया। उसने क्रुद्ध हो कर अपने टैंक की मशीनगनों का मुँह सर्वोच्च न्यायालय की इमारत की छत की ओर कर दिया और धुआँधार गोली-वर्षा करके

वहाँ तैनात ए. वी. ओ. के आदमियों को भून डाला। अब स्वयं रूसी भी ए. वी. ओ. के आदमियों से लड़ रहे थे।

पीटर जीजेती सर्वोच्च न्यायालय के ठीक सामने कृषि-मंत्रणालय की इमारत के पास खड़ा था। इसलिए न्यायालय-भवन की छत पर तैनात ए. वी. ओ. के चेहरे पर छाये हुए आतंक को वह स्पष्ट देख सकता था। स्वयं उनके रूसी भाइयों ने जो-कुछ किया था, उसे देख कर वे भग्न और आश्चर्य में डूब रहे थे। इससे भी अधिक भयभीत वे इस बात से हुए थे कि रूसी टैंक कमांडर ने अपनी मशीनगनें उन पर भिड़ा दीं। इस परेशानी की अवस्था में, उन्होंने अपनी भारी मशीनगनों से अरक्षित भीड़ पर अंधाधुंध गोली-वर्षा आरम्भ कर दी। गोलियाँ जीजेती के ठीक सिर के ऊपर से गुजरती थीं। उसे गोलियों की सनसनाहट स्पष्ट सुनाई पड़ती थी।

उन भयानक क्षणों में ६०० से अधिक नागरिक धराशायी हुए और सब को यह विश्वास हो गया कि बुडापेस्ट की जनता के विरुद्ध ए. वी. ओ. की छेड़ी गयी यह लड़ाई समाप्त न होगी।

इसका प्रमाण भी तुरत ही सामने आ गया। दक्षिण की ओर स्थित बाथोरी स्ट्रीट में खड़ी एक 'एम्बुलेन्स' गाड़ी के डाक्टर जब मृतकों और घायलों से पटे हुए एस्क्वायर में आये और उपचार के लिए घायलों को ले जाने का प्रयत्न करने लगे, तो ए. वी. ओ. के आदमियों ने उन्हें भी गोलियों से भून डाला।

पीटर जीजेती ने, जो सन् १९४६ से हंगेरियन कम्यूनिज्म का एक अच्छा सदस्य था, जिसने कम्यूनिस्ट अधिनायकशाही-द्वारा प्रदान की गयी सम्पत्ति का उपभोग किया था और जो निश्चित रूप से ऊँचे पदों का उम्मीदवार था, डाक्टरों की इस प्रकार की गयी हत्या का दृश्य अपनी आँखों से देखा और उसे काठ मार गया। आज, अपने स्वभाव के विरुद्ध, उसने अपना आपा खो दिया और आवेश से काँपते हुए, ए. वी. ओ. के आदमियों को उनके मुँह पर गालियाँ देने लगा, —"हत्यारे! कुत्ते! जानवर!"

इसके बाद ही उसकी नजर एक रूसी सैनिक पर पड़ी, जो टैंकों की पंक्ति से हट गया था और अपनी राइफल नहीं चला रहा था। जीजेती तुरत ही उसके पास जा पहुँचा और उससे उसकी राइफल माँगी। पहले तो क्षण भर के लिए रूसी हिचकिचाया, पर फिर एस्क्वायर में पड़े लाशों के ढेर को देख कर और तात्कालिक भावना से प्रेरित

होकर, अपने एक प्रिय व्यक्ति की रक्षा के लिए, उसने जीजेर्ता को अपनी राइफल दे दी।

कम्यूनिज्म का वह चुनिंदा जवान और अधिक सहन न कर सकने के कारण, अपने कंधे से राइफल टिका कर कृषि-मंत्रणालय में तैनात ए. वी. ओ. के आदमियों पर गोली बरसाने लगा।

३. किलियन-बैरक में

कम्यूनिज्म को जब पहले पहल अपने अनुयायी देशों में से एक हंगेरी में महान् परीक्षा का सामना करना पड़ा, तब उससे यह बात तो स्पष्ट हो ही गयी कि जोसेफ टोथ-जैसे नवजवान, जिन्हें उस मत की दीक्षा दी गयी थी, उसके विरुद्ध हो गये थे; साथ ही, यह बात भी साफ हो गयी कि इस्तवान बालोग और पीटर जीजेती-जैसे प्रतिभावान नवजवानों ने भी, जो कम्यूनिज्म के भक्त बन चुके थे और जिन्हें कम्यूनिज्म ने ऊँचे पद देने का प्रलोभन देकर संतुष्ट कर रखा था, उस मत का केवल त्याग ही नहीं किया, बल्कि उसके विरुद्ध शस्त्र भी उठा लिये।

इतनी बड़ी असफलता देख कर रूसी नेता अवश्य ही बड़े दुःखी हुए होंगे और समितियों ने इस बात की सफाई देने के लिए बहाने ढूँढ़े होंगे कि उन लोगों के हाथों कम्यूनिज्म की इतनी बड़ी मनोवैज्ञानिक पराजय कैसे हुई, जिन पर अविश्वास करने का कम्यूनिज्म-प्रणाली के पास कोई कारण नहीं था। लेकिन क्रेमलिन के अधिनायकों को सबसे अधिक इस बात ने कँपा दिया होगा कि जब कम्यूनिज्म पर प्रहार हुआ, तो अत्यधिक विश्वासपात्र कम्यूनिस्ट सैनिकों ने भी उनका साथ नहीं दिया। वर्षों से कम्यूनिस्ट सैन्य-अधिकारी लाल सैनिकों को विशेष सुविधाएं और विशेष वेतन दे रहे थे तथा उनका विशेष ध्यान रखते थे। संकट की घड़ी में कम्यूनिज्म की रक्षा के लिए उन सैनिकों ने भी कुछ न किया।

बुडापेस्ट नगर की, जहाँ कम्यूनिज्म की परीक्षा हुई, स्थिति कुछ विचित्र है। यह नगर डेन्यूब नदी के किनारे, उस स्थान से कुछ मील नीचे की ओर बसा है, जहाँ से नदी अकस्मात् ८० अंश का कोण बनाती हुई दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। अतः जब यह ऐतिहासिक नदी बुडापेस्ट को दो भागों में बाँटती हुई इसके बीच से बहती है, तो इसकी धारा उत्तर-दक्षिण की ओर हो जाती है। इसके अतिरिक्त शेष समस्त भाग में इसका बहाव पूर्व-पश्चिम की ओर है।

रोमन सैनिकों के प्रथम प्रवेश से बहुत पहले, एक छोटी व्यावसायिक जाति डेन्यूब नदी के पश्चिमी तट पर आकर बस गयी थी। उन्हीं लोगों का वह नगण्य-सा गाँव आगे चल कर एक उल्लेखनीय रोमन व्यापारिक केन्द्र में परिणत हुआ।

यहाँ धरती के नीचे से गर्म रासायनिक जल के सोते निकलते थे, जहाँ रोमनों ने सुन्दर स्नान-घर बना लिये। बाद में नाट्यशालाओं और अच्छी इमारतों का भी निर्माण हुआ। इस प्रकार, नदी के पश्चिमी तट पर बसा हुआ बुडा नगर सुसंस्कृत यूरोप की एक चौकी बन गया। इसके बाद जब रोम का पतन हुआ और रोमन सैनिक वहाँ से हटा लिये गये, तब वे स्नान-केन्द्र और इमारतें उपेक्षित-सी हो गयीं। फिर भी बुडा एक एकान्त स्थल के रूप में आबाद रहा और यूरोप से भी उसका थोड़ा-बहुत सम्बन्ध बना रहा।

बाद में, नदी के पूर्वी तट पर पेस्ट नामक एक छोटा-सा गाँव उन्नति करने लगा और वह एशिया की ओर फैले पूर्वी देशों के साथ व्यापार का केन्द्र बन गया। शताब्दियों तक, डेन्यूब के दोनों किनारों पर बसी हुई ये बस्तियाँ एक-दूसरे की उन्नति को ईर्ष्या की दृष्टि से देखती रहीं। बुडा सुन्दर पहाड़ियों पर बसा हुआ, पेड़ों से घिरा, एक सुसभ्य नगर था और पेस्ट हंगेरियन मैदान में बसा एक गँवारू ढंग का व्यापारिक केन्द्र—सुन्दरता नाम की कोई चीज वहाँ नहीं थी। बुडा एक प्राचीन नगर था—वहाँ सँकरे मार्ग, हजारों वर्ष पुराने मकान, ऐतिहासिक किले आदि थे, जब कि पेस्ट अपने कारखानों, शक्ति और सम्पन्नता पर ही संतुष्ट था।

आगे चल कर दोनों मिल गये और संयुक्त नगर बुडापेस्ट, हंगेरी की राजधानी बना। १९-वीं शताब्दी में बुडापेस्ट का सामाजिक जीवन इतना विकसित हुआ कि वह वियेना की सामाजिकता से होड़ करने लगा और कुछ बातों में तो उससे भी आगे बढ़ गया। स्वभावतः दोनों एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी बन गये। दोनों ही नगर आस्ट्रिया-हंगेरी-साम्राज्य के आधे-आधे भाग की राजधानी थे और दोनों एक-दूसरे से केवल १७० मील की दूरी पर थे। दोनों शहरों के बीच रेल-सम्बन्ध तो था ही। डेन्यूब नदी में चलनेवाली आनंद-दायिनी नौकाओं के द्वारा भी दोनों में सम्बन्ध स्थापित था। अक्सर नौकाएँ अच्छी खाद्य-सामग्रियों और गाने-बजाने के सामान से लद कर बुडापेस्ट आती थीं। बुडापेस्ट-निवासी विविध कलाओं में अपनी दक्षता दिखाने वियेना जाते थे और वियेना-निवासी आनंदपूर्वक समय बिताने के लिए बुडापेस्ट आते थे। इस प्रकार, शीघ्र ही, बुडापेस्ट नगर छोटे पेरिस के नाम से विख्यात हो गया।

उस संयुक्त साम्राज्य के निवासी दोनों राजधानियों की तुलना करने में बड़े आनन्द का अनुभव करते थे। साधारण धारणा यही थी कि बुडापेस्ट की

स्त्रियाँ बहुत सुन्दरी होती थीं और वहाँ होनेवाले भोज बहुत ही जोरदार होते थे। दूसरी ओर, वियेना एक गम्भीर नगर था और वहाँ का सांस्कृतिक जीवन आपेरा, नृत्य और नाटक आदि के कारण अधिक प्रख्यात था।

बुडापेस्ट का जलवायु अधिक अच्छा था और वह सुस्वादु भोजन, उत्कृष्ट नृत्य, प्राकृतिक दृश्य, ऐश्वर्य-सम्पन्न रईसों तथा सताये हुए नागरिकों का नगर था। दूसरी ओर, वियेना अधिक धार्मिक, उत्कृष्ट संगीत, उत्तम आहार तथा अधिकारी-कोटि के नागरिकोंवाला नगर माना जाता था। भवन-कला की दृष्टि से दोनों नगर लगभग समान थे, किन्तु ऐसा माननेवाला एक भी व्यक्ति नहीं था कि बुडापेस्ट का-सा प्राकृतिक सौंदर्य वियेना में भी है।

दोनों नगरों के ऊँचे परिवारों में सामान्यतः विवाह-सम्बन्ध होते थे और किसी हंगेरियन धनिक की कन्या से विवाह करनेवाले भाग्यशाली वियेना-वासी को ताने नहीं सहने पड़ते थे। परन्तु वियेना की नृत्यशालाओं, नाट्यभवनों तथा संग्रहालयों के कारण आस्ट्रियावाले हमेशा मन-ही-मन अपने पड़ोसी हंगरियनों को देहाती मानते थे। पिछली शताब्दी के मध्यवर्ती वर्षों में वियेना एक ठोस साम्राज्यवादी केन्द्र बन गया था और वह अपने को आस्ट्रिया-हंगरी के संयुक्त साम्राज्य पर शासन करनेवाला मानता था। लेकिन असलियत में बुडापेस्ट ही वह जगह थी, जहाँ से साम्राज्य को नये विचार, नये रचनात्मक सुझाव और योग्य शासक प्राप्त होते थे। हंगरीवासी कहा भी करते थे कि समझदार लोग अपनी युवावस्था तक बुडापेस्ट में रहते हैं और बूढ़े होने पर वियेना में जाकर मरते हैं। इसके लिए वियेनावासियों का पुराना जवाब था—"एशिया वियेना के तीन मील पूरब से आरम्भ होता है।"

प्रथम विश्व-युद्ध के बाद हंगेरी और आस्ट्रिया अलग-अलग हो गये और दोनों अर्द्धांशों में जो सबसे बड़ा शक्तिशाली एवं सम्पन्न भाग था, उसकी राजधानी बनने का सुअवसर बुडापेस्ट को मिला। यदि दूसरा विश्व-युद्ध न छिड़ता और नगर पर अधिकार जमाये हुए जर्मनों पर आक्रमण करने के सिलसिले में, रूसी सैनिक इसे आंशिक रूप में नष्ट न कर देते, तो बहुत सम्भव था कि यह नगर सारे मध्य यूरोप की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण राजधानी बन जाता। (यहाँ ध्यान देने-योग्य मजे की बात यह है कि रूस अपनी इस कार्रवाई को 'रूसियों-द्वारा बुडापेस्ट की मुक्ति' के रूप में प्रचारित करता है, जबकि वियेना से उससे भी अधिक संख्या में जर्मनों को हटाने के लिए इंग्लैण्ड और

अमेरिका-द्वारा की गयी कार्रवाई को, जिसमें नगर को बहुत ही कम क्षति पहुँची, वह 'अमेरिका द्वारा वियेना का विनाश' कहता है।)

कम्यूनिज्म के अधीन नगर का पुनर्निर्माण हुआ और एक सुन्दर राजधानी के रूप में यह काम करने लगा। आरंभ में कम्यूनिज्म के अन्तर्गत, बुडापेस्ट को वास्तव में बहुत-से लाभ हुए। यदि कम्यूनिज्म-विरोधी इस बात को अस्वीकार करें, तो यह उनका भ्रम है। किसानों के बच्चों के लिए स्कूल और विश्वविद्यालय खोल दिये गये; जो लोग अच्छे मकानों की व्यवस्था नहीं कर पाते थे, उनके लिए उसका प्रबन्ध किया गया और कुछ समय तक ऐसा लगा कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत जितनी सुविधाएँ मिल सकती हैं, मिल रही हैं। अच्छी नाट्यशालाओं, फड़कते नृत्य और शानदार संगीत की भी वहाँ व्यवस्था की गयी। बुडापेस्ट में नयी और ऊँची इमारतों का निर्माण शुरू हुआ। रूसी सैनिकों की स्मृति में प्रभावशाली स्मारक बनने लगे। स्टालिन की एक भीमकाय मूर्ति बनवायी गयी और एक नये पुल का निर्माण भी हुआ, जो यद्यपि देखने में बहुत ही भद्दा था, फिर भी काम देनेवाला तो था ही।

बुडापेस्ट, बड़ी खूबसूरती से बुडा की पहाड़ियों तथा पेस्ट की समतल भूमि में विभाजित, एक निराला नगर था। नगर के बीच से बहती डेन्यूब नदी, जो इस स्थल पर आकर स्वयं भी बड़ी सुन्दर हो गयी थी, इसकी खूबसूरती में चार चाँद लगाती थी। इस नदी के तट पर ही नगर के सामाजिक जीवन के केन्द्र थे। यह नगर इस दृष्टि से भी निराला था कि तीन गोलाकार मार्ग इसे तीन खंडों में विभाजित करते थे। नगर का एक भीतरी छोटा मार्ग बुडा में आरम्भ होकर एक सुन्दर पुल के ऊपर से डेन्यूब को पार करता हुआ पेस्ट के कुछ हिस्सों से गुजर कर, एक दूसरा पुल पार करता था और फिर बुडा के मध्यवर्ती भाग में पहुँच जाता था। इसी तरह का एक दूसरा बाहरी बड़ा मार्ग था, जो बुडा और पेस्ट के चारों ओर चक्कर लगाता था, किन्तु जिन दो पुलों से होकर यह मार्ग गुजरता था, उनकी आपस की दूरी कई मील थी।

लेकिन इन दोनों के बीच का मार्ग बुडापेस्ट का गौरव था। यह मार्ग बुडा की गेलर्ट पहाड़ी के पीछे से आरम्भ होता था और बुडा की अन्य कई पहाड़ियों का चक्कर लगाने के बाद मार्ग्रेट-पुल से डेन्यूब नदी को पार करता था। दूसरी ओर पहुँचने के बाद यह मार्ग पेस्ट के भी महत्त्वपूर्ण भागों से गुजरता था और वहाँ इसे क्रम से लेनिन-मार्ग, जोसेफ-मार्ग और फेरेंक-मार्ग के नामों से सम्बोधित किया जाता था। तदुपरान्त प्रसिद्ध पेटोफी-पुल से होकर, जिसका नामकरण एक

हँगेरियन कवि के नाम पर हुआ है, यह मार्ग डेन्यूब को पार करता था और मारिज सिगमण्ड एस्क्वायर पर आकर, जिसकी आगे काफी चर्चा होगी, समाप्त हो जाता था।

इस प्रकार ये तीनों मुख्य गोलाकार मार्ग बुडापेस्ट को तीन भागों में विभाजित करते थे और नगर को वह रूप देते थे, जो निशाना लगाने के खेल में एक लक्ष्य-पट्ट का होता है। इन तीन मुख्य मार्गों के अतिरिक्त यातायात के लिए और भी अनेक रास्ते थे, जो बुडा और पेस्ट के बीच से निकलते थे। बुडापेस्ट की इस लड़ाई में इन सीधे रास्तों में से तीन स्टालिन-स्ट्रीट, रैकोजी स्ट्रीट और उलोई स्ट्रीट को अधिक प्रसिद्धि मिली। ये सभी रास्ते पेस्ट में थे, जहाँ मुख्य संघर्ष हुआ था। संघर्ष की सम्भावना भी यहीं थी, क्योंकि ये रास्ते नगर के बीचवाले मुख्य मार्ग को पार करते थे। हम लोग पहले ही देख चुके हैं कि रैकोजी-स्ट्रीट और जोसेफ-मार्ग के मोड़ पर, जहाँ 'जबाद नेप' समाचारपत्र का कार्यालय था, आरम्भिक संघर्षों में से एक हुआ और समाचारपत्र-कार्यालय की इमारत को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया; कम्यूनिस्ट पुस्तक-भांडार को जला दिया गया तथा स्टालिन की मूर्ति को अपमानित किया गया।

वहाँ से कुछ और नीचे जाने पर वह बीच का मार्ग काफी चौड़ी उलोई स्ट्रीट को पार करता है। उसके दक्षिणी-पूर्वी कोने पर पुराना किलियन-बैरक है। ईंट और पलस्तर से बना हुआ यह भद्दा बैरक चार मंजिला है और इसकी दीवारें चार फुट से भी अधिक मोटी हैं। युद्ध के पहले, जब कि बैरक का नाम 'मेरिया थेरसा बैरक' था, यहाँ बुडापेस्ट की रक्षा के लिए चुने हुए सैनिक रहा करते थे। कम्यूनिज्म के आने पर इन बैरकों में शासन-विभाग के विश्वासपात्र अफसरों का एक दल रहने लगा, जहाँ बुडापेस्ट-क्षेत्र से भर्ती होनेवाले सैनिकों को शिक्षित किया जाता था। यहाँ थोड़े-से खूँख्वार सैनिक रक्षक भी रखे गये थे और यद्यपि संकट के समय यहाँ ढाई हजार तक सैनिक रखे जा सकते थे, किंतु साधारणतः ४०० सैनिकों को ही रखा जाता था। इसके अतिरिक्त मजदूर बटालियन के कुछ आदमी भी यहाँ रहते थे, पर उन्हें हथियार नहीं दिये गये थे। बड़ी तोपें या टैंक यहाँ नहीं रखे जाते थे।

२३ अक्तूबर को एक हँसमुख और साहसी सार्जेंट, लैजलो रिगो किलियन बैरक की दूसरी मंजिल पर १९ नम्बर के कमरे में आया। उस २२-वर्षीय हंगेरियन किसान-युवक को कोई भी व्यक्ति अकारण ही प्यार कर सकता था। उसके मित्र उसे जोकी (चाकलेट का छोटा टुकड़ा) कह कर पुकारते थे,

क्योंकि उसका चेहरा बहुत ही भूरापन लिये था। उसकी आँखें काली, भवें मोटी, बाल काले और घुँघराले (जिनमें वह बाहर भी कंघी कर लेता था), मुँह बड़ा और दाँत सफेद थे। वह एक ऐसे तगड़े नवजवान की तरह लगता था, जो 'मार्लो ब्राण्डो' बनने की तैयारी में हो। परन्तु जब कभी वह खुल कर हँस पड़ता, तो वह भाव समाप्त हो जाता था। उसका जीवन सुखी था और तगड़ा तो वह इतना था कि सदा ही झगड़ पड़ने को तैयार रहता था।

उस रात, लगभग दस बजे वह एक सुन्दरी से मिलने की आशा में म्यूजियम पार्क में बैठा हुआ था, तभी उसे रेडियो-स्टेशन की ओर गोली चलने की आवाज सुनाई पड़ी। यह सोच कर कि कहीं कुछ सैनिक तो संकट में नहीं हैं, वह तेजी से उसी ओर चल पड़ा और वहाँ पहुँच कर उसने देखा कि रेडियो की इमारत से ए. वी. ओ. के आदमी भीड़ पर गोली चला रहे हैं।

अचानक ही जोकी को म्यूजियम पार्क की ओर ढकेलते हुए एक अजनबी चिल्लाया—"वहाँ से हट जाओ।" उस धक्के से सँभलने पर जोकी स्थिति को समझने के लिए फिर आगे बढ़ा। लेकिन इस बार भी, गोलियों की वर्षा के कारण, लोगों की रेल-पेल में धक्के खाता हुआ वह ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट के एक मकान के दरवाजे से जा टिका। अब उसने सोचा—"अच्छा हो, यदि मैं बैरक लौट कर कुछ बंदूकें ले आऊँ।"

तब तक वह इस बात का निश्चय नहीं कर सका था कि संघर्ष में उसे किस पक्ष का साथ देना चाहिए। उसे यह भी पता नहीं था कि लड़नेवाले दो पक्ष कौन-कौन थे? फिर भी उसके मस्तिष्क में इतना स्वतः आ गया कि, ए. वी. ओ. के आदमियों पर जो हमला करेगा, उसी का साथ उसे देना चाहिये।

वहाँ से मकानों की चार पंक्तियों के बाद ही बैरक था। वह तेजी से दौड़ पड़ा और बैरक पहुँच कर दूसरे मंजिल पर पहुँचने के लिए जल्दी जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ते हुए चिल्लाया—"रेडियोवाली इमारत में बड़ा भयंकर संघर्ष छिड़ा है। ए. वी. ओ. वाले लोगों पर गोली चला रहे हैं।"

उसने एक झटके के साथ अपने कमरे में प्रवेश किया और हथियारों की खोज में वह अपना सारा सामान तितर-बितर करने लगा। अकस्मात् उसे बड़े कमरे से कुछ संदेहास्पद ध्वनि सुनाई पड़ी और वह रुक गया। उसने बड़ी सावधानी से, कमरे के बाहर सिर निकाल कर झाँका और देखा कि सादे वस्त्र पहने एक व्यक्ति एक सैनिक के सिर पर, जो उसे पकड़ने के प्रयत्न में था, पिस्तौल ताने है। फिर उस नागरिक ने गोली चला दी और वह सैनिक मर कर गिर गया।

उन्होंने पलीतों में आग लगा दी और फिर एक क्षण तक बमों को पकड़े रखने के बाद उस काली रात में, अपने लक्ष्य की ओर, उन्हें सड़क पर फेंक दिया।

वे जलते हुए बम, एक बड़ा ही सुन्दर दृश्य उपस्थित करते हुए, गश्ती-कार की ओर बढ़े। पहला बम डलोई-स्ट्रीट के फुटपाथ पर गिरा और वहाँ इतने जोरों की अग्निशिखा फूट पड़ी कि कार के रूसी चालक की आँखें अवश्य ही चौंधिया गयी होंगी; क्योंकि दूसरे ही क्षण अचानक कार बैरक की दीवार की ओर झुक गयी। इसी बीच कार पर तीन और बम गिरे और वह अग्नि-ज्वाला में झुलसने लगी।

अब कार एक डूबती हुई नाव की भाँति चक्कर खाती, बैरक से हट कर, डलोई-स्ट्रीट पर आगे बढ़ी, पर तभी उसकी गैसोलिन की अपनी टंकी फट पड़ी। इस विद्रोह में रूसियों के मरने की यह पहली घटना थी।

सार्जेण्ट जोकी को उम्मीद थी कि सवेरा होने तक रूसियों की और अधिक शक्ति वहाँ आयेगी और उसकी यह धारणा बिल्कुल सही थी। २४ अक्तूबर के सवेरे ९ बजे किलियन-बैरक की वास्तविक लड़ाई शुरू हुई। अगले दो घंटों में १५ रूसी गश्ती-कारों ने बैरक पर हमला बोल दिया, पर उनका दुर्भाग्य भी उनके साथ ही आया था।

जोकी ने बतलाया—"हमारी समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि रूसी टैंकों का प्रयोग क्यों नहीं कर रहे थे, जब कि उन कारों को हम लगातार ध्वस्त करते जा रहे थे। अब सड़क के किनारे हमारी स्थिति बहुत अच्छी थी। वहाँ मकानों की पंक्तियों के घेरे में एक चौक-सा बन गया था और उस चौक के अन्दर एक बड़ा सिनेमा-घर था—कोर्विन सिनेमा। हममें से कुछ लोग कोर्विन-ब्लाक के उन मकानों की छत पर चढ़ गये। मेरे आदमी बैरक की सबसे ऊपर की दो मंजिलों पर तैनात थे। हमने इतना अच्छा अभ्यास कर लिया था कि हमारे बम सीधे उन कारों पर गिरते थे और इस प्रकार दो घंटों के अन्दर ही हमने ९ कारों को नष्ट कर दिया।"

लेकिन एक कार उस बीच के मुख्य मार्ग के पश्चिमी भाग में कुछ दूरी पर रुक गयी और उसमें बैठे लोगों ने बैरक पर बम फेंकना तथा भीषण रूप से गोली चलाना शुरू कर दिया। इसके परिणामस्वरूप हमारे कई सैनिक मारे गये।

"उस कार को उड़ा दो!"—अब हर कोई यही चीख रहा था और गैसो-लिन-बमों की उस पर वर्षा कर रहा था। लेकिन उस कार का चालक बड़ा चालाक था। उसने कार को एक सुरक्षित स्थान में ले जाकर लगा दिया। उस

नये स्थान से उन लोगों को बैरक पर गोली चलाने में विशेष सुविधा थी। प्रतिशोध की तीव्र भावना होने पर भी उस पर हमला करना हमारे लिए बड़ा कठिन था। कार पर बैठे लोग बैरक पर लगातार गोली-वर्षा करते रहे और जब उनकी गोलियाँ खत्म हो गयीं, तब कार बीचवाले मुख्य मार्ग पर हिलती-डुलती चल पड़ी। उस कार-द्वारा किये गये हमले का बड़ा भयानक परिणाम निकला; बहुत-से हंगेरियन मारे गये।

इस रूसी हमले के समाप्त हो जाने पर उस क्षेत्र में गहरी शांति छा गयी और उन्हीं क्षणों में किलियन-बैरक के सैनिकों ने एकत्र होकर शपथ ली—"यदि हममें से कोई भी रूसियों के आगे आत्म-समर्पण करेगा, तो हम उसे गोली मार देंगे।" जब हम लोगों ने उक्त निर्णय किया, तब हम सबके दिमाग में यही प्रश्न उठ रहा था—"जब एक कार इतनी बर्बादी कर सकती है, तो एक टैंक आ जायगा, तब क्या होगा?" किन्तु इस प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा किसी ने नहीं की, सबने निश्चय कर लिया कि जो होगा, देखा जायगा।

लेकिन जब तक टैंक पहुँचे, तब तक किलियन के जवानों को एक असीम साहसी माना हुआ नेता मिल गया था। जोकी ने पहले-पहल उसे किलियन की छत पर देखा था। वह एक दुबला-पतला व्यक्ति था—उसने एक भूरी पेटी बाँध रखी थी और उसके सिर पर रूसी ढंग की रोएँदार टोपी थी। उसका चेहरा खुरदरा और दागों से भरा था। वह था—कर्नल पाल मेलेतर, जिसका सैनिक जीवन बहुत ही जबर्दस्त और साहसिक कार्यों से पूर्ण था। पहले वह तानाशाह हार्थी का एक अफसर था, किन्तु बाद में उस गंदे काम से तंग आकर उसने उसे छोड़ दिया और सन् १९४४ ईसवी में हंगेरी में नाजियों के विरुद्ध चलनेवाले छिपे संघर्ष का एक नेता बन गया। इसके परिणामस्वरूप वह एक राष्ट्रीय नायक के रूप में विख्यात हुआ और रूसियों ने उसे कम्यूनिज्म की ओर से लड़नेवाला हंगेरियन सैनिक करार देकर, मास्को भेज दिया। अन्य सभी हंगेरियन सैनिकों की अपेक्षा रूसियों ने उसका अधिक आदर-सत्कार किया और अपना शुभेच्छु बना लिया; परंतु उस दिन जब कर्नल पाल ने अपने हंगेरियन भाइयों के विरुद्ध रूसियों को टैंक लेकर आते देखा, तो वह अपनी अन्तःप्रेरणा से प्रेरित होकर, नेतृत्व सम्भालने के लिए, किलियन-बैरक में आ गया।

सार्जेण्ट जोकी ने उसकी ओर देखते हुए मुस्करा कर कहा—"इस छत पर हमने काफी गैसोलिन-बम रख छोड़े हैं।"

मेलेतर ने जोकी के कुछ बमों की जाँच की और तब रूस में प्राप्त अपने

विशाल अनुभवों के आधार पर कहा—"टैंकों पर हमला करने के लिए ये पलीते कुछ और लम्बे होने चाहिये।"

"क्या सचमुच वे टैंक भेजेंगे?"—जोर्का ने प्रश्न किया।

"बहुत जल्दी।"—कर्नल मेलेतर ने जवाब दिया। इसके बाद उस बहादुर अफसर ने, जिसे उस क्रान्ति में एक बहुत बड़ा भाग लेना था, शांत पड़े मार्गों पर एक नजर डाल कर कहा—"वे जल्दी ही यहाँ पहुँचनेवाले हैं, सार्जेण्ट। तैयार हो जाओ।" बोलते-बोलते वह सीढ़ियाँ उतर कर नीचे जाने लगा।

लेकिन प्रथम टैंक के पहुँचने से पूर्व ही किलियन-बैरक में एक दूसरे प्रकार के लोग आ पहुँचे। वे थे, बुडापेस्ट के सभी भागों से आये हुए तगड़े नवजवान, जो लड़ाई का समाचार सुन कर सहायता पहुँचाने के लिए आये थे। उनके पास पुरानी बन्दूकें, हथगोले और तलवारें भी थीं। वे आकर बैरक में इस तरह हाजिर हो गये थे, मानो अपनी ड्यूटी पर उपस्थित हुए हों। इसी बीच रक्षकों का एक दूसरा बड़ा दल कोर्विन सिनेमावाले मकान में, जो उलोई-स्ट्रीट की दूसरी तरफ था, आकर अपना स्थान ग्रहण कर चुका था। बाद में लड़ाई शुरू होने पर उन लोगों ने बड़े महत्वपूर्ण कार्य किये। कुछ 'मेकैनिक' सिनेमा-भवन से निकल कर उलोई-स्ट्रीट पर आ गये और एक रूसी गाड़ी को, जो पूरी तरह नष्ट नहीं हुई थी, उलटने-पुलटने लगे। उस तलाशी में उन्हें टैंक उड़ानेवाली एक शक्तिशाली भारी 'गन' और थोड़े गोले प्राप्त हुए। उस 'गन' को एक मेहराब के नीचे से खींच कर सिनेमा-भवन में ले जाते समय वे जवान चिल्लाये—"पहले इस गन को कहीं बैठाओ। उसके बाद टैंकों पर इससे हमला करेंगे।"

किलियन-बैरक की इमारत उलोई-स्ट्रीट के दक्षिणी-पूर्वी कोने पर स्थित थी। यह उलोई-स्ट्रीट डेन्यूब के पूर्वी क्षेत्र से निकलनेवाली प्रमुख सड़कों में से एक है। उलोई-स्ट्रीट की दूसरी ओर, चौरास्ते के उत्तरी-पूर्वी कोने पर, उन भवनों की शृंखला थी, जिनके पीछे कोर्विन सिनेमा था। मकानों की उस शृंखला के बीच एक बड़ा सा मेहराब था, जिसके नीचे से अंदर की ओर रास्ता जाता था। वहीं से रक्षक-दल रूसियों पर गोली चला सकता था। उस सम्पूर्ण संघर्ष के समय वे दृढ़संकल्प सैनिक अपनी जान जोखिम में डाल कर उलोई-स्ट्रीट पर, इस पार से उस पार और उस पार से इस पार होकर, सुविधानुसार रूसी टैंकों पर हमला करते रहे।

बैरक की ऊपरी मंजिलों पर सार्जेण्ट जोकी और उन्हीं के जैसे दूसरे लोग तैनात थे। कोर्विन सिनेमा की छत पर भी अनेक साहसी युवा नागरिक बड़ी संख्या में गैसोलिन-बम लिये बैठे थे। और, इन सबके अतिरिक्त, प्रत्येक इमारत के तहखाने १२ से १६ वर्ष तक की उम्र के बच्चों से भरे थे—यह वस्तुतः एक बड़ा ही कुशल दाँव था। उन बच्चों की आँखों में एक अद्भुत चमक थी—किसी रूसी टैंक को नष्ट करने की इच्छा से उनके मन प्राण छटपटा रहे थे। स्पष्टतः उलोई-स्ट्रीट का प्रतिरक्षात्मक मोर्चा बड़ा सुदृढ़ था—किसी पूर्णतः सशस्त्र टैंक के लिए भी बच कर निकल जाना कठिन था। यह थी किलियन-बैरक की स्थिति।

लेकिन लंबे-चौड़े फेरेंक-मार्ग की स्थिति इससे बिलकुल भिन्न थी। यहाँ टैंक आवश्यकतानुसार स्थान-परिवर्तन कर सकते थे और एक टैंक-कमांडर यदि चाहता तो अपने को सुरक्षित स्थान में रख कर, उन लड़कों और नागरिकों को, जो उसे जला डालने के प्रयत्न में थे, अपने मशीनगनों की गोलियों से भून सकता था। साथ ही, अधिक शक्तिशाली गोले फेंक कर वह बैरक और सिनेमा, दोनों को उड़ा भी सकता था। इस मार्ग पर किसी टैंक को नष्ट करने के लिए जरूरी था कि कोई आदमी या लड़का, रेंगता हुआ उसके सम्मुख जाकर, 'गनों' के नीचे उस पर गैसोलिन-बम फेंके। इसलिए टैंक पर हमला करना किसी बड़े साहसी का ही काम था।

कई घंटों तक किलियन के आदमी उस न टलनेवाले आक्रमण की प्रतीक्षा करते रहे और बड़ी बेचैनी से अपना कौशल दिखाते रहे। सड़क पर एक लड़का आनेवाले टैंकों को देख कर सूचना देने के लिए नियुक्त था। बहुत देर के बाद अचानक वह चिल्लाया—"वह देखो, वह आ रहा है।" और, उसकी इस सूचना का लोगों ने हर्षध्वनि से स्वागत किया।

पेटोफी-पुल से होकर, बुडा की ओर से एक ध्वंसकारी रूसी टैंक जोरों से घरघराता हुआ चला आ रहा था। पुल पार करने के बाद वह उत्तर की ओर मुड़ा और मुख्य मार्ग पर बढ़ने लगा। उसमें दो बड़ी मशीनगनें और सुरक्षा के लिए धातु की मोटी चादर लगी थी। आगे की ओर निकली हुई एक लम्बी राइफल भी उसमें लगी थी, जो चलते समय टैंक के आगे-पीछे होने के कारण हवा में धीरे-धीरे हिलती-डुलती दिखाई पड़ती थी। यद्यपि अपनी भारी और चक्राकार चैन पर लुढ़कनेवाले उस टैंक की गति बड़ी धीमी थी, किन्तु कार्य वह बड़ी फुर्ती से कर सकता था। उस टैंक की चर्चा करते हुए सार्जेंट जोकी

कहता है—"वह टैंक आवाज बहुत कर रहा था, फिर भी ऐसा लगता था, जैसे वातावरण एकदम शांत हो; क्योंकि हम सब पूर्णतः शांत थे। वह मार्ग भी एकदम सुनसान था। किसी मकान के दरवाजों और खिड़कियों पर भी कोई दिखाई नहीं पड़ता था और न एक बच्चा कहीं नजर आता था।"

शत्रुओं को देखने के लिए, बैरक के उलोई-स्ट्रीट वाले भाग से अनेक सैनिक मुख्य मार्ग की ओर दौड़ पड़े, लेकिन वह दानवाकार टैंक ज्यों ज्यों आगे बढ़ता गया, त्यों-त्यों उनके भय की मात्रा भी बढ़ती गयी। लेकिन अब घबरा कर सोचने-विचारने का अवसर कहाँ था! कोर्विन सिनेमा के लोग जोरों से चिल्ला उठे, क्योंकि उन्होंने ध्वस्त 'जबाद नेप पुस्तक-भंडार' की ओर से उत्तर की ओर बढ़ते हुए दो और टैंकों को देखा था।

सार्जेण्ट जोकी ने अपने बम फेंकनेवालों को बैरक में उपयुक्त स्थानों में भेज कर, उलोई स्ट्रीट पर कालविन-स्क्वायर की ओर अपनी दृष्टि दौड़ायी। उधर से भी चार टैंक बैरक की ओर बढ़े आ रहे थे। इस प्रकार चौंतीस-चौंतीस टन के विध्वंसकारी टैंक अब किलियन को भस्म कर देने पर उतारू थे।

"इधर से भी आ रहे हैं।"—जोकी गंभीर स्वर में बोला। पर इस बार टैंकों के आगमन का समाचार सुनने पर कहीं कोई हर्षध्वनि नहीं हुई।

अपराह्णकाल था और अक्तूबर महीने का सूर्य बुडापेस्ट की छतों को प्रकाशित कर रहा था। ज्यों-ज्यों वे सातों टैंक करीब आ रहे थे, जोकी के कुछ सैनिकों का भय उनके चेहरे पर स्पष्ट हो रहा था। पहले दस मिनटों तक रूसियों को सब-कुछ अपने मनोनुकूल करने का अवसर मिला और उनकी भारी 'गनों' ने बैरक पर गोली-वर्षा करके भयंकर क्षति पहुँचायी। बैरक के एक कोने को तो उन्होंने नष्ट ही कर दिया। इस आक्रमण में ७० से भी अधिक रक्षक मारे गये और कम-से-कम १५० बहुत बुरी तरह घायल हुए। ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो रूसियों की विजय निश्चित है।

लेकिन ठीक इसी समय, जब कि ऐसा लग रहा था कि टैंक बिना कोई क्षति उठाये बैरक पर अधिकार पा लेंगे, एक बस कंडक्टर ने, जो अब तक अपनी म्युनिसिपल वर्दी में ही था, संघर्ष का रुख बदल दिया। पिछले कई घंटों से वह अज्ञात प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति कोर्विन सिनेमा के सामनेवाले स्क्वायर के भीतरी भाग में, उस टैंक-विध्वंसक 'गन' को, जो ध्वस्त रूसी गाड़ी से बरामद की गयी थी, ठीक करने में लगा हुआ था। पहले तो ऐसा लग रहा था कि वह

ठीक न हो सकेगी, किन्तु फिर भी उस बस-कंडक्टर ने उसका पीछा नहीं छोड़ा; भूत की तरह वह काम से जुटा ही रहा।

अंत में उसने अपने अनुमान के आधार पर घोषणा की—"अब मेरा खयाल है कि यह काम करेगी।" यह सुन कर कुछ नवजवान कारीगर 'गन' को उपयुक्त स्थान में ले गये, लेकिन तभी कंडक्टर ने उनसे कहा—"अच्छा हो कि अभी आप लोग इसके पीछे रहें, क्योंकि हो सकता है कि यह फट पड़े।" इसके बाद उसने बड़े परिश्रम से निशाना साध कर एक रूसी टैंक पर गोली दाग दी।

जोकी बतलाता है—"उस क्षण मैंने सबसे अच्छी चीज देखी। टैंक ऊपर की ओर उठा, फिर एक मिनट तक आगे-पीछे होता रहा और उसके बाद वह फट पड़ा।"

इस घटना ने रूसियों को चकित कर दिया। वे कुछ समय तक यही सोचते रहे कि क्या हो गया? उन्होंने एक खोज-भरी दृष्टि सड़कों पर डाली, पर कोर्विन के पास लगायी गयी उस 'गन' को वे न देख सके, क्योंकि बीसों नवजवानों ने बड़ी फुर्ती से उसे खींच कर अन्दर कर लिया था।

अब रूसी दूसरी बार बहुत सतर्कतापूर्वक आगे बढ़े, लेकिन कृतसंकल्प किलियन के निशानेबाजों ने अपनी महान् शक्तिशाली राइफलों से टैंकों के कमजोर स्थलों को ढूँढ़-ढूँढ़ कर उन पर गोली चलाना आरम्भ कर दिया। फलतः टैंकों के अन्दर ही कुछ आदमी मर गये; लेकिन इससे कहीं अधिक दुर्गति उस टैंक की हुई, जिसका मार्ग एक विनष्ट टैंक और दो अन्य जलायी गयी गश्ती-गाड़ियों के कारण रुक गया था। कुछ निर्णय न कर सकने के कारण टैंक दो मिनट तक रुका रहा। इसी बीच जोकी के आदमियों ने छत से गैसोलिन-बम फेंकना आरम्भ कर दिया। साथ ही, पेस्ट के कुछ निर्भीक और साहसी लड़कों ने भी 'गनों' के नीचे से आकर, बहुत निकट से, टैंक पर बम फेंके। गैसोलिन-बमों के कारण टैंक के जलने से एक बड़ी जोर का धमाका हुआ और धुआँ छोड़ता हुआ केवल लोहे का एक ढेर वहाँ रह गया।

लेकिन बैरक पर आक्रमण करनेवाले पाँच दैत्यरूपी रूसी टैंक अभी शेष ही थे। उलोई-स्ट्रीट और मुख्य मार्ग से वे लगातार किलियन-बैरक की दीवारों पर गोले बरसा रहे थे और उनके इस हमले से बैरक की चार फुट मोटी दीवार के कुछ अंश के ढह जाने की पूरी आशंका थी।

अब फिर ऐसा प्रतीत होने लगा कि कोई भी हंगेरियन शक्ति उन अत्याचारियों का नाश नहीं कर सकेगी; क्योंकि वे कोर्विन सिनेमावाली 'गन' की

पहुँच के बाहर थे। लेकिन इसी अवसर पर मकानों के तहखानों में छिपे बच्चों ने अपनी कारगुजारी दिखायी और सारा नक्शा ही बदल गया। ऐसी संकट की घड़ी में उन्होंने वह तरकीब लगायी, जो उनके बड़ों से भी नहीं हो सकती थी। उन लोगों ने बैरक के तहखाने से कोर्विन-ब्लाक के एक तहखाने तक, उलोई-स्ट्रीट के आरपार, एक पतली रस्सी तान रखी थी। इस रस्सी के एक छोर पर उन्होंने एक साथ पाँच बड़े हथगोले बाँध रखे थे।

उनके इस गुप्त अस्त्र को प्रयोग करने का यही समय था। ज्यों ही एक टैंक, दोनों इमारतों की ऊपरी मंजिलों को अपनी मशीनगनों की गोलाबारी से पूर्णतः खाली करने के बाद, उलोई-स्ट्रीट पर बढ़ने लगा, त्यों ही उन बच्चों ने सावधानीपूर्वक रस्सी को सड़क के दोनों किनारों से, इस प्रकार खींचा कि गोले टैंक के पहियों के नीचे आ गये। फलतः तुरत ही एक बड़े जोरों का धमाका हुआ और, टैंक बेकार होकर जहाँ-का-तहाँ खड़ा रह गया।

दूसरे ही क्षण, वे साहसी जवान बैरक की खिड़कियों पर आ पहुँचे और उस टैंक पर गैसोलिन-बमों की वर्षा करने लगे। तभी एक गोले से टैंक की गैस-नली में आग लग गयी और तहखाने में छिपे बच्चे हर्ष से चिल्लाने लगे—"गया। अब गया!" अंत में ज्वलन्त गैसोलिन टैंक की तेल की टंकी तक पहुँच गया और एक घनघोर आवाज के साथ टैंक उड़ गया। इस प्रकार ९० मिनट की भीषण लड़ाई में तीन रूसी टैंक नष्ट किये गये।

यह नहीं कहा जा सकता कि किलियन-बैरक के जवानों और लड़कों ने सातों सशस्त्र टैंकों को पीछे हटा दिया। यह अवश्य सही है कि बाकी चार टैंक वापस लौट गये, लेकिन इसका कारण सम्भवतः यह था कि बैरक पर अंधाधुंध गोला-बारी करने के कारण उनके पास का गोला बारूद समाप्त हो गया था। इस संघर्ष में बैरकवालों की पूर्ण विजय भले ही न कही जाये, क्योंकि बैरक को आन्तरिक रूप से बहुत भारी क्षति पहुँची थी और जानें भी बहुत गयी थीं (आधे से अधिक व्यक्ति मार डाले गये थे), फिर भी यह निश्चित है कि इस संघर्ष ने रूसियों को बहुत बड़ा सदमा पहुँचाया होगा। उन्होंने अपने तीन टैंकों को, जो संसार के सर्वाधिक शक्तिशाली टैंकों में से थे, पूर्णतः नष्ट होते देखा था—वह भी अधिकांशतः केवल हाथ से फेंके जानेवाले अस्त्रों से। इससे उन्होंने अवश्य ही यह बात समझ ली होगी कि बुडापेस्ट की लड़ाई बहुत महँगी, लम्बी और घातक सिद्ध होनेवाली थी।

किलियन बैरक वाले संघर्ष में हंगेरियनों की विजय न कहने का एक कारण और

भी था। जब बाकी टैंक वहाँ से हटे, तब बैरक के भीतरी भाग की अवस्था बड़ी ही शोचनीय हो गयी थी—इतनी अधिक, कि लगता था, कुछ मंजिलों की छतें अब-तब में गिर जायेंगी। अतएव सैनिकों ने शीघ्र ही बैरक को खाली कर दिया। कुछ सैनिक एक नाले से होकर, जो कोर्विन-ब्लाक के मकानों की ओर जाता था, निकल गये। वहाँ पहुँच कर उन्होंने जैसे-तैसे सिनेमा में अपना सदर मुकाम कायम किया। वहीं से जोकी कुछ सैनिकों को लेकर बाहर आया और सड़क पर उसने एक घेरा डाल दिया, जिससे वह साहसी बस-कंडक्टर, जिसने पहली टैंक विध्वंसक 'गन' प्राप्त की थी, एक दूसरे नष्ट हुए टैंक से और भी टैंक-विध्वंसक 'गन' निकाल सके।—जोकी अब भी उसके बस-कंडक्टर के बारे में यही कहता है कि वह बड़ा विचित्र प्राणी था।

उसे दूसरी 'गन' मिल भी गयी, जिसे उसने सिनेमा के पास एक ठेले पर रख कर, दूसरी दिशा में हमला करने के लिए, तैयार किया और अगले आक्रमण की प्रतीक्षा में बैठे-बैठे उसे नींद आ गयी।

इसके बाद दिन-भर कोई हमला नहीं हुआ और इस बेकारी की स्थिति में जोकी तथा उसके साथियों ने सोचा—"बैरक को यों खाली छोड़ देना लज्जा की बात है।" अतः वे फिर बैरक में लौट गये और भारी लकड़ियों के सहारे टिका कर, छतों को गिरने से रोकने की व्यवस्था करने लगे।

वे लोग वहीं थे, जब रूसियों का सबसे जोरदार हमला हुआ। इस बार ९ टैंक उधर ही बढ़े आ रहे थे, जिनमें से अधिकांश फेरेंक-मार्ग पर थे। आते ही, उन्होंने लगातार गोले छोड़ कर कोर्विन सिनेमा को विध्वंस करना आरम्भ किया। उन टैंकों में से अचानक एक के गोले ने दो में से एक टैंक-विध्वंसक 'गन' को नष्ट कर दिया। अब उस बस-कंडक्टर के पास केवल एक ही 'गन' रह गयी। उधर सैनिकों के पास भी केवल कुछ ही गोले और गैसोलिन बम रह गये थे। अब इतनी ही सामग्रियों से उन्हें शस्त्रास्त्रों से लदे ९ जबर्दस्त टैंकों का सामना करना था।

फिर भी वे हिम्मत न हारे और उन्होंने दो टैंकों को नष्ट कर दिया, साथ ही अपनी एकमात्र 'गन' की रक्षा करने में भी सफल हुए। बाकी सात टैंकों को इस बार भी वापस जाना पड़ा। जब वे सातों टैंक वापस लौटे, तब सिनेमा के आसपास भयानक सनसनी थी। इस बार भी बहुत-से हंगेरियन मारे गये थे। फिर भी रूसियों के हाथ विजय नहीं लग सकी थी। मानो इसी बात को प्रमाणित करने के लिए, एक धृष्ट हंगेरियन युवक वापस जानेवाले टैंकों के पीछे दौड़ कर अन्तिम टैंक पर एक गैसोलिन-बम फेंक आया।

"यह एक मनोहर विदाई-चुम्बन था। हालाँकि उस युवक का निशाना चूक गया, फिर भी उसकी सूझ अच्छी थी।"—अपने संस्मरण में जोकी कहता है।

इसके दो घंटे बाद संघर्ष का सर्वाधिक नाटकीय भाग उपस्थित हुआ। तीन रूसी टैंक पेटोफी-पुल को पार कर, मुख्य मार्ग से होते हुए, उलोई-स्ट्रीट के मोड़ पर, युद्ध करने के लिए आ रहे थे। लेकिन इनमें से पहला टैंक, जो बड़ी तेजी से आया था, जब मोड़ पर पहुँच गया, तब उसके चालक को इस बात का ध्यान आया कि पहले नष्ट हुए पाँचों टैंक सड़कों पर ही पड़े हैं, इसलिए आगे-पीछे हटने-बढ़ने या घूमने के लिए वह स्थान सुरक्षित नहीं था।

इसी समय वह बस-कंडक्टर अपनी बाकी बची एक 'गन' को ठीक जगह पर ले आया, लेकिन उसके गोली चलाने के पहले ही रूसियों की नजर उस पर पड़ गयी। किन्तु उस 'गन' को उड़ा देने के बदले रूसियों ने टैंक का द्वार खोला और समर्पण का सूचक सफेद झंडा फहरा दिया। उनके इस कार्य से किलियन-बैरक के लोग आश्चर्यचकित हो गये। पीछे के दो टैंकों ने यह हाल देखा, तो वे जहाँ थे, वहीं से मुड़ कर पेटोफी-पुल की तरफ भाग चले।

अब जोकी और कुछ अन्य लड़के कोर्विन सिनेमा से निकल कर रूसी टैंक की ओर बढ़े और बैरक के आँगन में उसे चलाने लगे। अब भी जोकी उस क्षण को याद कर के हँसता हुआ कह उठता है—"हम कम शैतान नहीं थे।" उन्होंने टैंक को द्वार मार्ग में लाकर खड़ा कर दिया और फिर कुछ देर के बाद एक कारीगर ने टैंक को उलटा चला दिया। टैंक पूरी तेजी से पीछे की ओर हटा और तभी रुका, जब सड़क को पार कर वह सिनेमावाले ब्लाक की एक दीवार से जाकर टकरा गया।

इस प्रकार उस डगमगाते टैंक के पीछे हटने से कुछ सैनिक कुचल कर मरणासन्न हो गये। वे चीख उठें—"तुम लोग तो इस टैंक को लेकर हमें इतनी क्षति पहुँचा रहे हो, जितनी रूसियों ने भी नहीं पहुँचायी।"

अंत में, कुछ लड़कों ने, जो कारीगर थे, टैंक की गति आगे की ओर कर दी और उसे वहाँ ले गये, जहाँ से वे नियंत्रण रख सकते थे। अब टैंक से सटी हुई ऊपर की ओर बैरक की दीवारें खड़ी थीं, जो गोलों से छलनी हो गयी थीं और दाहिनी ओर कोर्विन-ब्लाक का गोली-बारी से कमजोर हुआ बाहरी हिस्सा था। उसके आसपास पड़ी थीं लाशें......एक लड़के की लाश, जिसने एक

टैंक पर बम फेंकने का प्रयत्न किया था; एक महिला की लाश, जो दुर्घटनावश मारी गयी थी; एक बुरी तरह झुलसी हुई लाश और एक रूसी की लाश, जो अपने जलते हुए टैंक से कूद पड़ा था।

अब हम २२-वर्षीय दिलेर सार्जेंट जोकी (चाकलेट का छोटा टुकड़ा) को, जो मार्लो ब्राण्डो की तरह दीखता था, यहीं छोड़ कर आगे बढ़ते हैं। होने-वाले हमले की प्रतीक्षा में टैंक पर बैठते ही उसने अपने साथी कारीगरों से कहा था—"हम उन्हें बहुत नजदीक तक, बिना किसी बाधा के, आने देंगे और उसके बाद गोलियों से भून डालेंगे।"

बाद में यहाँ जो लड़ाई हुई, उसमें और भी कई टैंक नष्ट किये गये—कुल ध्वस्त टैंकों की संख्या बीस और बख्तरबन्द गाड़ियों की संख्या ग्यारह तक पहुँची। उन टैंकों से खाली हाथ लड़ते हुए सैनिक भी काफी संख्या में मारे गये, लेकिन अंत तक रूसी सैनिक न तो किलियन-बैरक पर अधिकार जमा सके और न कोर्विन सिनेमा पर।

किलियन-बैरक की यह चमत्कारपूर्ण लड़ाई न तो रूसी टैंकों पर हंगेरियन देशभक्तों की विजय थी और न यह निहत्थे लोगों तथा बच्चों की वीरतापूर्ण लड़ाई थी। इसका सारा रहस्य तो इस साधारण-से तथ्य में छिपा है कि उस २३ अक्तूबर की रात में बैरक के ४०० कम्यूनिस्ट सैनिकों में, जो रूसियों-द्वारा प्रशिक्षित और सुखपूर्वक पालित-पोषित थे, एक भी सैनिक कम्यूनिज्म के प्रति वफादार नहीं रह गया था।

सम्पूर्ण हंगेरी में, कम्यूनिज्म के विरुद्ध जानेवाले लोगों की प्रतिशत संख्या लगभग यही थी। बहुत-से विशेषज्ञों का तो यह भी विश्वास है कि यदि बलगेरिया, और पोलैण्ड के सैनिकों को भी ऐसा ही अवसर मिले, तो कम्यूनिज्म के प्रति हथियार उठानेवालों की वहाँ भी कमी न होगी। जेकोस्लोवाकिया की सेना के सम्बन्ध में यह बात शायद लागू नहीं हो सकती। वे कुछ विचित्र कारणों से रूस का समर्थन करेंगे। दूसरी ओर, यूक्रेन के सैनिक, सम्भव है, आरम्भ में अस्थायी रूप से अपने कम्यूनिस्ट स्वामियों का साथ दें, लेकिन अधिक समय तक वे भी ऐसा नहीं कर सकेंगे। और, जैसा कि हम आगे चल कर देखेंगे, उजबेकिस्तान, ताजीकिस्तान और मध्य-एशिया के अन्य सोवियत जनतंत्रों के सैनिकों पर भी निश्चित रूपसे विश्वास नहीं किया जा सकता कि वे रूस के प्रति वफादार हैं।

रूस के विरुद्ध लड़नेवाले एक हंगेरियन सैनिक ने लड़ाई के समाप्त हो जाने

पर ठीक ही कहा—"रूस जीत तो गया, किन्तु प्रत्येक हंगेरियन के पीछे, जिसे उसने बंदूक दी है, अपने दो सिपाही तैनात करने में ही उसकी भलाई है। यह बात दूसरी है कि क्रेमलिन इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार न करके इस तथ्य की उपेक्षा कर दे।"

४. क्षणिक स्वप्न

२३ अक्तूबर को आरम्भ हुई बुडापेस्ट की लड़ाई को मुख्यतः तीन अध्यायों में बाँटा जा सकता है। पहला अध्याय २९ अक्तूबर को समाप्त हो गया, जब रूसियों ने अपनी आशा के विरुद्ध होनेवाले प्रतिरोध से सावधान होकर एवं चतुराई से पुनस्संगठन करने के विचार से एक प्रकार से अपनी हार मान ली और नगर को स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले लोगों के सुपुर्द कर दिया।

दूसरा अध्याय बहुत छोटा, किन्तु बड़ा ही मधुर था। पाँच दिनों तक बुडापेस्ट-निवासी अत्यन्त प्रसन्न रहे; क्योंकि भ्रमवश उन्होंने यह समझ लिया था कि आखिर हंगेरी रूसी दासता से मुक्त हो गया और ए. वी. ओ. के आतंकपूर्ण शासन के स्थान पर कोई अधिक उदार सरकार स्थापित होगी।

तीसरा अध्याय आरम्भ हुआ ४ नवम्बर को, जब रूसी टैंक काफी सशक्त रूप से नगर में वापस लौटे और ए. वी ओ. से भी अधिक आतंक पैदा करके उन्होंने क्रांति को बलपूर्वक कुचल डाला। रूसी न केवल विजयी हुए, बल्कि प्रतिशोध की भावना के कारण उन्होंने संहार-कार्य में बड़े आनंद का अनुभव भी किया।

लेकिन उन पाँच दिनों में ही, जब बुडापेस्ट ने स्वाधीनता के उस क्षणिक स्वप्न का आनंद लिया, नगरवासियों ने कई ऐसे महत्वपूर्ण परिवर्तन अनुभव किये, जिनके अध्ययन-मात्र से ही यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि स्वतंत्र हंगेरी का रूप कैसा होता। उन दिनों की एक स्पष्ट झाँकी पाने के लिए अच्छा होगा कि उन पाँच दिनों में, २९ अक्तूबर से ४ नवम्बर तक, एक परिवार की दशा पर दृष्टि डाली जाये।

एक सुंदर युवा दम्पति जोलतान पाल और इवा पाल, जिनकी उम्र बीस से तीस वर्ष के बीच थी, उत्तरी बुडा के एक चार-मंजिले मकान की ऊपरी मंजिल में रहते थे। उस निवास-स्थान के भाड़े में ही, जिसमें ईंधन, प्रकाश और अन्य किसी प्रकार का भाड़ा शामिल नहीं था, उनके मासिक वेतन का एक बड़ा भाग चला जाता था। वह मकान सरकार का था। श्रीमती पाल कहती है—"सीधा-सा नियम था कि मकान के अन्दर किसी तरह की मरम्मत

की जरूरत हो, वह भाड़ेदार कराये और बाहरी भाग की मरम्मत सरकार करायेगी; लेकिन मकान के बाहरी भाग की मरम्मत कभी नहीं करायी गयी।"

पति-पत्नी दोनों नौकरी करते थे, जोलतान एक मोटर-कारीगर था और इवा डाक-विभाग में नौकर थी। यदि इवा नौकरी नहीं करती, तो शायद दोनों को भूखों मरना पड़ता। जोलतान कहता है—"मुझे प्रतिमास १,५०० फारिन्ट मिलते थे और मेरी पत्नी को १,००० फारिन्ट। इसलिए हम लोग धनी माने जाते थे। लेकिन उस २,५०० फारिन्ट की रकम का एक बड़ा भाग कम्यूनिस्ट-पार्टी के लिए, बीमा के लिए, ए. वी. ओ. के कोष के लिए और अध्ययन-संघों के लिए, हमसे ले लिया जाता था। इन सबके बाद हमें कर भी चुकाने पड़ते थे।"

श्रीमती पाल नीली आँखों और चिपटी नाकवाली एक गोरी सुन्दर युवती थी। छः वर्षों तक नौकरी करने के बाद भी उसके पास केवल एक कोट, दो जोड़े जूते, एक जोड़ी चप्पल, चार पोशाकें, दो जोड़े मोजे और एक चश्मा ही था। उस चश्मे का फ्रेम भी उसे चोरबाजार से खरीदना पड़ा था। आँख का डाक्टर एक मरीज की जाँच के लिए केवल तीन मिनट का समय देता था। यदि आप अपनी आँख-दाँत की शिकायतों की जाँच ठीक से कराना चाहते, तो आपको चोर-बाजार का सहारा लेना ही पड़ता। सरकारी डाक्टर के पास जाने की किसी को हिम्मत नहीं होती; क्योंकि वे साधारणतः यही झिड़की देते—"मर तो नहीं गये हो—फिर यहाँ क्यों आये हो? काम पर जाओ।"

बस, एक चीज ऐसी थी, जिसके बारे में श्रीमती पाल को चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी; वह थी साज-शृंगार। प्रत्येक कार्यालय में पाँच-छः लड़कियाँ मिल कर चोर-बाजार से लिपस्टिक और पाउडर खरीद लाती थीं। उनमें से जब कोई लड़की किसी लड़के के साथ जाते समय अपनी सुन्दरता बढ़ाना चाहती थी, तो वह लिपस्टिक और पाउडर का प्रयोग करती थी। लेकिन ऐसे अवसर उसे वर्ष-भर में चार पाँच बार ही प्राप्त होते थे। श्रीमती पाल कहती है—"हालाँकि मैं विवाहित थी, फिर भी कभी-कभी मुझे शृंगार करने की इच्छा होती थी और इसीलिए मैं उन चीजों की खरीद में सहायता करती थी। लेकिन हम विवाहित लड़कियाँ साधारणतः उन चीजों को अविवाहित लड़कियों के लिए ही छोड़ देती थीं। मैं साल-भर में केवल दो बार अपना सजाव करती थी।"

चूँकि श्रीमती पाल डाकघर में काम करती थी और उसे गुप्त संदेशों की जानकारी हो जाने की पूर्ण संभावना थी, इसलिए ए. वी. ओ. वाले उस पर

बड़ी कड़ी निगरानी रखते थे। उसे अपने बारे में शायद इतने प्रश्नोत्तर-फार्म भरने पड़े होंगे, जितने आकाश में तारे हैं।

किसी पुरुष के लिए वस्त्र प्राप्त कर सकना और भी कठिन था। जोलतान, जो अन्य हंगेरियनों की ही तरह दुबला-पतला, किन्तु औसत से कुछ अधिक लम्बा था और जिसे शायद ही कभी पर्याप्त भोजन मिल पाता था, कहता है—"अपने लिए केवल एक 'सूट' बनाने के लिए पैसे बचाने के प्रयत्न में मुझे गंजी ही पहन कर बाहर निकलना पड़ता था। इस दशा में छः महीने तक रहने के बाद हम एक सूट के लिए आवश्यक पैसे जमा कर सके और इस बीच हम एक भी सिनेमा नहीं देख सके। मेरी पत्नी को नृत्य बहुत पसन्द है—फिर भी उन छः महीनों में हम एक बार भी किसी संगीत-शाला में नहीं जा सके।"

इवा का कहना है कि उसका पति एक अच्छा नर्तक है, लेकिन एक बार किसी नृत्य-समारोह में भाग लेने में कम-से-कम १५० फारिन्ट लगते थे, जो कम्यू-निस्ट-कटौतियों के बाद बचे वेतन का लगभग एक चौथाई भाग था। इसलिए हम नृत्य-समारोहों में अधिक नहीं जा पाते थे।

वास्तव में, पाल-दम्पति सामाजिक रूप से बहुत कम कम्यूनिस्टों को जानते थे; क्योंकि सम्पूर्ण हंगेरी में, जिसकी आबादी लगभग एक करोड़ थी, कम्यूनिस्टों की संख्या १२ लाख से अधिक नहीं थी। इसलिए पाल दम्पति की भेंट जिन लोगों से होती थी, उन प्रत्येक ८ व्यक्तियों में से ७ व्यक्ति पार्टी के सदस्य नहीं होते थे। इवा कहती है—"डाकघर में सभी उच्चाधिकारी कम्यूनिस्ट थे। उनमें निस्संदेह ए. वी. ओ. वाले भी थे। उन्होंने मुझसे कई बार पार्टी में शामिल होने के लिए कहा, लेकिन मैं किसी-न-किसी तरह टालती रही।"

यदि पार्टी को मालूम हो जाता कि इवा पाल अपनी माँ के घर, गुप्त रूप से धार्मिक समारोहों में भाग लेती है, तो उसे नौकरी से हटा दिया जाता। दूसरे लोग गिरजाघर जा सकते थे और बहुत-से लोग जाते भी थे; पर जो लोग उसकी जैसी नौकरी करते थे, वे ऐसा नहीं कर सकते थे। डाकघर में काम करनेवाला कोई व्यक्ति यदि वहाँ जाते देख लिया जाता था, तो ए.वी.ओ. वाले उसके विरुद्ध कार्रवाई करते थे।

खाद्यपदार्थ बहुत महँगे थे, पर साम्यवादी साहित्य बहुत सस्ता था। ग्रामोफोन के रिकार्डों तक पर प्रतिबन्ध लगा था। जोलतान को संगीत से प्रेम था, किन्तु पैसों की कमी से न तो वे लोग संगीत-समारोहों में जा सकते थे और न ग्रामो-फोन-रिकार्ड ही ख़रीद सकते थे। अतः विवश होकर रेडियो-बुडापेस्ट से

प्रसारित होनेवाले रूसी संगीत अथवा रेडियो पर आ सकनेवाले अन्य पाश्चात्य स्टेशनों का संगीत उन्हें सुनना पड़ता था।

कम्यूनिज्म से जोलतान को सबसे अधिक निराशा इस बात से हुई कि एक पुरानी मोटर-कार खरीदने की उसकी बहुत इच्छा थी, ताकि उसे दुरुस्त कर वह अपने उपयोग में ला सके। उसकी पत्नी ने इस सम्बन्ध में लोगों को बतलाया—"जोलतान यांत्रिक कामों में बहुत ही पटु है। उसे यदि अपने प्रयोग करने के लिए एक पुरानी कार मिल जाती, तो क्या बात थी! लेकिन हम उतना धन कभी नहीं बचा सके, जिससे हम एक पुरानी कार खरीद सकते।"

एक बार जोलतान ने मुझसे पूछा—"क्या यह सच है कि अमेरिका में कोई भी श्रमिक इतना धन बचा लेता है, जितने से एक पुरानी कार खरीदी जा सके?" मैंने केवल सिर हिला दिया, पर मुझे यह कहने का साहस न हुआ कि मेरे नगर में १४ वर्ष की उम्रवाले लड़कों के पास भी वैसी कारें हैं, जिन्हें बेकार का लोहे का ढेर मान कर उनकी माताएँ उन पर खीझती रहती हैं।

२३ अक्तूबर की शाम को पाल-दम्पति घर पर ही बैठे रेडियो सुन रहे थे। अकस्मात् रेडियो ने घोषणा की कि अब हंगेरियन कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के महामंत्री भाषण करेंगे। दम्पति को मालूम था कि हंगेरी का वह सर्वोच्च कम्यूनिस्ट नेता एर्नो जेरो, जब कभी कुछ बोलता था उसका मतलब कोई-न-कोई नया समाचार होता था। उस रात को भी वही होने वाला था।

"प्रिय कामरेडो, हंगेरी के मजदूर-वर्ग के प्रिय मित्रो!"—जेरो ने भाषण आरम्भ किया—"आज हमारे शत्रुओं का मुख्य उद्देश्य यही है कि मजदूर-वर्ग की शक्ति को कमजोर बना दिया जाये; किसानों और मजदूरों की परस्पर-मैत्री को शिथिल कर दिया जाये; इस देश में मजदूर-वर्ग को जो महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, उसे नीचे गिराया जाये और अपनी पार्टी में—हंगेरियन-मजदूर-पार्टी में—मजदूरों का जो विश्वास है, उसे नष्ट कर दिया जाये। समाजवाद का निर्माण करनेवाले दूसरे देशों के साथ हमारे देश, हंगेरियन जनतंत्र, के जो मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हैं—खासकर हमारे देश और समाजवादी सोवियत-यूनियन के जो सम्बन्ध हैं—उन्हें वे समाप्त करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि हमारी पार्टी और सोवियत यूनियन की शानदार कम्यूनिस्ट-पार्टी—लेनिन की पार्टी, २०-वीं काँग्रेस की पार्टी—के जो आपसी सम्बन्ध हैं, वे ढीले पड़ जायें। वे सोवियत-यूनियन को बदनाम करते हैं। वे कहते हैं कि सोवियत-यूनियन के साथ हमारे व्यापारिक सम्बन्ध इकतरफा हैं और हमारी स्वाधीनता की रक्षा की जाने की

आवश्यकता है—वह भी साम्राज्यवादियों से नहीं, बल्कि सोवियत-यूनियन से। ये सारी बातें सफेद झूठ हैं—[illegible] दुष्प्रचार हैं, जिनमें सचाई की बू तक नहीं है। सचाई यह है कि सोवियत-यूनियन ने न केवल होर्थी के अधिनायकवाद और जर्मन साम्राज्यवाद के भार से हमारी जनता को मुक्त किया, बल्कि उसने उस स्थिति में भी हमारा साथ दिया, जबकि युद्ध के बाद हमारा देश नेस्तनाबूद पड़ा था। उसने पूर्ण समानता के आधार पर हमसे संधियाँ कीं और अब तक हमारे प्रति उसका रुख वैसा ही बना हुआ है। कुछ ऐसे लोग हैं, जो श्रमिक-वर्ग की अन्तर्राष्ट्रीय भावनाओं तथा हंगेरियन राष्ट्रीय भावनाओं को एक-दूसरे के विरुद्ध भिड़ा देना चाहते हैं।"

"कुछ बात जरूर है।"—जोलतान अपनी पत्नी से बोला—"जेरो के इस तरह बोलने का मतलब ही कुछ-न-कुछ गड़बड़ी है।"

"मजदूर कामरेडो! मजदूरो!"—जेरो आवेश में आकर चीखा—"हमें सब-कुछ साफ-साफ बतलाना होगा। अब प्रश्न यह है कि हम समाजवादी गणतंत्र चाहते हैं या बुर्जुआ गणतंत्र? प्रश्न यह है कि हम अपने देश में समाजवाद की स्थापना करना चाहते हैं या समाजवाद के भवन में छिद्र बना कर पूँजीवाद के आगमन के लिए द्वार खोल देना चाहते हैं? प्रश्न यह है कि हम मजदूर-वर्ग की शक्ति और मजदूर-किसान-एकता को भंग करना चाहते हैं अथवा जागरूक होकर, अनुशासनप्रिय बन कर और सम्पूर्ण मजदूर-समाज के साथ एकता में बँध कर, मजदूरों की शक्ति तथा समाजवाद की रक्षा के लिए संघर्ष करना चाहते हैं?"

"मैं जरा देखने जाता हूँ कि बाहर क्या हो रहा है। जेरो परेशान मालूम होता है।"—जोलतान बोला और एक 'ट्राली-कार' में सवार होकर नगर के बीच में पहुँचा। उतरने के पहले ही उसने सुना कि छात्रों की सभाएँ हो रही हैं और रेडियो बुडापेस्ट में उपद्रव हो गया है।

संघर्ष-स्थल से दूर-दूर रह कर ही उसने रेडियो-स्टेशन का चक्कर लगाया और देखा कि उस इमारत के सामने एक बड़ा जन-समुदाय प्रदर्शन कर रहा था। उसके देखते-ही-देखते गोलियाँ चलने लगीं और भयभीत होकर वह ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट पर, एक निरापद स्थान में, जाकर खड़ा हो गया। वहीं से वह संघर्ष को देखता रहा। धीरे-धीरे स्थिति बिगड़ती गयी और अन्त में उसने स्टूडियो को ध्वस्त होते हुए देखा।

जब वह घर लौटा, तो काफी देर हो चुकी थी। नगर में होनेवाले संघर्षों के

कारण 'ट्रालियों' का आवागमन रुक गया था। लेकिन उसे मजबूर होकर जो पैदल चलना पड़ा, वह भी अच्छा ही था; क्योंकि उसे यह देखने का मौका मिला कि संघर्ष कितने बड़े पैमाने पर चल रहा था। उस रात उसने अपनी पत्नी से कहा—"कल और अधिक गोलीकांड होंगे; इसलिए काम पर न जाना ही अच्छा रहेगा।"

लेकिन घर पर ठहरने के कारण इवा पाल शीघ्र ही ऊब गयी और डाकघर चली गयी। वहाँ सभी कम्यूनिस्ट सबको यह विश्वास दिला रहे थे कि कहीं कोई खास बात नहीं हुई। इवा कहती है—"वे उस दिन पहले की अपेक्षा अधिक हँस रहे थे और ए.वी.ओ. के आदमियों की संख्या पहले से कम थी। लेकिन जब नदी-क्षेत्र से गोलियाँ चलने की आवाज सुनाई पड़ने लगी, तब हमारा गलत-सही अन्दाज लगाना रुक गया और किसीने कहा—'लगता है कि अभी संघर्ष जारी है।' अकस्मात् कम्यूनिस्टों ने बातचीत शुरू कर दी और उससे ऐसा लगा कि उनमें से अधिकांश को यह उम्मीद हो गयी थी कि लोग लड़ाई जारी रखनेवाले हैं। दोपहर के समय हमने डाकघर बन्द कर दिया और मेरा खयाल है कि कुछ प्रमुख कम्यूनिस्ट बंदूक लेने के लिए चले गये। मेरे कार्यालय के ७ प्रमुख कम्यूनिस्टों में से कम-से-कम छः क्रान्तिकारियों के साथ हो गये।"

जोलतान पाल ने उस दिन बहुत अधिक साहस दिखाया। क्रान्तिकारी तो वह बिल्कुल ही नहीं था और न वह उन व्यक्तियों में से ही था, जो भावनावश क्रान्ति का समर्थन करते हैं। उदाहरणस्वरूप, पिछले दस वर्षों से वह ए.वी.ओ. के चंगुल से पूर्णतः बचता चला आ रहा था। उस बड़े गैरेज में, जहाँ वह काम करता था, वह हमेशा कम्यूनिस्ट पार्टी के आदमियों के मन में ऐसी धारणा पैदा करता रहा कि एक दिन वह पार्टी का अच्छा सदस्य साबित होगा; लेकिन इस बात का भी उसने पूरा ध्यान रखा था कि कहीं वे लोग पार्टी में सक्रिय भाग लेने के लिए जोर न देने लगें। वह एक साधारण, दुबला-पतला और प्रसन्नचित्त आदमी था, जैसा कि बुडापेस्ट में उस उम्र के लोग साधारणतः होते थे। फिर भी, जब बुडा की सड़कों से गुजरते समय उसने क्रान्ति के सम्बन्ध में सुना, तो वह अपने में उमड़ती हुई भावनाओं का अनुभव करने लगा। वह ए. वी. ओ. के आदमियों से घृणा नहीं करता था, लेकिन उन्हें अमानवीय मानता था। वह रूसियों से भी घृणा नहीं करता था, पर उन्हें अपने देश में डाकुओं की तरह समझता था। पिछली ही रात इवा ने रूसियों के सम्बन्ध में तिरस्कार दिखाते हुए कहा था—"मुझे स्मरण नहीं आता कि पिछले दस वर्षों में किसी

हंगेरियन लड़की ने किसी रूसी से विवाह किया हो, हालाँकि वे इस अरसे में बराबर हमारे साथ रहे। यदि मेरी सहेलियों में से कोई किसी रूसी से विवाह कर लेती, तो कोई उससे बात भी नहीं करती। लेकिन जब जर्मन यहाँ थे, तो ऐसे कई विवाह हुए थे।" एक दूसरे अवसर पर उसने क्रोधपूर्वक प्रश्न भी किया था —"क्या दुनिया में कोई भी आदमी किसी रूसी को पसन्द कर सकता है?"

लेकिन जब जोलतान मार्ग्रेट पुल को पार कर पेस्ट पहुँचा, तब तक उसके मस्तिष्क में यह विचार आ चुका था कि रूसियों को पसन्द करने या न करने का कोई प्रश्न नहीं है, सीधी-सी बात यह है कि वे शत्रु हैं। एक जगह उसने देखा कि एक बख्तरबन्द गाड़ी, जो एक दूसरी गाड़ी पर गोली-वर्षा कर रही थी, घड़-घड़ाती हुई निकल गयी—गोलियाँ चलानेवाले रूसी ही थे। कार्ल मार्क्स-चौक में, जहाँ लेनिन-मार्ग प्रवेश करता है, एक गश्ती-गाड़ी बिना कुछ देखे-सुने गोली-वर्षा कर रही थी। यहाँ भी गोली चलानेवाले रूसी ही थे।

अतएव जब जोलतान रैकोजी-स्ट्रीट पर 'जबाद नेप' के ध्वस्त कार्यालय के पास पहुँचा, तो उसका चित्त बड़ा खिन्न था और यह खिन्नता तब और बढ़ गयी, जब वहाँ मशीनगनों से पूरी तरह सजी हुई एक गश्ती गाड़ी आती हुई दिखाई पड़ी। एक लड़का चिल्ला पड़ा—"वे लोग जरूर किलियन बैरक जा रहे हैं! उन्हें रोको!"

नेपजिंहाज-स्ट्रीट से तीन नवजवान गैसोलिन-बम लिये टैंक की ओर बढ़े, पर सशस्त्र गाड़ी में बैठे सावधान रूसियों ने उन्हें देख लिया और गोली वर्षा करके बड़ी आसानी से उन्हें मार गिराया। उनकी कुछ गोलियाँ इधर उधर भी चली गयीं और खिड़कियों से जा टकरायीं। फलतः शीशे के टुकड़े सड़क पर बिखर गये। वह भीमकाय गाड़ी आगे बढ़ गयी। उन गैसोलिन-बमों में से एक के पलीते में आग लग चुकी थी। इससे वह सड़क पर ही फूट पड़ा और वे लाशें अग्नि-ज्वाला में जल कर स्वाहा हो गयीं।

इसी समय किसी मकान की छत पर खड़े एक हंगेरियन निशानेबाज ने अपनी राइफल से गाड़ी पर गोली चला दी, जो उनमें से एक रूसी को जा लगी। यह देख, दूसरे रूसियों ने अपनी मशीन-गनों का मुँह उस छत की ओर घुमा दिया, ताकि आक्रमणकारी को मार कर गिरा सकें। तभी एक चौथे नवजवान ने, नेपजिंहाज-स्ट्रीट से निकल कर गैसोलिन-बम गाड़ी में फेंका, पर बम फटा नहीं, क्योंकि उसका पलीता बहुत लम्बा था। अतएव एक सतर्क रूसी ने तुरन्त ही उसे उठा कर सड़क पर फेंक दिया, जहाँ वह फट गया।

इस संघर्ष से आकर्षित होकर, जोलतान पाल सड़क पर कुछ दूर हट गया था, ताकि वहाँ से निरापद रूप से संघर्ष का अवलोकन कर सके, लेकिन उत्तेजना के कारण वह धीरे-धीरे संघर्ष-स्थल के पास ही बढ़ता गया। वह झपटता हुआ चला जा रहा था, तभी अकस्मात् एक नौजवान ने एक फाटक से निकल कर उसके हाथों में दो गैसोलिन-बम थमा दिये और कहा—"इन्हें जला कर उन पर फेंक दो।"

एक बम को अपनी बगल में दबा कर दूसरे को दियासलाई से जलाता हुआ, जोलतान तेज चाल से चल कर संघर्ष-स्थल के पास पहुँच गया। उस समय रूसी किसी दूसरे मकान की छत पर गोली-बारी कर रहे थे। जोलतान ने अपनी बाँह को जोर से घुमा कर अपना बम लक्ष्य की ओर फेंक दिया। इसी समय दो और लड़कों ने, जिनकी उम्र मुश्किल से १४ वर्ष की होगी, यही काम किया। इस बार बम फट गये और रूसी गश्ती-गाड़ी भयंकर अग्नि-ज्वाला में झुलसने लगी।

उस रात पाल-दम्पति के पास बातचीत के लिए काफी मसाला था। बमबाजी की कहानी सुन कर इवा भयभीत हो गयी। जोलतान ने कहा—"बहुत बड़ी क्रान्ति का सूत्रपात हो गया है।" उस दिन इवा को कई अत्यावश्यक संदेशों की बात मालूम हुई थी, जिनका अर्थ था कि सरकार बड़ी घबराहट में है। २४ अक्तूबर को रेडियो-बुडापेस्ट ने एक कामचलाऊ स्थान से जो विस्मयकारी घोषणा की, उसे हर किसी ने सुना। उस घोषणा में इस बात की सफाई दी गयी थी कि नगर में रूसी सैनिक क्यों संघर्ष कर रहे थे? पर उसे सुन कर वस्तुतः लोगों की तबियत और अधिक भिन्ना गयी थी।

वक्तव्य में कहा गया था—"हंगेरियन रेडियो के अनेक श्रोताओं ने हमसे इस बात की सफाई माँगी है कि वारसा-संधि के अनुसार किन शर्तों पर और किस उद्देश्य से सोवियत सैनिक दस्ते हंगरी में रखे गये हैं? मंगलवार से, हमारी जनता के शत्रुओं ने, विश्वविद्यालय के छात्रों-द्वारा आयोजित प्रदर्शन को एक संगठित क्रान्तिपूर्ण आंदोलन में बदल दिया और अपने सशस्त्र हमलों से उन्होंने सम्पूर्ण देश की शांति एवं सर्वसाधारण के जीवन को खतरे में डाल दिया। हंगेरियन सरकार ने, शान्ति और व्यवस्था कायम रखने की अपनी जिम्मेदारी को समझते हुए, क्रान्तिवादी दलों के प्राणघातक हमलों को रोकने के लिए सोवियत सैनिकों से मदद माँगी। सोवियत सैनिक, राजधानी की शांतिप्रिय जनता और देश की शांति की रक्षा के लिए, अपने प्राणों की बाजी लगा रहे हैं।

"व्यवस्था कायम हो जाने पर, सोवियत सैनिक अपने-अपने स्थानों को लौट जायेंगे। बुडापेस्ट के मजदूरो, अपने मित्रों का सप्रेम स्वागत कीजिये!"

जोलतान पाल ने सोचा कि हंगेरियनों की हत्या के लिए रूसी सैनिकों की सहायता के विषय में सरकार-द्वारा ऐसा वक्तव्य दिये जाने का मतलब है कि एर्नो जेरो का दल किसी बड़े संकट में पड़ गया है, यहाँ तक कि वह समाप्त भी हो सकता है। लेकिन इवा को, जिसे कम्यूनिस्ट पार्टी की जबर्दस्त शक्ति की अधिक जानकारी थी, यह विश्वास हो गया कि शीघ्र ही उपद्रवों पर काबू पा लिया जायेगा। "हमें ऐसी कोई बात नहीं बोलनी चाहिये, जो ए. वी. ओ. वालों को खटक सके। किसी से मत कहना कि तुमने भी एक बम फेंका था।"—इवा ने अपने पति को सावधान किया। उसकी अधिकांश सहेलियों के विचार भी ऐसे ही थे।

लेकिन जब रेडियो ने यह घोषणा की कि वह किलियन-बैरक से, जहाँ उस समय रूसी टैंकों के एक दस्ते का बड़ा भयानक हमला हुआ था, समाचार दे रहा है और यह कि नगर में अब शांति है, केवल फेरेंक-मार्ग पर एक-दो गोलियाँ चलने की आवाज सुनाई पड़ जाती है, नागरिक अपने-अपने घरों के अन्दर हैं, तो जोलतान अपने पर काबू न रख सका। उसके मुँह से निकल पड़ा—"एक-या-दो गोलियाँ! वे सारे नगर को गोलियों से भून रहे हैं। मैंने आज ही दोपहर के बाद वह दृश्य देखा है।"

कम्यूनिज्म के अंतर्गत हंगेरी में झूठे प्रचार और वाहियात बातों का बोलबाला था। उस समय ये बुराइयाँ नितान्त असह्य हो उठीं, जब एक स्निग्ध वाणी में रेडियो पर घोषणा हुई—"गत रात रेडियो बुडापेस्ट की दुर्घटना के बारे में सच्चा वृत्तान्त अब प्रस्तुत किया जायेगा।" जोलतान ने पुकारा—"इवा, जरा सुनो।"

बड़ी मुलायमियत के साथ रेडियो पर भाषण आरम्भ हुआ—"२३ अक्तूबर के उस मनहूस दिन की सबसे गम्भीर दुर्घटना ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट पर स्थित रेडियो-स्टेशन की इमारत में घटी।......"

जोलतान ने स्वीकार किया—"हाँ, एक बात यह ठीक कह रहा है। सचमुच वह दुर्घटना बहुत गम्भीर थी।"

रेडियो बोल रहा था—"वास्तव में हुआ यह, कि गोधूलि-वेला में जब छात्रों के एक उत्साही और व्यवस्थित दल ने बेम की प्रतिमा के पास प्रदर्शन आरम्भ किया, तो रेडियो-स्टेशन के सामने की सँकरी गली में भी नवजवान भर गये।

"रेडियो-स्टेशन के कर्मचारियों ने छज्जे से तिरंगा दिखा कर हर्ष-ध्वनि के साथ उनका स्वागत किया। छात्रों के प्रतिनिधिमंडल ने स्टेशन के उच्चाधिकारियों से मुलाकात की और अपनी माँगें उनके सामने प्रस्तुत कीं। कई मामलों में वे एकमत भी हो गये, लेकिन जब वे छज्जे पर आये, तब गैर जिम्मेदार तत्वों ने, जिनकी संख्या बढ़ती ही जा रही थी, उन्हें बोलने नहीं दिया। फिर एक-के-बाद-एक प्रतिनिधिमंडल आने लगे और यह स्पष्ट हो गया कि सही रूप में माँगें पेश करने और उनकी पूर्ति करने का वहाँ कोई प्रश्न नहीं था। भीड़ के लोग अपने प्रतिनिधियों की बातें भी नहीं सुनना चाहते थे। ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट फासिस्ट नारों से गूँज रहा था। इसके बाद रेडियो-इमारत की खिड़कियों पर ईंटें फेंकी जाने लगीं। स्टेशन की कार, जो प्रदर्शनकारियों की माँगों को 'रिकार्ड' करने के लिए ध्वनि-आलेखन यंत्रों के साथ प्रवेश-द्वार के पास खड़ी थी, उस पर हमला किया गया और एक दूसरी कार में आग लगा दी गयी।

"जब स्थिति यहाँ तक पहुँच गयी, तब विश्वविद्यालय के अधिकांश छात्र और युवा कार्यकर्त्ता दल बना बना कर वापस जाने लगे, लेकिन भीड़ वहीं डटी रही। फिर मुख्य मार्ग की ओर से नये झुंड आने लगे और बाद में सशस्त्र दल भी आ पहुँचे। उन्होंने किसी सैनिक बैरक का दरवाजा तोड़ कर शस्त्रास्त्र प्राप्त किये थे। जब भीड़ के लोगों ने रेडियो-स्टेशन के द्वार को तोड़ देने का प्रयत्न किया, तो स्टेशन के रक्षकों ने दमकल का प्रयोग करके उन्हें हटाने की चेष्टा की। जलती हुई कार को बुझाने के उद्देश्य से भी उन्होंने ऐसा किया था। लेकिन जब वे इसमें असफल हुए, तो उनको विवश होकर अश्रुगैस छोड़नी पड़ी। स्थिति क्रमशः गम्भीर होती गयी। स्टेशन की खिड़कियाँ तोड़ डाली गयीं। भीड़ के कुछ लोग, पुश्किन स्ट्रीट के सामनेवाली स्टूडियो की लोहे की छड़ों से होकर अन्दर भी पहुँच गये। उन्होंने ब्राडी सैण्डर स्ट्रीट के एक मकान की काफी ईंटें साथ ले ली थीं और उनसे उन्होंने भारी क्षति पहुँचायी। अब उनका नारा था—'रेडियो-स्टेशन पर कब्जा कर लो।'

"रक्षकों ने हवाई फायर करके हमलावरों को डराना चाहा। उन्होंने अपने शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किये बिना रेडियो-इमारत से लोगों को हटाने का हर सम्भव प्रयत्न किया। उन्होंने किसी को भी गम्भीर रूप से घायल नहीं किया, जबकि भीड़ से लगातार गोलियाँ चलायी जा रही थीं। सबसे पहले ए. वी. ओ. का एक उच्च सुरक्षा-अधिकारी मार दिया गया। बाद में छः और व्यक्ति (ए. वी.

ओ. के) मरे पाये गये। तब तक सरकारी सुरक्षा-विभाग के रक्षकों ने गोलियाँ नहीं चलायीं।

"उस समय रेडियो-स्टेशन शत्रुओं द्वारा घिर-सा गया था, लेकिन फिर भी रेडियो का कार्यक्रम बिना किसी गड़बड़ी के चलता रहा। इसी बीच गुटेनबर्ग स्क्वायर की ओर से, सशस्त्र जवानों से भरे दो ट्रक पहुँचे और उन्होंने स्टेशन के सामने तथा अगल-बगल के मकानों पर अधिकार जमा लिया। तदुपरान्त वे स्टूडियो पर गोलियाँ चलाने लगे और तब, ऐसी स्थिति में, जबकि स्टूडियो के अनेक रक्षक मारे तथा घायल किये जा चुके थे, दूसरा कोई मार्ग न पाकर, गोली का जवाब गोली से देने का आदेश दिया गया। हमलावरों के पास मशीन गन तथा हथगोले थे और स्टूडियो पर उनका हमला उग्र होता जा रहा था। स्टेशन के कर्मचारी, उन गोलियों की बौछार के बीच भी, अन्तिम क्षण तक अपना कार्यक्रम चलाते रहे और जब आक्रमणकारियों की भीड़ इमारत में घुस आयी, तब रक्षकों ने इस बात के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दी कि आतंककारी अपने लक्ष्य तक न पहुँच सकें और कोसुथ-रेडियो का कार्यक्रम बन्द करने में सफल न हो जायें।

"प्रिय श्रोताओ! अभी भी, जब आप मेरी बातों को सुन रहे हैं। कोसुथ रेडियो का कार्यक्रम पूर्वनिश्चित कार्यक्रम से तनिक भिन्न रूप में जरूर प्रसारित किया जा रहा है; किन्तु हंगेरियन रेडियो—कोसुथ-रेडियो—का कार्यक्रम चलता ही जा रहा है। इसे बन्द करने में कोई भी क्रांतिवादी दल—यहाँ तक कि वर्तमान सुसंगठित एवं कृतसंकल्प प्रतिक्रांतिवादी दल भी—सफल नहीं हो सकता था। हमारे स्टूडियो को भारी क्षति उठानी पड़ी और सरकारी सुरक्षा-विभाग के अनेक रक्षक वीरों की मौत मरे। गोलियों का, बल्कि कभी-कभी मशीन-गनों की गोलियों का, सामना करने में हमारे कार्यकर्ताओं को भी बहुत क्षति उठानी पड़ी। फिर भी सुबह से ही हम कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं और अब तक कोसुथ-रेडियो-बुडापेस्ट आपकी सेवा कर रहा है।"

इसके बाद घोषणा करनेवाले की आवाज आयी—

"प्रिय श्रोताओ! अभी आपने ज्यार्जी कालमर से रेडियो-स्टेशन की घटनाओं का हाल सुना।"

इस असाधारण कपटपूर्ण बयान को सुन कर जोलतान पाल अवाक् रह गया। "मैं स्वयं वहाँ था—" वह बार-बार इस बात को दुहराता रहा, मानो अपनी आँखों-देखी गवाही-द्वारा सरकार के इस स्पष्ट असत्य-भाषण को मिथ्या

सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहा हो। और, इस प्रकार की मिथ्यावादिता तथा आतंक को देख कर जोलतान पाल एक क्रान्तिकारी बन गया।

संघर्ष में जोलतान का कार्य कोई खास महत्त्वपूर्ण नहीं रहा; क्योंकि उसकी पत्नी उसे यथासम्भव घर में ही रखती थी। फिर भी, २९ अक्तूबर को जब रूसी बुडापेस्ट से पूर्णतः हट गये, तब पाल दम्पति को यह कहने का अधिकार था कि उन्होंने भी नगर को स्वतंत्र करने में सहायता पहुँचायी थी। यह सही है कि उनका योगदान चमत्कारपूर्ण नहीं था, लेकिन पाल-दम्पति की ही तरह यदि लाखों लोगों का समर्थन न मिलता, तो क्रान्ति इस तरह सफल न होती।

जब नगर में कुछ शान्ति स्थापित हो गयी, तब पाल-दम्पति को यह जानने का अवसर मिला कि पिछले दिनों क्या-क्या घटनाएँ घटी थीं? उन्हें कई बातें जान कर तो बड़ा आश्चर्य हुआ—उदाहरण-स्वरूप, जब उन्हें पता चला कि किलियन-बैरक का पतन नहीं हुआ, तो वे अचंभे में आ गये। जोलतान ने कहा—"पिछली बार जब मैंने इसे देखा था, तो यही समझा था कि वह नष्ट हो चुका है।"

पाल-दम्पति ने इस बात की भी कल्पना नहीं थी कि मार्गों पर उतनी अधिक संख्या में जले हुए रूसी टैंक मिलेंगे। उन्हें देख कर इवा ने आश्चर्य के साथ कहा—"मैं समझती थी, एक-दो टैंक नष्ट किये गये होंगे।"

गर्व का अनुभव करते हुए जोलतान अपनी पत्नी को उस गश्ती-गाड़ी के पास ले आया, जिसे विनष्ट करने में उसने मदद पहुँचायी थी, और फिर वे दोनों उस टैंक को देखने गये, जिस पर गैसोलिन-आक्रमण होते समय जोलतान ने भाग लिया था। इवा ने उस तहस-नहस किये हुए टैंक को, जिसके पहिये बच्चों-द्वारा फेंकी गयी इस्पात की छड़ों के कारण बुरी तरह अवरुद्ध थे, देखने के बाद कहा—"ऐसा भी हो सकता है? यदि मैं आँखों से न देखती, तो इसका मुझे विश्वास ही न होता।"

इसी तरह सारे बुडापेस्ट के निवासी चकित थे। "क्या बिना शस्त्र के, लोगों ने इतने टैंकों को नष्ट कर दिया?"—स्त्रियाँ विस्मित होकर प्रश्न करती थीं। सम्पूर्ण नगर में देशभक्ति की एक लहर दौड़ गयी थी; क्योंकि हंगेरियन देश-भक्तों ने ही, बाहरी दुनिया से किसी तरह की सहायता लिये बिना, अकेले संघर्ष किया था और एक निष्ठुर विजेता, सोवियत रूस, को वहाँ से निकाल बाहर किया था।

"मुझे विश्वास नहीं होता कि इतना सब-कुछ हम लोगों ने किया। ... मुझे यह भी नहीं लगता कि वे लोग अब फिर कभी लौटेंगे।"

—जोलतान ने पत्नी के समक्ष अपने विचार व्यक्त किये—"...लेकिन यदि अब वे फिर वापस लौटने का प्रयत्न करेंगे, तो राष्ट्र-संघ और अमेरिका हमारे लिए सशस्त्र फौजें भेजेगा।"

उस क्षण इवा को भी रूस के वापस लौटने की सम्भावना नहीं लगती थी। वह बोली—"मुझे आश्चर्य तो इस बात का होता है कि हम ए. वी. ओ. को भी खदेड़ देने में सफल हो गये।"

लेकिन यह अन्तिम बात पूर्णतः सही नहीं थी। क्योंकि कई दिनों तक ए. वी. ओ. वालों की छिटपुट टुकड़ियाँ, बड़ी-बड़ी कारों में बैठ कर, ८० मील प्रति घंटा की चाल से नगर का चक्कर लगाती रहीं और खिझलाहट-भरी बदले की भावना से मशीन-गनों से गोलियाँ बरसाती रहीं। पेस्ट में तो रोटी प्राप्त करने के लिए कतार में खड़ी महिलाओं पर भी, अकस्मात् ही, उन्होंने गोलियाँ चलायीं, जिसके परिणामस्वरूप कई मर गयीं।

उस समय भोजन की समस्या सबसे बड़ी थी। रोटी की दुकानें दिन में केवल दो घंटे खुलती थीं। जोलतान ने संघर्ष करनेवाले लोगों को अपनी बहुत-सी खाद्य-सामग्री बाँट दी थी, उसकी पूर्ति करने के लिए अब इवा को बहुत देर तक पंक्ति में खड़ा रहना पड़ता था।

ऐसे खाद्य-संकट के अवसर पर आसपास के गाँवों के किसान यथासम्भव खाद्य-पदार्थ लेकर नगर में आने लगे; क्योंकि वे अपने-आपको इस बात का दोषी मानते थे कि स्वतंत्रता-संग्राम में उन्होंने सहयोग नहीं किया था। अतः अब ट्रकों, गाड़ियों, ठेलों और ट्रैक्टरों-द्वारा खींची हुई गाड़ियों-द्वारा सैकड़ों मन खाद्यान्न तथा सूअर और मुर्गी के बच्चे लाकर शहर के चौराहों पर खड़े होकर बाँट देते थे।

बुडापेस्ट में उन दिनों उत्सव की सी धूम थी। अधिकांश सड़कों पर जो मलवे जमा थे, उन्हें साफ करने की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा था और न किसी को टैंकों में पड़ीं रूसियों की लाशों एवं मृत ए वी.ओ. के आदमियों की अन्त्येष्टि-क्रिया करने की चिन्ता थी। हाँ, देशभक्तों की लाशों को सार्वजनिक उद्यानों के निकट कामचलाऊ कब्रों में जरूर दफना दिया गया था। लेकिन जनता के उन घृणास्पद शत्रुओं को अत्यंत उपेक्षापूर्वक खुले आम छोड़ दिया गया था।

सचमुच स्वतंत्रता प्राप्त हो गयी थी, इस बात के बहुत-से प्रमाण थे, जिनकी ओर नगर के स्त्री-पुरुष बड़े स्नेह से संकेत करते थे। इन प्रमाणों में सबसे

सटीक प्रमाण यह था कि सहसा नगर से विभिन्न प्रकार के कई समाचारपत्र प्रकाशित होने लगे। ऐसा लगा, मानो इनका प्रकाशन किसी जादू के जोर से हुआ हो। इनमें से कुछ समाचारपत्र समाजवादी थे, कुछ किसान-दल के थे, कुछ श्रमिक-आन्दोलन से सम्बन्धित थे और कुछ अपने-अपने दृष्टिकोणवाले थे—इन सबका उद्देश्य निश्चय ही राष्ट्र का विकास था। एक दिन इवा बोल उठी—"देखो, जरा समाचारपत्रों को तो देखो।"

पाल दम्पति एक बमबारी से ध्वस्त चबूतरे के पास पहुँचे। वहाँ चार तरह के समाचार-बुलेटिन बिक रहे थे, जिनकी छपाई बड़ी रद्दी थी। उनमें अधिकतर अफवाहें और अनुमान भरे थे; फिर भी वे समाचारपत्र तो थे ही। पाल-दम्पति ने सबकी एक-एक प्रति खरीदी। लेकिन जब उन्होंने देखा कि कम्यूनिस्ट-पार्टी के 'जबाद नेप' ने अपने मुखपृष्ठ पर ही, सबसे ऊपर, धृष्टता-पूर्वक लुई कोसुथ की पवित्र मुहर का उपयोग किया है, तो क्रुद्ध होकर उसे नाले में फेंक दिया।

अब पाल-दम्पति छोटी-छोटी बातों से भी भावुकता में बह जाते थे। कभी-कभी तो एक बहुत साधारण-सी घटना भी, जिस पर किसी दूसरे देश में शायद ध्यान भी नहीं दिया जाता, उन्हें रुला देती थी। तब वे एक क्षण के लिए तेज धूप में ही रुक कर आश्चर्य से सोचने लगते कि हम लोगों को हो क्या गया है? एक दिन जब इवा सड़क पर चली जा रही थी, उसे एक आदमी का धक्का लग गया। वह व्यक्ति तुरंत क्षमा-प्रार्थना के लिए रुक गया और इवा ने देखा कि वह हंगेरियन नहीं है। वह एक विदेशी भाषा बोल रहा था। दोनों एक-दूसरे की ओर देखते रहे। उसी समय एक दूसरे राहगीर ने दुभाषिया बन कर बतलाया—"ये एक फ्रांसीसी पत्रकार हैं।"

इवा ने साश्चर्य पूछा—"क्या अब बुडापेस्ट में विदेशी पत्रकारों को आने की अनुमति मिल गयी है?"

"आजकल तो यहाँ सैकड़ों विदेशी पत्रकार हैं।"—फ्रांसीसी ने कहा—"क्योंकि सभी जानना चाहते हैं कि आपके नगर में क्या-क्या हुआ?" और यह सुन कर इवा अकारण ही रो पड़ी।

सर्वसंत-दिवस को जोलतान रेडियो सुन रहा था, जब घोषणा करनेवाले ने कहा—"हंगेरियन स्वातंत्र्य-संग्राम में शहीद हुए वीर पुरुषों और महिलाओं के सम्मान में अब रेडियो से संगीत का एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जायेगा। यह वह संगीत है, जिसे हंगेरी-वासी वर्षों से नहीं सुन पा रहे हैं।" और,

इसके बाद रेडियो ने मोजार्ट का सुमधुर 'रिक्वियम मास' (सबको शांति प्राप्त हो) नामक गीत सुनाया। कम्यूनिज्म के दिनों में शायद ही कभी यह संगीत बजाया गया हो। जब तक संगीत का यह कार्यक्रम चलता रहा, जोलतान मंत्र-मुग्ध-सा, भूमि पर दृष्टि गड़ाये, बैठा रहा। उसे इस बात की बेहद खुशी हुई कि उसे फिर पाश्चात्य संगीत सुनने का अवसर मिला।

स्वतंत्रता के सर्वोत्तम लाभों में से एक लाभ बड़े अनोखे ढंग से उपस्थित हुआ। क्रान्ति के प्रारम्भिक दिनों में छात्रों ने माँग की थी कि सरकार रेडियो पर विदेशी स्टेशनों को सुनने की रोक लगानेवाली अपनी नीति का परित्याग करे। अब वहाँ लंदन, पेरिस, म्यूनिक, आदि स्थानों से बिना किसी रुकावट के समाचार सुनाई पड़ते थे। शेष विश्व से आनेवाले समाचारों को स्पष्ट रूप से सुन कर उन्हें अवर्णनीय आनन्द मिलता था, ऐसी सभी छोटी-मोटी बातें—जैसे, दूसरे देश के लोगों का नगर में आगमन, प्रतिबन्ध लगे हुए संगीत का बजाया जाना, यूरोप से समाचारों का सुनाई देना—पाल-दम्पति को यह सोचने को विवश करती थीं कि अब एक बार फिर संसार से हमारा सम्बन्ध स्थापित हो गया है।

नगर में तरह-तरह की अफवाहें फैल रही थीं और उनमें सबसे ज्यादा दुःखदायी अफवाह यह साबित हुई कि हंगेरी के मामले में शीघ्र ही राष्ट्र संघ हस्तक्षेप करेगा। इवा पाल की बहुत दिनों से यह आदत थी कि जब कभी कम्यूनिस्ट-अवरोधक स्टेशनों से बच कर अमेरिकी या कोई स्वतंत्र यूरोपीय स्टेशन रेडियो पर सुनाई पड़ने लगता था, तब वह उसे सुनती थी। इस प्रकार जो आशाजनक संदेश सुने थे, उनके आधार पर, दुर्भाग्यवश, उसने भी यह धारणा बना ली थी कि न केवल राष्ट्र संघ, बल्कि अमेरिका भी, अपने छतरी सैनिक बुडापेस्ट में उतारेगा और उनके पीछे टैंक एवं आक्रमणकारी सैनिक आयेंगे। लेकिन जब समय ने यह साबित कर दिया कि ये अफवाहें गलत थीं और कोई भी दूसरा राष्ट्र उस सफल क्रान्ति में हस्तक्षेप करने का इरादा नहीं रखता था, तो नगर में यह समझा जाने लगा कि वे अकेले छोड़ दिये गये।

लेकिन इस भावना को लोग विनोद में भूल जाने की कोशिश करते थे। उन के विनोद के नमूने कुछ इस प्रकार के थे—जोलतान अपनी पत्नी को, स्टालिन स्क्वायर में, स्टालिन की टूटी-फूटी मूर्ति दिखाने ले गया। वहाँ मूर्ति के नाम पर अब केवल दो आधे पैर, जिनमें जूते पहनाये हुए थे, खड़े थे। उनमें से एक में हंगेरियन झंडा बँधा लहरा रहा था। जोलतान ने हँसते हुए

अपनी पत्नी से कहा—'अब यह स्टालिन-स्क्वायर' नहीं, बल्कि 'मोची-स्क्वायर' है।

तभी एक दूसरे व्यक्ति ने कहा—"आप को मालूम नहीं ? लोगों ने मूर्ति को बिल्कुल नहीं गिराया था, बल्कि उसके सामने, भूमि पर, एक कलाई-घड़ी गिरा दी थी और एक मूर्ख रूसी की भाँति स्टालिन उसे उठाने के लिए झुका; बस, उसकी यह दुर्गति हो गयी।"

सबसे अधिक मजेदार और पसंद किये जानेवाले विनोद वे थे, जो कम्यूनिस्ट-सरकार की मूर्खता पर प्रभाव डालते थे। एक बार तो सचमुच ही उसने रेडियो से नीचे लिखी विज्ञप्ति प्रसारित करायी थी—

"जो लोग हत्या, संकल्पित मानव-हत्या, डकैती, चोरी, ठगी या राहजनी के अपराधों में सजा भुगत रहे थे और अपनी सजा का दो-तिहाई भाग भोगे बिना, किसी कारणवश २३ अक्तूबर के बाद जेलों से बाहर चले गये हैं, उन्हें आदेश दिया जाता है कि वे अविलम्ब निकट के किसी पुलिस-स्टेशन में जाकर उपस्थित हो जायें।"

एक बार जोलतान ने विनष्ट मशीन-गनों की ओर इशारा करके कहा—"अब उन रूसी गिटारों से संगीत-ध्वनि नहीं निकलेगी।" और सबसे अधिक प्रचलित विनोद, जिसमें सच्चाई भी बहुत थी, यह था—"इम्रे नाज कहता है कि वह वास्तव में कम्यूनिस्ट नहीं था, जानोस कादर भी कहता है कि वह कम्यूनिस्ट नहीं है। वस्तुतः हंगेरी में एक ही कम्यूनिस्ट है—निकिता ख्रुश्चेव।"

ऐसे ही हल्के-फुल्के वातावरण में, हंगेरियन-जीवन में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। 'कामरेड' शब्द पर सरकारी रूप से प्रतिबन्ध लगा दिया गया। किसी व्यक्ति को 'कामरेड' कह कर पुकारना अपराध माना जाता था। २३ अक्तूबर राष्ट्रीय छुट्टी का दिन घोषित कर दिया गया और कोसुथ की मुहर हंगेरी-सरकार की मुहर बन गयी। रूसी भाषा का अनिवार्य रूप से पढ़ाया जाना भी बन्द कर दिया गया।

इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह हुई कि राजनीतिक दलों का जन्म हुआ और इससे पाल-परिवार को बड़ी खुशी हुई। वे बार-बार अपने पड़ोसियों से कहते—"अब हमें मनपसन्द आदमियों को मत देने का अवसर मिलेगा।" यह कितने विस्मय की बात थी कि उन थोड़े-से दिनों में हंगेरीवासियों को वे छोटी-छोटी बातें, जो सारे संसार के लिए सामान्य थीं, इतना अधिक

आनन्द प्रदान करती थीं—स्वतंत्र समाचारपत्र, राजनीतिक दल, स्वतंत्र चुनावों की व्यवस्था, जिनमें गुप्त रूप से मतदान के लिए पेटियाँ होंगी, स्वतंत्र जीवन का आश्वासन, आदि।

उन दिनों वातावरण इतना हर्षोत्फुल्ल था कि सम्पूर्ण हंगेरी से छात्रों, खान के मजदूरों और किसानों के प्रतिनिधिमंडल अपेक्षाकृत अधिक जनतंत्र राष्ट्र के निर्माण के लिए, प्रस्ताव लेकर आ रहे थे। कुछ नागरिक फासिज्म चाहते थे, फिर भी उनके सुझाव प्रतिक्रियावादी नहीं थे, जैसा कि कम्यूनिस्टों ने बाद में कहा। वस्तुतः वे मजदूर एक स्वतंत्र और मध्यम श्रेणी का जीवन चाहते थे।

उदाहरण के लिए, एक दिन सन्ध्या-समय पाल-दम्पति ने रेडियो पर बरसोद काउंटी की मजदूर-समिति की माँगों को सुना। वे माँगें साधारण-सी थीं—"उन लोगों को, जो सुयोजित अर्थव्यवस्था को भंग करने के जिम्मेदार हैं, गोली मार दी जाये। मूल मजदूरी में वृद्धि हो। गुप्त रूप से मूल्यों में होनेवाली बढ़ती रोकी जाये। पेन्शन और परिवार-भत्ता में वृद्धि की जाये। अधिक मकानों की व्यवस्था हो और जो लोग छोटे-छोटे मकान बनाना चाहें, उन्हें अधिक ऋण दिया जाये। रूसी हंगेरी से निकाल बाहर किये जायें। ऐसी व्यवस्था हो, कि जिसमें हंगेरियन यूरेनियम की बिक्री से रूस की बजाय हंगेरी को लाभ हो। पोलैण्ड के लिए गोमुल्का ने जैसी संधि की, वैसी ही एक संधि की व्यवस्था की जाये। संसद (पार्लियामेण्ट) में रूसियों की हाँ में-हाँ मिलाने-वालों को गोली मार दी जाये।" और, अंत में उन्होंने कहा था—"सामूहिक रूप से खेती करने की प्रणाली से हम सहमत हैं, पर इस विषय को, जबर्दस्ती न करके, किसानों की इच्छा और सुविधा पर छोड़ दिया जाये। साथ ही, किसानों के हितों का पूरा ध्यान रखा जाये।"

इसी समय, जबकि ऐसी विवेकपूर्ण माँगें पेश की जा रही थीं, मास्को और अन्य स्थानों के कम्यूनिस्ट यह दावा कर रहे थे कि इस हंगेरियन क्रान्ति का आयोजन फासिस्टों, पूँजीवादी तत्त्वों, प्रतिक्रियावादियों और निकम्मे नागरिकों के उस समुदाय ने कराया था, जो हंगेरी को युद्ध के पहले-जैसी स्थिति में ले जाना चाहते थे। मास्को से घोषणा की गयी कि यदि यह क्रान्ति सफल रही, तो हंगेरी फिर मध्यकालीन स्थिति में या उससे भी बुरी स्थिति में पहुँच जायेगा।

यदि यह नया हंगेरी इसी प्रकार रहने दिया जाता, तो वह ऐसे सुन्दर समाज-वादी देश के रूप में विकास पाता, जहाँ भूमि पर लोगों का अपना अधिकार होता, निजी पूँजी को प्रोत्साहन मिलता और प्रमुख उद्योगों पर निजी स्वामित्व

होता। एक तरह से वहाँ सुधरा हुआ कम्यूनिज्म होता, जिसमें किसी एक की या विशेष दल की हुकूमत न होती। तब वह पोलैंड या युगोस्लाविया की तुलना में अधिक पूँजीवादी तो होता, पर सन् १८९० की तरह केवल कुछ सामन्तों-द्वारा शासित क्षेत्र न हो जाता। मध्य-यूरोप की स्थिति से अपरिचित बहुत-से अमेरिकी तो, तब भी उसे खतरनाक रूप से वामपंथी समझते। किन्तु साधारणतः शेष संसार, पूर्वी यूरोप के क्रमशः गैर-कम्यूनिज्म होने की दिशा में एक आशावादी कदम मान कर, उस नये राष्ट्र का स्वागत करता; क्योंकि वहाँ २३ अक्तूबर, १९५६ तक जो स्थिति थी, उसको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह नया राष्ट्र अति उदार राष्ट्र का एक नमूना होता।

पर यह समझना ठीक न होगा कि स्वतंत्रता के उन पाँच दिनों में वहाँ पूर्ण व्यवस्था एवं मर्यादा का वातावरण स्थापित था। पहली बात तो यह कि नगर में ए. वी. ओ. वालों की संख्या अब भी काफी थी और रूसी सेना की कुछ टुकड़ियाँ भी वहाँ शेष रह गयी थीं, जो अक्सर राहगीरों पर गोली-बारी कर देती थीं। इनके अतिरिक्त नगर के विभिन्न भागों में क्रान्तिकारियों के कुछ ऐसे गिरोह भी थे, जो अब तक नगर को सम्भावित आक्रमण से मुक्त घोषित करने को तैयार नहीं थे। वे लोग अपनी बातों को ही कानून मानते थे और कुछ मामलों में तो वे अराजकता-जैसी स्थिति पैदा कर देते थे। उन पर यदि नियंत्रण नहीं किया जाता, तो स्वतंत्रता को बड़ा भारी आघात पहुँचता। लेकिन बाकी लोगों की स्थिति दूसरी थी। बुडापेस्ट के नागरिकों को कभी-कभी इस बात पर आश्चर्य होता था कि वे भड़के हुए नवजवान, विजय-प्राप्ति के बाद, इतने शांत कैसे हो गये थे। उन लोगों के कार्य तो विशेष रूप से उल्लेख-योग्य थे, जिन्हें अमेरिकी 'मौत से खेलनेवाले बच्चे' कह कर पुकारते हैं; क्योंकि वही लोग टैंकों की 'गनों' के मुकाबिले में जाकर कार्रवाइयाँ करते थे—उन्हीं लोगों ने सड़कों पर गोले टाँग कर शत्रुओं को क्षति पहुँचायी थी तथा ये वही लोग थे, जिन्होंने आखिरी दम तक संघर्ष किया था। अब वे लड़के उन्हीं सड़कों पर पुलिस की भाँति नागरिकों की रक्षा का प्रबन्ध करते थे। उन गरीब परिवारों के सहायतार्थ, जिनके लोग संघर्ष में मारे जा चुके थे, उन्होंने मार्गों पर कुछ बक्से भी रख दिये थे। नागरिक उन बक्सों में हजारों की संख्या में फारिन्ट डालते थे। विस्मयजनक बात यह, कि उन बक्सों पर किसी का पहरा नहीं होता था। सम्पूर्ण बुडापेस्ट में इवा और जोलतान ने धन से भरे ऐसे बक्से, बिना किसी निगरानी में, पड़े देखे। उनमें से किसी

ने भी कभी कुछ चुराने का प्रयत्न नहीं किया। गोधूलि-वेला में, प्रतिदिन, वे बहादुर लड़के आकर इकट्ठी हुई रकम को निकालते और जरूरतमन्द परिवारों में बाँट देते।

आजादी के उन मादक दिनों में पाल-दम्पति ने अपने नये राष्ट्र की रूप रेखा के बारे में बहुत सोचा। ज़ोलतान कहता है—"सबसे पहले हम यही चाहते थे कि स्वतंत्र निर्वाचन हो, जिस पर न तो ए. वी. ओ. का प्रभाव हो और न रूसियों का। हमारा विचार था कि कुछ नयी तरह की सरकार की स्थापना की जाये, जो ठोस परिवर्तन लाने में समर्थ हो। सच तो यह है कि मेरी समझ में अभी यह नहीं आ रहा था कि सबसे अच्छी व्यवस्था क्या होगी। मैं अधिक-से अधिक यही सोचता था कि इम्रे नाज एक उदार सरकार की स्थापना करने और रूसियों को निकाल बाहर करने में समर्थ होगा। मैं जानता था कि नाज भी एक कम्यूनिस्ट था, फिर भी अच्छा था।"

इवा पाल के विचार कुछ दूसरी तरह के थे। वह अपने जीवन-भर कैथोलिक मत की एक अच्छी उपासिका रही थी, हालाँकि उसकी यह धर्म-प्रियता उसे काफी महँगी पड़ती थी। अब उसने एक ऐसा समाचार सुना, जिसने उसे बहुत ही पुलकित किया। एक दिन सवेरे दस बजे रेडियो ने घोषणा की—"पादरी जोसेफ कार्डिनल माइंडजेंटी, जिन्हें गत मंगलवार को हमारी सफल क्रान्ति के फलस्वरूप मुक्त किया गया, आज सवेरे ५ बज कर ५५ मिनट पर बुडा-स्थित अपने निवास-स्थान पर पहुँच गये।"

इस साधारण-से समाचार को सुन कर इवा पाल को बड़ी खुशी हुई; क्योंकि उसके माँ-बाप ने उसे बार-बार बतलाया था कि कार्डिनल एक विश्वासपात्र व्यक्ति हैं। गुप्त रूप से उसने यह भी सुन रखा था कि कार्डिनल की कैसी-कैसी परीक्षाएँ ली गयी थीं और उन्हें कैसी-कैसी सजाएँ तथा यातनाएँ भुगतनी पड़ी थीं। उसकी माँ सदा उससे कहती थीं—"कार्डिनल हंगेरी के प्रति पूर्ण वफादार हैं।" इसी समय उसे ऐसा लगता, मानो उसने ईश्वर की निन्दा की, तो वह फिर कह उठती—"वे ईश्वर के प्रति भी उतने ही निष्ठावान् हैं।"

उस दिन बुडापेस्ट में कार्डिनल की मुक्ति की बड़ी जोरदार चर्चा चलती रही। इवा ने सुना कि गत रात हंगेरियन सेना के चार अफसरों को, जो स्वातंत्र्य-सेना के साथ मिल कर लड़ रहे थे, यह सूचना मिली कि कार्डिनल को बुडापेस्ट के बाहर एक मकान में ए. वी. ओ. के १४ आदमियों की निगरानी में रखा गया है। वे अफसर शीघ्र ही, बिना किसी आदेश के, वहाँ

आ पहुँचे और ए.वी.ओ. के पहरेदारों को पराजित करके उन्होंने कार्डिनल को एक सुरक्षित स्थान में पहुँचा दिया। थोड़ी देर बाद ही एक रूसी टैंक भी वहाँ पहुँचा, जो उसके ड्राइवर के कथनानुसार, कार्डिनल के रक्षार्थ आया था। परंतु तब माइंडजेन्टी अपने आदमियों के साथ थे।

दूसरे दिन सबेरे, उन साहसी अफसरों ने कार्डिनल को उनके बुडा-स्थित निवास-स्थान पर पहुँचा दिया। वहीं से उन पादरी महोदय ने हंगेरी की जनता के नाम अपना पहला संदेश दिया—

"यहाँ के नवजवानों, सैनिकों, विश्वविद्यालय के छात्रों, ग्रामीणों, किसानों और मजदूरों ने इधर जो काम किये हैं, उनकी मैं प्रशंसा करता हूँ। मेरे आठ वर्षों के कारावास-जीवन के बाद, उन्होंने मुझे मुक्त किया। रेजाग के वे बहादुर जवान किसी बात की परवाह न करते हुए उस मकान में आये, जहाँ मुझे कैद किया गया था और मुझे अपने साथ बैरक में ले गये, जहाँ मैंने विश्राम किया। मैं हंगेरीवासियों को, एक पादरी के नाते, आशीर्वाद देता हूँ। मेरी कामना है कि हंगेरियन बहादुरों ने जो गौरव प्राप्त किया है, उसे हमारे किसान बन्धु, आवश्यकता पड़ने पर, आगे बढ़ायेंगे। वस्तुस्थिति अच्छी तरह जानने के पहले मैं इससे अधिक कुछ कहना या करना नहीं चाहता।"

अनेक हंगेरियनों की भाँति, इवा पाल ने भी पिछले कुछ वर्षों से अपने पास, गुप्त रूप से, कार्डिनल माइंडजेन्टी का एक चित्र रख छोड़ा था, जो कम्यूनिज्म और रूसियों के प्रति विरोध की भावना का प्रतीक-स्वरूप था। अब उसने उस चित्र को खोल कर दीवार पर लगाया, तो उसके मन में यह विचार उठा कि भविष्य में स्वतंत्र हंगेरी को ऐसे ही व्यक्ति के नेतृत्व की आवश्यकता पड़ेगी।

"उन्हें प्रधान मंत्री होना चाहिये।"—उसने अपने पति से कहा।

जोलतान ने, जो धार्मिक प्रवृत्तियों का नहीं था, उत्तर दिया—"उनके प्रधान मंत्री होने की बात मैं नहीं सोच सकता। मेरे विचार से एक पादरी को सरकार नहीं चलानी चाहिये।"

"लेकिन उन्हें सरकार में रहना अवश्य चाहिये।"—इवा ने जोर देकर कहा।

"हाँ, यह हो सकता है।"—जोलतान ने सहमति प्रकट की।

और, आगे चल कर, जब कार्डिनल को भावी समस्याओं पर शक्तिशाली वाणी में, गम्भीरतापूर्वक लोगों ने बोलते सुना, तो इवा पाल को इस बात से

पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सन्तोष हुआ कि हंगरी की सहायता के लिए वे बहुत उपयुक्त व्यक्ति हैं और उन्हें अवसर मिलना ही चाहिये। उसने अपने पति के सामने दलील भी पेश की—"उनके अतिरिक्त हमारे पास कोई नेता नहीं है। नाज इम्रे पर भला किसे पूरा विश्वास है?" हंगेरियन भाषा में नाम उल्टे बोले जाते हैं। इसीलिए उस कम्यूनिस्ट नेता का नाम लेते समय इवा ने इम्रे नाज न कह कर नाज इम्रे उच्चारण किया।

"मैं नाज इम्रे को पसन्द करता हूँ।"—जोलतान ने कहा—"वह बड़ा साहसी व्यक्ति है।"

"क्यों न सरकार में माइंडजेंटी और नाज इम्रे, दोनों रहें?"—इवा ने सुझाव रखा।

"रह सकते हैं, पर प्रधान मंत्री तो नाज इम्रे को ही होना चाहिये।"—जोलतान ने कुछ अनिच्छापूर्वक सहमति व्यक्त की।

इवा को अपना यह प्रस्ताव कुछ भी विचित्र नहीं मालूम होता था कि पुराने कम्यूनिस्ट नाज को, जो अब भी कम्यूनिज्म के आर्थिक सिद्धान्त का समर्थक था और पादरी माइंडजेंटी को मिला कर हंगरियन सरकार का गठन हो। जब अपने इस सुझाव को उसने पड़ोसियों के समक्ष प्रकट किया, तो अधिकांश महिलाओं ने उसका समर्थन किया।

दूसरी ओर, जोलतान की बातचीत अधिकांशतः मजदूरों से होती थी और वे यद्यपि महान् नैतिकता के प्रतीक-स्वरूप माइंडजेंटी को सरकार में स्थान दिये जाने की बात से सहमत हो जाते थे, तथापि उनका ऐसा विचार था कि स्वयं इम्रे नाज भी पुराने ढंग का आदमी होने के कारण बहुत योग्य नहीं है। उनका कहना था—"चूँकि हर कोई उसका आदर करता है; अतः हम उसे राष्ट्रपति बना सकते हैं, पर सरकार का संचालन तो किसी ऐसे युवा व्यक्ति को ही करना चाहिये, जिसने इस क्रांति का नेतृत्व किया हो।" वे एक मध्यवर्ती मार्ग के पक्ष में थे, जो १९४५ ईसवी में फासिज्म का स्थान ग्रहण करने वाले समाजवादी राष्ट्र के ढाँचे को बनाये रखे, पर जो प्रधान रूप से मानव-मर्यादा पर आधारित हो।

इवा कहती थी—"मैं तो बस दो ही बातें जानती हूँ—माइंडटेंटी को सरकार में स्थान मिलना चाहिये और ए. वी. ओ. को निकाल बाहर करना चाहिए।"

"साथ ही, रूसियों को भी!"—जोलतान उसमें इतना जोड़ देता था।

२ नवम्बर को सन्ध्या-समय बुडापेस्ट में उत्तेजना पैदा करनेवाली खबरें माइंडजेंटी की उन शर्तों के बारे में फैलीं, जिन्हें उन्होंने सरकार में शामिल होने के लिए रखी थीं। इवा पाल को यह जान कर संतोष हुआ कि अब उसकी इच्छा-पूर्ति की दिशा में आवश्यक व्यवस्था की जाने लगी थी, पर वे मजदूर, जिनसे जोलतान की बातचीत हुई थी, बहुत सशंकित हो उठे थे। उनका कहना था—"रूसी इन शर्तों के बारे में सुनेंगे, तो उन्हें बुडापेस्ट में लौटने का बहाना मिल जायेगा। फिर देखना, वे लोग दावा करेंगे कि क्रान्ति का आयोजन धर्मगुरुओं और प्रतिक्रियावादियों ने किया था।"

इस आशंका के बारे में जोलतान ने अपनी पत्नी से बातें कीं, लेकिन उसने यह तर्क प्रस्तुत किया कि जब कार्डिनल माइंडजेंटी कारागार में थे, तभी क्रान्ति सफल हो गयी थी; अतः ऐसी रूसी दलीलें हास्यास्पद ही साबित होंगी। उसने पूर्ण आशा के साथ अपनी बात दुहरायी—"मेरा खयाल है कि हमारा देश एक नवीन और विचित्र रूप ग्रहण करेगा।"

रूसी दासता से मुक्त गौरवपूर्ण हंगेरी की कल्पना ने देश के विभिन्न नागरिकों में से बुद्धिमानों को प्रकट कर दिया था। इसका पता इस बात से चला कि, नये राष्ट्र का संगठन किस प्रकार किया जाये। इस बारे में देश के विभिन्न भागों से जो और प्रस्ताव आये थे, वे साधारण नहीं थे। उनसे राजनीतिक कुशलता का परिचय मिलता था। उदाहरणस्वरूप, जब जोलतान और इवा ने किसानों की एक समिति-द्वारा प्रस्तुत इस आशय की गम्भीर योजनाओं को सुना कि हंगेरी में सामूहिक खेती-प्रथा समाप्त कर दी जाये, तो वे बड़े प्रभावित हुए। सुधार-सम्बन्धी ऐसे प्रस्ताव न तो प्रतिक्रिया-वादी थे और न निरर्थक ही। किसानों का कहना था—"हमारा मूलभूत सिद्धान्त यह है कि केवल उन सामूहिक फार्मों को, जो आवश्यकता से अधिक उत्पादन करते हैं और जिनके सदस्य उन्हें कायम रखने के पक्ष में हैं, यथा-वत् छोड़ दिया जाये। लेकिन जो फार्म अपने पैरों पर खड़े नहीं हो सकते या जिनके सदस्य उन्हें कायम रखना नहीं चाहते, उन्हें समाप्त कर दिया जाये। ऐसे फार्मों का विघटन शनैः-शनैः हो—शरद्-ऋतु की बोआई के बाद और वसन्त के आरम्भ के समय यह कार्य होना चाहिए। जिस सामूहिक फार्म का विघटन हो, उसकी भूमि किसानों में वितरित कर दी जाये। कृषि-विशेषज्ञ इस बात का भी अध्ययन करें कि कितना लम्बा-चौड़ा खेत सबसे अच्छा होगा, ताकि किसान वसन्तकालीन खेती अपने-अपने खेतों में कर सकें। जो सामूहिक

फार्म चलने दिये जायें, उनके भी नियमों और किसानों के कामों की वर्तमान व्यवस्था में ऐसे परिवर्तन लाये जायें, जिनसे किसानों के अधिकार पूर्णतः सुरक्षित रहें। कुछ समय के लिए सामूहिक फार्मों की वर्तमान प्रणाली को चलने दिया जा सकता है, पर उन पर इस तरह का नियंत्रण रखा जाये, जिससे हम सभी लोगों को यंत्रों के उपयोग का पूरा-पूरा अवसर प्राप्त हो।"

जो लोग कारखाने चलाते थे, वे भी समान दायित्व के प्रस्ताव रख रहे थे। राजनीतिक नेता सुझाव दे रहे थे कि एक स्थायी सरकार के निर्माण के लिए किस प्रकार सभी शक्तियाँ एक हो सकती हैं। और, देश के दार्शनिक एक ऐसी सच्ची राष्ट्रीय भावना उत्पन्न करने की बात करने लगे थे, जो हंगेरी के स्वातंत्र्य-प्रेम, साहस और एक सार्वभौम सत्ता के रूप में बने रहने के निश्चय को प्रकट करती हो। हंगेरी को पूर्वी यूरोप का स्विट्ज़रलैंड या स्वीडन बनाने के बारे में भी काफी चर्चाएँ होती थीं। ज़ोलतान ने एक बार कहा—"मुझे यह विचार पसन्द है। हमारा देश छोटा है; अतः हमें निष्पक्ष ही रहना चाहिये।" और, इस कथन का इवा ने पूर्ण रूप से समर्थन किया।

वास्तव में, स्वतंत्रता के इन महान् मधुर दिनों में, हंगेरी के लोग बहुत समझदारी की बातें करते थे और ऐसा लगता था, मानो एक शक्तिशाली और निष्ठावान राष्ट्र की आधारभूमि तैयार की जा रही है। "निस्संदेह एक राष्ट्र का रूप ग्रहण करने का अधिकार हमने प्राप्त कर लिया है।"—इवा अपनी सहेलियों से कहा करती थी।

ऐसे ही समय में पूरब से एक अशुभ समाचार आया। एक लड़का सड़क पर यह चिल्लाता हुआ दौड़ रहा था कि हवाई अड्डे के पास सैकड़ों रूसी टैंक चले आ रहे हैं और वे टैंक पहले की तरह छोटे नहीं, बल्कि बहुत बड़े-बड़े हैं।

लोगों ने इस बुरी खबर की पुष्टि की। "लगता है कि रूसी पूरी शक्ति से वापस लौट रहे हैं।"—एक सैनिक बोला—"और, वे नये टैंक! उनमें अतिरिक्त मशीन-गनें लगी हैं, जिनका मुख पहियों के बीच में है। उन्हें उड़ाना सम्भव नहीं है।"

पूरब-दिशा से गड़गड़ाहट की आवाज सुनाई पड़ रही थी। रूस के मैदान से एक ठंडे पवन का झोंका बुडापेस्ट की ओर चला आ रहा था। दूसरे दिन—रविवार, ४ नवम्बर को—प्रातःकाल चार बजे, बुडापेस्ट के निवासी रूसी टैंकों की कर्ण-विदारक ध्वनि सुन कर जागे।

उत्तरी बुडा में बहुत देर तक टैंक नहीं पहुँचे, लेकिन जब पहुँचे, तो उस

सड़क से होकर गुजरे, जिसके किनारे एक मकान में जोलतान और इवा पाल रहते थे। उन्होंने वहाँ एक मकान को, जहाँ एक आक्रमणकारी दिखाई पड़ा था, क्रमबद्ध ढंग से गोले मार कर ध्वस्त करना आरम्भ कर दिया। उक्त मकान पाल-दम्पतिवाला मकान तो नहीं था, पर चौथी मंजिल के अपने फ्लैट की एक खिड़की से, जो पास में हो रही गोला-बारी के कारण काँप रही थी, नीचे का दृश्य देखने के बाद उन्होंने अन्दाज लगाया कि उसके बाद उन्हीं के मकान की बारी आ सकती थी। स्वतंत्रता के शानदार दिन समाप्त हो चुके थे। वे पाँच छोटे दिन, जिन्होंने उन्हें एक नवीन भविष्य की झाँकी दिखायी थी, शेष हो गये थे। अब उनकी स्मृतियों को भी रूसी टैंक नष्ट करने में संलग्न थे।

५. रूसी आतंक

रविवार, ४ नवम्बर, के प्रातःकाल चार बजे रूसी बुडापेस्ट में वापस लौटे। उन्होंने ऐसे आतंक के साथ एक नगर को नष्ट किया, जिसकी बराबरी हाल के कुछ वर्षों में नहीं मिलती और इस प्रकार, अपना आक्रमणकारी, हत्यारा और विवेकहीन हठधर्मी का असली रूप उन्होंने संसार के सामने प्रकट कर दिया।

अब रूस के ये दावे, कि अपने अनुगामी देशों के साथ वह मैत्रीपूर्ण व्यवहार करता है, विध्वस्त बुडापेस्ट के मलवे, मशीनगनों से मारी गयीं स्त्रियों तथा बच्चों की कब्रों और सोवियत-प्रतिशोध के असह्य आतंक के नीचे दफन हो गये। उन आठ नारकीय दिनों में रूस ने यह भी साबित कर दिया कि उसने पोलैण्ड, बल्गेरिया, लिथ्वानिया और मध्य-एशिया के ऐसे ही कई जनतंत्रों को केवल अपनी पाशविक शक्ति के सहारे कब्जे में कर रखा है।

बुडापेस्ट के नष्ट होने पर इस बात की जानकारी हुई। सचमुच यह एक बड़ा महँगा सौदा था। लेकिन यदि उन लोगों को, जो अब तक इस बात से अनभिज्ञ हैं, इसकी जानकारी करा दी जाये और रूस के दुष्टतापूर्ण तथा अशोभनीय मिथ्या प्रचारों को असली रूप में संसार के समक्ष प्रकट कर दिया जाये, तो इस महान् नगर की बर्बादी सर्वथा व्यर्थ नहीं जायेगी।

उस निहत्थे नगर पर आक्रमण करने में रूसियों ने बड़ी बहादुरी दिखायी। सर्वप्रथम उन्होंने गेलर्ट पहाड़ी पर कब्जा किया, जिसकी सीधी चढ़ाई डेन्यूब नदी के पश्चिमी तट से ७७० फुट की ऊँचाई तक जाती है। बुडा की इस पहाड़ी की चोटी पर रूसियों ने बहुत बड़ी संख्या में अपनी बड़ी 'गनें' और काफी परिमाण में गोले-बारूद इकट्ठे किये। इन 'गनों' के गोले, जो लोगों के निवास-स्थानों और सरकारी इमारतों पर बड़ी तीव्रता से जाकर प्रहार करते थे, लगभग चार फुट लम्बे और भयानक रूप से विध्वंसकारी थे।

बुडापेस्ट के इस सबसे ऊँचे स्थान, गेलर्ट पहाड़ी, से रूसी गोलंदाज सारे नगर पर नियंत्रण रखने में समर्थ थे। बुडापेस्ट से हिटलर को निकाल बाहर करने में सहायता पहुँचानेवाले रूसी सैनिकों की स्मृति में बनाये गये एक स्मारक के पास 'गनों' को रखा गया था और बुडा तथा पेस्ट को संयुक्त करने

वाले, डेन्यूब नदी पर निर्मित, आठों पुल उनके निशाने में थे।

उत्तर की दिशा में, वे शक्तिशाली 'गनें' प्राचीन नगर बुडा पर, जिसकी कैसल-पहाड़ी सँकरी सड़कों, विलक्षण मकानों और ऐतिहासिक दृश्यों से सुशोभित थी, गोले फेंक सकती थीं। रूसियों को मालूम था कि काफी शक्तिशाली गोलों से वे उस प्राचीन नगर को पूर्णतः नष्ट कर सकते थे।

पूरब की ओर, वे दीर्घकाय 'गनें' मजे में विश्वविद्यालय के भवनों, रेलवे-स्टेशनों, संग्रहालयों, रेडियो-स्टूडियो, सीपेल के कारखानों और रूसियों को क्रुद्ध करनेवाले एक खास स्थल—किलियन-बैरक—पर, जिसके ध्वस्त अवशेष अब भी वहाँ मौजूद थे और जहाँ कुछ सैनिक तथा अफसर अब भी रुके हुए थे, गोली-बारी कर सकती थीं।

वास्तव में, गेलर्ट पहाड़ी पर रखी गयीं केवल वे 'गनें' ही सम्पूर्ण बुडापेस्ट को नेस्तनाबूद करने में समर्थ थीं। लेकिन, कुछ दृष्टियों से, वे 'गनें' रूसी सेनानायक के शस्त्रागार के साधारण महत्त्ववाले अस्त्र थे, क्योंकि उसके पास गनों के अतिरिक्त रूसी सेना के अत्यधिक निर्दय १,४०,००० पैदल सिपाही थे। इतना ही नहीं, लड़ाई के गम्भीर रूप धारण करने पर उसे निकट पड़ोस में ही ६०,००० और सैनिक मिल सकते थे। हर सैनिक को एक छोटी मशीन-गन और काफी संख्या में गोलियाँ दी गयी थीं। आवश्यकता होने पर उन्हें और अधिक गोलियाँ भी मिल सकती थीं। उन सैनिकों को केवल एक ही सीधा आदेश दिया गया था—"गोली मारो!" चाहे कोई छात्र गैसोलिन-बम लिये जा रहा हो, या कोई महिला रोटी लिये जा रही हो, सबके लिए एक ही आदेश था—"गोली मारो!"

४,००० नये टैंक और भी आये। ये टैंक पुराने ढंग के उन टी-३४ टैंक की तरह सहज-भेद्य, ऊँची बुर्जी और आसानी से न मुड़नेवाली 'गनों' से युक्त नहीं थे, जिन्हें पिछले संघर्ष में सार्जण्ट जोकी ने नष्ट किया था। ये टैंक निम्नढलाव-युक्त, तेज, सुरक्षित और 'गनों' से अच्छी तरह सजे हुए टी-५४ किस्म के थे। इनकी बुर्जी इस तरह ढालुवा बनी थी कि गोली उससे टकरा कर वापस लौट जाती। ये घंटे में ४० मील की रफ्तार से चल सकते थे और किसी 'ट्राली-कार' या दूसरी मोटर-गाड़ी को भी कुचल कर आगे बढ़ सकते थे। इनमें एक विशेष किस्म की बहुत शक्तिशाली 'गन' भी लगी थी, जिसमें से किसी सीमा तक अपने-आप ही गोलियाँ चलती थीं और जिसकी एक गोली किसी मकान को नष्ट कर सकती थी। रूसी ऐसे दो हजार टैंक नगर में लाये थे और इतने ही

टैंक उन्होंने अपने सुरक्षित भांडार में रख छोड़े थे।

हवाई हमले के लिए, विशेष-विशेष स्थानों पर अथवा सम्पूर्ण क्षेत्र पर बमबारी करने के लिये जेट विमान और बिना चालक के अपने पंख से चलनेवाले लड़ाकू विमान मँगाये गये थे। साधारणतः इन विमानों में महान् विस्फोटक पदार्थों से युक्त राकेट बम रखे गये थे और एक राकेट किसी कारखाने की मजबूत दीवार को भी भेद सकता था। चूँकि हंगेरियन विद्रोहियों के पास न तो अपने विमान थे और न एक से अधिक विमान विध्वंसक 'गन' थी—यदि अधिक 'गन' होते भी, तो उनके पास गोले नहीं थे—अतएव सोवियत विमान-चालक पूर्णतः निडर होकर उड़े और बमबारी करके उन्होंने नगर को भारी क्षति पहुँचायी!

भूमि पर भी राकेट फेंकने की व्यवस्था की गयी थी। तेज रफ्तार से चलने-वाले ट्रकों के पीछे राकेट फेंकनेवाले यंत्रों की गाड़ियाँ चलती थीं और जिस किसी मकान पर राकेट फेंकने की आवश्यकता समझी जाती थी, उस पर वे यंत्र लगातार छः बड़े-बड़े राकेट फेंक देते थे। साधारणतः किसी मकान को धराशायी करने और उसके निवासियों को मार डालने के लिए राकेटों की एक बौछार ही पर्याप्त होती थी।

लेकिन इतने सारे भयंकर अस्त्र भी उस भीषण हत्या-कांड के लिए जो रूसी चाहते थे, काफी नहीं थे। अनेक दस्ते अग्निवर्षक यंत्र लिये नगर में घूम रहे थे और अनेक क्षेत्रों तथा उनके निवासियों को आग से भस्म कर रहे थे। बख्तरबंद गाड़ियों को जलानेवाले यंत्र भी उनके पास थे, ताकि यदि हंगेरियन स्वतंत्रता-संग्राम के सैनिक बख्तरबंद गाड़ियों अथवा लड़ाई में जीते हुए टैंकों के साथ आयें, तो उन्हें नष्ट किया जा सके। टैंकों का सामना करने के लिए टैंक-विध्वंसक 'गन', विकट परिस्थिति के लिए 'बजूके' और एक नयी तरह का छोटा टैंक भी, जो बहुत तीव्रगामी होने के साथ साथ पूर्णतः सशस्त्र था, रूसी लाये थे। इन सबके अतिरिक्त उन्होंने आने-जाने के साधन, प्रकाश, चलते-फिरते सिनेमा, गश्ती-गाड़ियों और सशस्त्र जीपों का भी बड़ा जबर्दस्त प्रबन्ध किया था। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इस दूसरे हमले के लिए प्रत्येक सोवियत सैनिक को एक नयी किस्म की छोटी मशीन-गन दी गयी थी, जो पुराने रूसी गिटार की अपेक्षा दूनी प्रभावकारी थी।

सोवियत-शक्ति के इतने बड़े जमाव के मुकाबले में हंगेरीवासियों के पास केवल कुछ हाथ के बनाये हुए गैसोलिन-बम थे।

फिर भी रूसी कोई खतरा मोल लेने को तैयार न थे। अपना आक्रमण आरम्भ करने के पूर्व उन्होंने एक हंगेरियन से, जो अकेले ही उन्हें पराजित कर सकता था, टेलिफोन पर बातचीत की। कर्नल मेलेतर को, जो अद्भुत कुशलता से बुडापेस्ट की रक्षा करने और रूसियों को निकाल बाहर करने के कारण अब मेजर-जनरल हो गया था, रूसियों ने वचन दिया कि वे नगर को कोई क्षति पहुँचाने का विचार नहीं रखते। सिर्फ यही नहीं, उन्होंने हंगेरी से सभी सोवियत-सैनिकों की वापसी के बारे में भी उनसे विचार-विमर्श आरम्भ किया। इस बातचीत में रूसी, समय पाने के उद्देश्य से—ताकि उनकी सब 'गनें' यथा-स्थान पहुँच जायें—इतना अधिक झुके कि लगा, मानो हंगेरी की पूरी विजय हो गयी।

मेलेतर ने, जिसे वहाँ की बातचीत पर सहसा विश्वास नहीं हो रहा था, अन्ततः इस रूसी पराजय पर विश्वास कर लिया। रूसियों ने कहा—"बाद में आइये, तब समझौतापत्रों पर हस्ताक्षर किये जायेंगे। तब तक कोई संघर्ष नहीं होना चाहिये।"

इस संधि-काल में रूसियों ने नगर में अपना मोर्चा दृढ़ कर लिया और बाद में जब जनरल मेलेतर, अगली बैठक में भाग लेने के लिए, संधि-सूचक झंडे के साथ आये, तो रूसियों ने झंडे को अलग हटा दिया और बुडापेस्ट के उस बहादुर को बन्दी बना कर कारागार में भेज दिया—सम्भवतः साइबेरिया के किसी कारागार में।

आगे चल कर जो संघर्ष हुए, उनमें हंगेरी के जवान, लगभग निरस्त्र और बिना नेता के, रूसी टैंकों के मुकाबले में बाहर आये। उनका अब कोई सेना-नायक नहीं था और न यातायात की उनके पास कोई व्यवस्था थी। उन देश-भक्त जवानों ने रूसी आक्रमणकारियों के विरुद्ध जो-कुछ किया, वह वस्तुतः मानव-सहिष्णुता का एक अद्भुत महाकाव्य कहा जा सकता है।

रविवार को रूसी, सुरक्षित गेलर्ट-पहाड़ी से, नगर पर बमवर्षा करते रहे और तीव्रगामी टैंकों के दस्ते मुख्य मार्गों पर गोली-बारी के लिए भेजते रहे। अपने पैदल सिपाहियों को उन्होंने उस दिन रोक रखा और हंगेरीवासियों को इस तरह भयभीत करने का प्रयत्न किया कि जिसमें सोमवार को उनका सफाया करने का काम आसानी से हो सके।

लेकिन उनका अन्दाज गलत था। घनघोर बम-वर्षा के समय हंगेरीवासी अपने-अपने मकानों के अन्दर ही रहे और तीव्र टैंक-आक्रमण में चलाये जानेवाले गोलों से आत्मरक्षा के लिए सावधान रहे। फिर भी, साहसी

स्वातंत्र्य-सैनिक पेस्ट के कई मार्गों पर घेरेबन्दी करने का अवसर निकाल ही लेते थे और कुछ लड़के-लड़कियों के गिरोह मंदगामी टैंकों से निपटने के लिए तैयार थे। बुडा के एक मोड़, मारिज सिगमण्ड स्क्वायर, पर एक कालेज-छात्र, जिसे कम्यूनिस्टों ने सेना-विज्ञान पढ़ने के लिए बाध्य किया था, बोला—"मेरा खयाल है कि यदि हम इस स्क्वायर पर कब्जा कर लें, तो रूसी घिर जायेंगे। हमें यह मार्ग रोकना चाहिये।"

नेतृत्व की बागडोर सम्भालते हुए, उसने एक बहुत ही उत्तम रक्षा-योजना तैयार की, किन्तु अभी उसकी कार्रवाई पूरी हो भी नहीं पायी थी कि एक लड़का चिल्लाया—"वह देखो, सामने से सैनिकों की पाँच कारें आ रही हैं!"

कालेज-छात्र ने तुरन्त ही अपने सबसे चतुर आदमियों को पास के मकानों की छतों पर चढ़ जाने का आदेश दिया और जब वे गश्ती-कारें साधारण रूप से घेरेबन्दी किये हुए स्क्वायर में पहुँचीं, तब उसने एक इशारा किया और दूसरे ही क्षण वे कारें भीषण अग्नि-ज्वाला में झुलसने लगीं। फलतः ६७ रूसी मारे गये और तीन कारें, जो जल्दी मुड़ सकीं, गेलर्ट पहाड़ी की ओर भाग गयीं।

दूसरा रूसी आक्रमण होने से पहले कालेज छात्र ने अपने साथियों को आज्ञा दी कि वे उस क्षेत्र में पड़ी हुई सभी कारों को उलट दें। तदुपरान्त उन कारों के बीच के खाली स्थानों पर लकड़ियों के ढेर लगा दिये गये और इस प्रकार बने हुए घेरे में वे सब स्वयं जम गये। इस समय, अप्रत्याशित रूप से, कुछ हंगेरियन सैनिकों ने भी उनकी सहायता की और जीते हुए दो रूसी टैंक स्क्वायर पर भेज दिये, जो रक्षा के मुख्य साधन बने।

रूसी प्रतिक्रिया में अधिक देर नहीं हुई। गेलर्ट पहाड़ी से सात बड़े टैंक भयानक आवाज करते हुए आये और आने के साथ ही उनकी मशीन-गनों ने पास-पड़ोस के मकानों पर गोलीवर्षा आरम्भ कर दी। मारिज सिगमण्ड स्क्वायर के जवानों की पहुँच से बाहर वे टैंक रुके और सड़क पर चलने-फिरनेवाले २० लड़कों को पकड़ कर गोलियों की एक भयानक बौछार से उन्हें उड़ा दिया।

स्क्वायर के अन्दर छिपे उस कालेज-छात्र ने अपने आदमियों से कहा—"आज हम लोग यहीं अपना बलिदान देंगे।"

सातों द्रुतगामी टैंक, अपने प्रतिशोध का पहला काम समाप्त करने के बाद, मारिज सिगमण्ड स्क्वायर की ओर बढ़े; लेकिन प्रतिरक्षा-पक्ष इस तरह छिपा था, इतनी अच्छी तरह शस्त्र सज्जित था और इतना साहसी था कि आये हुए सभी टैंक नष्ट कर दिये गये। इसके बाद, नवम्बर महीने के उस रविवार को,

अधिकाधिक टैंकों और स्क्वायर में छिपे बैठे उन उग्र नवजवानों के बीच घमासान लड़ाई होती रही। यहाँ उन बहादुर जवानों से हुए मुकाबले से ही रूसियों ने समझ लिया कि बुडापेस्ट को तबाह करने की उनकी विशाल योजना सफल होनेवाली नहीं थी। इसके लिए उन्हें एक-एक हंगेरियन को ढूंढ़ कर समाप्त करना होगा।

मारिज सिगमण्ड स्क्वायर के उस घेरे में तैनात स्वातंत्र्य-सैनिकों में एक बीस वर्ष का जवान भी था। वह फौलाद की तरह सख्त भी था और कहानी की पुस्तकों का-सा योद्धा बनने के लिए बच्चों की तरह आतुर भी। उसका नाम इम्रे जीजर था और उसे सबसे अधिक अफसोस इस बात का था कि सम्पूर्ण क्रान्ति में उसे संघर्ष करने के लिए राइफल से बड़ा कोई शस्त्र नहीं मिला। वह सोचता था कि यदि उसे कोई मशीन-गन मिल जाती, तो संघर्ष का परिणाम कुछ दूसरा ही निकलता।

जीजर एक सुन्दर जवान था। उसका रंग गहरा, दाँत खूबसूरत और बाल भौंरे के समान काले थे, जिन्हें वह एक जहाजी की भांति सँवार कर रखता था। वह एक उल्टे गले का स्वेटर पहनता था और उसके मुँह के बायें कोने में सिगरेट लटकता रहता था। बातें करते समय वह प्रायः गुर्राने का प्रयत्न करता था। वह उस समय ड्यूटी पर ही था, जब पाँच नये रूसी टैंक स्क्वायर का सफाया करने के लिए आये।

जीजर बतलाता है—"उन्हें सफलता नहीं मिली। मुझे पता नहीं कि हम लोगों ने कैसे क्या किया? पर इतना अवश्य है कि एक टैंक नष्ट कर दिया गया और बाकी भाग गये।" उसके बाद दो और रूसी टैंक मारिज सिगमण्ड स्क्वायर में नष्ट किये गये और जब थोड़ा-थोड़ा अन्धेरा छाने लगा, तब रूसियों को यह बात स्वीकार करनी पड़ी कि बुडापेस्ट के लिए होनेवाली दूसरी लड़ाई पहली लड़ाई से भी उग्र होगी। मानो इसी बात को प्रमाणित करने के लिए जीजर और उसके साथी उस स्क्वायर पर सम्पूर्ण शक्ति से किये गये रूसी आक्रमण का ३६ घंटों तक मुकाबला करते रहे। एक अवसर पर वे बुरी तरह फँस गये, जबकि गेलर्ट पहाड़ी से गोलाबारी हो रही थी, स्क्वायर के चारों ओर से टैंकों के हमले हो रहे थे, बख्तरबंद गाड़ियों को नष्ट करनेवाली चलती-फिरती 'गनें' स्क्वायर की इमारतों पर क्रमबद्ध ढंग से गोलीबारी कर रही थीं और सम्पूर्ण संघर्ष-क्षेत्र पर फास्फोरस-मिश्रित दाहक बम फेंके जा रहे थे। फिर भी नवजवान हंगेरियन उस विशाल आक्रमण का दो घंटों तक सामना करते

रहे और तभी पीछे हटे, जब स्क्वायर पूरी तरह ध्वस्त हो गया। जीजर कहता है—"उन्हें कुछ खास लाभ नहीं हुआ। जब सोवियत-सैनिक स्क्वायर में प्रविष्ट हुए, तो आस-पास की सड़कें विध्वस्त कारों, जलाये हुए टैंकों, नष्ट गाड़ियों और गिरे हुए मकानों से इस तरह रुकी पड़ी थीं कि उन पर अधिकार होना न-होना बराबर था। उधर इम्रे जीजर एक दूसरे अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान पर संघर्ष करने के लिए चला गया।

मारिज सिगमण्ड स्क्वायर पर अधिकार करने के बाद रूसी एक अन्य स्थान की ओर आकृष्ट हुए, जहाँ का मुकाबला यहाँ से भी गम्भीर था। गेलर्ट पहाड़ी के उत्तर में वह प्राचीन किला दिखाई पड़ता था, जो कैसल पहाड़ी का सबसे प्रमुख स्थान था। वहाँ पहुँचनेवाली अधिकांश सड़कें बहुत ढालुआ और घुमावदार थीं। वहाँ दृढ़प्रतिज्ञ हंगेरियन जवानों का एक दल, जिसमें बहुत-से कालेज-छात्र भी थे, अन्तिम क्षण तक बुडा की रक्षा करने के लिए एकत्र था। स्क्वायर के पतन के बाद वहाँ के जवानों को कुछ अनुभवी स्वातंत्र्य-सैनिकों की सहायता प्राप्त हुई, जिन्हें रूसियों के हर तरह के हमलों का ज्ञान प्राप्त हो चुका था। लेकिन एक मामले में कैसल पहाड़ी की लड़ाई स्क्वायर-वाली लड़ाई से भिन्न थी—इस संघर्ष में अनेक युवतियाँ भी शामिल थीं। वे भी अपनी वीरता दिखानेवाली थीं।

सतर्क रूसियों ने कैसल पहाड़ी की समस्या पर इस ढंग से विचार किया, मानो वहाँ उनका संघर्ष कुछ निःशस्त्र जवानों और युवतियों के एक समुदाय से नहीं, बल्कि संसार के सर्वाधिक शक्तिशाली शत्रुओं से होनेवाला था। गेलर्ट पहाड़ी की जबर्दस्त 'गनें' लगभग एक घंटे तक अपने उस लक्ष्य पर निर्दयतापूर्वक घोर विस्फोटक गोलों की बौछार करती रहीं। ऐसा प्रतीत होता था, मानो उस भयानक विध्वंस में कोई भी व्यक्ति जीवित नहीं बचेगा।

लेकिन रूसी सेना-नायक किसी तरह का खतरा मोल नहीं लेना चाहता था। अतः पहले उसने वहाँ अपने टैंक भेजे, ताकि यदि किसी संगठित विरोध की सम्भावना शेष हो, तो वे उसे नष्ट कर दें। टैंकों के पीछे पैदल-सिपाहियों के दस्ते, मशीन-गनों के साथ भेजने की व्यवस्था थी। उनका काम इक्के-दुक्के जीवित बचे लोगों को मौत के घाट उतारना था।

लेकिन सैनिक वहाँ ठीक समय पर नहीं पहुँचे। जाते हुए टैंकों की पंक्ति समाप्त होते ही लड़के-लड़कियाँ अपने छिपे स्थानों से रहस्यमय ढंग से निकलीं और बिना कुछ अधिक सोचे-विचारे तत्काल योजना बना कर उन्होंने ऐसे कदम

उठाये, जिन्होंने कैसल पहाड़ी के रक्षण को सैनिक व्यूह-रचना के इतिहास में एक स्मरणीय पृष्ठ बना दिया।

कैसल पहाड़ी पर मारिज सिगमण्ड स्क्वायर से आये लोगों में इम्रे जीजर भी एक था, जो अब भी गाइफल लटकाये, युद्ध के लिए उतावला बना हुआ था। वह कहता है—"हमारे सामने बस सीधी-सी समस्या थी—टैंकों को कैसे नष्ट किया जाये?"

वह आगे बतलाता है—"इसके तीन मुख्य उपाय थे। पहला यह था कि उन्हें तिरछा मोड़ दिया जाता और तब प्रहार किया जाता। जब वे चढ़ाई पर होते थे, तब कभी-कभी ऐसा करने में हम सफल भी हो जाते थे। लड़कियाँ सड़क पर तरल साबुन फैला देती थीं और टैंक के पहिये उस पर चलते समय या तो चक्कर खा जाते थे या फिसल जाते थे। ऐसी स्थिति में कभी-कभी टैंक किसी मकान से टकरा कर भी रुक जाता था और तब हम उस पर हमला कर देते थे।

"एक गैरेज में काम करनेवाले आदमी ने हमें यह भी दिखलाया कि किस तरह कोनों पर ग्रीज या तेल पोत देने से एक टैंक बगल की ओर मुड़ कर किसी मकान या पेड़ से टकरा जाता और हमारे फंदे में आ जाता।

"हमारी दूसरी युक्ति यह थी कि उन्हें किसी भी तरह एक मिनट के लिए रोक दिया जाये। उन्हें रोकने के लिए हम कोई न-कोई उपाय काम में लाते थे। उदाहरण के लिए, एक चालाक लड़की ने सड़क पर भूरी तश्तरियाँ उलट कर इस तरह रख दीं कि वे ठीक खाई की तरह लगने लगीं। रूसी वहाँ पहुँचते, तो ठिठक जाते और फिर पीछे की ओर खिसकने लगते। उसी समय हम उन पर हमला कर देते। एक मजदूर को भी एक अच्छा उपाय सूझा। एक सोडा-वाटर-फैक्टरी से उसने एक गाड़ी आक्सीजन की खाली किटयाँ मँगवा लीं। उन टंकियों को सड़क पर फैला दिया गया और तब उन पर चढ़ने के कारण टैंक किस तरह इधर-उधर लुढ़कने लगते, देखते ही बनता था। कुछ छोटे बच्चों ने सड़क पर रस्सियों में गोले बाँध रखे थे और उन्हें तब तक आगे-पीछे खींचते रहते थे, जब तक वे टैंकों के पहियों के नीचे नहीं पड़ जाते थे। फलतः विस्फोट होने से टैंक रुक जाते थे और हम उनकी अन्तिम क्रिया कर देते थे। लेकिन इन सबसे वीरतापूर्ण काम उन लड़कों और लड़कियों का था, जो बाहर निकल कर, नल के छड़ों को टैंकों के पहियों के बीच घुसेड़ देते थे और उनका चलना रुक जाता था। वैसे बच्चे आपने नहीं देखे होंगे।"

अपने गिरते हुए सिगरेट को होंठों से दबा कर उसने बतलाया—"तीसरा उपाय था—किसी टैंक को एक ऐसे मार्ग में प्रविष्ट करा देना, जो आगे चल कर समाप्त हो जाता हो। वैसी स्थिति में टैंक को नष्ट कर देने का हमें अच्छा अवसर मिलता था। लड़कियाँ खिड़कियों से झाड़ू की मूठ बाहर की ओर निकाल देती थीं, जिसे टैंक-चालक आक्रमणकारी 'गन' मान कर, बंद होनेवाले मार्ग की ओर मुड़ जाते थे। फिर तो वैसे टैंक की दुर्गति हो जाती थी। या फिर हम पुरानी खाली 'गनों' को दरवाजों पर रख देते थे और टैंक उनसे निबटने के लिए आगे बढ़ आते थे। इस प्रकार वे उस मार्ग में फँस जाते थे और हम उन्हें नष्ट कर देते थे।"

निस्संदेह किसी टैंक को रोक लेना बहुत आसान था। लेकिन जाल में फँसे उन टैंकों से निबटना बहुत कठिन था, क्योंकि उस स्थिति में भी वे अपनी तीन शक्तिशाली मशीन-गनों से आग उगल सकते थे। वे 'गनें' भी ऐसी थीं, जो चारों ओर घूम कर अपने हमलावरों पर निशाना साध सकती थीं। रूसी इस बात के लिए पूर्ण सतर्क थे कि कोई भी आक्रमणकारी गैसोलिन-बम के साथ टैंक के पास न पहुँच जाये। केवल एक हंगेरियन को उड़ाने के लिए, उन्हें बड़ी-से-बड़ी मशीनगन का उपयोग करना पड़े, इसके लिए भी रूसी तैयार थे।

कैसल पहाड़ी के नवजवान भी कुछ कम नहीं थे। उन्होंने भी किसी क्षतिग्रस्त टैंक को नष्ट करने के अनेक तरीके ढूँढ़ रखे थे। एक फुर्तीले मजदूर ने रास्ते की बगलवाले ऊबड़-खाबड़ फुटपाथ के एक गड्ढे में गैसोलिन भर दिया और स्वयं एक मकान के दरवाजे के पीछे तब तक छिपा रहा, जब तक एक टैंक उस स्थल पर नहीं पहुँचा। गैसोलिन के पास टैंक के पहुँचते ही उसने वहाँ एक गोला फेंका, जिससे भयानक आग लग गयी और टैंक धू-धू करके जलने लगा।

एक दूसरे मजदूर ने एक टैंक में, बहुत तेज बिजली का एक तार फेंक कर उसके सभी सवारों को मार डाला। एक पहाड़ी के निम्नवर्ती भाग में एक दृढ़संकल्प मोटर-चालक ने अपनी 'ट्राली-कार' को बड़ी तेज चाल से टैंक की ओर चलाया और जब वह टैंक से टकराने लगी, तो स्वयं कूद गया। फलतः टैंक में जोरों की आग लग गयी।

लेकिन अन्ततः भीमकाय सोवियत-टैंक तो उन युवा पुरुषों और नारियों-द्वारा ही नष्ट किये गये, जो बहुत बहादुरी के साथ टैंक के काफी करीब तक चले जाते थे और हाथ के बने गैसोलिन-बम उन पर फेंक देते थे। इम्रे जीजर कहता है—"मैंने यह कभी नहीं सोचा था कि लड़कियाँ उतना-कुछ कर

सकेंगी, जितना करते हुए उन्हें मैंने देखा। वे एक बम लेकर दरवाजों की आड़ में खड़ी हो जाती थीं। यदि टैंक सही ढंग से जाता था, तो वे कुछ नहीं करती थीं। टैंक सभी दरवाजों पर गोलीबारी करते जाते थे; अतः लड़कियों में से अनेक मर भी जाती थीं। कई लड़कियाँ इस तरह मरीं।

"लेकिन जब कोई टैंक फिसलता था, या किसी दीवार से टकराता था, या अन्य किसी ढंग से रोक लिया जाता था, तब वे लड़कियाँ उसे बुरी तरह नष्ट-भ्रष्ट कर देती थीं।" एक पादरी ने, जिसने कैसल पहाड़ी की लड़ाई अपनी आँखों से देखी थी, बतलाया—"मैंने उस तरह की वीरता कभी नहीं देखी थी, जैसी बुडापेस्ट की लड़कियों ने दिखलायी।" रूसियों के विरुद्ध उस संघर्ष में एक १२-वर्षीय लड़के ने, जिसके नाम का पता नहीं है, अपनी जान की कुर्बानी देकर एक महासाहसिक और लोमहर्षक काम किया। उसने कुछ गोले अपनी पेटी में टाँग लिये और कुछ अपने हाथ में ले लिये और इसके बाद आनेवाले टैंकों की कतार के आगे दौड़ गया। परिणामतः आगेवाले टैंक के तथा स्वयं उसके टुकड़े-टुकड़े उड़ गये।

साथ ही, पीछे आनेवाले दूसरे टैंक भी इसके कारण रुक गये, जिनसे बड़े लोग निबटे। उपर्युक्त पादरी ने इस सम्बन्ध में कहा—"यदि कोई उस बालक को रोक लेता, तो ऐसी करुण घटना कभी न घटती। लेकिन उसे इतना तो पता था ही कि वह किनके विरुद्ध संघर्ष कर रहा था।"

अंत में, रूसियों का कैसल पहाड़ी पर कब्जा हो ही गया। निश्चित समय के पूरे दो दिन बाद निष्ठुर पैदल सिपाही पूर्वयोजना के अनुसार वहाँ गये और इक्के दुक्के बचे लोगों का उन्होंने सफाया किया। लेकिन जब वे सावधानीपूर्वक और अधिकाधिक शस्त्रास्त्रों के साथ उधर जा रहे थे, तब मार्ग में उन्हें रूस के २० से अधिक सर्वोत्तम टैंक जले हुए और छिन्न-भिन्न अवस्था में पड़े हुए मिले। विशेषता यह कि उन टैंकों पर एक भी भारी 'गन' का प्रयोग नहीं किया गया था। वे सब, व्यक्तिगत और राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाले नवजवान हंगेरियनों के हाथों के शिकार बने थे।

जब विजयी रूसी, अंत में, किले में प्रविष्ट हुए, तब वहाँ केवल तीस हंगेरियन जवान मौजूद थे, जो पराजय-सूचक श्वेत पताका के नीचे, गर्वपूर्वक, किले से निकले। तीन दिनों तक उन्होंने रूस के भयानक शक्ति-सम्पन्न हमले का मुकाबला किया था और अपने को यथार्थतः बहादुर साबित किया था। वीरता को कलंकित करनेवाले सोवियत सेना-नायक ने किले की दीवार से दूर खड़ा

करके मशीन-गन की एक बौछार से उन सबको मौत के घाट उतार दिया।

सम्पूर्ण बुडापेस्ट में एसी ही आतंकपूर्ण स्थिति थी। संघर्ष के प्रारम्भिक क्षणों में सोवियत-सेना के लिए बस एक ही नियम था—"यदि किसी मकान से एक भी गोली चले, तो पूरे मकान को नष्ट कर दो। यदि किसी सड़क पर कई गोलियाँ चलें, तो उस सड़क पर स्थित सभी मकानों को ध्वस्त कर दो।" सैनिक इस नियम का सम्पूर्ण पाशविक शक्ति के साथ पालन भी कर रहे थे। बुडापेस्ट का कोई भी भाग टैंकों की मार से सुरक्षित नहीं था। यदि कोई रूसी सेना-संचालक कहीं एक भी गोली की आवाज सुन लेता, तो वह अपना टैंक रोक देता था। अब टैंक रोकने में उन्हें कोई खतरा नहीं था। फिर निशाना ठीक कर वह छतों की ओर गोलीवर्षा आरम्भ कर देता था, ताकि वहाँ जितने भी आक्रमणकारी हों, वे सब समाप्त हो जायें। वे मकानों की छत पर गोली नहीं चलाते थे, बल्कि नीचेवाले भाग पर धुआँधार गोलीबारी शुरू कर देते थे और तब तक करते रहते थे, जब तक मकान गिर नहीं पड़ता था। इस प्रकार हजारों हंगेरियन जिन्दा ही दफन हो जाते थे।

यदि रूसी उन लोगों से लड़े होते, जिन्होंने उनके साथ कभी सहयोग न किया होता, तो ऐसी बर्बरतापूर्ण कार्रवाइयों का कुछ मतलब होता; या फिर यदि वे प्रतिक्रियावादी लोगों से ऐसी हठधर्मी से निपटे होते, तो गैर-कम्यूनिस्ट क्षेत्रों की बात को ध्यान में रखते हुए उनके इस अनियंत्रित क्रोध को कम्यूनिस्ट-सिद्धान्तों के एक अंग के रूप में स्वीकार किया जा सकता था। लेकिन बुडापेस्ट में कम्यूनिस्टों ने अपना क्रोध ऐसे लोगों पर उतारा, जो आरम्भ में उनके शांतिपूर्ण सहयोगी रह चुके थे, जो एक समय अच्छे कम्यूनिस्ट थे और जिन्होंने अपने राष्ट्रीय हितों का भी बलिदान करके उनका साथ दिया था। बुडापेस्ट में रूसियों ने उन लोगों को क्रूरतापूर्वक नष्ट किया, जो कई दृष्टियों से पूर्वी यूरोप में उनके सर्वोत्तम मित्र थे। वे प्रतिक्रियावादियों से संघर्ष नहीं कर रहे थे। वे पूँजीवादियों से संघर्ष नहीं कर रहे थे। वे उन प्राचीनतावादी तत्त्वों से भी संघर्ष नहीं कर रहे थे, जो इतिहास को पीछे की ओर मोड़ना चाहते हों। वे उन लोगों को समूल नष्ट करने में लगे थे, जो एक समय कम्यूनिस्ट थे!

लेकिन बर्बरता का सबसे भीषण रूप आना अभी शेष था। जिन क्षेत्रों पर वे अधिकार जमा चुके थे, वहाँ की सड़कों पर भी रूसी टैंक पागलों की तरह चीत्कार करते हुए दौड़ रहे थे और जो भी नागरिक दिखायी पड़ जाते थे, उन

पर गोली चला देते थे। ऐसी भी तीन घटनाएँ सामने आयीं, जिनमें कतार में खड़ीं महिलाओं को गोलियों से उड़ा दिया गया।

एम्बुलेन्सों और 'रेडक्रास' के कर्मचारियों को भी निर्दयतापूर्वक मारा गया —सम्भवतः इसलिए कि रूसी स्वयं इन अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता-प्राप्त कल्याणकारी संस्थाओं का उपयोग सैनिक कार्रवाई के रूप में करते हैं। अतः उन्हें सन्देह रहता है कि कहीं ये भी आक्रमणकारी न हों। घायलों की सेवा में लगीं नर्सों को तो बहुत ही निकट से राइफल से गोली चला कर भून डाला गया।

दरोजी-स्ट्रीट पर स्थित हंगरियन केन्द्रीय डिपो में जितना रक्त और रक्त-चूर्ण था, सब रूसियों ने जब्त कर लिया और जाबोल्ज-स्ट्रीट के अस्पताल में ले जाकर उसे अपने आदमियों के लिए सुरक्षित रख दिया। फल यह हुआ कि हंगेरियन डाक्टर केवल 'सैलाइन-ट्रान्सफ्यूजन' का ही प्रयोग करने के लिए विवश हो गये, जिसके कारण प्रायः उनके रोगी मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। यह भी इसी का परिणाम था कि पैर के घाववाले रोगियों में से ३५ प्रतिशत रोगियों के पैर काट देने पड़े।

बच्चों की हत्या की गयी, अस्पतालों पर गोलियाँ चलीं और तनिक-से सन्देह पर नवजवानों के प्राण लिये गये। निर्जीव पदार्थों के साथ भी वैसा ही बुरा बर्ताव हुआ। सैनिकों के एक दस्ते ने राष्ट्रीय पुरालेख-संग्रहालय पर आक्रमण किया और उसमें आग लगा दी। जब देशभक्त दमकलवालों ने आग को बुझाने की चेष्टा की, तो उन्हें भी गोलियों से भून डाला गया। प्रोटेस्टेण्ट पाठशाला के सामने के एक मकान में भी एक दूसरे दस्ते ने आग लगा दी और जब उस मकान में रहनेवाले एक व्यक्ति ने अपने सामान की रक्षा करने की चेष्टा की, तो उसे भी गोली मार दी गयी। गोदामों को पूर्णतः लूट लिया गया, हालाँकि रूसी सैनिकों को खाद्यान्नों की आवश्यकता नहीं थी। नेपजिंहाज-स्ट्रीट के ४६ नम्बरवाले मकान की तीसरी मंजिल के २३ नम्बर-वाले कमरे में, जो आभूषणों की दूकान थी, तीन सोवियत सैनिक दरवाजा तोड़ कर प्रविष्ट हो गये। दूकान के मालिक को गोली मार कर उन सैनिकों ने वहाँ की सभी घड़ियों को अपने कब्जे में कर लिया और बाद में गोलियों से उस दूकान की धज्जी-धज्जी उड़ा दी।

बुडापेस्ट की यह बर्बादी एकदम निरर्थक और अनावश्यक थी। वस्तुतः यह अंधा होकर उन लोगों से बदला लेना था, जो सोवियत रूस के मिथ्या-भाषण, आतंक और धाँधली से तंग आ गये थे।

लेकिन जब बर्बादी का यह कार्यक्रम पूरा हो गया—जब नवजवानों और नवयुवतियों का सफाया कर दिया गया—तब भी वहाँ दो अपराजित हंगेरियन सैनिक चौकियाँ शेष रह गयी थीं, जिनके बच जाने से अवश्य ही रूसियों को खीझ होती रही होगी। उलोई-स्ट्रीट पर विध्वस्त और क्षत-विक्षत किलियन-बैरक अब भी उपस्थित था। उस मोटी दीवारवाली इमारत का एक कोना पूर्णतः उड़ गया था, जिसके कारण उसके सभी अच्छे मोर्चे मशीन-गन से गोलीबारी करनेवालों के सामने खुले पड़े थे। भीतर की बहुत-सी छतें धँस गयी थीं और बाकी कुछ लकड़ियों के सहारे अड़ी हुई थीं। कुछ स्थानों पर वे मोटी-मोटी दीवारें भी फटने लगी थीं और अन्दर कोठरियों में उपस्थित रक्षा-सैनिकों के पास केवल कुछ बन्दूकें और थोड़े कारतूस बच गये थे। उनके पास न तो कुछ भोजन था और न पीने के लिए पानी ही। फिर भी किलियन के वे अद्भुत जवान सामना करने के लिए डटे थे।

इसके विपरीत रूसियों के पास टैंक और गोले, राकेट और आग उगलनेवाले यंत्र, सेनाध्यक्ष और सैनिक तथा प्रतिरोधियों का धरती से नामो-निशान मिटा देने का दृढ़ संकल्प था। बख्तर-विध्वंसक गोलों और उच्च शक्ति-सम्पन्न विस्फोटक पदार्थों ने लगभग बैरक को विध्वस्त कर दिया था और लगातार बमबारी के बाद दूसरे दिन रात को ऐसा प्रतीत हुआ कि रूसी जीत गये; क्योंकि बैरक की जर्जर दीवारों से निकल कर अफसरों का एक गिरोह आत्म समर्पण के लिए बाहर आया। लेकिन ज्यों ही वे रूसियों के पास पहुँचे, बैरक के अन्दर के उनके अपने ही दृढ़निश्चयी आदमियों ने उन्हें गोली मार दी और इस प्रकार लड़ाई जारी रही।

किलियन की लड़ाई कोई वीरतापूर्ण ढंग से समाप्त नहीं हुई। वास्तव में किसी को इसके समाप्त होने का जल्दी पता भी नहीं चला; क्योंकि तीन दिनों तक, मानव-सहन-शक्ति के बाहर घोर कष्ट सह कर, संघर्ष करने के बाद वे अज्ञात सिपाही चुपचाप तितर-बितर हो गये। कुछ नालियों से होकर कोर्विन सिनेमा में चले गये और वहाँ की भीड़ में जा मिले। दूसरे लोग, रात होने पर, जहाँ सींग समाया, निकल भागे। चौथे दिन, रूसियों ने इस खाली इमारत पर कब्जा किया, जहाँ से स्वातंत्र्य-रक्त धारण करनेवाले लोग रहस्यमय ढंग से, पर भीरुतापूर्वक नहीं, लापता हो गये थे।

प्रतिरोध का अन्तिम महान् केन्द्र कई मामलों में, किलियन-बैरक की अपेक्षा, रूसियों को अधिक क्रुद्ध करनेवाला तथा अधिक उग्र रूप धारण करनेवाला

था। इसी लिए ७ नवम्बर को बहुत सवेरे युवा इम्रे जीजर, होंठों में सिगरेट लगाये और कंधे में अपना राइफल लटकाये उस मोर्चे की ओर रवाना हुआ।

नगर के दक्षिण में, तीव्रगामी ट्रेन से १५ मिनट की यात्रा जितनी दूरी पर, डेन्यूब नदी के बीच में, ३० मील लम्बा सीपेल द्वीप अवस्थित है। इस द्वीप के दक्षिणी छोर पर वे खेत थे, जहाँ की अत्यंत उपजाऊ भूमि बुडापेस्ट की उपज का अधिकांश भाग पैदा करती थी, परंतु उत्तरी क्षेत्र, बुडापेस्ट और मास्को की कम्यूनिस्ट सरकारों का 'विशेष क्षेत्र' था; क्योंकि यह 'लाल' अथवा कम्यूनिस्ट सीपेल था—बेढंगा औद्योगिक केन्द्र, जहाँ बुडापेस्ट के भारी उद्योग (कारखाने) स्थापित थे। यह कम्यूनिज्म का गढ़ था—यही वह केन्द्र था, जहाँ से कम्यूनिस्टों ने हंगेरी पर अपना आधिपत्य जमाया। कम्यूनिस्ट वक्ता 'लाल' सीपेल का उल्लेख करते समय रोने-से लगते थे और किसी कम्यूनिस्ट हंगेरियन वक्ता के लिए यह बोलना लगभग आवश्यक था—"सीपेल हंगेरी है और हंगेरी सीपेल!" कम्यूनिस्ट-दर्शन ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था कि भारी उद्योगों पर ही आन्दोलन निर्भर करता है और इस सिद्धान्त पर जितना अधिक ज़ोर हंगेरी में दिया जाता था, उतना कम्यूनिज्म के अनुयायी और किसी देश में नहीं। हंगेरी में सीपेल के शक्तिशाली मजदूर ही कम्यूनिस्ट-आंदोलन की एकमात्र रीढ़ थे। एक हंगेरियन कम्यूनिस्ट दार्शनिक ने कहा भी था—"सीपेल के कम्यूनिस्ट मजदूरों का कम्यूनिज्म के विरुद्ध हो जाना ईसाई पादरियों के पोप के विरुद्ध हो जाने के समान होगा।"

यदि सीपेल के बारे में यह कम्यूनिस्ट व्याख्या सही थी, तो क्यों इम्रे जीजर-जैसा एक जवान स्वातंत्र्य-सैनिक अपनी राइफल लटकाये क्रांति के उस अन्तिम दौर में भाग लेने जा रहा था? वह अन्तिम संघर्ष में भाग लेने जा रहा था; क्योंकि बुडापेस्ट के लोगों ने यह बात समझ ली थी कि 'लाल' सीपेल के बारे में कम्यूनिस्टों का प्रचार शत-प्रतिशत गलत था। वास्तव में, कम्यूनिस्ट नेताओं ने सीपेल के बारे में जितना अधिक गलत अनुमान लगाया था, उतना और किसी के बारे में नहीं।

सीपेल के आदमियों ने—भारी उद्योगों के मजदूरों ने—न केवल कम्यूनिज्म का पक्ष लेकर लड़ने से अस्वीकार कर दिया, बल्कि उनमें से लगभग सभी ने उसके विरुद्ध संघर्ष किया। और अब, जब कि विजय की तनिक भी आशा नहीं रह गयी थी—जबकि स्वातंत्र्य-पक्ष की ओर से किसी कारखाने की रक्षा करनेवाले व्यक्ति की मौत निश्चित थी—तब सीपेल के आदमियों ने

अपना सबसे अधिक शानदार काम कर दिखाया।

सातवें अध्याय में मैं इस बात पर प्रकाश डालूँगा कि सीपेल के आदमियों ने वैसा आचरण क्यों किया? अभी तो मैं इतना ही कहूँगा कि इन उद्विग्न बहादुर जवानों ने कम्यूनिज्म को, शारीरिक और नैतिक, दोनों दृष्टियों से बड़े ज़ोर का आघात पहुँचाया।

इस क्रान्ति का प्रस्ताव हुआ था, पेटोफी-क्लब के लेखकों और दार्शनिकों की ओर से। इसका सूत्रपात किया छात्रों ने; इसे जीवित रखा उन कृतसंकल्प लड़कों और लड़कियों ने, जिन्होंने खाली हाथ टैंकों का मुकाबला किया; लेकिन इसे प्रभावशाली बनाया सीपेल के आदमियों ने। जब सभी वर्ग आत्म-समर्पण कर चुके थे, तब इन्हीं सीधे-सादे मजदूरों ने—कम्यूनिज्म के बहु-प्रचारित प्रियपात्रों ने—अपने द्वीप में लौट कर ऐसी ललकार दी कि रूस और सम्पूर्ण संसार अचम्भित रह गया।

जब युवा इम्रे जीजर अपनी मामूली राइफल के साथ सीपेल पहुँचा, उस समय स्वतंत्रता के लिए होनेवाले संघर्ष की गड़गड़ाहट बहरे-से-बहरे कान को भी सुनाई पड़ रही थी। उन विशाल कारखानों में, जो कभी जोसेफ स्टालिन के अभिमान थे, घेरेबन्दी करके मजदूर जमा थे। उनके पास बहुत थोड़े शस्त्रास्त्र थे—एक विमान-विध्वंसक 'गन', और कुछ तोपें, किन्तु द्वीप में तेल पेरने का कारखाना होने के कारण उनके पास गैसोलिन बहुत अधिक थी। सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि उनके पास न कोई उत्साही नेता था और न महत्त्वपूर्ण युक्तियाँ। वास्तव में, उनके पास एक ही ठोस अस्त्र था—रूसियों और उनके एजेण्ट ए. वी. ओ. के प्रति निश्चित घृणा-भाव।

शायद ही सीपेल का कोई ऐसा व्यक्ति रहा होगा, जिसका ए. वी. ओ. से किसी तरह का पाला न पड़ा हो। सभी जगह खुफिया तैनात थे और यदि उन्हें किसी की वफादारी तथा उत्साह में कमी के बारे में जरा-सा भी सन्देह हो जाता, तो उसे काफी कड़ी सजा दी जाती थी। लोगों को परेशान करना तो आम बात थी। खुफिया लोग किसी व्यक्ति-द्वारा किये जानेवाले जरा-जरा से विरोधी कामों की सूची रखते थे। सीपेल के आदमियों में यह विरोध-भावना बहुत घर कर गयी थी और उन्होंने शासन-व्यवस्था को छिन्न-विच्छिन्न कर डाला था। अब वे कम्यूनिस्ट-जगत् को वह सबक सिखाने को तैयार थे, जो इतिहास में एक उल्लेखनीय स्थान प्राप्त करता।

जिस क्षण गेलर्ट पहाड़ी की विशाल 'गनों' ने नगर पर बमबारी आरम्भ

की, उसी समय से उनका एक इष्ट लक्ष्य सीपेल भी था। इस द्वीप पर उन्होंने कई टन विस्फोटक पदार्थ फेंके और वहाँ के कारखानों पर रूसी जेट विमानों ने अपने अधिकांश राकेटों का प्रयोग किया। लेकिन ये अस्त्र कालेज-छात्रों को ठंढा करने में जितने सफल हुए, उतने सीपेल के आदमियों को पराजित करने में नहीं। इसलिए रूसी इस द्वीप में अपने टैंकों और सिपाहियों के साथ आने के लिए मजबूर हो गये।

अन्य प्रतिरोध-स्थलों की-सी दुःखद कहानी यहाँ भी दुहरायी गयी, लेकिन कुछ अनोखी विशेषताओं के साथ। चूँकि रूसियों को, अपने विरुद्ध जानेवाले सीपेल के मजदूरों से विशेष घृणा हो गयी थी, इसलिए हमला भीषण रूप में किया गया और चूँकि सीपेल के मजदूरों ने निश्चय कर रखा था कि आत्म-समर्पण कदापि नहीं करना है, इसलिए उनका प्रतिरोध भी काफी तगड़ा था। उदाहरणस्वरूप, जब मुख्य हमला हुआ, तब सीपेल के एक मजदूर ने एक शक्तिशाली नली तैयार की, जो टैंकों पर गैसोलिन छिड़कती थी और फिर उन पर गोले फेंक कर आग लगा दी जाती थी। एक दूसरे दक्षती मजदूर ने रूसियों से छीनी हुई एक विमान-विध्वंसक 'गन' को ठीक किया और गर्वपूर्वक उसका प्रयोग करके कम ऊँचाई पर उड़नेवाले एक जेट विमान को मार गिराया, जिसे सम्भवतः यह गलतफहमी हो गयी थी कि आकाश पर उसका एकमात्र अधिकार है।

इस घमासान युद्ध में युवा इस्रे जीजर को एक विलक्षण अनुभव हुआ। वह गैसोलिन-बम बनाने में व्यस्त था, जब उसकी नजर एक नवयुवक पर पड़ी, जो स्वयं भी उसी पीपे के पास बैठा हुआ था। जीजर कहता है—"हे भगवान्, उसका चेहरा अजीब लगता था। मैंने सोचा कि वह एक नये प्रकार का रूसी सैनिक था, जो हमारे दल में घुस आया था। लेकिन वह निकला कौन—जानते हैं? उत्तरी कोरिया का एक निवासी। कोरिया-युद्ध के बाद चीनी कम्यूनिस्टों ने कई दर्जन चुने हुए उत्तरी कोरियायी कम्यूनिस्टों को, जिन्होंने अमेरिका के विरुद्ध लड़ाई की थी, हमारे कारखानों में काम सीखने के लिए भेज दिया था। लेकिन वे सब-के-सब कम्यूनिज्म के विरुद्ध हो गये और हमारी ओर से लड़े।"

जीजर का नये लोगों से जो दूसरा साक्षात्कार हुआ, वह अधिक करुण था। उस स्थान पर, जहाँ सीपेल के आदमी अपने शस्त्रास्त्र आदि जमा करते थे, जीजर की भेंट दो लड़कों से हुई, जिसकी आयु प्रायः १८ वर्ष होगी और जो

बहुत कम हंगेरियन बोल सकते थे। जीजर बतलाता है—"वे बड़ी मुश्किल से अपना आशय प्रकट कर सकते थे। लेकिन वे मुझसे कुछ बोलना चाहते थे और कुछ देना भी चाहते थे। उनके पास अपने परिवारवालों को लिखे गये दो पत्र थे। वे चाहते थे कि यदि मैं बाहर निकल पाऊँ, तो उन्हें डाक में डाल दूँ। जानते हैं, वे पत्र किस भाषा में लिखे गये थे? ग्रीक में। उन्होंने बतलाया कि कारखानों में अनेक यूनानी बच्चे थे। ये वे बच्चे थे, जिन्हें यूनान में हुए गृह-युद्ध के समय कम्यूनिस्ट अपहरण करके ले आये थे। उन्हें 'अच्छा कम्यूनिस्ट' बनाया गया था और वे जो-कुछ चाहते थे, उन्हें दिया गया था—सीपेल की सर्वोत्तम नौकरियाँ उनके लिए उपलब्ध थीं। लेकिन जब मौका आया, तो वे भी रूसियों के विरुद्ध लड़े।"

सीपेल की लड़ाई अपने अन्तिम क्षणों में एक ओर अपार यांत्रिक शक्ति और दूसरी ओर मानव के केवल दृढ़ निश्चय की भयानक प्रतिद्वंद्विता में परिणत हो गयी। सीपेल के लोगों ने उनसे लड़ने के लिए अपने गैसोलिन-यंत्र का प्रयोग किया और आग की ऊँची-ऊँची उठनेवाली लहरों के रूप में विनाश का दृश्य उपस्थित हुआ। पर सब व्यर्थ गया। विशाल सोवियत 'गनों' ने दुर्बल और खाली कारखानों पर भेदनेवाले गोलों की बौछार शुरू कर दी। रेल की पटरी और सड़क पर चलनेवाली कारों को बहुत नीचे उड़नेवाले राकेट-विमानों ने नष्ट कर दिया। सर्वत्र रूसी गोलों के दुखदायी 'गड़ाम्'-'गड़ाम्' ध्वनि ने विनाश का दृश्य उपस्थित कर दिया। संघर्ष के आठवें दिन, ११ नवम्बर को, वह समय आया, जब सीपेल के लोगों का और अधिक प्रतिरोध कर सकना असम्भव हो गया।

तब अंत में थके हुए किलियन के रक्षकों की भाँति, सीपेल के लोग भी या तो चुपचाप खेतों से होकर निकल गये, या नदी को तैर कर पार हो गये अथवा चतुराईपूर्ण ढंग से भीड़ों में जाकर मिल गये। उन्होंने आत्म-समर्पण नहीं किया। वे क्रान्ति की सर्वाधिक वीरतापूर्ण कार्रवाई में भाग लेने के लिए जीवित रहे। वह एक ऐसी कार्रवाई थी, जो सदा विश्व को यह याद दिलाती रहेगी कि किस तरह सोवियत रूस ने भारी उद्योगों के मजदूरों पर से अपना नियंत्रण पूर्णतः खो दिया था। मैं उनकी इस कार्रवाई का विवरण सातवें अध्याय में प्रस्तुत करूँगा, लेकिन अभी तो वे पराजित हुए और जब वे वहाँ से हटे, तो युवा इम्रे जीजर भी उनके साथ चला गया।

बुडापेस्ट की लड़ाई अब समाप्त हो गयी थी, लेकिन आतंक फिर भी जारी

रहा। रूसी टैंक रिवाल्वरों के मुकाबले में तो श्रेष्ठ थे ही, लेकिन जहाँ प्रतिरोध करनेवालों के पास कोई अस्त्र न हो, वहाँ उनकी शक्ति का क्या पूछना! वे कोलाहल मचाते हुए नगर की परिक्रमा करके अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते थे और कभी-कभी गोलियाँ भी चलाते थे। जब कई दिनों तक बिना किसी रुकावट से उन्होंने विजय-यात्रा कर ली, तब वे शांत हो गये और उनका स्थान पैदल सैनिकों ने ले लिया।

उन सैनिकों के आगमन के बाद सम्पूर्ण यूरोप में दुःखपूर्ण कहानियाँ सुनाई पड़ने लगीं; क्योंकि बुडापेस्ट पर पहरा देनेवाले वे उजड्ड सैनिक मध्य-एशियायी जनतंत्रों के मंगोल थे। वे जानवरों का-सा व्यवहार करते थे और उनके द्वारा जितनी हत्याएँ हुईं, वे दिल को दहला देनेवाली थीं।

नगर को आतंकित करने के लिए वे क्यों लाये गये थे? इसलिए कि वारसा-संधि की शर्तों के अनुसार खास रूस से आनेवाले सैनिक हंगरी में इतनी लम्बी अवधि तक रह गये थे कि उनमें काफी इन्सानियत आ गयी थी और नागरिकों पर गोली चलाने के मामले में उन पर यह विश्वास नहीं किया जा सकता था कि वे बेझिझक गोली चला सकेंगे। पार्लियामेण्ट स्क्वायर में टैंक-कमाण्डर द्वारा हत्यारे ए. वी. ओ. वालों पर गोली चलाये जाने के अतिरिक्त और भी ऐसे कई उदाहरण सामने थे, जिनमें रूसी लोग अपनी इच्छा से हंगेरियन स्वातंत्र्य-सैनिकों के साथ मिल गये थे। नगर में पाँच दिनों तक जो शान्ति स्थापित थी, उसका एक कारण यह भी था कि धोखा देनेवाले रूसी सेनाध्यक्षों की जगह पर कट्टर मंगोलों को नियुक्त करने का उन्हें समय मिल जाये। अफवाहें तो ऐसी थीं कि उन सैनिकों में से अनेक को या तो मार दिया गया या साइबेरिया भेज दिया गया। किन्तु इन अफवाहों की पुष्टि पूर्ण रूप से नहीं हुई थी। कुछ भी हो, वे वहाँ से लापता अवश्य हो गये थे।

हंगेरियन जनता के विरुद्ध मंगोल सैनिकों के प्रयोग का एक और ऐसा पहलू है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। द्वितीय विश्व-युद्ध में इन्हीं जनतंत्रों के सैनिकों को पूर्वी मोर्चे पर जर्मनों के विरुद्ध भेजा गया था और ऐसे अनेक दृष्टान्त उस समय सामने आये थे, जब ये सैनिक यह घोषणा करते हुए कि वे रूसियों से घृणा करते हैं और उन पर गोली चलाने का अवसर चाहते हैं, झुंड-के-झुंड दुश्मनों से जा मिले थे। जब जर्मनों ने उन्हें बन्दी शिविरों में डाल दिया, तब उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की कि जर्मन वर्दी में रूसियों के विरुद्ध लड़ने के लिए उन्हें छोड़ दिया जाये, हालाँकि उन्हें अच्छी

तरह मालूम था कि वैसी दशा में यदि रूस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया, तो उसका साफ मतलब था—मौत! ऐसे सैनिकों की एक रेजिमेण्ट जर्मन कमान के अन्तर्गत तैयार की गयी, जिसने भयानक क्रोध के साथ रूसियों से युद्ध किया। इससे यह स्पष्ट है कि रूसियों ने तभी से यह निष्ठुर नीति अपनायी थी कि सैनिकों को अपने क्षेत्र में लड़ने के लिए नियुक्त नहीं करना चाहिये, बल्कि किसी भी स्थान में लड़ने के लिए साम्राज्य के दूसरे भाग के सैनिकों का प्रयोग करना चाहिये। उन्हें यह मालूम हो गया था कि किसी भी क्षेत्र के सैनिकों पर, उन्हीं के भाई-बंधुओं की हत्या करने के लिए, विश्वास नहीं किया जा सकता। अब शायद ही कभी ऐसा हो कि बल्गेरिया, रुमानिया और हंगरी के आस-पास वाले रूसी क्षेत्रों के सैनिकों का प्रयोग इन देशों में किया जाये। यदि आवश्यकता हुई, तो इन क्षेत्रों के सैनिकों का प्रयोग एशियायी जनता की हत्या के लिए किया जायेगा।

यद्यपि सम्पूर्ण हंगरियन सेना ने रूसियों के विरुद्ध लड़ाई की, तो भी रूसी बुडापेस्ट में अपना आतंक जमाने में सफल हुए। उन्हें इतनी सफलता कैसे मिली? हंगेरियन सेना ने अपनी बड़ी 'गनों' का प्रयोग क्यों नहीं किया?

पहली बात तो यह कि धोखेबाजी और अपमानपूर्ण ढंग से रूसियों ने अचानक जनरल मेलेतर को कैद कर लिया; अतः हंगरियन सेना से उसका नेता छिन गया। दूसरी बात, उन शांतिपूर्ण पाँच दिनों में सेना ने रूसियों के दूसरे आक्रमण का मुकाबला करने के लिए कोई सैनिक तैयारी नहीं की। तीसरी बात, ३ नवम्बर की रात को रूसियों ने इन सैनिकों के लिए यह जाली आदेश जारी किया कि वे पास के एक गाँव में जाँच के लिए जायें; फलतः सेना की कुछ सर्वोत्तम टुकड़ियाँ बुडापेस्ट के बाहर चली गयीं। चौथी बात, उस दिन सवेरे चार बजे अपनी बमबाजी आरम्भ करने के पहले रूसी सैनिक टुकड़ियों ने बहुत-से हंगेरियनों को सोते में ही गिरफ्तार कर लिया। लेकिन ये सब कारण इस प्रमुख कारण के आगे तुच्छ हैं कि हंगेरियन सैनिक अपने साथ बड़े शस्त्रास्त्र नहीं ला सके; क्योंकि रूसियों ने कभी उनको ऐसा अवसर ही नहीं दिया। हंगेरियन उपद्रवों के पहले भी कम्यूनिस्ट सेना को सदा इस बात की शंका रहती थी कि न-जाने किस दिन उनकी अनुगामी सेनाएँ क्या कर बैठें और इसीलिए हंगेरी और बल्गेरिया-जैसे देशों को बड़ी 'गनें', आधुनिक टैंक, काफी परिमाण में शस्त्रास्त्र और यातायात के यंत्रादि से वंचित रखा जाता था। हंगेरी में इस नीति से उन्हें अच्छा लाभ हुआ और अब ऐसा समझा

जा सकता है कि इस नीति का प्रयोग बड़ी कट्टरता से दूसरे अनुगामी देशों और मध्य-एशिया के छोटे जनतंत्रों में किया जायेगा। दूसरे शब्दों में, जिस दिन बुडापेस्ट में क्रान्ति शुरू हुई, तभी से रूस को एक भय-सा रहने लगा, जो कहा नहीं जा सकता कि कब तक बना रहेगा। यह भय इस बात का नहीं है कि दूसरे गणतांत्रिक राष्ट्र किसी दिन उसके साथ न-जाने क्या कर गुजरेंगे, बल्कि इसका है कि अवसर मिल जाने पर स्वयं उसके अपने अनुगामी राष्ट्र क्या-कुछ कर देंगे।

बुडापेस्ट में सैनिक विजय पाने के बाद भी रूसियों को प्रचार-सम्बन्धी विजय प्राप्त करना शेष था। इसलिए उन्होंने यह साबित करने के लिए एक विश्वव्यापी प्रचार आन्दोलन शुरू किया कि अमेरिका ने वह क्रान्ति करायी थी और उसमें केवल प्रतिक्रियावादियों, होर्थी के जमाने के फासिस्टों, जर्मनी से चोरी-चोरी लाये गये सशस्त्र शरणार्थियों, पादरी माइंडजेन्टी और मजदूर वर्ग के शत्रुओं ने ही भाग लिया है। रूस अब भी यह दावा कर रहा है कि सच्चे कम्यूनिस्ट, ईमानदार मजदूर और बुद्धिमान छात्र उनके प्रति वफादार रहे। इन मिथ्या प्रचारों को अनन्त बार दुहराया जायेगा और विश्व के कुछ भागों में सम्भवतः इन पर विश्वास भी कर लिया जायेगा।

क्रान्ति जब अपनी तेजी पर थी, तभी स्वातंत्र्य-सैनिकों को पता था कि इस तरह के आरोप लगाये जायेंगे और इसीलिए उन्होंने क्रान्ति में किसी तरह का समझौता करने की यथाशक्ति कोशिश नहीं की। ऐसे कई दृष्टान्त मुझे मालूम हैं, जब स्वातंत्र्य-सैनिकों ने राजनीतिक बन्दियों या अच्छे परिवारों के लड़कों से कहा—"आपकी सहायता के लिए हम आभारी हैं, किन्तु अच्छा यही होगा कि आप अलग रहें। हम चाहते हैं कि यह आन्दोलन पूर्णतः स्पष्ट रहे —केवल कम्यूनिस्टों और मजदूरों को ही लड़ने दीजिये। वैसी स्थिति में रूसी हम पर फासिस्ट होने का आरोप नहीं लगा सकेंगे।"

एक पोस्टर से, जो बुडापेस्ट में काफी संख्या में लगाया गया था, सोवियत-मिथ्या-भाषण का साफ पता चलता है। उसमें लिखा था—"९० लाख फासिस्ट प्रतिक्रियावादी, सभी पुराने कारखानों के स्वामी, बैंकर और पादरी देश में छिपे हैं। उनके छिपने का मुख्य स्थान सीपेल का वह क्षेत्र है, जहाँ सम्पन्न तथा ठाट-बाटवाले व्यक्तियों का निवास है। सौभाग्य से ऐसे छः सच्चे हंगेरियन कम्यूनिस्ट शेष रह गये थे, जिन्होंने देश की रक्षा के लिए सरकार का निर्माण किया।" एक बार सड़कों पर नये कम्यूनिस्ट समाचारपत्र 'नेप जबाद-साग' (लोक-स्वतंत्रता)—जो पुराने 'जबाद नेप' (स्वतंत्र जनता) का

नया कम्यूनिस्ट नामकरण था—को बेचनेवाले लड़के यह चिल्ला कर बेच रहे थे—"आज के एकदम ताजे और सफेद झूठ से भरे समाचार सिर्फ आधे फारिन्ट में।"

क्रान्ति के सच्चे समाचारों को कुछ साहसी लोग प्रचारित करते थे। वे हाथ से चलनेवाले एक छोटे-से प्रेस पर अपना 'ट्रुथ' (सच्चाई) नामका समाचारपत्र छापते थे, जिसमें अमेरिकी और ब्रिटिश रेडियो के समाचारों का सार प्रकाशित किया जाता था। 'ट्रुथ' में प्रकाशित प्रत्येक लेख और कविता के साथ उसके लेखक का भी नाम रहता था। संघर्ष के समय प्रतिदिन इस समाचारपत्र की बहुमूल्य प्रतियाँ कुछ साइकिलवाले और कुछ पैदल चलनेवाले साहसी लड़के एक चौकी से दूसरी चौकी और अन्य क्षेत्रों में पहुँचाया करते। एक स्वातंत्र्य सैनिक ने बतलाया—"हालाँकि समाचारपत्र लानेवाले कई लड़के बीच में मार डाले गये, फिर भी एक दिन भी ऐसा नहीं आया, जब हमें उक्त समाचारपत्र न मिला हो। आश्चर्य की बात यह है कि हम उनकी मृत्यु से शोकग्रस्त नहीं होते थे, क्योंकि वे भी उसी उद्देश्य के लिए—सचाई जानने के अधिकार के लिए—लड़ते हुए मारे गये थे, जिसके लिए हम सब लड़ रहे थे।"

यह कोई विचित्र बात नहीं थी कि क्रान्ति के समय स्वातंत्र्य सैनिकों को सब समाचार मिल जाते थे, क्योंकि एक दिन तो सम्पूर्ण विश्व को लड़ाई के गुप्त समाचार मालूम हो गये। रैकोजी स्ट्रीट और जोसेफ मुख्य मार्ग के कोने पर स्थित 'जबाद नेप' की इमारत में एम. टी. आई. (हंगेरियन संवाद समिति) का एक संवाददाता अपने 'टेलिटाइप' मशीन पर उस समय बैठा था, जब रूसियों ने रविवार को उस क्षेत्र पर आक्रमण किया। कुछ ऐसा संयोग बैठा, जैसा कि कभी नहीं हुआ था, वहाँ से १७८ मील पश्चिम में स्थित वियेना के एसोसियेटेड प्रेस के कार्यालय का लाइन मिल गया। वह साहसी नवजवान नगर की मरणासन्न स्थिति पर कई घंटों तक अपनी रिपोर्ट टाइप करता रहा। फलतः वह रिपोर्ट सारे संसार के समाचारपत्रों में प्रकाशित हुई और सम्भवतः ऐसे कुछ ही लोग रहे होंगे, जिन्हें रिपोर्ट की ये बातें ज्ञात न हुई हों :—

"अभी पूर्ण शान्ति छायी हुई है। सम्भव है, यह शान्ति तूफान के आने से पहले की शान्ति हो।

"हमारे पास प्रायः शस्त्रास्त्र नहीं हैं—केवल छोटी मशीन-गनें, रूस की

बनी लम्बी राइफलें और कुछ छोटी बन्दूकें हैं। हमारे पास कोई भारी 'गन' नहीं है।

"लोग टैंकों पर धावा बोल रहे हैं, हथगोले फेंक रहे हैं और चालकों की खिड़कियाँ बन्द कर रहे हैं। हंगेरियन लोग मौत से भयभीत नहीं हैं। दुःख की बात केवल इतनी ही है कि हम अधिक समय तक सामना नहीं कर सकेंगे।

"अभी एक आदमी सड़क पर से यहाँ आया। वह कहता है कि सड़कों के खाली होने का मतलब यह नहीं है कि लोग पीछे हट गये हैं। वे लोग फाटकों में छिपे खड़े हैं और उचित मौके की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

"एक हंगेरियन सैनिक को उसकी माँ ने विदा देते हुए कहा—'यदि तुम नायक नहीं बन सको, तो न सही; लेकिन कायरता न दिखाना।'

"टैंक और भारी गन निकट आ रहे हैं। अभी-अभी हमें टेलिफोन से सूचना मिली है कि हमारे पक्ष को सैनिक-सहायता और शस्त्रास्त्र प्राप्त हो रहे हैं। लेकिन अब भी उसका परिमाण बहुत कम है—हमें और चाहिये। ऐसा नहीं होने दिया जा सकता कि लोग खाली हाथ टैंकों पर आक्रमण करें। संयुक्त राष्ट्र संघ क्या कर रहा है? हमें थोड़ा प्रोत्साहन दीजिये।

"हम अपने रक्त की अन्तिम बूँद तक संघर्ष करते रहेंगे।"—उसने 'टेलिटाइप' मशीन पर टाइप किया—"हमें शस्त्रास्त्र देने के लिए सरकार ने पर्याप्त प्रबन्ध नहीं किया है। नीचे ऐसे अनेक लोग खड़े हैं, जिनके पास एक ही हथगोला है।

"मैं पास के कमरे की खिड़की पर जा रहा हूँ, गोली चलाने के लिए। लेकिन यदि कुछ नयी बात होगी, या टेलिफोन पर आप मुझे बुलायेंगे तो मैं लौट कर सूचित करूँगा।"

जब वियेना के एसोसियेटेड प्रेस ने वाशिंगटन से प्राप्त इस खबर की सूचना दी कि पादरी माइंडजेंटी ने बुडापेस्ट-स्थित अमेरिकी दूतावास में शरण ली है, तो 'जबाद नेप'-स्थित सम्वाददाता ने पूछा—"क्या उन्हें इतना ही मालूम हुआ है?

"अभी-अभी एक रूसी विमान ने गोले गिराये। कहाँ-कहाँ गिराये, यह मालूम नहीं—हमने केवल आवाज सुनी।

"घेरेबदी की जा रही है। पार्लियामेण्ट और उसके आसपास के क्षेत्र टैंकों से भरे हैं। यह मालूम नहीं कि क्यों, पर निश्चय ही यह कोई अच्छा लक्षण नहीं है। ऊपर विमान उड़ रहे हैं, लेकिन उन्हें गिना नहीं जा सकता—उनकी

संख्या बहुत बड़ी है। टैंकों की लम्बी कतारें आ रही हैं।

"हमारी इमारत पर गोलाबारी शुरू हो गयी है, लेकिन अभी तक कोई मृत्यु नहीं हुई है। टैंक इतनी अधिक आवाज कर रहे हैं कि हम एक-दूसरे की आवाज भी नहीं सुन सकते।

"अभी अभी यह अफवाह फैली है कि एक-या-दो घंटों में यहाँ अमेरिकी सैनिक पहुँच जायेंगे।

"अभी पास में ही कोई गोला फटा। अभी, १० बजकर २० मिनट पर, हमारे निकट ही, नगर के मध्य-भाग में स्थित, नेशनल थियेटर की ओर बड़ी जोरदार गोलाबारी हो रही है।

"हंगेरी की ओर से शेष संसार यदि कोई कार्रवाई करने जा रहा हो, तो उसका समाचार भेजें। चिन्ता की कोई बात नहीं। आप जो समाचार भेजते हैं, उन्हें पढ़ने के बाद शीघ्र ही हम जला देते हैं।

"हमारी इमारत में १५ वर्ष के बच्चों से लेकर ४० वर्ष के प्रौढ़ तक एकत्र हैं। हमलोगों के बारे में चिन्ता न करें। हालाँकि हमारा राष्ट्र बहुत छोटा है, फिर भी हम सशक्त हैं। जब लड़ाई समाप्त हो जायेगी, तब हम अपने दुःखी और सताये हुए देश का पुनर्निर्माण करेंगे।"

उस प्रातःकाल १० बजकर ३० मिनट पर अन्तिम सम्वाद आया और उसके बाद 'जवाद नेप' वाली इमारत के उस सम्वाददाता से कोई सम्वाद नहीं मिला। उस अन्तिम सम्वाद में ठीक ही कहा गया था—"अभी किलियन बैरक में घमासान लड़ाई चल रही है—बड़े जोरों की गोलाबारी हो रही है।"

लेकिन लापता होने से पूर्व इस नवजवान ने 'टेलिटाइप' मशीन पर अपने एक सम्बन्धी को, जो भाग कर इंग्लैण्ड चला गया था, एक व्यक्तिगत संदेश भेजा था—"मेरा स्नेह-चुम्बन। हमलोग अच्छी तरह हैं और अभी ४ नवम्बर को, सवेरे ९ बजकर २० मिनट पर, संघर्ष कर रहे हैं।" उसी दिन, बाद में, 'जवाद नेप' वाली इमारत पर रूसी 'गनों' ने अत्यन्त निकट आकर गोली-वर्षा शुरू कर दी।

जब बुडापेस्ट की लूट समाप्त हो गयी, तब कुछ स्वातंत्र्य सैनिकों ने, वहाँ जो-कुछ हुआ था, उसकी रिपोर्ट तैयार करने की चेष्टा की। यह स्वाभाविक था कि उनके आँकड़े अनुमान पर ही निर्भर होते और मैं इस बात को जोर देकर नहीं कह सकता कि वे सही थे, पर ऐसा प्रतीत होता है कि वे सचाई के बहुत

निकट थे। १ लाख ४० हजार सशस्त्र रूसी नगर में आये थे। उनके साथ कम-से-कम चार हजार टैंक और सशस्त्र गाड़ियाँ आयी थीं—साथ ही आधुनिक युद्ध-कौशल में काम आनेवाली अन्य चीजें भी एक बड़े परिमाण में भेजी गयी थीं। उन्होंने ८ हजार मकानों को नष्ट किया और नगर की ६० प्रतिशत खिड़कियों पर गोलीबारी की। उन्होंने लगभग तीस हजार हंगेरियनों को हताहत किया—इनके अतिरिक्त दस हजार हंगेरियन ध्वस्त मकानों के नीचे दब कर मर गये। लेकिन बहुत-से हंगेरियनों का कहना है कि कुल मिला कर ८० हजार आदमी हताहत हुए। उधर रूसियों को ८ हजार आदमियों और ३२० टैंकों से अधिक का नुकसान नहीं उठाना पड़ा। इस अन्तिम आँकड़े में ५० प्रतिशत इधर-उधर संशोधन करके कहा जा सकता है कि हंगेरियन स्वातंत्र्य-सैनिकों ने, नाम-मात्र के शस्त्रास्त्रों की मदद से, कम-से-कम १६० और अधिक-से-अधिक ४८० टैंको को नष्ट किया। मुझे जो रिपोर्टें पढ़ने को मिली हैं और जो चित्र मैंने एकत्र किये हैं, उनके आधार पर मेरा अनुमान है कि वास्तविकता लगभग अन्तिम संख्या के ही समीप होगी। इस प्रकार एक नगर को विनष्ट किया गया!

और, इस विध्वंस-कार्य को रूस ने अपनी शांति और मैत्री की नीति के रूप में चित्रित किया—"हम रूसियों ने इस मामले में जो हस्तक्षेप किया, वह शत्रु के रूप में नहीं, बल्कि हंगेरियन जनता के सच्चे मित्र की हैसियत से। हमारा उद्देश्य केवल यही था कि फासिस्ट और अपराधी तत्त्वों के विद्रोह को कुचल डालने में हम हंगरी-निवासियों की सहायता करें।"

जब संघर्ष जोरों पर था और छात्र, लेखक, मजदूर तथा युवतियाँ अपने प्राणों की आहुतियाँ दे रही थीं, तब बुडापेस्ट-स्थित कुछ रूसी पिट्ठू हंगेरी की घटनाओं के बारे में निम्नलिखित सफाई निर्लज्जतापूर्वक प्रस्तुत कर रहे थे—"खतरनाक फासिस्ट जानवर पूँजीवादियों को सत्ता में लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। हमें पूरा विश्वास है कि शांति-रक्षा के लिए हंगेरियन जनता फासिस्ट गिरोहों को कुचल डालने में अपनी पूरी शक्ति लगा देगी। सोवियत रूस के नेतृत्व में समाजवादी देशों की एकता सारे संसार में सर्वाधिक महत्त्व रखती है। यदि हंगेरी रूसी सहायता लेकर शांति-स्थापना में समर्थ हो जायेगा, तो वह फिर रचनात्मक समाजवादी कार्य कर सकेगा। क्रांतिकारियों पर जिस तेजी से विजय मिल रही है, उससे यह साबित होता है कि ये प्रतिक्रांतिवादी शक्तियाँ देश के केवल थोड़े-से कुविचारी लोगों तक ही सीमित थीं। इससे यह भी

साबित होता है कि उन्हें सर्वसाधारण का समर्थन प्राप्त नहीं है।"

दूसरी ओर, हंगेरी की जनता के लिए एक अधिक सच्ची और सम्मानपूर्ण प्रार्थना की जा रही थी। एक अज्ञात स्वतंत्र रेडियो-स्टेशन से एक अज्ञात स्वातंत्र्य-सैनिक ने विश्व की विवेकशील जनता से अपील की—"दुनिया के सुसभ्य लोगो! एक हजार वर्ष प्राचीन हंगेरी की मीनार से दीपक की अंतिम ज्योति भी बुझनेवाली है। सोवियत-सेना हमारे संतप्त हृदयों को कुचल डालने का प्रयास कर रही है। उनके टैंक और 'गनें' हंगेरी की भूमि पर गरज रही हैं। हमारी स्त्रियाँ, माताएँ और कन्याएँ खतरे में पड़ी हैं। सन् १९४५ में सेना के आगमन के समय की खौफ़नाक स्मृतियाँ अब भी उनके हृदयों में शेष हैं। हमारे प्राणों की रक्षा कीजिये!

"दुनिया के लोगो! हमारी पुकार सुनिये। हमारी सहायता कीजिये—परामर्श और शब्दों से नहीं, बल्कि कार्रवाई से—सैनिकों और शस्त्रों से। कृपा करके यह न भूलें कि बोल्शेविज्म का यह पाशविक हमला रुकेगा नहीं। हो सकता है कि कल आप भी इसके शिकार हों। हमें बचाइये!

"यूरोप के लोगो! एक बार हमने एशियायी बर्बरों के आक्रमण के समय आपकी सहायता की थी। अब आप हंगेरी में बजनेवाली खतरे की इन घंटियों पर ध्यान दीजिये!

"दुनिया के सुसभ्य लोगो! स्वतंत्रता और संगठन के नाम पर हम आपसे सहायता की याचना कर रहे हैं। हमारा जहाज डूब रहा है। प्रकाश बुझ रहा है। क्षण-प्रतिक्षण छाया काली होती जा रही है। हमारी पुकार पर ध्यान दीजिये। प्रस्थान कीजिये। हमारी ओर भाईचारे का हाथ बढ़ाइये!

"दुनिया के लोगो! हमें बचाइये!

"हमारी मदद कीजिये, मदद कीजिये, मदद कीजिये! ईश्वर हमारा और आपका साथ दे!"

इसके बाद केवल शांति थी।

९. ए. वी. ओ. का आदमी

उन शान्तिपूर्ण पाँच दिनों में स्वातंत्र्य-सैनिक कुछ ऐसी घटनाओं में फँसे, जिन्होंने क्रान्ति को बड़ी क्षति पहुँचायी। उन घटनाओं की उपेक्षा करना या उनका विवरण प्रस्तुत करना दोनों बहुत कठिन है। क्रान्ति के लिए यह दुर्भाग्य-जनक ही था कि उनमें से कुछ घटनाओं के घटने के समय फोटोग्राफर मौजूद थे और उन्होंने उनके जो फोटो लिये, वे सारे संसार में प्रचारित किये गये।

ये फोटोग्राफ ज्यों ही रूसियों की दृष्टि में आये, उन्होंने इनको यह साबित करने का एक साधन बना लिया कि हंगेरी का स्वातंत्र्य-संघर्ष वास्तव में और कुछ नहीं, बल्कि ईमानदार मजदूरों के मस्तक पर पूँजीवाद का कँटीला ताज रखने के लिए एक प्रतिक्रियावादी प्रयास था। नागरिकों को जिन्दा दफनाने के लिए मकानों पर अत्यन्त निकट से सोवियत टैंकों द्वारा की जानेवाली गोलाबारी के रुकने के कुछ पहले से ही सोवियत-प्रचारक ऐसी पुस्तिकाएँ तैयार कर रहे थे, जिनमें इन भयानक फोटोग्राफों का समावेश किया गया था। वे इन पुस्तिकाओं को यूरोप तथा विश्व के शेष भागों में पहुँचा रहे थे।

लेकिन रूसी लोग इन फोटोग्राफों के साथ उन बातों का विवरण प्रचारित नहीं कर रहे थे, जिनके कारण वे घटनाएँ घटी थीं। यहाँ एक कट्टर ए. वी. ओ. के आदमी का इतिहास प्रस्तुत करके मैं उसी पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालना चाहता हूँ। यह शब्दचित्र, जो उस ए. वी. ओ. के आदमी के चरित्र और व्यवहार के सम्बन्ध में कई सूत्रों से प्राप्त तथ्यों का संकलन है, देखने में सुखकर तो नहीं है, परन्तु जिन घटनाओं पर यह आधारित है, वे पूर्णतः सत्य हैं।

टिबर डोनाथ एक ग्रामीण लड़का था। रूसी सीमा के पास के एक छोटे-से गाँव में सन् १९२५ में उसका जन्म हुआ था। वह देखने में सुन्दर न था—उसके बाल भद्दे थे, आँखें छोटीं और कमजोर थीं तथा ठोढ़ी बहुत उठी हुई थी। उसके माता-पिता तब बड़े दुःखी हुए, जब स्कूल में भी उसने अच्छी प्रगति नहीं दिखायी, हालाँकि घर में पढ़ते-लिखते समय वह तीव्र बुद्धि का

मालूम होता था। जब वह खेल-कूद में दिलचस्पी दिखाने लगा, तब पादरी ने डोनाथ दम्पति को सान्त्वना दी कि उनका बेटा 'आदमी' बनेगा।

लेकिन ऐसा कभी हुआ नहीं—कुछ तो इसलिए कि वह कमजोर और मूर्ख था और कुछ इसलिए कि दूसरे बच्चे उसे पसन्द नहीं करते थे। इन निराशाओं को तो उसने किसी तरह बर्दाश्त कर लिया, पर आगे चल कर उसे एक अत्यन्त कठोर और निठुर तथ्य का अनुभव हुआ। वह यह था कि लड़कियाँ भी उसे पसन्द नहीं करती थीं। पादरी ने फिर सान्त्वना दी—"जब वह कुछ और बड़ा हो जायेगा और उसका रंग साफ हो जायेगा, तब सब ठीक हो जायेगा।"

लेकिन टिवर डोनाथ के साथ 'सब ठीक होने' की बात कभी चरितार्थ नहीं हुई। सन् १९४३ में, जब उसके सभी मित्रों को नौकरी मिल गयी, तब उसे बहुत कम वजन का होने के कारण छाँट दिया गया। यह कारण तो ऊपरी था, जिसे डाक्टर ने बतलाया, पर असली कारणों में से एक यह सन्देह था कि उसके दिमाग के सभी पुर्जे ठीक नहीं थे। इसका प्रमाण सन् १९४४ में तब सामने आया, जब जर्मन-आधिपत्य के समय वह एक जर्मन लेफ्टिनेण्ट का पक्का मित्र बन गया। कुछ ही समय बाद वह जर्मन रूसी मोर्चे पर मार डाला गया।

शांति स्थापित होने पर डोनाथ को, जो तब २० वर्ष का हो गया था, अनेक कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ा। न उसे कहीं काम मिलता था और न कोई लड़की मिलती थी। घर पर उद्देश्यहीन बैठ कर माँ का उपदेश सुनने में भी उसे कोई अर्थ या कुशल नहीं दिखाई पड़ती थी। एक बार उसने कहा—"जानती हो, मैं क्या करने जा रहा हूँ? मैं रूस जा रहा हूँ!" लेकिन उसकी बात की उसकी माँ ने हँसी उड़ायी और तब उसने जर्मनी जाकर अपने मृत लेफ्टिनेण्ट मित्र के परिवार के साथ रहने का विचार किया।

अन्त में उसे एक काम मिला, जो कुछ महत्त्वपूर्ण तो न था और न उससे उसे उतनी रकम ही मिलती थी, जितनी वह चाहता था; फिर भी एक ठोस काम था। उसे पाकर उसे पहली बार कुछ आत्मतुष्टि मिली। उसने यह सब कम्यूनिस्ट पार्टी में शामिल होकर प्राप्त किया था।

पहले-पहल जो काम उसे दिये गये, वे इतने महत्त्वपूर्ण नहीं थे; क्योंकि पार्टी के उच्चाधिकारी उसे किसी महत्त्व का आदमी नहीं समझते थे। फिर भी, उन्होंने उसे अपने छोटे-से गाँव के निवासियों की निगरानी के

काम में शामिल होने की आज्ञा दे दी। यह काम पाकर टिबर डोनाथ को बड़ी प्रसन्नता हुई। अब वह उन लड़कों से डट कर बात कर सकता था, जिन्होंने उसे गाली दी थी और उन लड़कियों के साथ घूम सकता था, जिन्होंने उसकी उपेक्षा की थी। उसे पता चला कि अपने इस पद के बल पर वह अपनी छोटी-मोटी दुश्मनी का बदला छोटे-मोटे कई ढंगों से निकाल सकता है। उदाहरणस्वरूप, उसने कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता को खबर कर दी कि उसका बचपन का एक साथी शायद फासिस्ट है और चार महीने बाद जब उसने उस लड़के को फिर देखा, तो उसे इस बात का सन्तोष हुआ कि उसका वह पुराना शत्रु अब बहुत विनम्र हो गया था।

इसी तरह के कई मामलों की सूचना उसने पार्टी की पुलिस को दी, जिनमें से कुछ सही भी निकल गयी थीं। टिबर डोनाथ अब २४ वर्ष की आयु में पहले की अपेक्षा अधिक माँसल तो हुआ था, पर उसका रंग अब भी भद्दा ही था। एक दिन बुडापेस्ट से एक नया आदमी उसके पास आया और बोला—"उनका कहना है कि स्पेशल पुलिस के लिए तुम अच्छे आदमी हो।"

डोनाथ ने उत्तर दिया—"मैंने तो इसकी कभी कल्पना भी नहीं की थी।"

"तुम्हें वर्दी मिलेगी—साथ ही, महत्त्वपूर्ण ड्यूटी भी!"—उस आदमी ने समझाया, लेकिन टिबर ने देखा कि वह स्वयं सादी पोशाक में था।

"क्या मैं किसी दूसरी जगह भी काम करने के लिए भेजा जाऊँगा?"—डोनाथ ने पूछा।

"सम्भव है!"—नवागंतुक ने जवाब दिया। और, इसके बाद छः महीनों तक डोनाथ को स्पेशल पुलिस-ड्यूटी के बारे में और कुछ सुनने को न मिला। लेकिन अकस्मात, सन् १९४९ के अन्तिम समय में, उसे आदेश मिला कि वह मध्य-हंगरी के एक बैरक में शिक्षा पाने के लिए उपस्थित हो। यहाँ उसकी मुलाकात कुछ सुन्दर, मजबूत और योग्य नवजवानों से हुई, जिनमें से अधिकांश, उसी की तरह, ग्रामीण क्षेत्रों के थे। हाँ, उनके अफसर, अवश्य ही, बुडापेस्ट के थे।

बैरक में उसे जो शिक्षा मिलती थी, वह सरल और स्पष्ट थी। शिक्षक ने बतलाया—"किसी उपद्रव को शान्त करने का उपाय है, गनों का प्रयोग।" उसने उन्हें गोली चलाना, सैनिक गाड़ियाँ चलाना, बख्तरबन्द गाड़ियों की मरम्मत करना और यदि कोई आक्रमणकारी अन्धेरे में अचानक हमला कर दे, तो उससे कैसे निबटना, आदि-आदि बातों की शिक्षा दी। उसने उन्हें यह

चेतावनी भी दी—"हर जगह शत्रु हैं—इसका ध्यान रखना!"

तीन सप्ताह पूरे होने पर वही अपरिचित व्यक्ति, जो डोनाथ के गाँव गया था, शिविर में उपस्थित हुआ। उस दिन उसने पालिश किये हुए जूते, चमकदार पतलून और कलफदार खाकी वर्दी, जिस पर नीले तमगे लटक रहे थे, धारण कर रखी थी। डोनाथ की उम्र के कई आदमी, जिन्होंने वर्दी पहन रखी थी, पर जिनके तमगों की संख्या कम थी, उसके साथ थे। नवागंतुक ने शिक्षा पानेवाले लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा—"जवानो, तुम्हीं लोगों को लेकर हंगेरी अपना विशालतम प्रतिरक्षा-संगठन तैयार करने जा रहा है। तुम्हें राष्ट्रीय योद्धा बनना है—दिन-रात तुम्हें मुस्तैद रहना है। हो सकता है कि तुम्हें विभिन्न लड़ाइयों में भी भाग लेना पड़े। तुम्हारा पहला काम यह है कि अपनी सीमाओं को किले की भाँति सुदृढ़ बना दो।"

उसके बाद डोनाथ की शिक्षा बड़ी तेजी से होने लगी और शीघ्र ही उसे 'सीमा-रक्षक' की वर्दी मिली, जिसमें चमकदार पैंट, चमकीले जूते और धातु-निर्मित हरे तमगे शामिल थे। "हम शत्रुओं का अपनी सीमा में प्रवेश अत्यन्त दुष्कर कर देंगे।"—उन उत्साही नवजवानों ने प्रतिज्ञा की।

लेकिन जब टिब्र और उसके साथी सीमाओं पर भेजे गये, तब उन्होंने कुछ विस्मय के साथ देखा कि उन्हें अपने देश में प्रवेश करने की कोशिश करने-वाले लोगों की चिन्ता नहीं करनी थी। उनका काम केवल उन हंगरियनों पर नजर रखना था, जो उस देश की सीमा पार करके भागने के प्रयत्न में थे। उदाहरणस्वरूप, डोनाथ को युगोस्लाविया की सीमा पर भेजा गया था, जहाँ आशा यही की जा सकती थी कि टिटो के देश के डाकू, खूनी, आदि भाग कर हंगेरी में प्रवेश करने की कोशिश करेंगे, पर इसके विपरीत उसने पाया कि सैकड़ों हंगरियन युगोस्लाविया की ओर भाग रहे थे।

"हम शीघ्र ही इनका भागना रोक देंगे।"—डोनाथ के कमाण्डर ने दृढ़तापूर्वक कहा।

पहली रात टिब्र और उसके साथियों ने सीमा क्षेत्र पर दिखाई पड़ने-वाले किसी भी व्यक्ति पर, बिना कुछ समझे-बूझे, गोलियाँ चलायीं और जब इस बात का प्रचार गाँवों में हो गया, तब शरणार्थियों की बाढ़ कम हो गयी। इसके बाद घेरे तैयार किये गये और सीमा-क्षेत्र को ३० गज की चौड़ाई में खोद कर मिट्टी भुरभुरी बना दी गयी, ताकि पैरों के निशान उस पर उग आयें। जिन स्थानों से भागने की सम्भावना अधिक थी, वहाँ कँटीले तार लगा

दिये गये। लेकिन कमाण्डर को इतने से सन्तोष न हुआ और उसने डोनाथ को एक खास काम सौंपा, जिसे पूरा करने में उसे तीन महीने लग गये।

सम्पूर्ण खोदे हुए क्षेत्र में टिबर ने सावधानीपूर्वक ऐसी सुरंगें बनायीं, जो भाग कर जानेवाले किसी असावधान व्यक्ति का पैर लगने से ही विस्फोट कर जातीं। कहीं-कहीं तो उसने आठ-आठ, दस-दस सुरंगों का तार मिला दिया था, जिससे यदि किसी व्यक्ति का पैर किसी एक सुरंग से भी छू जाये, तो सब-की-सब फट पड़ें और भागनेवाले दूसरे लोग भी उसकी चपेट में आ जायें।

महत्त्वपूर्ण स्थानों पर पहरे के लिए तीस-तीस फुट ऊँची लकड़ी की मीनारें बनवायीं गयीं, जहाँ बड़ी मशीनगनों और शक्तिशाली प्रकाश-यंत्रों की अच्छी व्यवस्था थी। ये प्रकाश-यंत्र हर रात को सीमा-क्षेत्र पर अपना प्रकाश फैलाते थे, ताकि भागनेवालों पर अच्छी तरह नजर रखी जा सके।

इतनी सतर्कता के बावजूद, कुछ हंगेरियन सीमा को पार कर निकल भागते थे। इस बात से स्पेशल पुलिस के बुडापेस्ट-स्थित अधिकारियों का क्रोध जाग उठा। एक उच्च अधिकारी ने सीमा-क्षेत्र का निरीक्षण किया और तब 'सीमा-रक्षकों' को सम्बोधित कर कहा—"देश के ये शत्रु बड़े विलक्षण हैं। ये बिल्लियों को पकड़कर थैलियों में रखते हैं और सीमा-क्षेत्र में सुरंगों के पास ले जाकर उन्हें छोड़ देते हैं। इससे बिल्लियाँ तो विस्फोट में मारी जाती हैं और देश के ये शत्रु निरापद पार हो जाते हैं। इसकी भी व्यवस्था करनी ही पड़ेगी—किसी तरह इन्हें रोकना होगा।"

एक सीधा-सा आदेश जारी कर दिया गया—"यदि कहीं बिल्ली की आवाज सुनायी पड़े, तो उस क्षेत्र को मशीन-गनों से भून डालो।" इस युक्ति ने कभी-कभी भागनेवालों को ऐसे-ऐसे स्थानों पर मारने या घायल करने में सफलता पायी, जहाँ उनके होने का सन्देह भी नहीं किया जा सकता था। डोनाथ को, साथ में कुत्ते लेकर, उन घायल शत्रुओं की खोज में जाने में बड़ा आनन्द आता था, जो खिसक-खिसक कर उस पंक्ति से दूर हट जाने की कोशिश में रहते थे। टिबर ने कभी अपने से यह प्रश्न नहीं किया—"हंगरी में प्रवेश करने वाला कोई व्यक्ति हमें क्यों नहीं दिखायी पड़ता? लोग हमेशा भागने पर ही क्यों तुले रहते हैं?"

जब टिबर किसी घायल व्यक्ति को पकड़ता था, तब अपने राइफल के कुंदे को उसके पेट में अड़ा देता था। फलतः उसकी पीड़ा दुगुनी बढ़ जाती थी और तब उसके मुँह पर वह पूरी ताकत से अपना दाहिना घूँसा जमाता था।

उसके बाद वह उस व्यक्ति को, जो सम्भवतः गोली लगने के कारण लहू-लुहान रहता था, पैदल क्षेत्रीय सदर मुकाम तक ले जाता था, जहाँ उसी की तरह कई हरे तमगेवाले लोग उससे प्रश्नों की झड़ी लगा देते थे।

उन हरे तमगेवाले लोगों का कैदियों से सवाल करने का अपना-अपना ढंग था—कोई बुरी तरह पीटता था, कोई नख में सुइयाँ चुभोता था, कोई पैर के ऊपरी भाग पर राइफल का कुंदा पटकता था और कोई कुछ दूसरी तरह की पीड़ा देनेवाली विधि अपनाता था। वे प्रत्येक भागनेवाले को उस क्षेत्र के सभी दूसरे भागनेवालों के बारे में बताने के लिए मजबूर करते थे और जब वे नये लोग पकड़ लिये जाते थे, तब उन्हें भी बुरी तरह पीटा जाता था और फिर उनसे भी अन्य भागनेवालों का पता पूछ लिया जाता था।

डोनाथ के उच्चाधिकारियों ने आदेश दिया था—"भागनेवालों का पता लगाने का काम कभी बन्द न होना चाहिए।" और, उसके अनुसार ही डोनाथ कैदियों से छोटा-से-छोटा भेद लेने में जी-जान लगा देता था। फलस्वरूप, बुडापेस्ट में किसी अच्छे पद पर नियुक्त करने के लिए उसका नाम निश्चित किया गया। जब उसके इस सौभाग्य की खबर सीमा पर उसके पास पहुँची, तब वह अपने कुत्तों के गिरोह के साथ रात की गश्त पर जाने के लिए तैयार था। उस तारों-भरी रात में बाहर निकलने पर उसे अपने सौभाग्य पर विचार करने का अवसर मिला।

"अच्छा है, इस गोलाबारी से मुक्ति मिल जायेगी।"—वह सोच रहा था—"मुझे वैसे किसी आदमी पर, सरकार का दुश्मन मान कर गोली चलाने में कोई झिझक नहीं होती, जो उचित सजा पाने से बच निकलने की कोशिश करता है; लेकिन उनमें से बहुत-सी स्त्रियाँ भी होती हैं।"

वह उस दम्पति के बारे में विशेष रूप से सोच रहा था, जिसे कुछ महीने पहले उसने गोली मार दी थी। वह उस दम्पति को नहीं भूल पाता था, क्योंकि कई दृष्टियों से वे लोग उसके अपने गाँव के एक सामान्य कृषक-दम्पति के समान थे। वह स्त्री कुछ वर्ष और बड़ी होती, तो उसकी अपनी माँ की तरह लगती। जब उनकी लाशें सुरंगवाले क्षेत्र से खींच कर निकाली गयीं, तब वह कुछ देर तक इसी बारे में सोचता रहा कि सरकार के विरुद्ध उन्होंने कौन-से अपराध किये होंगे। उसके दिमाग में यह बात कभी नहीं आयी कि उनका वास्तविक रूप वही था, जैसे वे दिखायी पड़ रहे थे—यानी उन दो किसानों का उद्देश्य केवल कम्यूनिज्म को छोड़ना था।

हंगेरी को कोई क्यों छोड़ना चाहता है—यह बात उसकी समझ में नहीं आती थी। उसने सोचा—"ग्रीष्म-ऋतु के आरंभ में यहाँ के खेत कितने हरे-भरे रहते हैं। डेन्यूब नदी तथा बड़े-बड़े होटलों और अच्छे नागरिकों से पूर्ण बुडापेस्ट नगर कितना मनमोहक है!"

उस रात्रिकालीन सर्द हवा में, जब कि उसकी जन्मभूमि के सितारे उसके सिर के ऊपर बिखरे थे, उसने अनुमान लगाना आरम्भ किया कि उसे कैसा काम मिलेगा। उसने सोचा—"मैं जानता हूँ, मेरा काम बहुत अच्छा रहा है। कप्तान ने ऐसा ही कहा था और दूसरे लोग भी यही कहते हैं!"

उन सुन्दर चीजों का स्वप्न देखते हुए, जिनका अब वह अपने को हकदार मानता था, उसने अपने लिए कामों का चुनाव आरम्भ किया। उसने अपने से ही प्रश्न किया—"मैं क्या पसन्द करूँगा? हो सकता है, कोई बड़ी गाड़ी चलाने का काम दिया जाये। तब मैं सम्पूर्ण बुडापेस्ट में उसे चलाऊँगा और कभी-कभी मुख्य-मुख्य लोगों को बालातोन झील भी ले जाऊगा।" और, कुछ देर तक वह इस कल्पना में खोया रहा कि वह उस बड़ी गाड़ी में ड्राइवर के स्थान पर बैठा है। लेकिन शीघ्र ही यह काम उसे इतना तुच्छ लगने लगा कि उसने दूसरी सम्भावनाओं पर विचार आरम्भ कर दिया—"हो सकता है, कोई अच्छा, हिसाब-किताब आदि रखने का काम हो। मैं सभी चीजों को व्यवस्थित रूप में रखना पसन्द करता हूँ, इसलिए रजिस्टर में लिखने-पढ़ने का काम मेरे लिए अच्छा होगा।"

सुरंगवाले क्षेत्र में किसी अदृश्य वस्तु को देख कर उसके कुत्ते भौंकने लगे, लेकिन उस रात टिब्र डोनाथ अपनी मौज में था; अतः किसी अस्पष्ट या काल्पनिक आकृति पर गोली चलाने के लिए उसने अपनी विचार-धारा नहीं तोड़ी। वह पुनः अपने से बोला— "इस गोली चलाने और दूसरे लोगों को पीटने के काम से मुक्ति मिल जाये, तो अच्छा। मैंने यह तो साबित कर ही दिया है कि मैं किसी की भी तुलना में काफी कठोर व्यक्ति हूँ। हाँ, तो मैं चाहूँगा...कोई बड़ी कार चलाने का काम ही सही।" और, इसके बाद उसने वह पूरी सितारों-भरी रात, सुन्दर वर्दी धारण किये हुए एक नवजवान की कल्पना में बिता दी, जिसे वह अपनी आँखों के सामने बुडापेस्ट के मुख्य मार्गों पर चक्कर लगाते देख रहा था।

लेकिन संयोग ऐसा हुआ कि कोई कार चलाने की बजाय उसे एक ऐसे काम में नियुक्त किया गया, जिसे वह खास तौर से नहीं चाहता था; पर घटनाओं ने यह

प्रमाणित कर दिया कि वह उसके सर्वथा उपयुक्त था। बुडा-क्षेत्र में, डेन्यूब के किनारे मकानों की एक पंक्ति छोड़कर, दाहिने तट की मुख्य सड़क—फो स्ट्रीट—थी और उसके किनारे पर, जहाँ कोसुथ पुल था, ए. वी. ओ. का प्रधान कारागार था। परस्पर मिली हुई पाँच मंजिलोंवाली कुछ बेढंगी इमारतों में, जो ४०० गज की लम्बाई में फैली थीं, यह कारागार केन्द्र अवस्थित था। इमारत की प्रथम दो मंजिलों में घने सीखचे लगे थे, जिससे कारागार का दृश्य उपस्थित होता था; लेकिन इसमें एक ऐसी चीज भी थी, जो सड़क से दिखाई तो नहीं पड़ती थी, पर जिसके कारण यह इमारत अपनी उद्देश्यपूर्ति के लिए खास तौर से आकर्षण रखती थी। इसके अन्दर दो गहरे तहखाने थे।

इन्हीं तहखानों के ऊपरी भाग में टिबर डोनाथ अपने नये काम के लिए उपस्थित हुआ। यहाँ 'सीमा-रक्षक' के हरे तमगों की बजाय उसकी वर्दी में नीला तमगा लगाया गया था, जो पहले के तमगों से कहीं महत्त्वपूर्ण था और जो ए. वी. ओ. के सच्चे आदमी का प्रतीक था। डोनाथ अपनी निराशा को छिपाते हुए नीचेवाले तहखाने में गया।

वहाँ उससे कहा गया—"तुम्हारा काम हंगेरी की कम्यूनिस्ट सरकार की, उसके फासिस्ट, पूँजीवादी और प्रतिक्रियावादी शत्रुओं से रक्षा करना है।" तदुपरान्त उसने विधिपूर्वक हंगेरी के कम्यूनिस्ट नेताओं के प्रति भक्ति की शपथ ली और अपने उच्चाधिकारियों से विस्मयपूर्वक सुना कि किस तरह नित्यप्रति बुडापेस्ट में अनेक शत्रु कार्य-संलग्न थे। उसका यह नया काम स्पष्टतः उसके पुराने काम की तुलना में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण था।

"लेकिन इन शत्रुओं को हम अवश्य ही कुचल कर रख देंगे।"—उसके अफसर ने कहा—"उनमें से प्रत्येक का हमें पता लगाना है। तुम लोगों को 'सीमा-रक्षक' के पद से इसीलिए तरक्की देकर यहाँ बुलाया गया है कि तुमने यह साबित कर दिया है कि इस काम को कैसे करना चाहिए, यह तुम जानते हो।"

पहले तो टिबर डोनाथ ने समझा कि उसका काम बुडापेस्ट की सड़कों को शत्रुओं की खोज में, छानना है; लेकिन शीघ्र ही उसे पता चल गया कि ए.वी.ओ. के कुछ थोड़े-से आदमी ही वह काम करते थे और उसका काम, फो स्ट्रीट-स्थित तहखाने में लाये जाने वाले, शत्रुओं को अपने कब्जे में रखना तथा उनसे अपराध स्वीकार कराना था।

लेकिन आगे चल कर उसे फिर निराश होना पड़ा, क्योंकि कैदियों से

पूछताछ करने का काम उसके सुपुर्द नहीं किया गया। उसके अफसर ने उससे तीखे स्वर में कहा—"सच्चे शत्रु का पता लगाने में तुम एकदम गूँगे साबित होगे। तुम कैदियों को विशेषज्ञो के पास, पूछताछ के लिए, ले जाया करो।" ये विशेषज्ञ अधिक उम्रवाले लोग थे, जो साधारणतः ए.वी.ओ. की वर्दी में तो नहीं रहते थे, पर बहुत ही बुद्धिमान थे। जिस ढंग से वे कैदियों से अनेक महत्त्वपूर्ण बातें स्वीकार करा लेते थे, उसे देखकर डोनाथ को अचम्भित रह जाना पड़ता था।

दूसरी ओर, उसका काम यह था कि ज्यों ही कैदी उसके पास लाये जायें, वह उन्हें अपने कब्जे में ले ले और इस बात का प्रबन्ध करे कि जब वे विशेषज्ञों के पास ले जाये जायें, तब उनके प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर दें। उसकी कार्य-प्रणाली बड़ी सीधी-सादी थी। जब टिब्बर के तहखाने में कोई नया कैदी, भयभीत और अपने भविष्य के बारे में अनजान अवस्था में आता था, तब डोनाथ उसे यह बात साफ-साफ शब्दों में बता देना आवश्यक समझता था कि उसकी मुक्ति की अब कोई आशा नहीं है। टिब्बर कठोर शब्दों में कहता—"अब कोई न्यायाधीश यहाँ तुम्हारे पास नहीं पहुँच सकता। तुम्हारे परिवार के लोग भी यह नहीं जान सकते कि तुम कहाँ हो। यह निश्चित समझो कि कम-से-कम एक वर्ष तक हम तुम्हें किसी से चिट्ठी-पत्री भी नहीं करने देंगे। मेरे सिवाय और कोई तुम्हें यह नहीं बता सकता कि तुम यहाँ कब तक रखे जाओगे और मुझे इस बात की कतई परवाह नहीं है, चाहे तुम यहाँ मृत्यु-पर्यन्त पड़े रहो। मैं तुम्हें पीट सकता हूँ, भूखों मार सकता हूँ, इतनी पीड़ा पहुँचा सकता हूँ कि तुम बेहोश हो जाओ। और, तुम्हारा रोना-चिल्लाना कोई नहीं सुन सकता और न कोई यह जान सकता है कि मैंने तुम्हारे साथ क्या किया। मैं तुमसे एक ही चीज चाहता हूँ—भेद, गुप्त भेद। इसके पहले कि निरीक्षक तुमसे कुछ पूछताछ करे, मैं तुम्हें एकदम सीधा कर दूँगा।"

सदा ही, जब कभी टिब्बर ये बातें कहता, तो सुननेवाला कैदी इस तरह हाथ-पांव जोड़ने लगता, मानो वह पीटा जा रहा हो; लेकिन योजना ऐसी नहीं थी। टिब्बर कैदी को एक सुनसान छोटी कोठरी में ले जाता, जहाँ मुश्किल से एक खाट रखी जा सकती थी। इस कोठरी में न तो खिड़कियाँ होती थीं और न पानी की कोई व्यवस्था। इसका दरवाजा फौलाद का होता था और उसमें अन्दर झाँकने के लिए छेद बना होता था। कमरे में एक तेज प्रकाशवाली बत्ती सदा जलती रहती थी—उसे कभी बुझाया नहीं जाता था।

टिबर कर्कश स्वर में बोलता—"यहाँ अकेले पड़े रहो। पीठ के बल लेटना और किसी तरह नहीं। तुम्हारे हाथ चुपचाप कम्बल पर पड़े रहने चाहिए—इधर-उधर नहीं होने चाहिए। अगर तुम्हारी पीठ दरवाजे से दिखायी पड़ गयी, तो समझ लो, पहरेदार तुरन्त गोली मार देगा।" कैदियों के पास जूते के फीते, पेटी अथवा 'टाई' नहीं रहने दी जाती थी। टिबर कहता—"यदि तुम्हें यहाँ मरना ही होगा, तो हमारे द्वारा मरोगे!"

कैदियों को सीधा करने का यह तरीका पहले के पहरेदारों ने निकाला था और यह भली-भाँति सफल भी साबित हुआ था। सीधा करने के काल में सबसे पहले आदमी का समय-ज्ञान नष्ट कर दिया जाता था। वहाँ कभी तो दिन १९ घंटों का होता था, कभी १४ घंटों का, कभी ३६ घंटों का और कभी रात केवल तीन घंटे की। उधर, वह तेज बत्ती बराबर आँखों के सामने चमकती रहती थी। जब समय-ज्ञान नष्ट हो जाता था, तब बाकी बातें स्वयमेव अनुकूल हो जाती थीं।

इस अवस्था में तीस-चालीस दिन रखने के बाद, कैदी को एक ऐसी कोठरी में ले जाया जाता, जहाँ पहली कोठरी की ही तरह तीव्र रोशनी जलती रहती, पर बैठने या सोने का स्थान नहीं होता था। इस कोठरी में कैदी को बिना भोजन के तीन दिनों तक रखा जाता और बहुत बिनती करने के बाद उसे शौच जाने दिया जाता, किंतु वहाँ भी उसे खड़ा रहना पड़ता था। जब वह बहुत क्षुधातुर हो जाता, तब उसे काफी तैलमय चीजें खिला दी जातीं, जिसके फलस्वरूप वह बुरी तरह बीमार पड़ जाता। उसे उस समय बहुत नमकीन चीजें भी खिलायी जाती थीं, जिसके कारण उसे प्यास बहुत लगती, किंतु पानी नहीं दिया जाता था; अतः वह व्याकुल हो उठता।

कभी-कभी तो कैदी को इस बात पर विवश किया जाता कि वह अपने भोजन-वाले बर्तन में ही मलत्याग करे। कई लोग तो यहीं पनाह माँग लेते थे।

इस अवधि के समाप्त होने पर कैदी को फिर टिबर डोनाथ के सामने पेश किया जाता। टिबर दीवार पर टँगे रबर के कोड़ों की तरफ, जिनके अन्दर इस्पात जड़ा रहता था, इशारा कर के कैदी से डपट कर बोलता—"अपनी पसन्द का कोई कोड़ा चुन लो!" और तब, कैदी द्वारा चुने गये कोड़े से वह उसे इतना पीटता कि कैदी बेहोश हो जाता। ऐसे मौकों पर टिबर, जो अपने वर्तमान छोटे पद से असन्तुष्ट रहता था, हाँफते हुए, एक पागल की तरह, अपनी सनक में, दुर्बल पड़े कैदी के सिर, विशेष कर मुँह, पर प्रहार करता।

उसकी आँखों से क्रोध की चिनगारियाँ निकलती रहतीं और जब वह स्वयं दम लेने के लिए रुकता, तो भूमि पर पड़े कैदी पर पानी उँड़ेल देता। जब उस आदमी को होश आता और वह उसके पैर पकड़ने लगता, तब डोनाथ कठोरता-पूर्वक कहता—"अगली बार तुम निरीक्षक से मिलोगे—उनसे ठीक से बातें करना।"

इसके बाद वह कैदी को पहले की ही तरह कुछ और दिन तपा देनेवाले प्रकाश और उत्पीड़न के बीच बिताने के लिए भेज देता। कभी-कभी टिबर के निर्दय प्रहार से कैदियों की हड्डियाँ टूट जातीं या गुर्दे फट जाते, लेकिन इससे उसे कोई मतलब नहीं था। हड्डियों के टूट जाने पर शरीर का कोई अंग चाहे कैसा भी रूप ग्रहण कर ले, इसके लिए वह स्वतंत्र था। फो-स्ट्रीट पर आपको प्रायः ऐसे लोग देखने को मिले होंगे, जिनके हाथ विलक्षण ढंग से इधर-उधर मुड़े थे: क्योंकि तहखानों में किसी डाक्टर की व्यवस्था नहीं थी। और, यदि कोई कैदी मर जाता था, तो डोनाथ को यह अधिकार प्राप्त था कि वह उसके नाम का खाता बन्द कर दे—इस सम्बन्ध में उससे कोई कभी पूछताछ करनेवाला नहीं था।

लेकिन यदि कैदी तहखाने के उस जीवन को झेलने के बाद भी जिन्दा बच जाता था और साधारण अहाते में प्रवेश पा जाता था, तब भी उसके जीवन को असह्य बना देने के लिए टिबर और उसके साथियों के पास बहुत-से भयावने उपाय थे। नित्य उत्पीड़न, लम्बी अवधि तक पिटाई, जल वाले उपचार और मनोवैज्ञानिक दबाव, आदि उन उपायों में बहुत प्रभावकारी थे। और फिर रविवार भी उनके हाथ में ही था।

कुछ तो इसलिए कि रविवार पहरेदारों की छुट्टी का दिन होता था और कुछ इसलिए कि ए.वी.ओ. वाले जानबूझ कर अधिकांश कैदियों द्वारा सम्मानित रविवार के उस दिन को कलंकित करना चाहते थे; इसलिए रविवार एक विशेष आतंक का दिन बन गया था। उस दिन पहरेदार लोग, भोजन कर चुकने के बाद, यों ही पाँच-छः कैदियों को बुला लेते और खेल खेलते। टिबर को इन खेलों में से एक खेल को देख कर कुढ़न होती थी, क्योंकि अपनी शक्तिहीनता के कारण वह स्वयं उसे खेलने में असमर्थ था; फिर भी वह उसे देख कर काफी आनन्द-लाभ करता था। यह खेल यों था—किसी अड़ियल कैदी को एक स्थान पर खड़ा कर दिया जाता। उसके दोनों हाथ बगल में लटकते होते। तब कोई पहरेदार उठ कर खड़ा होता और उसके मुँह पर घूँसा जमा कर उसे

धराशायी करने का प्रयत्न कर के अपनी वीरता प्रदर्शित करता। चूँकि कैदी को अपने स्थान से न हटने का आदेश मिला होता था; इसलिए पहरेदार को काफी दूर से निशाना साधने और कैदी के मुँह पर जमकर प्रहार करने का सुन्दर अवसर प्राप्त होता था।

कुछ रविवारों को टिबर यह तथा दूसरे खेल तब तक देखता था, जब तक वह उत्तेजना से भर नहीं जाता था। इसके बाद वह छोटे पहरेदारों को आदेश देता था कि वे किसी खास ढंग से खतरनाक कैदी को ले आवें और जब वह ले आया जाता था, तब पहले तो वह उसका खूब मजाक उड़ाता और इसके बाद रबर-चढ़े इस्पात के कोड़े से उसके सिर पर निर्दयतापूर्वक प्रहार करता। प्रायः वह पीटते-पीटते उस व्यक्ति को बेहोश कर देता था और तब, उस पर तब तक ठोकर मारता था, जब तक उसका चेहरा और सिर लहूलुहान नहीं हो जाता था।

रविवार की अत्यन्त निर्दय सजाओं में से एक का आविष्कार टिबर ने किया था। पहरेदार लगभग दर्जन-भर कैदियों को ले आकर तेज बिजली के प्रकाश में खड़ा कर देते। तब वह आदेश देता—"सब एक पैर पर खड़े हो जाओ।" तीखा प्रकाश और एक पैर पर खड़ा होना, दोनों मिलकर शीघ्र ही एक अत्यन्त करुण दृश्य उपस्थित कर देते। कोई चीखने चिल्लाने लगता, कोई बेहोश हो जाता, कोई उछलने-कूदने लगता। लेकिन कुछ भी क्यों न हो, किसी को भी वहाँ से हटने की आज्ञा नहीं थी। यदि कोई कैदी अपने स्थान से हट जाता, तो सब को बुरी तरह पीटा जाता। हाँ, वह व्यक्ति नहीं पीटा जाता था, जो अपने स्थान से हटता था—वह बच जाता था। टिबर ने लक्ष्य किया कि एक पैर पर खड़ा होनेवाला प्रत्येक व्यक्ति बेहोश होते-होते भी अपनी सम्पूर्ण शारीरिक और नैतिक शक्ति लगा कर इस बात का प्रयत्न करता था कि उसके कारण साथी कैदियों पर मार न पड़े।

"वह गया!"—किसी के हटने पर पहरेदार चिल्लाते और वहाँ खड़े सभी कैदियों को पीटना आरम्भ कर देते। उनकी यह पिटाई तब तक जारी रहती, जब तक वे अचेत होकर गिर नहीं पड़ते।

"सब-के-सब गये!"—कैदियों के अचेत होने, चिल्लाने और विक्षिप्त होने के साथ ही पहरेदार चिल्ला पड़ते।

कठिन कैदियों को सीधा बनाने में टिबर का एक दूसरा आविष्कार जितना अधिक सरल था, उतना ही प्रभावकारी भी। वह उस व्यक्ति को एक दीवार की ओर मुँह कर के खड़ा कर देता था। वहाँ एक बड़ी तीखी रोशनी उसकी

आँखों पर पड़ती थी। कैदी के ललाट और दीवार के बीच एक पेन्सिल खड़ी की जाती थी। पेन्सिल का नुकीला अंश ललाट से अड़ा रहता और दूसरा छोर दीवार से। कैदियों को टिब्र चेतावनी देता था—"अगर पेन्सिल गिरी, तो पीटते-पीटते तुम्हारी जान ले ली जायेगी!" फलतः वह आदमी पेन्सिल को अपने ललाट से दावे रहता और यह भी कोशिश करता कि आँखों में पड़नेवाली उस तीखी रोशनी के कारण वह बेहोश न हो जाये। कभी यदि कोई व्यक्ति इस सजा को कुछ घंटों तक भोग लेता था, तो पेन्सिल उसके ललाट में प्रवेश कर जाती थी।

रविवार के कुछ दूसरे ऐसे कार्य भी थे, जिनके बारे में टिब्र तक, इन आततायी कामों से मुक्ति लेने के बाद, सोचना पसन्द न करता था। यों तो अपने युवा-काल से ही उसने लड़कियों की कुछ विशेष परवाह नहीं की थी; लेकिन फो-स्ट्रीट के उस मकान में तो वह उनसे घृणा करने लगा। रविवारों को महिला पहरेदारिनें, जिन्हें टिब्र पुरुषों की अपेक्षा अधिक क्रूर समझता था, अपने क्वार्टर में किसी पुरुष कैदी को पकड़ ले जातीं और उसे नंगा होने पर मजबूर कर देतीं। फिर वे उसे ऐसे भयावने तरीकों से सतातीं कि जिनके बारे में कोई पुरुष पहरेदार बात तक करना पसन्द नहीं करता था। ए. वी. ओ. की वे स्त्रियाँ चाकुओं, बाल की पिनों और सिगरेट-लाइटरों की सहायता से ऐसे-ऐसे घोर काम करती थीं, जो उनके पुरुष-साथियों को भी कँपा देते थे।

एक दिन टिब्र ने कहा—"ओह, उन्हें रोका जाना चाहिए।"—यह कहना उसके लिए अपराध साबित हुआ। फो-स्ट्रीट के उस कारागार के किसी खुफिया ने इस कम्यूनिस्ट-विरोधी टिप्पणी की खबर कारागार के प्रधान के पास पहुँचा दी। फलतः उसे वहाँ से बुलाहट आयी।

"क्या तुमने महिला पहरेदारिनों के विरुद्ध कुछ कहा था?"—अफसर ने, जो एक दुबला-पतला आदमी था और जिसकी नाक नुकीली लम्बी एवं आँखें तीक्ष्ण थीं, प्रश्न किया।

"मैंने सिर्फ यह कहा कि......"

"चुप रहो! झूठे!"—वह दुबला आदमी चिल्लाया और फिर तेजी से डोनाथ के पास जाकर उसने एक रिपोर्ट उसके सामने कर दी। "देखो इसे!" —वह पागल की तरह चिल्लाया।

उसने टिब्र को उस रिपोर्ट में दर्ज अपराधों की स्वीकृति के आँकड़े दिखलाये, जिनसे प्रकट होता था कि टिब्र और अन्य पुरुष पहरेदारों द्वारा

पीड़ित किये जाने के कारण सरकार के जितने शत्रुओं ने अपने अपराध स्वीकार किये थे, उनके दुगुने लोगों ने रविवार को महिला पहरेदारिनों द्वारा दी जानेवाली यातनाओं के कारण वैसा किया था।

"क्या तुम सरकार के शत्रु हो?"—उसने प्रश्न किया।

"नहीं, मेरे पिछले कार्य इसके गवाह हैं।"—टिबर बोला।

उस दुबले-पतले आदमी ने आश्चर्यजनक ढंग से सहमति प्रकट की—"हाँ, तुम्हारे रिकार्ड अच्छे हैं। इसीलिए मैं तुम्हें बर्खास्त नहीं कर रहा हूँ। लेकिन तुम्हें यह बतलाये जाने की जरूरत है कि सरकार का विरोध करनेवाले अपराधी तत्त्वों के प्रति व्यर्थ की सहानुभूति रखना भी सरकार के प्रति एक अपराध है। मैं तुम्हें रेस्क भेज रहा हूँ।"

टिबर, जो कठोरता में परिपक्व हो चुका था, सीधा खड़ा रहा और बिना किसी घबराहट के बोला—"ठीक है, कामरेड!"

अब नम्र शब्दों में उस व्यक्ति ने कहा—"रेस्क में एक-आध साल रहने पर तुम्हें मालूम हो जायेगा कि हमारी सरकार के शत्रु बिल्कुल ही सहानुभूति पाने के योग्य नहीं है—वे एकदम नीच हैं। वहाँ से तुम आज की अपेक्षा अधिक योग्य बन कर लौटोगे।"

जब टिबर डोनाथ अपने क्वार्टर में लौटा, तब उसने अपने सभी साथियों पर एक अत्यन्त घृणा-भरी दृष्टि डाली। उन्हीं में से एक ने उनके साथ विश्वास-घात किया था, जिससे डोनाथ की बदली हंगेरी के उस रद्दी-से-रद्दी कारागार में हुई थी। रेक्स-कारागार कैदियों और उनके पहरेदार, दोनों के लिए समान रूप से भयानक था। क्षणिक लाभ के लिए किसी कुमित्र ने उसके साथ दगा की थी; फिर भी वहाँ की व्यवस्था ऐसी थी कि वह इस विश्वासघात के बारे में एक शब्द भी बोलने का साहस नहीं कर सकता था और न अपने व्यवहार से उसे ऐसा प्रकट करना था कि उस तरह की कोई बात हुई है।

डोनाथ ने अपने मित्रों पर दृष्टि दौड़ाते हुए, मन-ही मन प्रतिज्ञा की—"इन्हीं में से एक की यह करनी है। किसी दिन मैं उसका पता अवश्य लगा लूँगा और चुपचाप उसकी गर्दन मरोड़ दूँगा—आँखें निकाल लूँगा। मैं...मैं..." और कहीं क्रोध न आ जाये, इसलिए उसने अपने उन सपनों का तार तोड़ दिया।

अपने असह्य घृणा-भाव को छिपाने के लिए उसने केवल इतना ही कहा—"मैं रेस्क जा रहा हूँ।"

उसके इस कथन पर मित्रों की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। कहीं कोई रिपोर्ट

न कर दे, इस भय से किसी ने उसकी इस बदली पर सहानुभूति प्रकट नहीं की, क्योंकि दिखावटी तौर पर तो यह बदली केवल एक ड्यूटी का रूप थी। उधर वह व्यक्ति भी, जिसकी यह कारगुजारी थी, इस सजा मिलने पर अपना हर्ष नहीं व्यक्त कर सकता था; क्योंकि वह अपने को प्रकट नहीं करना चाहता था। अतः घोर घृणा का भाव अपने मन में दबाये टिब्र डोनाथ ने प्रस्थान की तैयारियाँ कीं। रात के समय एक ट्रक ५० मील की दूरी पर अवस्थित, उत्तरी-पूर्वी हंगेरी के उस बदनाम रेस्क-कारागार में उसे ले जाने के लिए आया।

जब वह फो-स्ट्रीट के सदर मुकाम से रवाना हुआ, तब उसके मित्र फाटक के पास खड़े होकर उसे जाते हुए देख रहे थे; लेकिन किसी के भी चेहरे पर किसी तरह का मानव-सुलभ विदाई का भाव नहीं दिखायी पड़ा। डोनाथ भी सीधे जाकर ट्रक में बैठ गया—उसने घूम कर यह भी देखने की चेष्टा नहीं की कि किसके चेहरे पर उसके प्रति गद्दारी करने का भाव झलक रहा है। डोनाथ ने मन-ही-मन शपथ ली—"मैं उसका पता लगा लूँगा और उसकी छाती चीर डालूँगा।" ऐसी ही कल्पनाओं में उलझकर उसने अपनी घृणा और क्रोध को शान्त कर लिया। और, जब वह रेस्क पहुँचा, तो उन्मत्त-सा बन चुका था और अपने नये काम को सम्भालने के लिए पूर्णतः तैयार था।

टिब्र डोनाथ को, अनुशासनात्मक शिक्षा दिलाने के लिए, जो ट्रक रेस्क ले जा रहा था, उसी में जानवर की तरह एक बक्स में बन्द एक राजनीतिक बन्दी को भी ले जाया जा रहा था। उसका नाम फेरेंक गेबर था। उसे भी अनुशासन की ही शिक्षा दी जानेवाली थी, पर जरा कठोर किस्म की। ट्रक पर उसके हाथ-मुँह बाँधकर उसे एक पिंजरे में रखा गया था। उसका अपराध था भी या नहीं? और यदि था तो क्या था? किसी को मालूम न था। उसकी एक विशेषता से सभी परिचित थे कि वह कुछ बोलता नहीं था। फो-स्ट्रीट के सदर मुकाम से भेजे जाते समय उसके पहरेदारों ने उससे व्यंग भी किया था —"गूँगे महाशय, अब रेस्क में पहुँच कर बातें कीजियेगा!"

अब मैं यहाँ फेरेंक गेबर के ही शब्दों में, जो लगभग ३५ वर्ष का एक दुर्बल आदमी था और जो मुझे वियेना में मिला था, ए. वी. ओ. के इस सर्वोपरि कारागार की भयानकता का वर्णन प्रस्तुत करता हूँ। रेस्क में उसने जो कुछ वर्ष बिताये, उनकी चर्चा करते हुए उसने कहा—

"बुडापेस्ट के उत्तर-पूर्व में अवस्थित रेस्क नाम के एक छोटे-से गाँव से लगभग ३ मील की दूरी पर हम उस शैतानी कारागार के मुख्य-द्वार में प्रविष्ट

हुए, जहाँ मुझे तीन वर्षों तक रहना पड़ा। वहाँ मुझे एक वर्दी दी गयी, जिसे मैंने तब तक पहना, जब तक मैं वहाँ रहा। यह वर्दी क्या थी, ए. वी. ओ. का एक पुराना 'सूट' थी, जिसके पैरवाले हिस्से में से ए. वी. ओ. की पट्टियाँ हटा कर, उनके स्थान पर चौड़ी लाल पट्टियाँ लगा दी गयी थीं, जो दूर से ही दिखायी पड़ जाती थीं। कंधेवाले हिस्से में से भी अधिकारियों के चिह्न और बिल्ले हटा दिये गये थे। मोटे तौर पर यह खाकी रंग की एक भद्दी पोशाक थी।

"रेस्क वर्गाकार था—एक हजार गज लम्बा और उतना ही चौड़ा। वह इस बात के लिए प्रसिद्ध था कि यहाँ से कैदी भाग नहीं सकते थे। केवल एक बार वहाँ से कुछ कैदी भागे थे। कारागार के चारों ओर ९ फुट ऊँचा काँटेदार तार का घेरा था, जिसमें बिजली दौड़ती रहती थी। उस घेरे से ३० गज हट कर एक और घेरा था और उसमें भी विद्युत्-धारा चलती रहती थी। फिर ५० गज की दूरी पर एक तीसरा घेरा था। लेकिन उन घेरों को भी कोई अपने निश्चय का दृढ़ कैदी, रबर की मूठवाली कैंची से तारों को काटकर, पार कर सकता था। हाँ, यह था कि पहले और दूसरे घेरों के बीच भूमि को जोत दिया गया था, जिससे भागनेवाले के पैरों के निशान उग आयें। साथ ही, उस क्षेत्र में अनेक शक्तिवाली विस्फोटक सुरंगें लगायी हुई थीं। इनके अतिरिक्त बीचवाले घेरे में हर पचास गज की दूरी पर पहरा देने के लिए ऊँची-ऊँची मीनारें थीं, जहाँ मशीनगनों और बड़े-बड़े प्रकाश-यंत्रों की व्यवस्था थी।

"भीतरी घेरे पर अंदर की ओर साइनबोर्ड लगे थे, जिन पर लिखा था—'खबरदार! यदि इस तार को छुओगे, तो गोली मार दी जायेगी।' इसी तरह बाहरी घेरे पर बाहर की ओर भी बोर्ड लगे थे, जिससे यदि कोई अजनबी या ग्रामीण कारागार की ओर बढ़ना चाहे, तो उन पर नजर पड़ जाये। उन बोर्डों पर लिखा था—'सरकारी सम्पत्ति! प्रवेश निषिद्ध। प्रवेश करने की चेष्टा करनेवालों को बिना चेतावनी गोली मारी जा सकती है।'

"लेकिन उन घेरों के कारण रेस्क का जीवन असह्य नहीं था; इसके लिए कारागार के अन्दर की बातें जिम्मेदार थीं। यहाँ ए. वी. ओ. के केवल बहुत ही कठोर आदमी तैनात किये जाते थे और चूँकि उनकी यहाँ की ड्यूटी एक तरह से दंड-स्वरूप होती थी, इसलिए वे हमारा जीवन इतना नारकीय बना देते थे कि प्रायः हम अपनी मृत्यु की कामना करने लगते थे। विश्वास कीजिये, बुडापेस्ट के सदर मुकाम में हमें जो यातनाएँ मिलती थीं, वे रेस्क के मुकाबले में कुछ भी नहीं थीं।

"अहाते के एक छोर पर २८० फुट ऊँची एक छोटी-सी-पहाड़ी थी। हमें इस पहाड़ी के पत्थरों को इतना बारीक कूटना पड़ता था कि उन्हें चलनी से चाला जा सके। प्रत्येक कैदी को प्रतिदिन दो ठेला पत्थर का चूरा बनाना पड़ता था। हमारी आँखों पर कोई चश्मा तो होता नहीं था, इसलिए पत्थर के टुकड़ों के उड़कर आँखों में पड़ने के कारण कई लोगों की आँखों की रोशनी चली गयी; परन्तु इसके कारण वे काम नहीं रोक सकते थे। ऐसे कठिन काम के उपयुक्त हमें भोजन भी नहीं दिया जाता था—हमारे मरने-जीने की चिन्ता कौन करता था! कारा-जीवन के प्रथम वर्ष में ही एक औसत कैदी का वजन ७० पौंड कम हो जाता था।

"यदि किसी दिन मैं अपना पूरा काम नहीं कर पाता था, तो मुझे एक सर्द कमरे में, घुटने भर ठंढे पानी में, रात-भर खड़ा रहना पड़ता था। इसके बाद भी दूसरे दिन सवेरे, जबकि रात-भर जागने के कारण हालत खराब रहती थी, यदि पहरेदार मुझसे खेलना चाहते, तो वे मुझे सवा मन भारी पत्थर लेकर एक सीढ़ी पर १५ बार चढ़ने-उतरने को मजबूर करते थे। यदि ऐसा करते समय मैं बेहोश हो जाता, तो होश आने पर वे फिर मुझसे यही काम कराते।

"लेकिन हमारी जानकारी में इन सजाओं में सबसे खराब सजा यह थी कि ए. वी. ओ. वाले हमारे साथी कैदियों को फोड़ लेते थे। उन्होंने हमारे बीच कुछ खुफिये रख छोड़े थे, जो हमारे कुछ भी बोलने या बोलने का इरादा करने की सूचना उन्हें देते थे। ऐसा करने वाले खुफिया कैदियों को कुछ अधिक भोजन मिलता था।

"हम लोग सवेरे साढ़े चार बजे से रात होने तक काम करते थे। बीच में केवल भोजन करने के लिए थोड़ी देर छुट्टी मिलती थी। काम समाप्त हो जाने पर हम अपने क्वार्टरों में लौट जाते थे। दो अहातों में बने छोटे-छोटे कमरे हमारे क्वार्टर थे। प्रत्येक कमरे में ८० व्यक्ति ठूँस-ठाँस कर रखे जाते थे। तीन वर्ष तक हमें न तो कोई पुस्तक मिली, न कागज, न पेन्सिल, न रेडियो के समाचार और न समाचारपत्र। हमारे पास कोई मिलनेवाला नहीं आ सकता था और न हम चिट्ठी-पत्री ही लिख सकते थे। बाहर से कोई हमें भोजन भेजे इसकी भी इजाजत न थी। अपने परिवारवालों को हम यह सूचना भी न दे सकते थे कि हम कहाँ हैं। हमें न तो यही मालूम था कि वहाँ हमें कितने दिनों तक रहना था और न यह कि किस कारण से हमें वहाँ रखा गया था। हम एक सर्वथा आतंकपूर्ण जीवन बिताते थे—ए.वी.ओ. वालों को कहीं पता न चल जाये,

इस भय से हम कैदी लोग आपस में भी किसी विषय पर बातचीत नहीं कर सकते थे।

"महीने-महीने हम दुर्बल होते जाते थे—काम करने की हमारी शक्ति क्षीण होती जाती थी और नींद के अभाव में हमारा बुरा हाल था। हमारी इस दिनचर्या में अंतर तभी पड़ता था, जब ए. वी. ओ. वाले, रात के समय, पूछताछ करने या खेल खेलने के लिए हमें बुलवाते थे। उस समय हमें पीटा जाता था, गालियाँ दी जाती थीं और तरह-तरह से सताया जाता था। वे हमें बोलने के लिए बहुत तंग करते थे, पर यह कभी नहीं कहते थे कि किस विषय में वे हमसे कुछ कहलाना चाहते हैं।

"एक रात, जब एक भूरे रंग के चेहरे वाले पहरेदार ने, जिसके बाल पीलापन लिये हुए थे और जिसे लोग टिबर के नाम से पुकारते थे, मुझे बड़ी निर्दयता से पीटा, तब कोई बोल उठा—"इसे सफेद घोड़ी बनाया चाहिए।" और, सफेद घोड़ी बनाने के लिए उन्होंने एक झाड़ू का डंडा मेरे घुटनों के नीचे लगा दिया; फिर मुझे गोलाकार बनवा कर मेरी कलाइयों को मेरे टखनों से बाँध दिया। इस सजा से हम मौत-जैसा भय खाते थे; क्योंकि इससे पेट और हृदय पर इतना भार पड़ता था कि हमारी समझ से कोई भी व्यक्ति उस अवस्था में दो घंटे से अधिक नहीं रह सकता था। यदि ए. वी. ओ. वाले एकदम ही खेलने की उमंग में रहते, तो कभी-कभी किसी व्यक्ति को 'सफेद घोड़ी' बनाने के बाद वे उसके बारे में बिल्कुल भूल जाते थे। फल यह होता था कि वह व्यक्ति उसी अवस्था में मर जाता था। उसके मरने की किसी को कुछ चिंता नहीं थी।

"लेकिन साधारण तौर पर भी यह सजा लगभग असह्य थी; क्योंकि जब कोई व्यक्ति अपने घुटनों पर झुक कर इस अवस्था में कुछ समय तक रहता था और तनी हुई माँस-पेशियों पर रबर के कोड़ों से लगातार प्रहार किया जाता था, तब उसका गिर पड़ना निश्चित था और उसके गिर पड़ने से शरीर के दूसरे अंगों पर कोड़े बरसने लगते थे।

"उस रात उन लोगों ने मेरे अतिरिक्त एक और आदमी को सफेद घोड़ी बनाया था। उन लोगों ने उसे इतना पीटा कि उसका सारा शरीर सुन्न हो गया और वह एक जलते स्टोव की तरफ लुढ़क गया। उसका बायाँ हाथ इतना चेतनाहीन हो गया था कि उसे इस बात का भी पता नहीं चल सका कि वह आग में झुलस रहा है। इस प्रकार उसकी दो अँगुलियाँ और आधी हथेली

जल गयी। इसका ज्ञान उसे तब हुआ, जब उसे माँस जलने की दुर्गन्ध आयी। ए. बी. ओ. वाले यह सब देख-देख कर क्रूरतापूर्वक हँस रहे थे।

"हम लोगों के साथ जितने महान् क्रूर व्यवहार होते थे, उनमें से एक मनोवैज्ञानिक दुर्व्यहार भी था, जो निश्चय ही किसी भी व्यक्ति की विचारशक्ति को नष्ट कर देता था। पत्थर तोड़ने का जो काम हम करते थे, उसके लिए हर महीने हमें एक अच्छा पारिश्रमिक दिया जाता था। पारिश्रमिक मिलने पर ए. वी. ओ. वाले हमारे सामने भाषण देते—'इस वेतन देने से स्पष्ट है कि कम्यूनिज्म अपने कैदियों से बेगार नहीं कराता, जैसा कि पूँजीवाद में होता है।' इसके बाद वे हमसे हमारे भोजन, बैरक, बिजली के प्रकाश और हमारी रक्षा करने वाले पहरेदारों का खर्च वसूल करते थे। यह सब देने के उपरान्त हमारे पास इतनी ही रकम बच जाती थी कि महीने-भर के लिए सिगरेट का केवल एक पैकेट खरीद सकें। लेकिन रेस्क से बाहर जो रिपोर्टें भेजी जाती थीं, उनमें इस संतोषप्रद बात का उल्लेख अवश्य रहता था कि कैदियों को चालू दर के अनुसार नियमित रूप से पारिश्रमिक दिया जा रहा है।

"मैंने पहले बतलाया था कि कैदियों का एक दल रेस्क से भागने में सफल हो गया था। वहाँ एक दर्जी था, जिसने बड़ी कुशलता से ए.वी.ओ. की पुरानी वर्दी से एक ऐसी वर्दी तैयार की, जो देखने में बिलकुल असली-जैसी प्रतीत होती थी।

तत्पश्चात् बचे-खुचे टुकड़ों से उसने काफी मेहनत करके एक टोपी और कुछ सजावटवाली चीजें तैयार कीं। फिर उन्हें पहनने के बाद उसने अपने कुछ हिम्मती कैदी साथियों को इकट्ठा किया और बगल में एक नाम-मात्र की टामी गन लटका कर, जिसमें लोगों को उसकी बातों का विश्वास हो जाये, वह सबको साथ लेकर निर्भयतापूर्वक मुख्य द्वार से बाहर निकला।

"'हमलोग कुछ डाइनामाइट लाने जा रहे हैं।'—उसने पहरेदारों से कहा और उसके बाद वह सब के साथ जंगलों में—स्वतंत्र वातावरण में—उन्मुक्त विचरने चला गया।

"ए.वी.ओ. वालों में इसकी पैशाची प्रतिक्रिया हुई। बिना किसी तरह की व्यग्रता दिखाये, उन्होंने वैसे २५० कैदियों को, जो बातचीत करते, भोजन करने में देर लगाते या हँसते दिखायी पड़े, पकड़ लिया। पिछले दो सप्ताहों में जिनका काम निश्चित परिणाम से कम हुआ था, वे भी चपेट में आये। यह बड़ा ही गम्भीर समय था; क्योंकि कैदियों को मालूम था कि अब कोई बहुत

भयानक कांड होनेवाला है। अब हर कोई इस बात के लिए उत्सुक दिखायी पड़ता था कि यदि किसी दूसरे साथी की कुछ शिकायत करने के योग्य बात दिखायी पड़े, तो उसकी सूचना देकर उस अज्ञात और भयानक दंड से छुटकारा मिल जाये।

"आरम्भ में यह प्रतिशोध-कार्य साधारण रहा। उन दो सौ पचास कैदियों को कारागार के अन्दर ही एक विशेष कारागृह में बन्द कर दिया गया। भयानकतम सजाओं की आशंका करनेवाले उन कैदियों को आरम्भ में उनकी आशा से बहुत कम सजा मिली थी, पर एक सप्ताह बाद जब धीरे-धीरे सजा की भयंकरता बढ़ने लगी, जैसे पिटाई, कीड़ों से भरा भोजन, गुप्तांगों की असाधारण और घृणित सजाएँ, तो यह स्पष्ट हो गया कि रेस्क के ए.वी.ओ.वालों ने उन २५० आदमियों को दुख से चिल्लानेवाले जानवर बना देने का निश्चय कर लिया था।

"और, वे इसमें सफल भी हुए। कारागार के भीतरवाले उस कारागार का अनुभव इतना भयानक था, जिसे न तो कोई जल्दी समझ सकता है और न विश्वास ही कर सकता है। दो महीने के अन्दर ही सब-के-सब कैदी लगभग पागल हो गये। प्रतिदिन पहरेदार उन जानवरों के सामने बहुत थोड़ा भोजन रख देते और जब वे आपस में छीना-झपटी करने लगते, तो वे अट्टहास करते। उसी समय लाउड-स्पीकर पर यह सुनायी पड़ता था,—"तुम लोग इसलिए यहाँ यह सजा भुगत रहे हो कि तुम्हारे दोस्त भाग गये।"

"इस प्रकार उस चतुर दर्जी और उसके साहसी साथियों के प्रति बड़ी भयानक घृणा पैदा की गयी। लेकिन सम्भवतः पहरेदारों को भी यह नहीं मालूम था कि उस घृणा ने कितना अमानवीय रूप ग्रहण कर लिया था। तीन महीने बाद, उन भागनेवालों में से एक को, जो हंगेरी से भागने का प्रयास कर रहा था, पकड़ लिया गया और कारागार के भीतरवाले कारागार में लाया गया। तभी लाउड-स्पीकर पर आवाज गूँज उठी—'उन भागनेवालों में से एक, जिनके कारण तुम ये यातनाएँ सह रहे हो, अब तुम्हारे पास है।'

"और, अपने पुराने साथियों के बीच लाये जाने के दो मिनट के अन्दर ही सारे कैदियों ने फिर से पकड़े गये उस कैदी के टुकड़े-टुकड़े कर दिये।"

ए.वी.ओ. के जिन लोगों ने यह योजना तैयार की थी, उनमें टिबर डोनाथ भी था। रेस्क में रह कर उसकी वह नम्रता, जिसका प्रदर्शन उसने एक बार बुडापेस्ट में किया था, पूर्णतः कठोरता में बदल गयी थी। निष्ठुर रेस्क की

लम्बी, निर्जन और भयावनी रातों में, पहरेदारों की जोड़ियाँ आपस में स्नेह-सम्बन्ध भी स्थापित कर लेती थीं और जब जवान पहरेदारों की नयी टोलियाँ आती थीं, तब पुराने पहरेदार ध्यानपूर्वक उनकी जाँच-परख करते थे। ऐसे ही एक अवसर पर टिबर ने देहात से आये एक सुन्दर नवजवान पहरेदार को देखा और उससे मित्रता करनी चाही, पर उसने उसे ठुकरा दिया। उसी सप्ताह उस नवजवान के बारे में गुप्त रूप से यह रिपोर्ट कर दी गयी कि कैदियों से सिगरेट के पैसे लेकर वह अपना खर्च चलाता है।

उस नये पहरेदार को बहुत कड़ी सजा दी गयी, क्योंकि रेस्क आने से पहले भी उसकी कुछ शिकायत हुई थी। जब वह ए.वी.ओ. बैरक में लौटा, तब टिबर ने आन्तरिक प्रसन्नता के साथ देखा कि किस तरह वह नवजवान, अपनी शिकायत करनेवाले का पता लगाने का निष्फल प्रयास करते हुए, अपने साथियों की दृष्टि को समझने की कोशिश कर रहा था। लेकिन टिबर की इस विजय में भय भी शामिल था। वह युवक घृणा से इतना विचलित था कि टिबर ने सोचा—"मुझे उससे सावधान रहना चाहिए!" लेकिन फिर निकट भविष्य में ही किसी दूसरे व्यक्ति ने कोई दूसरी बात लेकर उसकी शिकायत कर दी। परिणामतः वह रेस्क से हटा दिया गया। उसे किस अपराध की यह सजा दी गयी, यह टिबर कभी नहीं जान सका।

कभी-कभी, जब पहरेदार कैदियों से खेलते रहते थे, तब टिबर अलग खड़ा हो कर, एक अज्ञात मोह के वशीभूत हो, बहुत-बहुत देर तक सरकार के किसी विशेष अड़ियल शत्रु को दी जानेवाली सजा को ध्यानपूर्वक देखता रहता। वह उन पिटाइयों और यातनाओं में साधारणतः तब तक हिस्सा नहीं लेता था, जब तक नये कैदियों में से कोई अकस्मात् उसे इस बात की धुँधली याद नहीं दिला देता कि वह स्कूल में उसके साथ ही पढ़ता था अथवा उसका बचपन का कोई मित्र उसका साथी था। यह सुनते ही वह अति क्रुद्ध हो रबर का कोड़ा लेकर आगे बढ़ आता और दूसरे पहरेदारों की तुलना में दुगुने वेग से उस भौचक्के व्यक्ति पर तब तक प्रहार करता रहता, जब तक असह्य पीड़ा के कारण वह लगभग अचेत न हो जाता।

और तब, उस आदमी के इर्द-गिर्द, एक दानव की तरह, उछल-कूद मचाते हुए टिबर बोलता—"बोलो, और बोलो!"

लेकिन इन स्पष्ट सनकी कृत्यों के बावजूद, टिबर डोनाथ कभी अपना आपा नहीं खोता था। वह जानता था कि वह क्या कर रहा है और जब पाशविक

पिटाई का काम समाप्त हो जाता, तब कभी-कभी वह अपने क्वार्टर में अकेले जाकर बैठता और प्रतिरोध-भाव में उस घड़ी को कोसता, जब वह रेक्स भेजा गया था। वह अपने से प्रश्न भी करता—"कैदियों को पीटने का क्या प्रयोजन है?" उसे कैदियों के लिए दुःख नहीं होता था। चूँकि वे देश के दुश्मन थे—उसने कभी इसी बात पर गौर नहीं किया कि वे लोग हंगेरी को नष्ट करने के प्रयत्न में लगे अपराधी दलों के सदस्य थे या नहीं? उसकी दृष्टि में वे दया के अधिकारी नहीं थे। टिबर को तो इस बात की चिन्ता थी कि रेक्स में भेज कर पहरेदारों को कभी समाप्त न होने वाली वह सजा क्यों दी जाती है?

वह कभी-कभी अपने से ही कहता—"बुडापेस्ट में लिखने-पढ़ने का काम करना ही मैं पसन्द करूँगा। मैं व्यवस्था-प्रेमी हूँ और चीजों को सही ढंग से रखने में मेरी दिलचस्पी है। कागज-पत्र का काम मैं अच्छा कर लूंगा।" और तब, उसका विषाक्त स्वप्न उसे आ घेरता और वह मन-ही-मन स्वीकार करता कि वस्तुतः वह बड़ा असंतुष्ट है। "मैं एक बड़ी कार चलाना सचमुच पसन्द करूँगा" कहते-कहते उसके कंधे इस तरह हिलने लगते, मानो वह तंग मोड़ों पर गाड़ी मोड़ रहा हो और उसके हाथों का संचालन कुछ इस प्रकार का होता मानो वे कार की 'स्टीयरिंग' पर हों। टिबर का स्वप्न चलता रहता—उसकी कार के पिछले भाग में कोई बहुत बड़ा अधिकारी बैठा है और वह मुख्य-मार्ग पर कार चला रहा है—वह प्रसन्नता से भर उठता। पर तभी एक घंटी उसे सुनायी पड़ती और उसे यह भान हो जाता कि वह बुडापेस्ट में नहीं, बल्कि रेस्क में है।

ऐसे क्षणों में वह कैदियों से दूर ही रहता था। "यदि इस समय उन गंदे चेहरों में से कोई दिखायी पड़ा, तो मैं मार डालूँगा।"—टिबर अपने-आपसे बोलता। लेकिन वस्तुतः वह किसी का खून करने का इरादा नहीं रखता था, क्योंकि यद्यपि किसी कैदी के मरने पर बहुत अधिक पूछताछ नहीं होती थी, तथापि यह बात पहरेदार के रिकार्ड में किसी तरह दर्ज अवश्य हो जाती थी। टिबर ने रेस्क में यह सीखा था कि सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात है किसी को भी—अपने निकटतम मित्र को भी—कोई ऐसा अवसर न देना चाहिए, जिससे वह ऊपर रिपोर्ट कर दे; क्योंकि रेस्क में हर व्यक्ति हर एक पर बराबर खुफियागीरी करता रहता था।

अपने रेस्क भेजे जाने के बारे में सोचते समय टिबर डोनाथ के मन में एक ऐसी बात आयी, जिसे उसने पहले नहीं सोचा था। एक दिन उसने सोचा—"मुझे सारा जीवन ए.वी.ओ. का ही आदमी रहना है। और मैं क्यों न रहूँ?

मुझे अच्छी रकम और सर्वोत्तम चीजें मिलती हैं—यदि कभी मैं बुडापेस्ट लौटूँगा, तो अपनी निजी कार भी रख सकूँगा। यह काफी सुन्दर जीवन है। फिर कभी मेरी कोई शिकायत कर सकने का किसी को अवसर नहीं मिलेगा।" वह रेस्क की असुविधाओं को भूल गया और आनेवाले अच्छे दिनों की, जब वह स्वयं अपना स्वामी होगा, बात सोचने लगा। "बुडापेस्ट में मेरा अच्छा-सा मकान होगा, एक कार होगी और हो सकता है कि मुझे अफसर का पद भी मिल जाये। यदि मैं गाँव में पड़ा रहता, तो मुझे क्या मिलता?" इस तुलना पर उसे हँसी आ गयी और वह अपने से बोला—"सदा रेस्क में थोड़े ही रहना पड़ेगा। फिर तो......मौज है।"

अतएव जब टिब्बर को ज्ञात हुआ कि रेस्क में उसकी अनुशासन-सम्बंधी सजा समाप्त होनेवाली है, तो उसे बड़ा संतोष हुआ। उसे प्रान्तीय राजधानी ग्योर भेजा गया, जहाँ वह शीघ्र ही एक सुयोग्य सर्जेण्ट बन गया। उस इलाके में ग्योर सदर-मुकाम का पाशविक वातावरण कठोरता के लिए प्रसिद्ध था और अपने किसी काम से टिब्बर ने इस यश को कम नहीं होने दिया।

अन्त में, १९५६ की वसन्त ऋतु में, उसे बुडापेस्ट भेजा गया। अब तक उसे उसकी पसन्द वाला लिखने-पढ़ने का काम तो नहीं मिला था, पर अब उसके पास अपनी कार हो गयी थी, वेतन बढ़ गया था और अपनी आशा के अनुरूप उसे राजधानी में एक आनंदपूर्ण जीवन व्यतीत करने की सुविधाएँ भी प्राप्त हो गयी थीं। उसके अफसरों ने उससे कहा—"हमें अब विशेष निगरानी रखनी है। नगर में इन दिनों कुछ हो रहा है और हमें इसके बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करनी है।"

पिछली बार जब टिब्बर बुडापेस्ट में तैनात था, उसकी अपेक्षा अब गिरफ्तारियाँ बड़ी तेजी से हो रही थीं; लेकिन कारागारों में कैदियों की संख्या बहुत अधिक होने के कारण उन्हें जल्दी छोड़ दिया जाता था। इसका मतलब यह था कि अब टिब्बर को पहले की अपेक्षा किसी कैदी से बहुत कम समय में अपराध स्वीकार कराना पड़ता था। इसके लिए उसे अधिक निर्दयता से और अधिक जल्दीबाजी में काम करना पड़ता था। आगे चल कर रेस्क-जैसे बदनाम कारागार भी बन्द कर दिये गये, जिससे कारागारों में कैदियों की भीड़ और बढ़ गयी एवं पहले से भी अधिक शीघ्र उन्हें रिहा कर देना आवश्यक हो गया। डोनाथ को अब वैसे कैदियों को भी मुक्त करना पड़ा था, जिन्हें पहले वह अनन्त-असह्य यातनाओं के लिए रोक रखता।

सन् १९५६ की ग्रीष्म-ऋतु में जो सार्वजनिक आन्दोलन शुरू हुआ था, उसकी जानकारी टिबर को न मिल सकी; क्योंकि ए.वी.ओ. के बड़े खुफिये उस बारे में उसे कुछ बताना आवश्यक नहीं समझते थे। दूसरी ओर, प्रमुख राजनीतिक कैदी, जो कुछ रहस्योद्घाटन कर सकते थे, डोनाथ को कुछ समझते ही न थे। वह सिर्फ उतना ही जानता था, जितना उससे कहा गया था—"कुछ हो रहा है। पता लगाओ कि क्या हो रहा है?" लेकिन उसे कुछ पता नहीं लग सका; क्योंकि जो छात्र, छोटे आन्दोलनकारी और कतिपय मूर्ख लोग उसके पास लाये जाते थे, वे स्वयं विशेष कुछ नहीं जानते थे, जो उसे बतलाते।

इसलिए २३ अक्तूबर की घटनाओं से कुछ हंगेरियनों के साथ-साथ इस किसान-पुत्र टिबर डोनाथ को भी महान् आश्चर्य हुआ। "वे लोग रेडियो-स्टेशन पर गोली-वर्षा कर रहे हैं!"—एक निम्न कर्मचारी ने उसे बतलाया और टिबर ने हक्का-बक्का हो कर देखा कि उस संघर्ष में भाग लेने के लिए उसकी इमारत से एक ट्रक भर सैनिक भेजे जा रहे हैं।

फिर जब दूसरे लोग, स्टालिन-स्क्वायर की ओर, जहां एक बड़ा उपद्रव हो गया था, और 'जबाद नेप'-कार्यालय की ओर, जहाँ लोग उस समाचारपत्र को समूल नष्ट कर रहे थे, रवाना हुए, तब टिबर ने अनुभव किया कि सारा हंगेरी ही विध्वंस-पथ पर है। उसकी यह भावना २४ अक्तूबर को और अधिक दृढ़ हो गयी, जब गत रात्रि के संघर्ष के बारे में निराशाजनक खबरें उसके जैसे लोगों में प्रचारित हुईं।

ए.वी.ओ. के एक आदमी ने, जो रेडियो स्टेशन पर था, खबर दी—"रेडियो-स्टेशन में उन लोगों ने ए.वी.ओ. के पहरेदारों की हत्या की—हाँ, हत्या की!"

"किस लिए?"—टिबर ने प्रश्न किया।

तभी एक अफसर ने, जिसका चेहरा भयभीत-सा दीख रहा था, आकर घोषणा की—"सारे नगर में विद्रोह हो गया है। इसे अवश्य ही दबा देना है। यदि किसी आदमी पर जरा भी सन्देह हो जाये, तो उसे गोली मार दो।"

उसके बाद कामों का बँटवारा हुआ और एक दूसरे अफसर ने कहा—"हम पार्लियामेण्ट स्क्वायर को घेरने जा रहे हैं। सम्भव है कि लोगों की भीड़ एकत्र होने पर दुर्बल राजनीतिज्ञ लोग कुछ वादे कर दें। हमारे वादे मशीन-गन से होंगे। तुम लोगों ने सुना है, रेडियो-स्टेशन में हमारे आदमियों के साथ क्या बीती?"

भयानक समाचारों को सुन-सुन कर टिबर डोनाथ का भय बढ़ता जा रहा था। वह बार-बार अपने से प्रश्न करता—"भला सरकार कुछ क्यों नहीं कर रही है?" नगर में होनेवाला कोलाहल उसे और भी भयभीत कर रहा था। वह उन्मत्त-सा अपने साथियों के चेहरों को आश्चर्यपूर्वक देखता था कि उनमें से किसने दगाबाजी की, जिसके कारण यह दुःखद घड़ी आ पहुँची थी। लेकिन उनके चेहरों में भी, जिनसे दृढ़ता हवा हो गयी थी, उसने अपनी ही तरह भय के भाव देखे। रात खास कर और बुरी लग रही थी; अतः उसने सभी बत्तियों को जलाने का हुक्म दिया। लेकिन जब उसने अपने कार्यालय के नीचे वाले तहखाने में शोर-गुल सुना, तो एक क्षण भयभीत होकर उसने सोचा कि सम्भवतः कैदी भी उन लोगों के (आन्दोलनकारियों के) साथ हो गये; अतः उसने कर्कश स्वर में आदेश दिया—"नीचे जाकर देखो कि क्या हो रहा है!"

जब सीधी कार्रवाई का मौका सामने आया, तो उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। २५ तारीख के सबेरे पार्लियामेण्ट स्क्वायर के सामने कृषि-मंत्रणालय की इमारत पर वह भी एक मशीन-गन जमाकर खड़ा हुआ। जब झंडे लिये हुए लोगों का समूह उसकी 'गन' के निशाने के सामने आने लगा, तो वह अपने साथियों से बोला—"हमें अब गोली चलानी चाहिए।" लेकिन उन लोगों ने जवाब दिया—"चलायेंगे; पर बाद में, अभी नहीं।" इस प्रतीक्षा में उसकी व्यग्रता बढ़ने लगी। उसकी बायीं ओर खड़े एक व्यक्ति ने उसे अपनी केहुनी से धक्का मारा, तो वह जरा स्थिर हुआ।

"उन टैंकों को देखो।"—वह व्यक्ति धीमे से बोला।

टिबर डोनाथ ने नीचे खड़े भीमकाय रूसी टैंकों की कतार और भीड़ की ओर मुँह किये उनकी बड़ी-बड़ी 'गनों' को देखा, तो आश्वस्त-सा अनुभव करते हुए उसने कहा—"हाँ, वे लोग व्यवस्था कायम कर लेंगे।"

ए.वी.ओ. के दूसरे आदमी ने तुरन्त ही सहमति में अपना सिर हिला दिया। इसी समय टिबर और उसके साथियों ने संतोष अनुभव करते हुए देखा कि सर्वोच्च-न्यायालय की छत पर तैनात ए.वी.ओ. वालों ने भीड़ पर गोली-वर्षा आरम्भ कर दी थी। अब टिबर को यथार्थता का भान हुआ।

"अब हम भी गोली चलायें!" उसने अपनी 'गन' का 'सेफ्टी कैच' खोलते हुए कहा।

लेकिन दूसरा कोई आदेश देने के पहले ही डोनाथ ने मूक विस्मय के साथ देखा कि एक रूसी टैंक ने अपनी दीर्घकाय गनों का मुँह, जानबूझ कर, सामने

की छत पर तैनात ए.वी.ओ. वालों की ओर मोड़ दिया। "वे क्या कर रहे हैं?" आश्चर्य से वह बोल पड़ा। उसकी बायीं ओर खड़ा व्यक्ति हाँफने लगा और तभी टैंक से गोली चलने की कर्कश ध्वनि होने लगी। टिबर देख रहा था कि सर्वोच्च-न्यायालय की छत पर तैनात ए.वी.ओ. के आदमी गोलियों के प्रहार से किस तरह पीछे की ओर गिर रहे थे। यह देखकर उसमें भी गोली चलाने की शक्ति नहीं रह गयी थी।

जब उसने भीत आँखों से रूसी 'गनों' का रुख मुड़कर अपनी ओर होते देखा, तो वह चिल्ला पड़ा—"वे तो हम लोगों पर ही गोली-वर्षा करने जा रहे हैं!"

उसकी बायीं ओर खड़े ए.वी.ओ. के आदमी ने अब बातों में समय गँवाना उचित नहीं समझा और 'गन' छोड़ कर सुरक्षित स्थान की ओर भाग गया। लेकिन टिबर जहाँ-का-तहाँ स्थिर रहा और गोली चलाने लगा। रूसी 'गनों' के सम्भावित संकट को भूलकर वह उन्मत्त की भाँति अपने सामने नीचे खड़े लोगों की भीड़ पर लगातार गोली बरसाने लगा। उस भीड़ में खड़े प्रत्येक व्यक्ति से उसे बुरी तरह घृणा थी। वह सोचता था कि इन्हीं लोगों ने तो इस मूर्खतापूर्ण और उपद्रवी वातावरण को पैदा किया है।

एक भयानक विस्फोट ने उसके पास की दीवारों को ध्वस्त कर दिया; फिर भी उस आतंकपूर्ण दशा में, जो उसे अशक्त बनाते हुए भी उससे काम करा रही थी, वह अपने स्थान से हटकर बायीं ओर की 'गन' पर आ गया, और भागनेवाली भीड़ पर उसने और भी गोली-वर्षा की, लेकिन तभी रूसी गोलों के एक दूसरे विस्फोट ने उसके रक्षा-स्थान को नष्ट कर दिया।

जब 'गन' खाली हो गयी और उसके पास इमारत के कुछ अंश टूट कर गिरे, तब वह चुपचाप उठ कर धीरे-धीरे छत के किनारे आया। अंतिम बार उसने नीचे खड़े रूसियों और स्क्वायर में पटे मृत हंगेरियनों पर एक जड़ता और विस्मय से भरी दृष्टि डाली और तब अपने स्थान से हट गया। जाते-जाते वह स्वतः बुदबुदाया—"यह क्या हो रहा है?"

मंत्रणालय-भवन की सीढ़ियाँ उतरते समय टिबर ने चालाकी दिखलायी और उसने ए.वी.ओ. के सभी चिह्नों को फाड़ कर फेंक दिया। वह मुख्य द्वार से भी बाहर नहीं निकला, बल्कि एक गली में घुस गया और फिर कई गलियाँ पार करने के बाद पीछे की ओर स्थित एक सड़क पर चलने लगा। उसी सड़क पर चल कर, जो डेन्यूब से काफी दूरी पर थी, वह कोजतारसासग–

स्क्वायर पर पहुँचा, जो बहुत अधिक बदनाम था। रिपब्लिक-स्क्वायर में हंगेरी की कम्यूनिस्ट-पार्टी का सदर मुकाम था और वहीं ए.वी.ओ. का एक अत्यन्त निष्ठुर भूमिगत कारागार भी था।

टिबर डोनाथ को स्मरण हो आया कि जब हंगेरी में शान्ति स्थापित थी, तब एक बार वह उस सदर मुकाम में गया था। उस समय सभी चीजें ठीक-ठीक थीं और बुद्धिमान लोग राष्ट्र का निर्देशन कर रहे थे। अब वहाँ अशान्ति थी।

भूरे रंग का सूट पहने एक व्यक्ति, बिना किसी को लक्ष्य किये, जोर-जोर से बोल रहा था—"रैकोजी और जेरो का नाश हो। दोनों एक विमान में सवार होकर रूस भाग गये।"

एक व्यक्ति ने, जो आखिरी बात नहीं सुन सका था, प्रश्न किया—"कहाँ है रैकोजी?"

तभी एक कम्यूनिस्ट अधिकारी ने टिबर से पूछा—"तुम यहाँ क्या कर रहे हो?"

"रूसियों ने हम पर गोली चलायी।"—डोनाथ ने कहा।

तुरन्त ही वह अधिकारी बोला—"हर कोई हम पर गोली चला रहा है। हमारी अपनी पुलिस, हमारे अपने सैनिक, हमारी अपनी जनता—सब।"

"लेकिन बात क्या है?"—डोनाथ ने धीमे से प्रश्न किया।

"तुम मूर्ख ए.वी.ओ. वालो, सब-के-सब पागल हो।"—वह कम्यूनिस्ट बोल उठा—"जाओ, नीचे कारागार में जाओ, जहाँ तुम्हारा स्थान है!"

डोनाथ यह देख कर चकित था कि किस तरह घबराये हुए ऐसे लोग खिड़कियों पर 'गन' बैठा रहे थे, जिन्हें 'गनों' के बारे में बहुत ही कम जानकारी थी। साथ ही, आदेश-पर-आदेश दिये जा रहे थे, जबकि उनका पालन कोई नहीं कर रहा था। इसी उधेड़-बुन की अवस्था में वह नीचे कारागार में चला गया, जहाँ उसे निरन्तर बढ़ते हुए भय के बीच छः दिनों तक रहना पड़ा।

वहाँ ए.वी.ओ. के लगभग दो सौ आदमी और थे, जिनकी संख्या घटती-बढ़ती रहती थी—साथ ही, वहाँ बहुत-से कैदी भी थे। समय-समय पर ए.वी.ओ. का एक आदमी भयभीत चेहरा लिये वहाँ आता और निराशा-जनक समाचार सुनाता। "उन लोगों ने हमारे एक आदमी को पेटोफी की प्रतिमा से लटका कर फांसी दे दी"—एक बार उसने कहा।

तभी एक दूसरे व्यक्ति ने उसका खण्डन कर दिया—"परन्तु अभी कुछ मिनट पहले मैं भी तो वहीं था।"

कभी कोई बहुत ही दृढ़ ए.वी.ओ. का आदमी किसी स्वातंत्र्य-सैनिक को पकड़ कर वहाँ ले आता और उसे पीटने लगता। तब कोई बड़ी उम्र का व्यक्ति अपनी नाज़ुक स्थिति को ध्यान रखते हुए गुर्राता—"अरे, इसे यहीं छोड़ कर फिर बाहर सड़क पर जाओ।"

उस कारागार में नागरिक जीवन व्यतीत करनेवाले कैदियों में कुछ स्त्रियाँ और बच्चे भी थे। एक दिन टिबर ने लक्ष्य दिया कि उसके कुछ चतुर साथी स्त्रियों के सम्पर्क में अधिक रहते थे।

"तुम लोग ऐसा क्यों करते हो?"—टिबर ने उनसे पूछा।

इस पर उन प्रौढ़ ए.वी.ओ. के आदमियों में से एक ने उत्तर दिया—"जब कभी ऐसा समय आयेगा कि हमें यह कारागार छोड़ कर भागना पड़ेगा, तब इन्हीं में से कोई स्त्री मेरे आगे-आगे चलेगी।"

"क्या तुम समझते हो कि उस समय गोली-बारी होगी?"—टिबर ने प्रश्न किया।

"ज़रा इधर देखो।"—उत्तर मिला।

और, एक खिड़की से, जिससे एक सन्दूक पर चढ़कर देखने से बाहर की चीजें दिखायी पड़ती थीं, टिबर ने भयत्रस्त हो कर देखा कि बुडापेस्ट के तमाम अधम लोग—ठीक उसी तरह के, जिन्हें वह रबर के कोड़ों से पीटा करता था—रिपब्लिक स्क्वायर पर जमा थे। "टैंक उन्हें क्यों नहीं मार भगाते?"—टिबर को आश्चर्य हुआ, पर तभी रूसी टैंकों-द्वारा अपनाये गये रुख का उसे स्मरण हो आया और वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि संसार पागल ही हो गया है, तो उसे अपनी रक्षा करना चाहिए।

"क्या तुम समझते हो कि वे लोग तुम्हें इस तरह चले जाने देंगे?"—उसने ए.वी ओ. के उस आदमी से प्रश्न किया, जिसने रक्षा के लिए किसी कैदी स्त्री को ढाल बनाने की योजना बनायी थी।

"अवश्य!"—उस अधिक वयस्क व्यक्ति ने उत्तर दिया—"यह कोई नयी बात नहीं है!"

लेकिन टिबर को एक और अच्छी योजना सूझी। बाहर स्क्वायर में एकत्र उन क्रूर दृष्टिवाले मूर्खों पर पुनः दृष्टिपात कर के उसने अनुमान लगाया कि सम्भवतः वे ए.वी.ओ. के किसी आदमी को देखते ही गोली मार देंगे। अतएव वह कुछ दूसरे कैदियों के पास पहुँचा, जो उसे देखते ही, पिटाई की आशंका से, ठिठक गये। टिबर उनमें से अपने ही कद के एक कैदी के पास पहुँच कर बोला—"मुझे तुम्हारे वस्त्रों की ज़रूरत है!"

उसे कपड़ा बदले अभी एक मिनट भी नहीं हुआ था कि सामने की एक खिड़की से एक नली तहखाने में डाल दी गयी और ए.वी.ओ. वालों के उस शरण-स्थल में पानी भरने लगा। दूसरी खिड़की से भी एक नली डाली गयी। अब यह स्पष्ट था कि यदि उसी तरह कुछ देर तक पानी भरता रहा, तो सबको तहखाना खाली करना पड़ेगा, चाहे उनकी प्रतीक्षा में बाहर खड़े लोग उन्हें गोली मार दें या छोड़ दें।

यह देख, टिबर डोनाथ पिछवाड़े के एक दरवाजे से निकल गया और गलियों-पर-गलियाँ पार करने लगा। लेकिन स्क्वायर में क्या हो रहा है, यह जानने की तीव्र उत्कण्ठा के कारण वह तेजी से कदम बढ़ाता हुआ उसी ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँच कर अपने नये नागरिक वस्त्रों में भीड़ के एक किनारे वह खड़ा हो गया। वहाँ भीड़ के साथ वह भी क्रांति की एक महान् घटना को देखने का इन्तजार करने लगा।

रिपब्लिक स्क्वायर की उन्हीं घटनाओं की ओर, मैंने इस अध्याय के आरम्भिक परिच्छेदों में संकेत किया है। वे क्रान्ति के लिए कलंक-स्वरूप थीं और चूँकि उनके सच्चे चित्र प्राप्त थे, अतः सोवियत रूस को उनका उपयोग एक श्वेत पत्र में करने का अवसर मिल गया, जिसमें यह साबित करने का प्रयास किया गया था कि पूँजीवादी आततायियों ने द्वेषवश एक शिष्ट सरकार के शिष्ट अधिकारियों की हत्या की।

कम्यूनिस्ट सदर मुकाम के तहखानों में, जिसके ऊपरी भाग पर स्वातंत्र्य-सैनिकों का अधिकार हो गया था, पानी बढ़ जाने पर वहाँ घिरे ए.वी.ओ. के आदमियों के पास इसके सिवा और कोई चारा नहीं रह गया था कि या तो वे पानी में डूब कर जान दे दें अथवा आत्म-समर्पण कर दें। उन्होंने आत्म-समर्पण ही श्रेयस्कर समझा और उस मनहूस इमारत के सामने वाले द्वारों से लगभग एक दर्जन ए.वी.ओ. के कट्टर आदमी बाहर निकले। वे लोग रेस्क में पहरेदार रह चुके थे, जहाँ उन्होंने अनेक व्यक्तियों को 'सफेद घोड़ी' बनाया था और ठोकरें मार-मार कर उनके प्राण ले लिये थे। वे सदर मुकाम के तहखानों के पहरेदार रह चुके थे, जहाँ उन्होंने लोगों को रबर के कोड़ों से निर्दयतापूर्वक पीटा था। वे सीमा-रक्षक रह चुके थे, जहाँ मुक्ति के आकांक्षी लोगों पर गोली-वर्षा करने तथा कुत्तों की सहायता से उन्हें पकड़ लाने का काम उन्होंने एक अरसे तक किया था। वे क्रूर, दानव, दुष्ट और हत्यारे थे।

जब वे रिपब्लिक स्क्वायर में पहुँचे, तब वहाँ एक विचित्र भयावनी

निस्तब्धता छा गयी। उनके राज्य में सताये गये लोगों ने उन पर एक दृष्टि डाली। उन्हें छूने तक के लिए कोई आगे न बढ़ा; बल्कि भीड़ अपने स्वभाववश पीछे हट गयी, मानो उन अमानवीय कारागार-अधिकारियों की शक्ति अब भी लोगों को भयभीत कर रही थी।

सम्भव है कि रिपब्लिक स्क्वायर का वह दुःखद हत्या-कांड न होता— हालाँकि यह मेरा निजी अनुमान है—यदि एक युवा स्वातंत्र्य-सैनिक ने ए.वी.ओ. वालों के जुलूस के पीछे के उन कैदियों का लक्ष्य नहीं किया होता, जिन्हें महीनों, बल्कि वर्षों, तहखानों में रख छोड़ा गया था।

"ए.वी.ओ. वाले हमारे साथ क्या व्यवहार करते हैं, जरा इस पर भी गौर कीजिये।"—कैदियों की ओर संकेत कर के वह युवक चीखा।

कारागार से वे स्त्रियाँ और बच्चे आ रहे थे, जो भूख के कारण मरणासन्न थे; वे पुरुष आ रहे थे, जो चल सकने में भी असमर्थ थे, जिनके चेहरों पर नीली झुर्रियाँ पड़ गयी थीं और जिनका मानसिक सन्तुलन बिगड़ गया था। लोगों ने एक भयंकर निःश्वास छोड़ा, जो वस्तुतः उस पीढ़ी की करुण भावाभिव्यक्ति था।

तभी एक पुराना ए.वी.ओ का आदमी अपनी रक्षा के लिए एक स्त्री को अपने आगे किये हुए निकला। यह देखकर लोगों का क्रोध और भी उबल पड़ा।

ए.वी.ओ. के कुछ आदमियों को पीट-पीट कर मार डाला गया और बाकी को गोली मार दी गयी। उनमें से कुछ ने भागने का भी प्रयत्न किया, पर वे पकड़ कर मार डाले गये। कुछ मृतकों को, पैर बाँध कर, उलटा लटका दिया गया। उन अमानवीय दानवों के द्वारा वह क्रुद्ध समाज बहुत अधिक सताया गया था, इसीलिए प्रतिशोध भी बड़ा विकट था।

कई दिनों तक, किसी ने ए.वी.ओ. वालों की लाशों को नहीं दफनाया। केवल स्वास्थ्य-रक्षा-दल उन पर बाल्टी-बाल्टी चूना डाल देता था, लेकिन रिपब्लिक स्क्वायर में पड़े दो मोटे शवों को वह भी नसीब न हुआ और वे एक सप्ताह तक उसी तरह पड़े रहे। लोग उन्हें देखने आते थे और मजदूर उनके पास खड़े होकर इस बात पर पश्चात्ताप करते हुए बार-बार रोते कि धोखाधड़ी और आतंक से भरे-पूरे दस वर्षों तक उन्हीं ए.वी.ओ. के आदमियों का पक्ष लेकर उन्होंने कठोर श्रम किया था।

उन दोनों शवों को, जो किसी ने नहीं छुआ, उसका कारण था। जनता के देखने के लिए, उनके सीनों पर कुछ कागज नत्थी कर दिये गये थे, जो उनकी

मृत्यु के समय उनके पास से मिले थे। एक शव एक 'मेजर' का था, जिसके कागजों से पता चलता था कि कम्यूनिस्ट-पार्टी की सराहनीय सेवा करने के कारण उसका मासिक वेतन १८ हजार फारिन्ट कर दिया गया था।

उस कागज पर नजर पड़ने पर सीपेल का एक आदमी बोल उठा—"और मुझे केवल ८ सौ मिलते हैं!"

दूसरा व्यक्ति कोई अफसर नहीं था; फिर भी उसका वेतन-पत्र प्रकट करता था कि उसे प्रतिमास दस हजार फारिन्ट मिलने थे।

ए.वी.ओ. के बारे में कही जानेवाली और किसी बात का उतना प्रभाव नहीं हुआ, जितना केवल उन दो कागजों का। मजदूर यह देख कर क्रुद्ध थे कि उन लोगों को, जो देश में आतक पैदा करने के अलावा और कोई काम नहीं करते थे, नियमित रूप से, उन लोगों की अपेक्षा १२-गुना वेतन मिलता है, जो बाइसिकिल, या रोटी, या जूते-जैसी आवश्यक चीजें बनाते हैं।

मैं रिपब्लिक स्क्वायर के उस हत्याकांड को क्षम्य तो नहीं मान सकता, पर उसका कारण अवश्य समझ सकता हूँ। बुडापेस्ट की क्रान्ति अधिक स्वच्छ रहती, यदि रिपब्लिक स्क्वायर का वह कांड न होता; लेकिन ए.वी.ओ. के अत्याचारों द्वारा बहुत अधिक सताये हुए स्त्री-पुरुषों से ऐसी आशा करना भी ज्यादती है है कि वे बदला नहीं लेते। अमेरिका के अत्यधिक योग्य और भद्र पत्रकारों में से एक ने, जो मध्य-यूरोप में हमारी सैनिक टुकड़ी के संचालक हैं, ए.वी.ओ. के आतंक को मेरी अपेक्षा बहुत कम जानने-समझने पर भी लिखा था—"मैं उस समय बुडापेस्ट में ही था। यद्यपि मेरा यह विश्वास है कि प्रतिशोध-मूलक हत्या से कुछ अधिक काम नहीं सधता, तो भी मैं निश्चित रूप से यह कह सकता हूँ कि यदि हंगरियनों ने कुल, तीसों हजार, ए.वी.ओ. वालों का खून कर दिया होता, तो मानव-जाति का अधिक कल्याण होता—विश्व का वायु-मंडल कुछ अधिक स्वच्छ हो जाता!"

लेकिन प्रतिशोध से परे, यह समझने की आवश्यकता शेष रह जाती है कि अपनी प्रणाली को स्थिर बनाने के लिए कम्यूनिज्म को ए.वी.ओ.—जैसे किसी संगठन की आवश्यकता क्यों पड़ जाती है? कम्यूनिस्ट देशों में मैंने जो-कुछ देखा है, उसके आधार पर यह कह सकता हूं कि हर कम्यूनिस्ट देश में ए.वी.ओ. की तरह संगठन मौजूद है। पाठक इस बात को एकदम निश्चित रूप से मान लें कि रूस, बल्गेरिया, लताविया, उत्तरी कोरिया, चीन एवं जहाँ कहीं भी एक वर्ष से अधिक समय से कम्यूनिस्ट-शासन है, इस तरह का कोई-न कोई संगठन मौजूद

है। मेरे इस कथन की पुष्टि उन देशों से भाग कर आने वाले लोगों की एक-सी गवाहियाँ करती हैं।

कम्यूनिज्म को समाज की ऐसी ओछी वृत्तियों पर निर्भर क्यों होना पड़ता है? इसके दो ही जवाब हो सकते हैं। एक तो यह कि कम्यूनिस्ट दार्शनिक स्वभावतः ही इतने दुष्ट होते हैं, जो साधारण कल्पना से परे है— लेकिन मैं इसे नहीं मानता—और दूसरा यह, कि चाहे कितने ही सम्पन्न वातावरण में कम्यूनिज्म अपना अधिनायकवादी कार्यक्रम आरम्भ क्यों न करे, देर-सवेर वह, ऐसी आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से घिर जाता है कि नागरिकों को नियंत्रण में रखने के लिए उसे किसी मजबूत शक्ति की आवश्यकता पड़ जाती है। यह दूसरा सिद्धान्त ही मुझे मान्य है।

ऐसा इस तरह होता है। मान लीजिये कि कम्यूनिज्म सीपेल के मजदूरों को अपने पक्ष में करना चाहता है; तब उसे उनके सामने ऐसे बड़े-बड़े वादे करने ही पड़ेंगे, जिनसे लोगों की महत्त्वाकांक्षा और लाभ-वृत्ति जाग पड़े। वे वादे इतने सीधे-सादे शब्दों और प्रभावकारी रूपों में प्रस्तुत किये जाते हैं कि वे शीघ्र ही पूरे हो सकने-योग्य मालूम होने लगते हैं। मेरी समझ से हमने हंगेरी के मामले में यह स्पष्ट देख लिया कि कम्यूनिज्म की विजय के बाद कितनी उत्सुकता के साथ उन वादों के पूरे होने की प्रतीक्षा की जा रही थी।

लेकिन वे वादे इतने बड़े और अवास्तविक थे कि कभी भी उनकी पूर्ति सम्भव न थी। सम्भवतः वादे करनेवाले वे संगठनकर्ता कम्यूनिस्ट भी उसी समय यह बात जानते थे कि उनकी पूर्ति की जरा भी आशा नहीं है।

जरा उन वादों की एक झाँकी देखिये, जो किसी समय कम्यूनिस्ट आंदोलन-कारियों ने इस पुस्तक के हंगेरियन पात्रों के समक्ष किये थे। वे थे—बहुत अधिक मात्रा में काम में आनेवाली सामग्रियों की व्यवस्था, मजदूरी में वृद्धि, सामाजिक कल्याण-कार्यों में वृद्धि, काम के समय में कमी, हर एक के लिए अच्छी शिक्षा, अधिक सामाजिक स्वतंत्रता और ऐसी सरकार, जो मजदूर-वर्ग के प्रति प्रत्यक्ष जिम्मेदार हो।

कम्यूनिज्म के अन्तर्गत वे वादे कभी भी पूरे हो सकनेवाले नहीं थे; क्योंकि यद्यपि कम्यूनिस्ट योजनाओं के लिए आवश्यक, नवीन सामग्रियों के उत्पादन के लिए, हंगेरी में प्राकृतिक सम्पदा भरी थी, तथापि कम्यूनिस्टों के पास या तो संगठन क्षमता नहीं थी अथवा कच्चे माल और श्रम के द्वारा सामग्रियों के उत्पादन करने के उनके इरादे सच्चे नहीं थे। किसी भी प्रणाली को—चाहे वह

राज्य-समाजवाद होता या परिमार्जित पूँजीवाद—कम्यूनिस्टों द्वारा किये गये वादों के अनुसार स्थिति लाने के लिए कम-से-कम दस वर्ष तक बुद्धिमानी और अध्यवसाय के साथ काम करना पड़ता। अतः कम्यूनिज्म में—विवेकहीन उत्पादन, भारी पक्षपात और व्यवस्था की अयोग्यता के कारण—सफलता की जरा भी सम्भावना नहीं थी। फलतः दो वर्षों के अन्दर ही हंगरी की जनता ने समझ लिया कि जिन वादों ने उन्हें बहकाया था, वे कभी वास्तविक रूप ग्रहण करनेवाले नहीं हैं, एवं स्वतंत्रता की बजाय उन्होंने केवल आतंक ही मोल लिया है।

जब इतने बड़े पैमाने पर एक जागृति देश-भर में फैलने लगती है, तब कम्यूनिस्ट नेताओं के लिए, जिन्हें आरम्भ से ही अपने अनेक वादों की अव्यावहारिकता का ज्ञान रहता है, यह आवश्यक हो जाता है कि वे, आरम्भ होनेवाले उन विरोधों को शान्त करने के लिए, जरूरी कार्रवाई करें। आरम्भ में यह कार्रवाई साधारण रहती है—पुलिस द्वारा गिरफ्तारी और उन लोगों को कई वर्षों की सजा, जो वादों के खोखलेपन को समझने लगते हैं।

जब यह अपेक्षाकृत साधारण काम पूरा हो जाता है, तब पुलिस उन मजदूरों की, जो यह पूछते हैं कि उनकी मजदूरी कब बढ़ेगी, उन गृहस्थ महिलाओं की, जो अधिक रोटियाँ और अपने बच्चों के लिए सस्ते जूते माँगती हैं और उन पादरियों की, जो गिरफ्तारियों का विरोध आरम्भ कर देते हैं, खबर लेना शुरू कर देती है। थोड़े दिनों में साधारण पुलिस ऐसी बुद्धिहीन गिरफ्तारियाँ करने में आनाकानी करने लगती है; अतएव एक विशेष पुलिस का संघटन आवश्यक हो जाता है।

मुझे इस बात पर सहसा विश्वास नहीं होता—और इसी कारण कुछ हंगेरियन मुझे बहुत भोला भी कहते हैं—कि जब प्रथम बार किसी कम्यूनिस्ट देश में ए.वी.ओ. की स्थापना होती है, तब कम्यूनिस्ट नेताओं का उद्देश्य उसे राष्ट्रव्यापी यातना-प्रदायक संघटन का रूप देना होता है। इससे अलग मेरी धारणा यह है कि भयभीत अधिकारी-वर्ग, लोगों को नियंत्रण में रखने और अपनी पद की रक्षा के लिए, एक साधारण शक्ति के रूप में इसका निर्माण करता है। पर बाद में, डा० फ्रैंकेस्टीन की तरह, वे यह अनुभव करते हैं कि उन्होंने काबू में न रहने वाले एक दानव की सृष्टि कर दी है, जो अन्त में उन्हें भी अपने दुष्ट पंजों में जकड़ लेता है।

लेकिन मेरे हंगरियन मित्रों का कहना है—" बात ऐसी नहीं है। जिस समय हमारे देश पर कम्यूनिजम का अधिकार हुआ था, उस समय तक सभी प्रमुख

नेताओं को रूस ले जाकर शिक्षित किया जा चुका था। रैकोजी और जेरो सोवियत नागरिक थे। मास्को में उन्हें यह बात अच्छी तरह सिखलायी गयी थी कि कम्यूनिज्म को निश्चित रूप से आतंक पर भरोसा करना चाहिए और जब वे बागडोर सम्भालने बुडापेस्ट पहुँचे थे, तभी उनकी जेब में ए.वी.ओ. की विधिवत् योजनाएँ थीं। जब उन्होंने इसका निर्माण किया, तभी उन्हें यह पता था कि इसका रूप क्या होनेवाला है; क्योंकि उन्हें यह बात अच्छी तरह मालूम थी कि इसके बिना कम्यूनिज्म जिन्दा नहीं रह सकता था। हमारे इस कथन का सबूत दोनों खौफनाक व्यक्तियों, रैकोजी और जेरो, का व्यक्तित्व है। इस कथन का एक प्रमाण यह भी है कि ए.वी.ओ. के प्रारम्भिक अधिकारियों को रूस में प्रशिक्षित किया गया था। जैसा कि आप कहते हैं, हमारा आतंक क्रमशः यहाँ विकसित नहीं हुआ था, बल्कि तत्काल काम करने की क्षमता रखनेवाले पूर्ण रूप में उपस्थित किया गया था।"

मेरे मित्र आगे कहते हैं—"इतना ही नहीं, यदि यूरोप का कोई कम्यूनिस्ट नेता अपने देश को कम्यूनिज्म के अन्तर्गत ले जाने में सफल हो जाये, तो उसे अपने विशेष ए.वी.ओ. पर ही भरोसा करना पड़ेगा और सहसा ही यह कार्य नहीं होगा—इसका सावधानीपूर्वक संघटन किया जायगा और इसके प्रारम्भिक अधिकारियों को निश्चित रूप से मास्को के आतंकपूर्ण वातावरण में शिक्षा दी जायेगी।"

मैं नहीं कह सकता कि ठीक कौन है—मेरा वह विश्वास कि कम्यूनिस्ट-समाज की निश्चित बिगड़ती हुई स्थिति में ए. वी. ओ. धीरे-धीरे विकास पाता है; अथवा वे हंगेरियन, जो कहते हैं कि लेनिन ने ही, किसी कम्यूनिस्ट-शासन के आरम्भिक दिनों में आनेवाले विरोधों को कुचल डालने और आतंक की शरण लेने की नीति का निर्देश दिया था? जो भी ठीक हो, दोनों ही अन्त में भयावने और निश्चित आतंक के रूप में प्रकट होते हैं।

इस एक बात का मुझे पूरा विश्वास है कि यदि कल जापान कम्यूनिज्म के अन्तर्गत चला जाये, तो एक वर्ष के अन्दर ही उसके पास विश्व की सर्वाधिक भयानक कम्यूनिस्ट गुप्त पुलिस होगी। यदि हिन्देशिया कम्यूनिस्ट हो जाये, तो उसे भी उसी अदम्य क्रोध का अनुभव करना पड़ेगा, जिसका अनुभव बुडापेस्ट कर रहा था। और, भारत के जिन कम्यूनिस्टों को जानने का अवसर मुझे मिला है, यदि वे उस विशाल देश को कम्यूनिज्म के अन्तर्गत ले जाने में सफल हो जायें, तो वहाँ के निवासी पायेंगे कि उनके समक्ष किये गये सनकी वादे तो

पूरे हुए नहीं; किन्तु एक गुप्त पुलिस, अत्याचारों के द्वारा अमृतसर से लेकर दिल्ली तक इतना आतंक फैलाने लगी, जितना तैमूरलंग के जमाने से अब तक नहीं फैला था। मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि छले हुए लोगों के विरोध को कुचल देने के लिए कम्यूनिज्म को ए.वी.ओ. रखना ही पड़ता है।

अब तक जिन परिस्थितियों का वर्णन किया जा चुका है, उनसे हम यह आसानी से समझ सकते हैं कि ए.वी.ओ. की उपस्थिति किस प्रकार समाज के जीवन को विषैला बना देती है। यह व्यवस्था अपराध की दृष्टि से परस्पर उलझी हुई है। एक कारखाने में खुफियों का एक गिरोह मजदूरों की गति-विधियों की सूचना देता है, पर इस गिरोह में भी कुछ खास खुफिये होते हैं, जो साधारण खुफियों के सम्बन्ध में रिपोर्ट करते हैं। स्वयं ए. वी. ओ. पर भी खुफियागीरी का जाल बिछा होता है—यहाँ तक कि कम्यूनिस्ट-नियंत्रण-दलों के उच्चवर्ग लोगों पर भी खुफिये तैनात होते हैं। हंगरी के कारागारों की भी यही अवस्था थी—कोई नहीं कह सकता था कि पास की कोठरी का आदमी एक खुफिया है या कैदी। ए.वी.ओ. का कोई भी पद कम महत्त्वपूर्ण नहीं था, पर उस पर भी दूसरे ए.वी.ओ. के आदमी खुफियागीरी करते थे।

हंगेरियनों से, उनके कम्यूनिज्म-कालीन जीवन के बारे में प्रश्न करने पर, जो शोचनीय विवरण प्राप्त होते हैं, उनमें से एक यह है कि उन्हें बराबर इस बात का ध्यान रखना पड़ता था कि उनका पड़ोसी, या उनके विद्यालय का शिक्षक या उनका माँस-विक्रेता, कहीं ए.वी.ओ. का खुफिया तो नहीं है। मुझे ऐसे पुरुषों और स्त्रियों से भी मिलने का अवसर प्राप्त हुआ, जो अपने मित्रों द्वारा छले जाने के कारण कई-कई हफ्तों तक क्रूर ए.वी.ओ. वालों द्वारा सताये गये थे। उनकी कहानियाँ सुन कर मुझे बड़ा सदमा पहुँचा। वास्तव में, समाज की साधारण अवस्था में जो व्यतिक्रम उपस्थित था, वह सम्भवतः हंगेरियन जीवन में ए.वी.ओ. के विलक्षण हस्तक्षेप के कारण ही था। उनका लक्ष्य, हर जीवित हंगेरियन को तथा कुछ मरे हुओं को भी, अभियुक्त साबित करना था। जब हर कोई इस परस्पर-दोषारोपण का शिकार हो जाता, तब सामान्य सामाजिक सम्बन्ध खुद ही बिगड़ जाते और ए.वी.ओ. को मनमानी करने का मौका मिल जाता। अतः इस बात को ध्यान में रख कर ही हमें उन पुरुषों और स्त्रियों के प्रश्न पर विचार करना चाहिए, जो नवम्बर महीने के उस दिन रिपब्लिक स्क्वायर में एकत्र हुए थे और अन्त में उस दुष्टता का खुल्लम-खुल्ला मुकाबला कर रहे थे, जिसने सम्पूर्ण देश को भ्रष्ट बना

दिया था। यदि कुछ नागरिकों ने अपने आततायियों को चकनाचूर कर देने का प्रयास किया, तो इसमें आश्चर्य–जैसी कोई बात नहीं है।

हंगेरी में ए. वी. ओ. के एकछत्र शासन का अध्ययन करते समय, मैंने बार-बार अनुभव किया कि कहानियों की अधिकता ने मेरी बुद्धि को कुंठित कर दिया है और अधिकांश लोगों की तरह मैं भी विवेक खो बैठा हूँ। उस स्थिति में पहुँच कर मैं सोचता—"हो सकता है कि रेस्क का कारागार बुरा हो, पर इतना अधिक बुरा तो नहीं ही होगा।" जब समूचे देश में योजना बना कर भ्रष्टता फैलायी गयी हो, तो उसका विचार करते समय किसी को भी कठिनाई होना स्वाभाविक ही है।

लेकिन बुद्धि की उस कुंठावस्था में भी तीन अवसरों पर मैंने देखा कि मेरे एक छोटे-से प्रश्न ने एक छोटी, परन्तु इतनी तथ्यपूर्ण, कहानी को प्रकाश में ला दिया कि सारा विषय स्पष्ट हो गया और एक क्षण के लिए मेरे मानस के समक्ष यह स्पष्ट हो उठा कि हंगेरी में कम्यूनिज्म का क्या रूप रहा होगा; क्योंकि जब मस्तिष्क एक पूरे राष्ट्र के भयावने रूप को ग्रहण कर सकने में असमर्थता दिखलाता है, तब भी किसी एक व्यक्ति की एक कहानी को समझ सकने की क्षमता तो रखता ही है।

एक बार वियेना में, रविवार के अपराह्न काल के समय, मैं कोयले की खान में काम करने वाले एक तगड़े हंगेरियन से ताताबन्या की खानों की अवस्था के सम्बन्ध में बातचीत कर रहा था। हमने पारिश्रमिक, काम की स्थिति और इस बारे में भी बातचीत की कि कोई मजदूर बालातोन झील की सैर करने के लिए वेतनसहित छुट्टी पा सकता था या नहीं? "मजदूर नहीं, केवल उच्च अधिकारी ही वहाँ जा सकते थे।" उस श्रमिक के उत्तर इतने स्पष्ट थे और हंगेरी के बारे में उसका रुख इतना उत्तेजनाहीन था कि बातचीत की समाप्ति पर मैंने उसके सुन्दर स्वास्थ्य की ओर संकेत करते हुए कहा—"खैर, उस शासन में एक व्यक्ति ने तो तरक्की की।" उस वाक्य के साथ मैंने उस सुन्दर मुलाकात की समाप्ति समझी थी, लेकिन वस्तुतः उस वाक्य ने वास्तविक वार्तालाप का आरम्भ किया था।

उसने कहा—"काश, आप देखते कि ए. बी. ओ. वाले मेरे साथ कैसा व्यवहार करते थे!"

"क्या उन्होंने तुम्हें गिरफ्तार किया था?"

"हाँ, उन्होंने मुझे ३३ दिनों तक अपने कब्जे में रखा था और जब छोड़ा

था, तब मैं बड़ी मुश्किल से चल-फिर पाता था—मेरी कलाइयाँ तो बिल्कुल पतली-पतली हो गयी थीं।"

"उन्होंने तुम्हें सताया भी था?"

"बहुत!"—उसने सीधा-सा उत्तर दिया। उसके स्वर में जरा भी विद्रोह की झलक नहीं थी।

"क्यों भला?"

"उन्होंने मेरा सूट देख लिया था!"

"सूट में ऐसी क्या बात थी?"

"वह अमेरिकी सूट था—पुराना-सा। और, केवल वही एक सूट तो मुझे नसीब हुआ!"

"लेकिन तुम्हें अमेरिकी सूट कहाँ मिल गया था?"—मैंने पूछा।

"यही तो वे भी जानना चाहते थे।"

"तुमने उन्हें क्या बतलाया?"

"जो सच बात थी। लड़ाई के जमाने में जर्मनों ने जबर्दस्ती मुझे एक मजदूर के रूप में देश के बाहर भेज दिया। लिंज में मैं घायल हुआ और अमेरिकी मुझे पा गये। हंगरी लौटने से पहले, कुछ समय तक, मैंने उनके लिए काम किया और एक अमेरिकी इन्जीनियर ने पी. एक्स. में मुझे वह सूट ले दिया।"

"तब ए. वी. ओ. ने क्या किया?"

"उन्होंने कहा कि जिस किसी व्यक्ति के पास अमेरिकी सूट है, वह अमेरिका का गुप्तचर है।"

"तब?"

"उन्होंने ३३ दिनों तक नित्य मुझे पीटा और भूखा रखा।"

"सिर्फ इसलिए कि तुम अमेरिकी सूट पहनते थे?"

"हाँ।"

"तुम्हारे कहने का मतलब यह है कि कोई भी ए. वी. ओ. वाला तुम्हें सड़क पर गिरफ्तार करके ३३ दिनों तक कैद में केवल इसलिए रख सकता था कि उसे तुम्हारा सूट पसन्द नहीं है?"

"३३ दिनो की कौन कहे, वे मुझे ३३ वर्ष तक रख सकते थे!"

इससे भी अधिक विचलित करनेवाला एक दूसरा वार्तालाप था, जो अब भी मेरे सामने ए. वी. ओ. के आतंक को खड़ा कर देता है। यह अचानक

मिला विवरण मेरे मस्तिष्क में अब भी उन सभी तथ्यों से अधिक ताजा है, जिनकी जानकारी मुझे मिली है। मैं एक हंगेरियन गृहिणी से बातचीत कर रहा था, जो मुझे सीमा-क्षेत्र पर मिली थी और जिसके सुन्दर और उत्फुल्ल चेहरे को देख कर मैंने सोचा था—"इससे बातचीत करना अच्छा रहेगा। इससे यह पूछना चाहिए कि क्रान्ति में स्त्रियों का क्या हिस्सा रहा?" बातचीत के क्रम में उसने मुझे बहुत-सी मूल्यवान सूचनाएँ दीं, जिनका उपयोग मैंने उस अध्याय में किया है, जिसका सम्बंध शांतिकाल में गृहिणियों के विवरण से है। उसे सभी बातों की बड़ी विस्तृत जानकारी थी तथा प्रतिशोध-भावना से भी वह दूर थी। वह खुशमिजाज भी बहुत थी। मैं स्वयं अपने को इस बात के लिए बधाई देने लगा कि मुझे एक ऐसी महिला से मिलने का अवसर मिला, जिसने भावुकता से मुक्त होकर सही विवरण दिया।

लेकिन जब मैं अपनी नोटबुक को सम्भाल कर रख रहा था, तब संयोग से मेरी दृष्टि उस महिला के दाहिने हाथ पर चली गयी और मैंने यों ही प्रश्न कर दिया —"यह आपके हाथ में क्या हुआ?"

"ए. वी. ओ. वालों ने तोड़ दिया।"–उसने सीधा-सा उत्तर दिया।

"और वे अँगुलियाँ?"

"उन्होंने रबर के कोड़ों से तोड़ दीं।"

"और हथेली के पीछे वे दो छेद कैसे हैं?"

"उन्होंने सिगरेट से जलाया था।"

"क्यों भला?"

"मेरी एक सहेली के हंगेरी से भाग जाने के कारण।"

"क्या आपने उसे मदद पहुँचायी थी?"

"मुझे तो उस बारे में कुछ पता भी न था।"

"लेकिन उन्होंने गिरफ्तार आपको किया?"

"हाँ।"

"क्यों?"

"इस खयाल से कि शायद मुझे उस बारे में कुछ मालूम हो।"

"क्या उन्होंने आपको बहुत सताया?"

"जब मैंने उनसे कहा कि मुझे यह पता भी न था कि वह लड़की जा रही है, तो वे चिल्लाये—'झूठी कहीं की।' और, एक आदमी ने मेरे दाँत तोड़ डाले।"

यहाँ उसकी कहानी को विस्तार में वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। उनकी क्रूरता घृणा के स्तर तक पहुँच गयी थी। उन्होंने १३ महीनों तक उसे भीषण यातनाओं और आतंक के बीच रखा। लेकिन यह कोई असाधारण बात तो थी नहीं। बहुत-से कैदियों के हाथ और दाँत तोड़ डाले गये थे। लेकिन श्रीमती मैरोथी की इस कहानी में एक विशेष बात थी।

इस पुस्तक में अधिकतर कल्पित नामों का प्रयोग किया गया है; क्योंकि उन लोगों को अब भी इस बात का भय है कि ए. वी. ओ. वाले उनके मित्रों और रिश्तेदारों का पता लगा लेंगे तथा उन्हें अनन्त यातनाएँ देंगे। जिन लोगों की कथाएँ इसमें वर्णित हैं, वे सब इसमें अपने को पहचान लेंगे; क्योंकि हर व्यक्ति से, मुलाकात के बाद, मैं कहता था—"अब अपना कोई कल्पित नाम चुन कर आप बतलाइये, जिसका मैं उपयोग करूँ।" वे सोच-समझ कर अपने लिए कोई नाम बतला देते थे।

लेकिन जब मैंने उस महिला-विशेष से बातचीत समाप्त की, तब उसने दृढ़तापूर्वक कहा—"आप मेरे असली नाम का ही उपयोग कीजिये। मेरा नाम श्रीमती मेरिया मैरोथी है। इन जानवरों के हाथ में इतना अधिक सतायी गयी हूँ कि बदला केवल यही हो सकता है। उन्हें यह मालूम होने दीजिये कि स्वतंत्र वातावरण में आने के बाद मैं उनके अपराधों को प्रकाशित कर रही हूँ।" श्रीमती मैरोथी को ओहियो में स्थान मिल गया था और मैं समझता हूँ कि अब वह किसी छोटे-से नगर की दुकान में जाकर टूटी-फूटी अँग्रेजी में बातें करके सामान खरीदती होगी; लेकिन मुझे इस बात का भय है कि यदि दुकानदार या उसका कोई दूसरा ग्राहक उससे यह प्रश्न कर देगा—"आपके हाथ को क्या हो गया?" तो उसके द्वारा दिये जानेवाले उत्तर पर ओहियो का कोई भी व्यक्ति विश्वास नहीं करेगा।

श्रीमती मैरोथी की कथा की एक बात पर तो मुझे भी विश्वास नहीं हो रहा था। अपने हाथ के टूटने की सफाई देने के बाद उसने कहा—"एक दूसरी कहानी से आपको इस बात का पता चल जायेगा कि हम कम्यूनिस्टों से कितनी घृणा करते थे। जानते हैं, हमारा साथ देने के लिए कौन व्यक्ति हंगेरी छोड़नेवाला है?"

"क्या कोई ऐसा व्यक्ति है, जिसे मैं जानता हूँ?"

"हाँ, आप उसे जानते हैं।"

"कौन है वह?"

"इम्रे होरवाथ, जूनियर।"

किसी अमेरिकी को यह समझा सकना वास्तव में बहुत कठिन है कि इस बात को सुन कर मुझे तथा मेरे साथ उस मेज पर बैठ कर कहानी सुननेवाले दूसरे लोगों को कितना आश्चर्य हुआ। हम लोग अवाक् रह गये; क्योंकि इम्रे होरवाथ सीनियर सम्भवतः सारे संसार में सबसे अधिक बदनाम हंगेरियन कम्यूनिस्ट था। जब बुडापेस्ट की क्रान्ति जोरों पर थी, तब इस बेशर्म कूटनीतिज्ञ ने न्यूयार्क नगर में होनेवाले राष्ट्र-संघ के साधारण अधिवेशन में खड़े होकर यह कहने की धृष्टता की थी कि रूसियों को बुडापेस्ट में लौटने का अधिकार है और सभी अच्छे हंगेरियन उनके स्वागत को तैयार हैं; क्योंकि वहाँ जो आन्दोलन हुआ था, वह युद्ध के इच्छुक फासिस्टों-द्वारा आयोजित एक नागरिक अशान्ति-मात्र था। जब राष्ट्र-संघ में होरवाथ-द्वारा की गयी घोषणा की खबर हंगेरी पहुँची, तब लोगों का उसके प्रति क्रोध भयानक रूप से उभरा था। अनेक शरणार्थियों ने मुझे बतलाया कि यदि लोग उसे पा जाते, तो उसे जान से मारे बिना न छोड़ते। वह, निर्विवाद रूप से, उनका सर्वाधिक घृणित शत्रु था।

"क्या उसका बेटा हंगेरी छोड़ रहा है?"—मैंने पूछा।

"निस्संदेह!"—श्रीमती मैरोथी ने मुझे विश्वास दिलाते हुए कहा—"जिस मकान में हम लोग रहते थे, उसी में वह भी रहता था। ए. वी. ओ. ने मेरे साथ जो बर्ताव किया था, वह उसे ज्ञात था। अपने देश के वातावरण के कारण वह लज्जा का अनुभव करता था। जब उसने राष्ट्र-संघ में अपने पिता के वक्तव्य के बारे में सुना, तो उसने शपथ ली कि वह सदा के लिए हंगेरी छोड़ देगा।"

"तब क्या उसने ऐसा किया?"

"यदि आप बात को गुप्त रखने का वचन दें, तो..." श्रीमती मैरोथी बोल ही रही थी कि मैं बीच में बोल पड़ा—"अवश्य, अवश्य!"

"वह बुडापेस्ट छोड़ चुका है। कल वह हमारे साथ हो जायेगा।"

इम्रे होरवाथ जूनियर-जैसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति को भागने का अवसर मिल जायेगा—यह बात इतनी असम्भव-सी लगती थी कि मैंने इस पर अविश्वास प्रकट किया। श्रीमती मैरोथी ने इसे लक्ष्य कर कहा—"विश्वास कीजिये; होरवाथ सीनियर ने हमारे साथ जो व्यवहार किया, उससे सभी अच्छे हंगेरियन, नैतिक लज्जा का अनुभव कर रहे हैं। उसका बेटा तो सबसे अधिक। विश्वास कीजिये, वह हंगेरी छोड़ देगा।'

लेकिन कई दिन बीत गये और वह नहीं आया। मैंने जब सीमा-क्षेत्र का परित्याग किया, तब तक वह अन्य शरणार्थियों के साथ हंगेरी से नहीं निकला था। न्यूयार्क वापस आने पर भी मैंने अखबारों पर नजर रखी, पर इम्रे होरवाथ जूनियर का नाम शरणार्थियों की सूची में कहीं नहीं दिखाई पड़ा। अतएव मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि या तो श्रीमती मैरोथी का उससे कभी परिचय नहीं था और उसने मनगढ़न्त कहानी सुनायी थी अथवा उसे उसके इरादों के बारे में गलतफहमी हो गयी थी।

जिस दिन मैं इस पुस्तक की अंतिम तैयारी में इधर-उधर कुछ संशोधन कर रहा था, तभी समाचार मिला कि इम्रे होरवाथ जनियर भाग कर पश्चिम में आ गया है। उसने कहा तो बहुत थोड़ा ही, लेकिन जो-कुछ कहा, वह उस व्यवस्था पर लगाये गये गम्भीरतम आरोपों में से एक था, जिसके कारण स्वयं उसे और श्रीमती मैरोथी को स्वदेश-त्याग करना पड़ा था। उसने कहा—"मुझे खास तौर पर सदमा तब पहुँचा, जब मैंने अपने पिता से लैज्लो रज्क (राष्ट्रवादी कम्यूनिस्ट नेता, जिसे सन् १९४९ में स्टालिन के आदेश से प्राणदण्ड दिया गया) के दुर्भाग्य के बारे में बातचीत की। मैंने कहा कि हंगेरी का हर व्यक्ति यह जानता है कि काफी संख्या में निर्दोष लोगों पर अभियोग लगा कर उन्हें प्राणदण्ड दिया जा रहा है। इस पर उन्होंने उत्तर दिया—'पार्टी में किसी एक दोषी व्यक्ति को जीवित छोड़ देने की अपेक्षा सैकड़ों निर्दोष लोगों को मार डालना कहीं अच्छा है।'"

मुझे सर्वाधिक विद्रोहात्मक कहानी सुनने को मिली एक ऐसे व्यक्ति से, जिसका नाम यूरोप और अमेरिका के बहुत-से लोग जानते हैं; क्योंकि वह कुछ वर्षों तक एक खेल का विश्व-चेम्पियन रहा है। मैं, कुछ समय से, अधिकांश शरणार्थियों-द्वारा कही गयी इस बात की जाँच में लगा था, कि हंगेरी में पहलवानों को विशेष सुविधाएँ दी जाती थीं और कम्यूनिज्म से भयभीत होने का उन्हें कोई कारण नहीं था। एक शरणार्थी ने इसे और स्पष्ट करते हुए कहा था— "कम्यूनिस्टों का खयाल था कि पहलवान मोटे होने के साथ-साथ मूर्ख होते हैं और वे कभी राजनीतिक अशान्ति पैदा नहीं करते। अतएव उन्हें अच्छा भोजन और प्रोत्साहन दिया जाता था, ताकि यदि वे गणतंत्र-राज्यों के मुकाबले विजयी होते, तो कम्यूनिज्म को अच्छा प्रचार मिल जाता।"

सीमा-क्षेत्र में ही शरणार्थियों के एक गिरोह में मुझे यह विश्व चेम्पियन मिल गया और हम लोगों ने सानन्द वार्ता की। वह बहुत फुर्तीला और चुस्त था।

उसकी मुस्कराती आँखें तुरन्त ही यह व्यक्त कर देती थीं कि आप उतने सारे प्रश्न उससे क्यों कर रहे हैं, वह जानता है।

"यह सही है कि औसत लोगों की अपेक्षा हमारी स्थिति काफी अच्छी थी।"—उसने स्वीकार किया—"एक बार जब हम समझौते पर हस्ताक्षर कर देते थे, तब फिर कोई हमारे बारे में विशेष चिन्ता नहीं करता था।"

"समझौता? कैसा समझौता?"—मैंने पूछा।

"जब वे हमें देश से कहीं बाहर ले जाते थे—इंग्लैण्ड या फ्रान्स—तब हमें यह बात स्वीकार करनी पड़ती थी कि यदि किसी कारणवश हम टीम से अलग हो जायँगे और वापस अपने घर नहीं लौटेंगे, तब पुलिस हमारे सारे परिवार को गिरफ्तार कर लेगी और तब तक उन्हें अपने कब्जे में रखेगी, जब तक हम घर वापस नहीं आ जायेंगे।"

"और जिसका कोई परिवार न हो, उसका क्या होता?"

"तब उसके मित्रों को गिरफ्तार किया जाता।"

"आप लोग ऐसे समझौते पर हस्ताक्षर कर देते थे?"

"हाँ, करना ही पड़ता था। हमें मालूम था कि वे किसी भी तरह उस नियम का पालन करायेंगे ही; इसलिए हस्ताक्षर न करने का कोई कारण नहीं था।"

"आपका क्या खयाल है—खिलाड़ियों को प्रचार का साधन बनाया जाता था?"

"अवश्य ही। और क्या? जब हमने पेरिस में फ्रांसीसियों को हराया, तो हमें बड़ी खुशी हुई। हम खिलाड़ियों को खुशी इस बात की थी कि हमने फ्रांस को हरा दिया था; लेकिन ए.वी.ओ. को खुशी इसलिए थी कि हमने गैर-कम्यूनिस्टों को हराया था।"

"क्या टीम के साथ ए.वी.ओ. वाले भी जाते थे?"

"हाँ, हर टीम के साथ। देश से बाहर तो वे बहुत ही कड़ाई करते थे; क्योंकि यदि हममें से कोई भाग जाता, तो गला उन्हीं का पकड़ा जाता था।"

"क्या नये और कच्चे खिलाड़ी बाहर नहीं भेजे जाते थे?"

"नहीं, खिलाड़ी सब दक्ष होते थे।"

"आप प्रतियोगिताओं में अब भाग क्यों नहीं लेते?"

"कन्धे पर लगीं दो गोलियों के कारण।"

"कैसी गोलियाँ?"

"ए.वी.ओ. वालों ने मारी थीं।"

"कहीं विदेश में ?"

"नहीं।"—उसने कहा—"इंग्लैण्ड और फ्रांस का कई बार चक्कर लगाने के बाद मैंने अपने मन में कहा—'हंगेरी नरक है—रहने के योग्य स्थान नहीं। मैं यहाँ से चला जाऊँगा।' लेकिन सीमा पर उन्होंने मुझे गोली मार कर गिरा दिया।"

उसने मुझे अपने कन्धे के दोनों बड़े निशान दिखाये और मैंने कहा—"इतने बड़े निशान कैसे हुए ? क्या उन्होंने किसी फावड़े से आपरेशन किया था ?"

उसने जवाब दिया—"वे गोलियाँ 'दम-दम' गोलियाँ थीं, जो अन्दर पहुँच कर फट पड़ती हैं।"

फिर उसने पिटाई, तिरस्कार और तीन वर्षों तक एक गंदी, श्मशान-सदृश कोयला-खान में बेगारी, आदि की वही पुरानी कहानी शुरू की। उनमें से सिर्फ दो बातें नयी थीं। उस समय तक मैं एक ही कहानी का बार-बार दुहराया जाना सुन कर ऊब-सा गया था और यह कह सकता था कि आगे वह क्या कहेगा; अतः मैंने केवल इन नयी बातों पर ध्यान दिया—"ए.वी.ओ. के उस आदमी ने, जो हम पर निगरानी रखता था, पेरिस में देखा कि अँग्रेज 'रेफरी' ने दो बार मुझसे कुछ बातें कीं—इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि मैं एक खुफिया था। मुझे जो तीन वर्ष की सजा मिली, वह देश से भागने के जुर्म में नहीं, बल्कि खुफियागीरी करने के जुर्म में।" और, दूसरी बात जो मैंने दर्ज की, वह यह है—"२१ महीनों के अन्दर उस कोयला-खान में ५० व्यक्ति मरे और २५० पंगु हो गये। डूबने, 'पिट-गैस' लगने और चट्टानों के धँसने के कारण ये दुर्घटनाएँ होती थीं; लेकिन इन बातों पर ध्यान ही कौन देता था ?"

तदुपरान्त, जैसा कि अक्सर ही होता था, हम एक-दूसरे से अलग होने लगे; तभी उस निर्दोष, प्रसन्नचित्त और चुस्त चेम्पियन ने, जो अब स्वतंत्र था और उस दुर्भाग्यपूर्ण वातावरण को पीछे छोड़ आया था, हर्षोत्फुल्ल वाणी में कहा—"लेकिन याद रखिये, मैं दुःखड़ा रोनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ। जब मैं अपने सर्वाधिक बुरे दिन बिता रहा था, तब भी सदा ही अपने से कहता था—'खैर, मेजर मीट बाल से तो बच गया।'"

"वह कौन था ?"

"था नहीं, थी।"

"मेजर मीट बाल ? कोई ए.वी.ओ. वाली थी क्या ?"

"निस्सन्देह। ए.वी.ओ. को छोड़ कर और भला कौन याद आ सकता है ?"

"मेजर मीट बाल से आप कहाँ मिले ?"

"उसका नाम पिरोश्का था। यह एक रूसी नाम है, जिसका अँग्रेजी अनुवाद 'मीट बाल' (माँस का गेंद) होता है। उससे मेरी मुलाकात बुडापेस्ट में, ६०, स्टालिन-स्ट्रीट-स्थित ए.वी.ओ. के यंत्रणा-कारागार में हुई थी। मैं उसकी आकृति का हू-ब-हू बयान कर सकता हूँ। उसे देखनेवाला कोई भी व्यक्ति यह काम कर सकता है। वह रूसी औरत भारी शरीर की थी—उसकी उम्र लगभग ३५ वर्ष होगी। उसके चेहरे पर चेचक के निशान थे और होंठ काफी मोटे थे। वह करीब ५ फुट २ इंच लम्बी थी और यदि चेचक के निशानों का विचार न किया जाये, तो देखने में अच्छी लगती थी। हर कोई जानता था कि वह भयानक रूप से कामुक थी।

"मैंने अभी कहा कि मैं उससे बचा रहा। इसका मतलब यह है कि उसके क्रूरतम व्यवहार का मुझे सामना नहीं करना पड़ा। फिर भी, उसकी साधारण क्रूरताओं का तो मुकाबला हुआ ही। एक बार वह एक बोतल लेकर मेरी बगल की कोठरी के कैदी के पास गयी और बोली—'इसमें पेशाब करो।' तदुपरान्त वह उस उष्ण मूत्र को लिये हुए मेरे पास आयी और बोली—'इसे पियो।'

"एक बार उसने मेरी कोठरी में खरिया से एक गोलाकार रेखा खींच दी और कहा कि मैं उस पर चलता रहूँ। तदनुसार ही, मैं उस पर आठ घंटे तक चक्कर लगाता रहा।

"नारी कैदियों के साथ तो उसका व्यवहार एकदम ही असह्य था। वह उनके साथ ऐसे घृणित व्यवहार करती थी कि अब भी मैं अपने मुँह से उसका वर्णन नहीं कर सकता। लेकिन जैसा कि मैंने पहले कहा, मैं इस बात के लिए उसका सदा कृतज्ञ रहूँगा कि उसने मेरे साथ उतना बुरा व्यवहार नहीं किया। पर यह सौभाग्य मेरी बगल की कोठरीवाले कैदी को नहीं मिला। एक दिन वह अर्धनग्न वस्त्रों में मिलने के लिए उसके पास आयी और बोली—'अवश्य ही एक स्त्री के लिए तुम्हारी भूख बहुत बढ़ गयी होगी।' और, वह उससे और अधिक सटती हुई बोली—'मैं भी एक पुरुष के लिए भूखी हूँ—बेचैन हूँ। आज रात को मै तुम्हें अपने क्वार्टर में ले जाऊँगी।' अतएव उस रात वह उसे अपने क्वार्टर में ले गयी और वहाँ

उसने उसे नंगा कर दिया। तभी ए.वी.ओ. का एक आदमी यह चिल्लाता हुआ कमरे में प्रविष्ट हुआ—'अरे बलात्कारी! मेरी पत्नी के ही साथ बलात्कार की कुचेष्टा कर रहा है?' फिर वह व्यक्ति ए.वी.ओ. के एक दूसरे व्यक्ति को बुला लाया और दोनों ने मिल कर उसे इतना मारा कि वह मरणासन्न हो गया। अंत में, उन्होंने उसे पकड़ कर उसके मूत्रेन्द्रिय पर पहले एक शीशे की खोल चढ़ा दी और उस पर इतना प्रहार किया कि वह शीशा लाखों टुकड़ों में चूर-चूर हो गया। मेजर मीट बाल की कारगुजारियाँ ऐसी-ऐसी होती थीं!"

मैंने क्षीण स्वर में पूछा—"आप को यह कैसे मालूम हुआ?"

उस विश्व-चेम्पियन ने सीधा-सा उत्तर दिया—"जब वह शौचादि के लिए जाता था, तब मुझे उसकी देखरेख करनी पड़ती थी।"

हंगेरी के इतिहास से जो परिचित न होगा, वह यही कहेगा कि काफी अर्से से सताये जानेवाले हंगेरी राष्ट्र के लिए ए.वी.ओ. के आतंक का अनुभव सबसे भयंकर था। लेकिन कुछ दृष्टियों से यह कथन सही नहीं होगा; क्योंकि हंगेरी ने अब तक छः बड़े आतंकों का सामना किया है और यह कम्यूनिस्ट-आतंक उस सूची में अन्तिम स्थान रखता है।

मोहाक्स की दो युगान्तरकारी लड़ाइयाँ हुई थीं; पहली सन् १५२६ में हुई, जिसमें हंगेरियनों पर तुर्कों ने उल्लेखनीय विजय पायी और दूसरी सन् १६८७ में हुई, जिसमें तुर्कों पर हंगेरियनों की विजय हुई। इन युद्धों के बीच की अवधि में बुडापेस्ट और उसके आसपास के क्षेत्र तुर्की-आधिपत्य में थे। बीच-बीच में ओटोमन का यह आतंक बड़ा भीषण रूप धारण कर लेता था, लेकिन जब अन्तिम रूप से हंगेरियनों ने मुस्लिम-शासन को अंगीकार कर लिया, तब तुर्की-अधिनायकवाद भारी भ्रष्टाचार में परिणत हो गया। व्यापकता और बुद्धिहीनता, दोनों ही दृष्टियों से तुर्की-आतंक एक बड़ा भयावना अनुभव था—साथ ही, हंगेरी की प्रगति में बहुत बड़ा बाधक भी।

सन् १९१९ में, प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति के साथ उत्पन्न हुई उथल-पुथल के बीच, हंगेरी को एक स्वदेशीय आतंक से भी निबटना पड़ा, जिसके बारे में अब तक भ्रम और विवाद विद्यमान हैं। उस वर्ष, आस्ट्रिया और हंगेरी के संयुक्त जहाजी बेड़े का एडमिरल हार्थी हंगेरी का शासक बन बैठा और उसने वहाँ एक प्रतिक्रियावादी अधिनायकवाद की स्थापना की, जो सन् १९४४ तक कायम रहा। यह सही है कि उस अवधि में हंगेरीवासियों का जीवन सुखी नहीं था, लेकिन सम्भवतः वह उस अधोगति को प्राप्त नहीं हुआ था, जिसका

प्रचार कम्यूनिस्ट आन्दोलनकारी करते थे और अब भी 'फासिस्ट हार्थी के आतंक' के रूप में जिसकी चर्चा वे अपने लगभग सभी भाषणों में करते हैं। फिर भी, हार्थी इस बात के लिए अंशतः दोषी अवश्य ठहराया जा सकता है कि उसके कारण हंगेरी बड़ी जल्दी कम्यूनिज्म के अधीन हो गया। उसका स्मरण दिला कर कम्यूनिस्ट आसानी से बुडापेस्ट में प्रवेश पाने में सफल हो गये।

सन् १९४४ में, हंगेरी एक वर्ष के लिए नाजी-आतंक के चंगुल में फँसा, जिसका सही-सही वर्णन किया जा सकता है। एक औसत अच्छे आचरणवाले नागरिक के लिए नाजी-शासन बहुत बुरा नहीं था। इस बात को हर कोई स्वीकार करता है। लेकिन चूँकि नाजी-शासन हंगेरियनों को सह्य नहीं था, इसलिए वे जर्मनों से घृणा करने के साथ-साथ उनका उपहास भी करते थे। फिर भी लोगों का जीवन असह्य नहीं हो गया था। हाँ, यहूदियों के साथ, नाजी-आतंक अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा कर निबटता था। उनके साथ उसका बर्ताव इतना भयावना होता था कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता—नाजियों की उन कार्रवाइयों के समक्ष ए. वी. ओ. की भयानकतम यंत्रणाएँ भी कुछ नहीं थीं। इस जर्मन-आतंक का, सन् १९४४ की एक छोटी अवधि में, फेरेंक जलाजी के शासन-काल में बड़ी तेजी से विस्तार हुआ।

इन तीन आतंकों के अतिरिक्त, जिनका विस्तार सारे देश में हुआ, दो और छोटे-छोटे आतंक, जिनका रूप कभी-कभी बड़ा भयावना हो जाता था, देश के कुछ भागों में प्रकट होते थे। पूरब की ओर, ट्रान्सिलवानिया में रहनेवाले हंगेरियनों और रूमानियनों के साथ यह दुर्भाग्य था कि वे कभी तो रूमानिया के अन्तर्गत हो जाते थे और कभी हंगेरी के। जब ट्रान्सिलवानिया पर रूमानिया का नियंत्रण हो जाता था, तब वहाँ रहनेवाले हंगेरियनों की जान आफत में पड़ जाती थी और जब वहाँ हंगेरी का अधिकार हो जाता था, तब हंगेरियन यह दिखा देते थे कि जैसा अत्याचार गत वर्ष उन पर हुआ था, उससे कम अत्याचारी वे नहीं थे।

यही दशा दक्षिणी सीमा की भी थी, पर वहाँ रूमानियनों की जगह सर्ब लोग थे। हंगेरियन और सर्ब, दोनों एक-दूसरे पर वैसे ही पाशविक अत्याचार करते थे। यदि ट्रान्सिलवानिया और सर्ब के संघर्षों की सबसे बुरी घटनाओं को मिला दिया जाये, तो भयानकता में ए. वी. ओ. का आतंक भी मात खा जाये।

इसलिए बिना विचारे, ए. वी. ओ. के आतंक को सबसे भयंकर करार

देना उचित न होगा। हंगेरी में उसके पहले के भी वैसे दृष्टान्त उपस्थित हैं।

लेकिन ए. वी. ओ. के आतंक की अद्भुत भयानकता और विशेषता, जो उसे खास तौर से घृणित रूप प्रदान करती थी यह थी कि उसके पहले के सभी आतंकों में पाखंड और सचाई का तोड़-मरोड़ उसकी अपेक्षा कम था। तुर्क लोग हंगेरी में इसलिए आये थे कि नागरिकों से इस्लाम-धर्म ग्रहण करवायें और यदि वे इस्लाम को स्वीकार न करें, तो उन पर कठोरता से शासन किया जाये। जब हंगेरियनों ने इस्लाम को स्वीकार करने से इन्कार किया, तब उन्हें मालूम था कि उनके साथ क्या होनेवाला है? अतः उस समय ऐसे निरर्थक प्रचार और इस आशय के मिथ्या-भाषण नहीं होते थे कि वहाँ जो-कुछ हो रहा था, वह हंगेरियनों के लिए सुखकारी था।

नाजी-आतंक में, हंगेरी पर अधिकार करनेवाली एक क्रूर शक्ति ने, राष्ट्र के शासन के लिए, कुछ सामान्य नियमों की घोषणा कर दी थी और उस शासन को भाईचारे का रूप नहीं बतलाया जाता था। वह एक कठोर, पर सुदक्ष सैनिक-शासन था और यहूदियों के लिए तो स्पष्टतः मौत का कारण था।

हार्थी के अधिनायकवाद में भी ए.वी.ओ. ने आतंक-जैसी निकृष्ट धोखेबाजियाँ नहीं थीं और इसलिए वह कम्यूनिज्म और उसके द्वारा साधारण बुद्धि को विकृत करनेवाले तत्त्वों की दृष्टि से काफी नीचे था। उस समय ऐसा नहीं हुआ कि सोमवार को किसानों के साथ दगाबाजी की गयी और मंगलवार को उन्हें यह समझाया गया किया उनके कल्याण के लिए ही वैसा किया गया था। एक बड़े क्षेत्र के लोगों के दमनार्थ एक निश्चित नीति उस समय अपनायी गयी थी और जिस प्रकार क्रान्ति के द्वारा वह शक्ति सत्ता में आयी थी, उसी प्रकार समाप्त भी हो गयी।

ट्रान्सिलवानिया और सर्ब के उपद्रव तो स्पष्टतः ही उन नागरिकों के प्रतिशोधात्मक कार्य थे, जो सदियों से एक-दूसरे के शत्रु थे। उन क्षेत्रों में जो घृणित कांड होते थे, उन्हें ढँकने के लिए चिकनी-चुपड़ी बातों का कभी प्रयोग नहीं किया गया।

यह तो ए.वी.ओ. के द्वारा शासित कम्यूनिस्ट-आतंक की ही विशेषता थी कि एक ओर जहाँ हंगेरियन जीवन को अधोगति की ओर पहुँचाया जाता था, वहीं यह भी घोषणा की जाती थी कि मैत्रीवश वैसा किया जा रहा था।

जब रूस ने हंगेरी में अपने आतंक का श्रीगणेश किया, तब उसने उस देश की पैदावार को अपने कब्जे में करना शुरू कर दिया और दलील दी कि 'किसानों

की उन्नति' के लिए वैसा किया रहा है। उसने मजदूरों पर भी अत्याचार किये और उसे 'मजदूर वर्ग का अधिनायकवाद' नाम दिया। उसने सरकार की सभी संस्थाओं में भ्रष्टाचार का प्रवेश कराया और उसे 'नया समाज' कह कर सम्बोधित किया। उसने गृहिणियों के प्रति भी चोरी की, बच्चों को भ्रष्टता सिखलायी और वृद्धों को गरीबी में मरने दिया और इन सबको 'विश्व-भ्रातृत्व' की संज्ञा प्रदान की। इन सबके अतिरिक्त, ए.वी.ओ. के माध्यम से उसने हर हंगेरियन नागरिक के विरुद्ध युद्ध-घोषणा करके उसे 'शान्ति' का नाम दिया।

इससे पहले, हंगेरी के इतिहास में जिन पाँच आतंकों का स्थान है, वे निर्विवाद लूट और हत्या से सम्बन्धित थे, लेकिन सोवियत-आतंक पाखंडपूर्ण मानव-विद्वेषी सिद्धान्त पर आधारित था। रूस ने आतंकपूर्ण कार्यों में एक नये तत्त्व का समावेश किया—पाखंड का।

इसी कारण ए.वी.ओ. के आतंक को हंगेरी के इतिहास में 'निकृष्टतम' माना जा सकता है; क्योंकि इसने सर्वाधिक क्षति सामाजिक संस्थानों को पहुँचायी, जिनसे किसी राष्ट्र का प्रशासन होना चाहिए। इस घृणित पाखंड के ही कारण रूस को, इटली और भारत-जैसे देशों के साथ भावी सम्बन्ध-रक्षा में, सर्वाधिक क्षति पहुँचेगी। उसकी वर्तमान स्थिति में पाखण्ड का कितना मौतिक स्थान है, यह अब प्रकट हो गया है।

जैसा कि एक हंगेरियन विद्वान् ने कहा था—"आतंक के रूप में आतंक निर्दय होता है, पर पाखंड में लिपटा हुआ आतंक सचमुच असह्य हो जाता है। हमारी क्रान्ति से यह बात साफ हो गयी है।"

मैंने सौ से भी अधिक हंगेरियन शरणार्थियों से बातचीत की और वार्ता के क्रम में इस बात से सावधान रहा कि मैं स्वयं ए.वी.ओ.की बात न उठाऊँ; फिर भी लगभग हर वार्ता में उस भयावने नाम का प्रवेश हो ही जाता था। ऐसे अवसरों पर मेरी चेष्टा यही रही कि लोग स्वयं उस पैशाची स्थिति का चाहे जितना वर्णन करें, मैं छेड़छाड़ नहीं करूँगा। इसीलिए किसी दशा में भी मैं अपने को ए. वी. ओ. के दुराचारों की कहानियाँ खोजने का दोषी नहीं मान सकता। कम्यूनिज्म-काल के जीवन के बारे में किसी भी साधारण वार्ता के समय वे कहानियाँ अपने-आप निकल आती थीं।

इस कारण स्वभावतः ही मुझे यह जानने की उत्सुकता हुई कि किन आधारों पर ए.वी.ओ. का निर्माण हुआ था। मैंने देखा कि उसके गैर-अधिकारी साधारण कर्मचारी पिछड़े हुए ग्रामीण इलाकों के होते थे। एक कथन है, "वह मूर्ख

इतना अपढ़ था कि जब उसे हममें से दस को अहाते से बाहर ले आने को कहा गया, तब उसे अपनी गिनती की योग्यता पर भी विश्वास न हुआ। अतएव उसने एक-एक कर हमें लेट जाने को कहा, ताकि वह आगे-पीछे चक्कर लगा कर अपनी गिनती का भरोसा कर ले।"

उनमें से अनेक स्वयौनप्रिय थे, कुछ लोग छोटे-मोटे अपराधी थे और एक बड़ी संख्या में वैसे लोग थे, जिनके शरीर में कोई-न-कोई दोष था, जिसे वे छिपाना चाहते थे। ए. वी. ओ. की एक विशेषता ऐसी थी, जो कम्यूनिज्म को कलंकित करने के साथ-साथ उसे दुगुना पाखंडी भी साबित करती थी। ए. वी. ओ. के कट्टर अधिकारी लोग हार्थी के जमाने के निर्दयी अधिकारी, हिटलर के नाजी-शासन के समय के चापलूस और जलाजी के अधिनायकवादी काल के खूँख्वार कर्ता-धर्ता थे। वे सभी फासिस्ट-सरकारें थीं और फासिज्म कम्यूनिज्म का सबसे भयानक शत्रु था। लेकिन जब रूसियों ने सत्ता ग्रहण की, तब उन्होंने अपने शासन-तंत्र में फासिस्ट पुलिस के निकृष्टतम लोगों को स्थान दिया और उन्हें 'अच्छा कम्यूनिस्ट' कह कर पुकारा। ए. वी. ओ. के अनेक अधिकारियों को यह भी पता नहीं था कि कम्यूनिज्म किसको कहते हैं।

लेकिन कुछ अधिकारी अवश्य ही ऐसे थे, जो पार्टी के बाकायदा सदस्य थे और उनमें से कई की अच्छी शिक्षा-दीक्षा भी हुई थी। उस व्यवस्था में जिन लोगों ने सर्वाधिक तेजी से उन्नति की, वे मास्को में सिखाये जानेवाले आतंक की दृष्टि से बड़े कुशल थे और रूस के प्रति उनकी वफादारी निर्विवाद थी। एक भी ऐसी घटना प्रकाश में नहीं आयी, जब उनमें से किसी ने स्वातंत्र्य-संघर्ष में रूस के साथ दगाबाजी की हो।

आरम्भ में ए. वी. ओ. के आदमी बड़ी सतर्कता से चुने जाते थे—कम्यूनिज्म के प्रति उनकी वफादारी पहली शर्त होती थी और अपने-पराये का ध्यान रखे बिना सजा देने की योग्यता, दूसरी शर्त। लेकिन बाद में, जब उस संघटन का विकास किया गया और उसमें ३० हजार वर्दीधारी सदस्यों तथा अनेक गुप्तचरों को स्थान मिल गया, तब ये शर्तें कुछ ढीली कर दी गयीं। कुछ नवजवानों के ऐसे बयान भी मिलते हैं, जिनसे यह प्रकट होता है कि उनकी इच्छा के विपरीत उन्हें ए. वी. ओ. में शामिल किया गया था।

विश्वविद्यालय के एक नवजवान छात्र ने मुझे बतलाया कि कैसे उसके एक मित्र को, प्राध्यापकों और साथी छात्रों की गतिविधियों के बारे में सूचित करने के लिए, ए. वी. ओ. का खुफिया नियुक्त किया गया था। सन् १९५२ में

ए. वी. ओ. ने उस सुन्दर नवजवान से कहा—'तुम विश्वविद्यालय में हमारी ओर से काम करोगे।' मेरे मित्र ने इन्कार किया, तो ए. वी. ओ. ने कहा—'अगर तुम वैसा नहीं करोगे, तो हम तुम्हारी हत्या कर देंगे।' वह एक सिद्धान्त का आदमी था, अतः उसने कहा—'कर देना।' तब उन्होंने कहा—'हम तुम्हारे बाप, माँ और बहिन को मार डालेंगे।' तब अनिच्छापूर्वक, उसने ए. वी. ओ. का खुफिया बनना स्वीकार कर लिया।

"लेकिन वह अच्छा खुफिया न था। वह जो-कुछ भी देखता था, उन सबकी रिपोर्ट नहीं करता था। इसलिए उन्होंनें एक अत्यन्त घृणित युक्ति अपनायी। उन्होंने कहा—'हमने तुम्हारी निगरानी के लिए तुम्हारी कक्षाओं में एक दूसरा खुफिया भी नियुक्त कर दिया है।' अब देखिये कि उसके सामने कैसी समस्या पैदा हो गयी। 'यदि जानोस बैलिन्ट कक्षा में कोई संदेहास्पद बात करता है, तो उसके बारे में क्या रिपोर्ट करूँ? यदि करता हूँ, तो वह ए. वी. ओ. वालों के द्वारा पीटा जाता है और यदि नहीं करता हूँ, तो हो सकता है कि जानोस बैलिन्ट ही दूसरा खुफिया हो और मेरी परीक्षा के लिए वैसी बातें कर रहा हो।' इसी उधेड़-बुन में पड़ कर मेरे मित्र ने आत्म-हत्या करने का निश्चय किया, लेकिन ए. वी. ओ. वाले अपनी क्रूर चालाकियों से यह पता लगा लेते थे कि कौन व्यक्ति आत्म-हत्या पर उतारू हो रहा है। अतएव उन्होंने उसे बुला कर कहा—'यदि तुम आत्म-हत्या करोगे, तो हम तुम्हारे सम्पूर्ण परिवार को मार डालेंगे।'

"इसलिए मजबूर होकर मेरा मित्र पाँच वर्ष तक उस मानसिक यातना को भोगते हुए किसी तरह कार्य करता रहा। उसे अपनी स्थिति बनाये रखने के लिए उन्हें बहुत-कुछ बताना पड़ता था। उसे हर घटना पर इस दृष्टि से विचार करना पड़ता था कि अपराधी कहीं दूसरा खुफिया तो नहीं है? उसे इस बात पर भी सोचना पड़ता था कि वास्तव में कोई दूसरा खुफिया था भी या नहीं? लेकिन इन सबमें सबसे अधिक कठोर बात क्या थी, जानते हैं? मैं उसका निकटतम और प्रियतम मित्र था। उसने सम्पूर्ण जीवन मुझ पर विश्वास किया था और मैं ही वह व्यक्ति था, जिसके कारण वह विक्षिप्त होने से बच रहा था। हम लोग इन बातों पर साथ बैठ कर विचार करते। यह स्वाभाविक है कि संकट में पड़ा एक व्यक्ति अपने विश्वासपात्र से ही उस बारे में बातचीत करता है। यही अवस्था उसकी भी थी। लेकिन कभी-कभी सहसा ऐसे मौके भी आते थे, जब वह मेरी ओर आतंकित दृष्टि से देखता था। मेरी कोई-कोई बात उसे

अपने से यह प्रश्न करने के लिए विवश कर देती थी—'कहीं यही तो वह दूसरा खुफिया नहीं है?"

"तब हम दोनों एक-दूसरे की ओर चुपचाप देखते रहते और संदेह का भयानक आवरण, जो कम्यूनिज्म हर किसी पर डाल देता है, हमारे बीच में आ जाता। फिर कुछ देर बाद वह रोना शुरू कर देता; इसलिए नहीं कि उसने मुझ पर अविश्वास किया, बल्कि इसलिए कि कम्यूनिज्म ने जीवन को इतना भ्रष्ट बना दिया था कि कोई व्यक्ति स्वयं अपने पर भी विश्वास नहीं कर सकता था।"

क्रांति-काल में अधिकांश ए. वी. ओ. वाले रूसियों के प्रति वफादार रहे, लेकिन उनमें से कुछ ऐसे भी निकले, जो हंगेरी से भाग कर आस्ट्रिया चले गये और उन्होंने विदेशों में जाकर शरण ली। उनमें से दो कनाडा गये और मेरा खयाल है कि चार से अधिक अमेरिका जा पहुँचे। ७ दिसम्बर को वियेना-स्थित अमेरिकी राजदूत के कार्यालय के समक्ष 'विसा' प्राप्त करने के लिए पंक्ति में खड़े हंगेरियनों ने देखा कि ए.वी.ओ. का एक आदमी भी दृढ़तापूर्वक पंक्ति में खड़ा, अमेरिका जाने के लिए प्रवेशपत्र पाने की प्रतीक्षा कर रहा है। लेकिन जब उससे पूछ ताछ की गयी तब वह निकल भागा। दिसम्बर के अन्त में, एक अमेरिकी व्यवसायी, लोगों के उद्धार के लिए, सीमा पर पहुँचा था और उसने बुडापेस्ट के बहुत-से हंगेरियनों की ए. वी. ओ. से रक्षा की थी। बाद में, एक दिन जब वह वियेना में कुछ उद्धार किए हुए लोगों के साथ उत्सव मना रहा था, तब अकस्मात् वहाँ नीरवता छा गयी। एक काली आकृति उन लोगों के पास से गुजरी और भयभीत हंगेरियन धीमे-से बोले—"वह तो ए.वी.ओ. का आदमी है।" लेकिन इस आरोप की जाँच पूरी होने से पहले ही वह विमान-द्वारा अमेरिका पहुँच गया था।

ए. वी. ओ. में कुल कितने आदमी थे, यह केवल अन्दाज से बताया जा सकता है। साधारणतः यही सुना जाता है कि उसमें ३० हजार वर्दीधारी, २ हजार सादी पोशाकवाले उच्च कोटि के और ५ हजार साधारण खुफिये थे। मुझे जो भी सूचना प्राप्त हुई, उसके अनुसार राष्ट्रव्यापी उत्तेजना के बावजूद सम्पूर्ण क्रान्ति काल में ए. वी. ओ. के २०० से अधिक आदमी नहीं मारे गये। इसका मतलब यह हुआ कि नये कम्यूनिस्ट-शासन के उपयोग के लिए फिर भी लगभग ३६,८०० खुफिये थे।

हंगेरी पर पुनः विजय प्राप्त करने के बाद रूसियों ने निश्चय ही कुछ

ए. वी. ओ. वालों को शरणार्थियों के साथ मिल कर आस्ट्रिया जाने के लिए भेजा। आस्ट्रिया में उन्हें एक ऐसा अड्डा स्थापित करने का काम सौंपा गया था, जहाँ से वियेना, पेरिस, मांट्रियल और न्यूयार्क से सम्पर्क स्थापित किया जा सकता। ६ दिसम्बर की रात को ऐसा ही एक गिरोह वियेना में प्रकट हुआ। एक प्रमुख हंगेरियन शरणार्थी को उन्होंने बुरी तरह पीटा; क्योंकि वे उससे इस्टरहेजी-परिवार के एक व्यक्ति का पता जानना चाहते थे। उसी दिन आस्ट्रिया की पुलिस ने भी एक गुप्त रेडियो का पता लगाया, जिसके द्वारा वियेना-स्थित ए. वी. ओ. का अड्डा, बुडापेस्ट-स्थित अपने सोवियत-नियंत्रित सदर-मुकाम से संवादों का आदान-प्रदान करता था।"

ए. वी. ओ. की प्रवृत्ति साधारण अनुभव से इतनी भिन्न थी कि दर्शक प्रायः ही पूछ बैठते थे—"क्या वे लोग हंगेरी के लिए विशेष तौर पर थे?"

नहीं, ऐसा नहीं था। हम जानते हैं कि वैसे ही संघटन रूस के आसपास के कम्यूनिस्ट देशों में और स्वयं रूस में ही काम कर रहे हैं। मानवता की यह एक दुःखद विशेषता है कि हर समाज में कुछ ऐसे स्त्री-पुरुष होते हैं, जो क्रूर कार्यों में दिलचस्पी रखते हैं और अवसर मिलते ही वैसा काम करने के लिए तैयार हो जाते हैं। कम्यूनिज्म एक ऐसी शासन-प्रणाली है, जिसमें शासन-व्यवस्था बहुत-कुछ ऐसे ही लोगों के हाथों में चली जाती है।

यदि कल प्रातःकाल कम्यूनिज्म विश्व के किसी देश में सत्तारूढ़ हो जाये, तो आप पायेंगे कि कल रात तक विक्षिप्तों, खूनियों और अत्याचारियों को मिला कर उसका ए. वी. ओ. संघटन भी तैयार है।

यदि आत्मतुष्ट अमेरिकी यह सोचते हों कि वे ऐसे खतरे से मुक्त हैं, तो मैं स्पष्ट बात ही कह दूँ। यदि अमेरिका में भी कम्यूनिज्म आ जाये और उसे ए. वी. ओ. की स्थापना की आवश्यकता पड़े, जो कि निश्चित है, तो ऐसे लोग बड़ी आसानी से मिल जायेंगे, जो किसी निग्रो को पीट-पीट कर समाप्त कर देंगे और छोटे व्यवसायियों को, जो स्वतंत्रता के लिए कनाडा की ओर पलायन करना चाहेंगे, गोली मार देने में आनन्द का अनुभव करेंगे।

लेकिन टिबर डोनाथ का क्या हुआ? रिपब्लिक स्क्वायर में होनेवाले प्रतिशोधात्मक कांड को भयभीत होकर देखने के बाद वह दस दिनों तक इधर-उधर भागता फिरा और तब तक भागता फिरा, जब तक उसे यह विश्वास न हो गया कि रूसी फिर नगर पर अधिकार कर लेंगे और नये कम्यूनिज्म की स्थापना करेंगे। इस अवधि के बाद वह शान से सदर मुकाम में ड्यूटी के

लिए उपस्थित हुआ, जहाँ उसे एक गहरा आघात पहुँचा। उसे जवाब मिला —"ए. बी. ओ. का विघटन कर दिया गया है।" लेकिन फिर जब उसे यह मालूम हुआ कि एक नये स्पेशल पुलिस-दल का गठन किया जा रहा है, तब वह आश्वस्त हुआ।

कम्यूनिस्ट-अधिकारी ने उसे आश्वासन दिया—"तुम्हारा रिकार्ड काफी अच्छा है—तुम अफसर बनने के योग्य हो। तुम्हें एक कार मिलेगी। तुम्हारा काम भी लगभग वही, पहले की ही तरह, होगा; लेकिन इस बार तुम्हारी वर्दी नीली होगी और तुम लोग 'आर टुप' कहलाओगे।" अब यही 'आर टुप', अर्थात् भूतपूर्व ए. बी. ओ. सोवियत-अधिकृत हंगेरी की रखवाली करता है।

७. सीपेल का आदमी

बुडापेस्ट की क्रान्ति के कुछ महीने पहले हंगेरी की कम्यूनिस्ट सरकार ने देश के विभिन्न भागों की एक परिचयात्मक पुस्तक प्रकाशित की थी। इस पुस्तक की रचना विशुद्ध कम्यूनिस्टों के हाथों हुई थी और इसकी जाँच ए. वी. ओ. वालों की एक कट्टर परिषद् ने की थी। इस जाँच का एकमात्र उद्देश्य यही था कि पुस्तक में पार्टी की इच्छा के अनुकूल सामग्री ही रहे। इस पुस्तक में बुडापेस्ट के औद्योगिक क्षेत्र, सीपेल, के बारे में जो कुछ लिखा गया था, वह कुछ ही समय बाद वहाँ घटनेवाली घटनाओं की दृष्टि से बड़ा व्यंग्यात्मक था।

१९५६ के आरम्भिक काल की इस पुस्तक में लिखा गया था—"इन सब औद्योगिक क्षेत्रों में सीपेल सबसे बड़ा है। सीपेल के रैकोजी मेटल-वर्क्स में १८ कारखाने और १५० कर्मशालाएँ हैं। यहाँ पर निर्मित 'रेडिकल ड्रिल', 'वर्टिकल बोरिंग' और 'टर्निंग मिलें'; सीपेल की मोटर साइकिलों, बाइ-सिकिलों, सिलाई की मशीनों, रसोई के बर्तनों और पम्पों की भाँति ही, संसार के अनेक देशों को भेजी जाती हैं। सीपेल में एक तेल साफ करने का तथा एक चमड़े का कारखाना और एक कम्बल की तथा एक कागज की मिल है। इन औद्योगिक विकास-कार्यों के साथ-साथ यहाँ विभागीय दुकानों, एक अस्पताल और कुछ उपचार-केन्द्रों तथा एक शानदार क्रीड़ालय का भी निर्माण किया गया है। यहाँ के निवास-जन्य क्षेत्र के उद्यान में एक पुस्तक पढ़ते हुए मजदूर की मूर्ति है, जो नये सीपेल का प्रतीक है, तथा जो 'लाल (कम्यूनिस्ट) सीपेल' के मजदूरों के दीर्घकालीन संघर्षों का परिणाम है। सन् १९१९ में परिषदीय जनतंत्र की रक्षा के लिए यहाँ मजदूरों के जो बटालियन तैयार किये गये थे, उनमें ये मजदूर सबसे पहले शामिल हुए थे। सीपेल के मजदूर बाद में भी अपनी परम्पराओं के प्रति सदैव वफादार रहे और सन् १९४४ में नाजियों-द्वारा जारी किये गये बाहर निकल जाने के आदेश का विरोध करके इन्होंने प्रमुख कारखानों और उनके यंत्रादि की रक्षा की।"

शीतल सन्ध्या में कार्ल मार्क्स का अध्ययन करते हुए सुखी कम्यूनिस्ट मजदूर

की प्रतिमा तैयार करने के लिए यदि हंगेरियन कम्यूनिज्म के रूसी नेताओं को आदर्श 'मोडेल' की आवश्यकता होती, तो पूर्णतः उपयुक्त ज्योर्जी जाबो के अतिरिक्त किसी दूसरे आदमी को वे इस काम के लिए नहीं चुनते। ३५ वर्ष की उम्रवाला वह असाधारण सुन्दर और कुशल मजदूर रैकोजी बाइसिकिल कारखाने में काम करता था। वह ५ फुट १० इंच लम्बा, दुबला और रूखा व्यक्ति था। उसकी आँखें भूरी थीं और बाल काले। उसके चेहरे पर उभरी रेखाएँ उसके दृढ़ चरित्र की और ठुड्डी में पड़ा गड्ढा एक सुन्दर जीवन की आकांक्षा का प्रतीक था। उसकी पत्नी काफी तगड़ी थी; साथ ही, तीनों बच्चे भी स्वस्थ थे। जाबो अपने बारे में और अधिक सरल शब्दों में कहता है—"मैं विशुद्ध कम्यूनिस्ट मजदूर था। देखने में भी मैं वैसा ही लगता था।"

१७ वर्ष की उम्र से ज्योर्जी, अपने बाप और माँ की तरह, सीपेल में काम कर रहा था। मजदूर-वर्ग के माँ-बाप का पुत्र होने के कारण वह न केवल सन् १९४० की गुप्त कम्यूनिस्ट पार्टी की ओर आकर्षित हुआ, बल्कि वैसा मजदूर भी साबित हुआ, जैसा कम्यूनिस्ट चाहते थे। तदनुसार ही, वह उन धूर्ततापूर्ण निमंत्रणों की ओर भी आकृष्ट हुआ, जो उसे तथा उसके जैसे दूसरे नवजवानों को प्राप्त हो रहे थे।

"वे कहते थे—'जब हम लोग अधिकार में आयेंगे, तब तुम्हें एक गुलाम की तरह काम नहीं करना पड़ेगा।' मुझे यह सुन कर बड़ा आनन्द मिलता था। उन दिनों सीपेल में हमारा जीवन बहुत विषम हो गया था; अतः उनके इस दूसरे वादे को भी हमने बहुत पसन्द किया—'जब हम इस कारखाने को चलायेंगे, तब किसी दूसरे व्यक्ति की कार में तुम्हें काम नहीं करना पड़ेगा। तब तो सारी कारें तुम्हारी होंगी—कारखाना तुम्हारा होगा। सब-कुछ मजदूरों का होगा।"

जाबो को इस कपटपूर्ण वादे का भी शिकार बनाया गया था कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत मजदूरों की ही समितियाँ बनेंगी, जो उनके काम की मात्रा और पारिश्रमिक निर्धारित करेंगी। जाबो कहता है, "इसका काफी असर पड़ा। पूँजीवाद के अन्तर्गत, कार्यालय में बैठा-बैठा कोई व्यक्ति आदेश निकाल देता था और हमें उन आदेशों का पालन करना पड़ता था। कम्यूनिस्टों ने हमसे यह भी कहा कि प्रतिवर्ष मजदूरों को सवेतन छुट्टी मिलेगी और वे बालातोन झील के उन मनोरंजक स्थलों पर सैर करने जा सकेंगे, जहाँ उस समय केवल धनी लोग ही जा पाते थे। हमें अच्छे मकान देने का भी उनकी ओर से आश्वासन

दिया गया। यह भी कहा गया कि वह दिन दूर नहीं, जब हर व्यक्ति के पास अपनी मोटर-साइकिल होगी।"

कम्यूनिज्म के वादे इतने महान् और चालाकी से परिपूर्ण थे कि सन १९४४ में ज्योर्जी जाबो, जो युद्धास्त्र विभाग (जिसका नामकरण बाद में एक प्रख्यात कम्यूनिस्ट-नेता के नाम पर 'रैकोजी मेटल वर्क्स' किया गया।) में काम करने के कारण सैनिक-सेवा से बरी कर दिया गया था, गुप्त रूप से एक कम्यूनिस्ट-गिरोह में प्रविष्ट हो गया। उन उत्साही और दृढ़व्रती लोगों के गिरोह में जाबो यह अनुभव करता था कि वह 'कम्यूनिस्ट हंगेरी' के लिए काम कर रहा है, जिसमें पार्टी-द्वारा किये गये सब वादे पूरे हो जायेंगे।

सन् १९४५ की वसन्त-ऋतु में, जब जाबो २४ वर्ष का था, कम्यूनिस्टों ने एक व्यापक प्रचार-आन्दोलन आरम्भ किया, जिसका उद्देश्य हंगेरी पर अपना नियंत्रण स्थापित करना था। जाबो कहता है—"यह बड़ा उत्तेजनामय कार्य था। हम जानते थे कि सभी वादों की पूर्ति एक साथ नहीं की जा सकती; क्योंकि युद्ध के विध्वंसात्मक परिणामों के कारण हंगेरी के पुनर्निर्माण की आवश्यकता थी। इसीलिए हमें बतलाया गया कि चूँकि रूस कम्यूनिज्म को अच्छी तरह समझता है और हम नहीं समझते; अतः कुछ वर्षों तक हमें रूस के मार्ग-निर्देश की आवश्यकता पड़ेगी।"

अतएव, यद्यपि रूसी विमानों और 'गनों' ने जर्मनों से मुक्ति दिलाने के संघर्ष में हंगेरी को काफी क्षति पहुँचायी थी, तो भी ज्योर्जी जाबो और उसके कम्यूनिस्ट मित्र, रूसी नेतृत्व में, क्षति-पूर्ति के लिए विवश हुए। विभिन्न आर्थिक योजनाओं के कारण वादों की पूर्ति भी स्थगित कर दी गयी। यही नहीं, उन योजनाओं को सफल बनाने के लिए प्रत्येक मजदूर को, बिना कोई अतिरिक्त पारिश्रमिक के, पहले की अपेक्षा एक-तिहाई काम भी करना पड़ा।

एक अच्छा कम्यूनिस्ट होने के नाते जाबो ने इस अतिरिक्त काम करने की आवश्यकता को समझा। उसका कथन है—"हमें बतलाया गया था कि पूँजी-वादी और प्रतिक्रियावादी पुनः हंगेरी पर अधिकार करने और पुराने बुरे दिन वापस लाने का प्रयत्न करें, इससे पहले हमें अपने को सशक्त बना लेना चाहिए और इसके लिए समय बहुत थोड़ा है।"

जाबो ने देखा कि प्रति व्यक्ति के काम की मात्रा निर्धारित करनेवाले जो नियम प्रति माह प्रकाशित किये जाते थे, उनमें शनैः-शनैः वृद्धि ही की जा रही थी। फिर भी वह इससे जल्दी असंतुष्ट नहीं हुआ। वह कहता है—"मुझे

इससे कोई परेशानी नहीं होती थी; क्योंकि मैं एक 'स्ताखनोवाइट' बन गया था और अपनी पाली के दूसरे मजदूरों की तुलना में अधिक काम करने के उपलक्ष में मुझे एक पदक भी मिला था।"

जाबो के गठीले हाथों और तगड़े शरीर को देख कर ही आपको विश्वास हो जायगा कि वह मजदूरों का सरदार रहा होगा। किसी भी शासन-व्यवस्था में वह एक अच्छा मजदूर साबित हो सकता है। थोड़ी-सी कल्पना करने से ही आप सीटिल् के बोइंग वर्क्स या रिवर रूज की फोर्ड असेम्बली में उसकी कार्य-संलग्नावस्था का चित्र अपने मानस-पट पर खींच सकते हैं।

वह स्वीकार करता है—"मैंने सदा अपने काम से प्यार किया है। मेरा काम निस्संदेह अच्छा था; लेकिन शादी होने तक मैंने इस बात का अनुभव नहीं किया कि मुझे कितना कम पारिश्रमिक मिलता था। जब मेरी पत्नी आयी, तो मैंने कुछ दिनों की छुट्टी माँगी, लेकिन यह कह कर मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी कि मैं एक बहुत काम का मजदूर था और मुझे छोड़ सकना उनके लिए सम्भव न था। तब मैंने देखा कि बालातोन झील जाने के लिए अब भी उन्हीं श्रेणियों के लोगों को सवेतन छुट्टी मिलती थी, जिन्हें पहले यह सुविधा प्राप्त थी। छुट्टी पानेवाले लोग थे—मैनेजर, रूसी परामर्शदाता, ए. वी. ओ. के ख़ुफिये और पार्टी के नेतागण। शायद ही कभी किसी मजदूर को वहाँ जाने की सुविधा मिलती थी।

"और, उन्हीं श्रेणियों के लोगों को मोटर-कारें, रोएँदार कोट और अच्छे खाद्यपदार्थ भी प्राप्त थे। इस बारे में मैं किसी से कुछ नहीं कहता था; क्योंकि ए. वी. ओ. के खुफियों से मैं डरने लगा था। लेकिन एक दिन मेरा एक मित्र, जो रैकोजी बाइसिकिल वर्क्स में काम करता था, भाग कर आस्ट्रिया चला गया। इस सन्देह पर कि मैंने उसकी सहायता की थी, ए.वी.ओ. वालों ने मुझे पकड़ लिया और मेरे वे दो दिन बहुत बुरी तरह बीते। वे लोग लगभग हमेशा मुझे पीटते रहे, लेकिन अन्त में मैंने उन्हें विश्वास दिला दिया कि उसके भागने से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं था। पिटाई के बाद उन्होंने मुझे एक छोटा-सा कार्ड और टेलिफोन के तीन नम्बर दिये और कहा कि यदि मैं अपने मित्र के बारे में, या और कुछ, सुनूँ, तो उनमें से किसी एक नंबर को उसकी सूचना दे दूँ। ए.वी.ओ. वाले प्रायः मुझसे वह कार्ड माँग कर देखते थे—सम्भवतः इस जाँच के लिए कि उस कार्ड को मैं अपने पास रखता था, या नहीं।"

अब तक ज्योर्जी जाबो को यह बात मालूम हो चुकी थी कि उसका पार्टी का सदस्य होना उसके लिए कुछ विशेष सहायक नहीं साबित हुआ। अब उसे पहले से भी कम मजदूरी लेकर अधिक कठोर काम करने के लिए मजबूर किया गया था। एक अच्छा कम्यूनिस्ट होते हुए भी ए.वी.ओ.की पिटाई से वह अपने को बचा नहीं सका। बालातोन झील पर छुट्टियाँ बिताने की भी उसे अनुमति नहीं थी। कोई अच्छा निवास-स्थान भी उसे प्राप्त नहीं हुआ था।

"वास्तव में, इससे मुझे लाभ क्या हुआ?"—एक दिन उसने अपने से प्रश्न किया।

केवल अधिक परिश्रम। कभी-कभी सप्ताह में दो-तीन रातें, काम खत्म करने के बाद भी, उसे कारखाने में ही बितानी पड़ती थीं—केवल कम्यूनिज्म का गुणगान सुनने के लिए। अनुतप्त स्वर में वह कहता है—"सदा यही कहा जाता था कि निकट भविष्य में स्थिति सुधर जायेगी। मुझे यह देख कर वस्तुतः बहुत क्रोध आता था कि हमें वे लोग उपदेश देते थे, जो स्वयं कोई काम नहीं करते थे।"

इस सबके अलावा उन्हें जबर्दस्ती विरोध-प्रदर्शिनी सभाओं में भी भेजा जाता था। "हमें रोजेनबर्ग के मुकदमे का विरोध करने, पेरिस के मजदूरों का समर्थन करने और कोरिया के लोगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करने के लिए ले जाया जाता था। कोरिया-युद्ध के समय, हमें चीनी कम्यूनिस्ट स्वयंसेवकों के सहायतार्थ, बिना पारिश्रमिक के, महीने में चार दिन काम करना पड़ता था और अमेरिका-द्वारा कीटाणु-युद्ध का प्रयोग किये जाने का विरोध करने के लिए प्रेरित किया गया था।"

जाबो कहता है—"कुछ सप्ताह तो ऐसे बीत जाते थे, जब मैं अपने परिवार के पास जा भी नहीं पाता था। और, कभी जाता भी था, तो उन्हें देने के लिए एक फारिन्ट भी मेरे पास शायद ही होता था। इतने सारे काम के लिए मुझे महीने में केवल एक हजार फारिन्ट मिलते थे, जो एक कपड़े का सूट खरीदने के लिए भी पर्याप्त नहीं थे। मैं कभी इतनी रकम जमा न कर सका, जिससे कपड़े का एक सूट खरीद पाता।" ज्योर्जी जाबो की अल्प आमदनी का, जिसे कम्यूनिज्म का पुरस्कार ही कहिये, अधिकांश बच्चों के कपड़े खरीदने में ही खत्म हो जाता था।

ज्योर्जी के परिवारवालों में भी इस कपटपूर्ण व्यवस्था के प्रति विरोध-भाव पैदा होने लगा था। इसका आरम्भ अचानक ही ज्योर्जी की पत्नी-द्वारा हुआ था,

जिसके मन में अनेक प्रश्न उठने लगे थे। उसने प्रथम बार उससे प्रश्न किया—"ऐसा क्यों है? तुम एक अच्छे कम्यूनिस्ट हो। पार्टी की बैठकों में भाग लेते हो—परेडों में भी जाते हो। फिर हम लोग अच्छी दुकानों से सामान क्यों नहीं खरीद सकते?"

ज्योर्जी ने उत्तर दिया—"तुम कहीं भी खरीद सकती हो—केवल पर्याप्त पैसे चाहियें।"

"नहीं, नहीं, मेरा मतलब उन अच्छी दुकानों से है, जहाँ चीजें सस्ती मिलती हैं।"

"देखो, अगर तुम चाहो, तो पेस्ट की बड़ी दुकानों में जा सकती हो।"—उसने उत्तर दिया।

"लेकिन मेरा मतलब तो उन दुकानों से है, जो सीपेल में हैं।" और उसने उसे उन तीन दुकानों के बारे में बतलाया, जहाँ वह नहीं जा सकती थी। पहली, बहुत अच्छी दुकान केवल रूसियों के लिए थी, जहाँ हंगेरी में बनी वस्तुएँ, मूल्य में ८० प्रतिशत कटौती करके, बेची जाती थीं। दूसरी दुकान भी लगभग उतनी ही अच्छी थी और वह केवल हंगेरियन अधिकारियों तथा ए. वी. ओ. वालों के लिए थी। वहाँ मूल्य में लगभग ७० प्रतिशत किफायत दी जाती थी। तीसरी दुकान छोटे कम्यूनिस्ट अधिकारियों के लिए थी, जहाँ चीजें अच्छी किस्म की होती थीं और भाव भी उचित होते थे। श्रीमती जावो ने शिकायत की—"और, सभी अच्छी चीजें उन दुकानों में खप जाती हैं, तब बचा-खुचा माल हम मजदूरों की दुकानों में भेज दिया जाता है, और हमें उनके लिए भारी कीमतें चुकानी पड़ती हैं। ऐसा क्यों है?"

ज्योर्जी ने कहा—"मेरा खयाल है कि हर मामले में ऐसा ही चल रहा है।"

इस पर उसकी पत्नी ने जोर देकर कहा—"लेकिन मुझे तो जहाँ तक मरण है, तुमने कहा था कि कम्यूनिज्म में सभी लोग बराबर होंगे।"

"जब सारी व्यवस्था ठीक हो जायेगी, तब सब कोई समान हो जायेंगे।"

"लेकिन ज्योर्जी, तब तक के लिए कोई ऐसा प्रबंध तो कर दो कि किसी अच्छी दुकान से हम चीजें खरीद सकें?"

लेकिन अपने अच्छे रिकार्ड और पार्टी के प्रति निर्विवाद निष्ठा के बावजूद भी ज्योर्जी ने देखा कि कोई साधारण मजदूर अच्छी दुकानों में सामान नहीं खरीद सकता था। उसे बतलाया गया—"वे बड़े अधिकारियों के लिए हैं। उन बड़ी दुकानों में तुम्हें स्वयं अच्छा न लगेगा।"

उस रात ज्योर्जी ने अत्यन्त गोपनीय रूप से अपनी पत्नी से बातचीत की। "हम लोगों की अवस्था अब पहले से भी खराब है।"—उसने स्वीकार किया—"पहले भी धन तो नहीं था हमारे पास; लेकिन यह सपना अवश्य देख सकते थे कि जब काफी रकम हाथ में आ जायेगी, तब शहर की सबसे बड़ी दुकान में जाकर सभी चीजें एक-एक कर खरीद सकेंगे। लेकिन अब तो उन दुकानों में प्रवेश भी निषिद्ध कर दिया गया।"

क्रान्ति की सर्वाधिक विचलित कर देनेवाली कहानियों में से एक का सम्बन्ध इस बात से भी है कि किस तरह इस कट्टर कम्यूनिस्ट ने, अन्त में, उस व्यवस्था के विरुद्ध शस्त्र उठाये। प्रतिक्रियावादी होने के कारण उसने वैसा किया, ऐसा नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उसने कम्यूनिज्म के रक्षार्थ संघर्ष किया था। कट्टर कैथोलिक होने के कारण उसने वैसा किया हो, यह बात भी नहीं थी; क्योंकि उसने कभी गिरजाघर की चिन्ता नहीं की। और, न यही बात थी कि बुद्धिवादी होने के कारण उसने कम्यूनिज्म के गुणावगुणों पर विचार किया था और उसे कपटपूर्ण समझा था। यह सब एक फुटबाल के खेल के कारण हुआ। उस स्मरणीय खेल का वह जो वर्णन करता है, उसे सुन कर कोई भी व्यक्ति सहज ही यह बात समझ सकता है कि उन कटु दिनों में, सम्पूर्ण हंगेरी के लोग उस कपटता के रूप को समझने लगे थे, जिसके वे शिकार बने थे; लेकिन वह समझ सदा ही किसी छोटी-सी घटना के परिणामस्वरूप दिमाग में आती थी।

वह अपना संस्मरण बतलाता है—"बुडापेस्ट की बात है। उस दिन मौसम बहुत अच्छा था। मैं वोरोशिलोव-स्ट्रीट से होकर नये बड़े स्टेडियम की ओर जा रहा था। भले ही हम लोगों के पास नये सूट के लिए पर्याप्त रकम नहीं होती थी, पर फुटबाल का खेल देखने के लिए हम कुछ फारिन्ट खर्च कर देते थे; क्योंकि स्टेडियम में जाना काफी आनन्ददायक था। आप कल्पना नहीं कर सकते कि वह स्टेडियम कितना सुन्दर था। यही एक अच्छा काम था, जिसे कम्यूनिस्टों ने पूरा किया था। सुना है कि वह यूरोप का सबसे बड़ा और दुनिया का सबसे सुन्दर स्टेडियम है।"

हंगेरियनों का क्रीड़ा-प्रेम तो प्राचीन काल से प्रसिद्ध है। हालाँकि सम्पूर्ण हंगेरी-राष्ट्र की आबादी सुप्रसिद्ध न्यूयार्क नगर की आबादी के ही बराबर है; फिर भी तलवारबाजी, तैराकी, घुड़सवारी और 'ट्रैक' खेलों के विश्व-चैम्पियन वहाँ काफी संख्या में हुए हैं। उदाहरणस्वरूप, सन् १९५२ में हेलसिंकी में

जो ओलिम्पिक खेल-प्रतियोगिता हुई, उसमें अनेक खेलों में हंगेरियनों ने पहला स्थान प्राप्त किया और एक टीम के रूप में हंगेरी को विश्व में तीसरा स्थान मिला। लेकिन हाल के वर्षों में फुटबाल के खेल के प्रति हंगेरियन बहुत आकर्षित हुए हैं—उससे उन्हें, खास कर सीपेलवालों को, बहुत आनंद मिलता है। इंग्लैंड और फ्रांस में प्रचलित होने के काफी बाद यह दुरूह खेल हंगेरी पहुँचा; लेकिन जहाँ तक विगत एक दशाब्दी का ताल्लुक है, हंगेरियन इसमें भी विश्व-चैम्पियन बन गये हैं। कभी-कभी तो वे अपने काफी प्रसिद्ध प्रति-द्वंद्वियों को इतने अधिक गोलों से हराते हैं कि एक विदेशी विशेषज्ञ को कहना पड़ा—"जब मेर्लिन के जमाने में जादूगरों को इंग्लैण्ड से निकाला गया, तो वे कहाँ गये, मुझे मालूम है—वे हंगेरी चले गये।"

जाबो कहता है—"उस दिन वहाँ एक बड़ा शानदार खेल हुआ। विदेश से एक चैम्पियनशिप टीम आयी थी, जिस पर हम लोगों ने विजय पायी। यह सही है कि साधारणतः हम जीतते ही हैं, लेकिन उस खेल में जो एक असाधारण बात हुई, वह यह कि मैं पूर्वी आस्ट्रिया से आये हुए कुछ लोगों के पीछे, जो हंगेरियन बोलते थे, बैठा था और उन्हें कह दिया था कि उनकी टीम हारनेवाली है। हमने परस्पर थोड़ी बातचीत की। मैंने पूछा—"यदि आप लोग उतनी दूर, वियेना, से आये हैं, तो इन सस्ती सीटों पर क्यों बैठे हैं?"

"उन्होंने कहा—'हम भी मजदूर हैं।'

"यह सुन कर मैंने पूछा—'तब आप लोग इतने अच्छे 'सूट' कैसे पहन पाते हैं?' तदुपरान्त मैंने और भी कई सवाल किये—'मजदूर लोग इतनी रकम कैसे बचा पाते हैं कि इतनी दूर बुडापेस्ट की यात्रा कर लेते हैं? इतनी खाद्यसामग्रियाँ आप को कहाँ से मिल जाती हैं?' मुझे और भी कई सवाल पूछने थे, लेकिन मैंने उनसे नहीं पूछा—जैसे वे पास में पुलिसवालों के आने पर भयभीत क्यों नहीं होते थे?' उनकी टीम हार रही थी, फिर भी वे उतना हँस कैसे रहे थे?" लम्बे-तगड़े ज्योर्जी जाबो ने अपने हाथों पर एक नजर डाली और आगे कहा—"उस फुटबाल के खेल के बाद मैं बराबर अपने से यह प्रश्न करता रहा—'वियेना के गंदे पूँजीवादी उतना कुछ कैसे कर सके, जबकि बुडापेस्ट के अच्छे कम्यूनिस्ट वैसा नहीं कर पा रहे हैं?'"

फुटबाल का खेल देखने के बाद, जब ज्योर्जी जाबो अपने बाइसिकिल-कारखाने पहुँचा, तो उसके सामने और भी कई नये प्रश्न उपस्थित थे। "हम जो ये बाइसिकिलें बनाते हैं, वे कहाँ चली जाती हैं?" वे रूस जाती

थीं। "जब मैं पूँजीपतियों के अधीन काम करता था, तबसे अब क्या मैं अधिक पैदा करता हूँ?" वस्तुतः वह कम कमा रहा था। "चीजों की कीमतें ऊँची उठी हैं या गिरी हैं?" चीजों के मूल्य काफी बढ़ गये थे। "ये रूसी अब भी यहाँ क्यों हैं?" वे वहाँ रह कर हंगेरी पर निगरानी रखते थे।

अन्त में, उसने सबसे दुर्भाग्यपूर्ण प्रश्न किया—"क्या आज मैं पहले की अपेक्षा कुछ कम पराधीन हूँ?" उत्तर एकदम ही स्पष्ट था—"उस समय मैं स्वतंत्र था। उस समय हँसने या अपने मन की बातें कहते समय मुझे कोई भय नहीं होता था। वास्तविक गुलाम तो मैं अब हूँ।"

तबसे वह 'विशुद्ध कम्युनिस्ट मजदूर', ज्योर्जी जाबो, खुले तौर पर इन सबके बारे में बोलने लगा। उसने पाया कि रैकोजी मेटल वर्क्स के अधिकांश लोग उसी की तरह विचार रखते हैं। वह कहता है—"हमने कहा—जहन्नुम में जाये ए.वी.ओ.। यदि वे सभी शिकायत करनेवालों को गिरफ्तार करना चाहेंगे, तो उन्हें हम सबको गिरफ्तार करना पड़ेगा।"

उसने पार्टी की बैठकों में जाना बन्द कर दिया। बनावटी जुलूसों में भी भाग लेने से उसने इन्कार कर दिया। उसने अपने काम की मात्रा भी घटा कर उतनी कर दी, जितनी कि एक व्यक्ति से की जा सकती है। उसने अपने बच्चों से यह कहना भी आरम्भ कर दिया कि वे अपने माँ बाप-समेत एक अत्यन्त निराशापूर्ण दुःखान्त स्थिति में फँस गये है। उसने बतलाया—"मैंने उन्हें उस शासन के प्रति घृणा करना सिखाया। मैंने उन्हें बताया कि यह तो मजदूरों की गर्दन पर सवार होनेवाली व्यवस्था है।"

उग्र रूप से बड़बड़ानेवाले ज्योर्जी जाबो की ऐसी ही मानसिक अवस्था थी, जब २२ अक्तूबर, १९५६ को उसने सुना कि कुछ छात्र सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन करनेवाले हैं। अपनी पत्नी को यह बतलाये बिना, कि वह कहाँ जा रहा था, वह मध्यवर्ती पेस्ट में पहुँचा और उसने पूछताछ की कि सभा का आयोजन कहाँ किया गया है। उसे मालूम हुआ कि कुछ छात्र बुडा के टेक्निकल हाईस्कूल में जमा हुए हैं। उसने नदी को पार किया और दीपों से प्रकाशमान् उस इमारत में पहुँचा। वहाँ उसने गहरी निराशा के साथ, एक-पर-एक नवजवान को भाषण करते सुना, जिनकी बातों का कोई अर्थ नहीं था। उसने सोचा—"इससे कुछ होने-जानेवाला नहीं है।"

लेकिन तभी, पीछे से उठ कर एक व्यक्ति ने, जो उसी की तरह एक भूरी गंजी पहने था, कहा—"मैं एक प्रश्न पूछना चाहूँगा। किस अधिकार से हमारे

देश में रूसी सैनिकों को रख छोड़ा गया है?" यह प्रश्न सुन कर जाबो के शरीर में बिजली दौड़ गयी और उसके बाद ही उसने प्रसन्नता के साथ देखा कि नवजवान अपने भाषणों में, उन सन्देहों और घृणा को व्यक्त करने लगे, जो कम्यूनिज्म-शासन के प्रति उसके मन में भी जमा हो गये थे।

"कुछ बड़ी बात होने जा रही है।"—वह बुदबुदाया। तभी सभा-कक्ष के एक दूसरे भाग से उठ कर एक अन्य मजदूर ने जाबो के मन की बात कह डाली—"आप लोगों की तरह सुन्दर भाषा तो नहीं है मेरे पास।—" वह रुक-रुक कह रहा था—"मैं सीपेल का एक मजदूर हूँ। लेकिन इतना विश्वास अवश्य दिलाऊँगा कि मेरे-जैसे लोग आपके साथ हैं।" इस घोषणा पर भारी हर्षध्वनि हुई और उस रात ज्योर्जी जाबो यह निश्चय कर अपने घर गया कि यदि कोई बड़ी बात हुई, तो वह उसमें हिस्सा जरूर लेगा।

दूसरे दिन, अपराह्नकाल, जब वह बाइसिकिल-कारखाने में काम कर रहा था, तभी यह समाचार उसे मिला कि छात्रों ने सड़कों पर जुलूस बना कर चलना शुरू कर दिया है। तुरन्त ही उसने अपने साथी मजदूरों से कहा—"कुछ गड़बड़ी होनेवाली है। उन्हें हमारी जरूरत पड़ेगी।" ठीक यही विचार सीपेल के अन्य मजदूरों के मन में भी उठा और गोधूलि-वेला में वे प्रस्थान कर गये। जाबो के निकटवर्ती क्षेत्र के १५ हजार मजदूरों में से २४० को छोड़ कर बाकी सब क्रान्ति में शामिल हो गये। उन २४० में से २०० को क्रान्तिकारियों ने, मशीनों को कोई क्षति न पहुँचाये, इस उद्देश्य से पहरे पर तैनात कर दिया था। इसका मतलब यह हुआ कि जिन १५ हजार मजदूरों को कम्यूनिज्म ने अपना सहारा समझा था, उनमें से केवल ४० ही उसके प्रति वफादार रह गये थे।

क्रान्ति की तीन अवस्थाओं में ज्योर्जी जाबो ने क्या-क्या किया, उसका विस्तृत विवरण देना पूर्वोक्त विषय की पुनरावृत्ति-मात्र होगा। रेडियो-स्टेशन पर जो आक्रमण हुआ, उसके लिए सीपेल के शस्त्रागार से एक ट्रक शस्त्रास्त्र एवं गोले-बारूद भेज कर उसने सहायता पहुँचायी, जिसने संघर्ष का रुख ही बदल दिया। कोर्विन सिनेमा के जवान योद्धाओं में काफी संख्या में सीपेल के ही आदमी थे और उन्होंनें सीपेल के ही शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया था। किलियन-बैरक भी, जहाँ बहुत थोड़ी युद्ध-सामग्री थी, सीपेल के ही शस्त्रास्त्रों और आदमियों पर निर्भर करता था। आरम्भ के दिनों में जो विजय-प्रदायिनी लड़ाइयाँ हुईं, उन सबमें ज्योर्जी जाबो और उसके साथी मजदूरों ने ही क्रान्ति

के लिए आवश्यक सहायता पहुँचायी। कई बार स्वयं ज्योर्जी पर गोलियाँ चलायी गयीं; उसने टैंकों को जलाने में सहायता पहुँचायी और साधारण तौर पर वह काफी जोशीला साबित हुआ, जैसा कि अपने ऊपर अत्याचार करनेवालों के विरुद्ध शस्त्र उठानेवाले अधिकांश भूतपूर्व विशुद्ध कम्यूनिस्ट साबित हुए थे।

दूसरी, शांतिपूर्ण अवस्था में, उसने अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण काम किया। अनेक मजदूरों से अधिक प्रौढ़ होने के कारण, उसी के निर्देशन में सीपेल के मजदूरों ने नये हंगेरी-राज्य में रैकोजी मेटल वर्क्स के उपयोग के बारे में अपनी योजना तैयार की। उनकी यह योजना, निश्चय ही, प्रतिक्रियावादी नहीं थी और अमेरिका के अनेक लोग अवश्य ही उसे कम्यूनिस्ट-रूपरेखा वाली करार देते; पर उस समय हंगेरी की जो अवस्था थी, उसमें वह तर्कसंगत और एक उदार समाधान के रूप में थी। जाबो कहता है—"हमारी योजना यह थी कि कारखाने का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये—उसका स्वामित्व और देखरेख सरकार के ही हाथ में रहे, पर काम-काज का सारा प्रबन्ध मजदूरों की समितियाँ करें। तब हमारे इन्जीनियर यह मात्रा निर्धारित करते कि एक आदमी को कितना काम करना चाहिए। काम की मात्रा के बारे में निर्णय करने का अधिकार कार्यालय में बैठनेवाले किसी अधिकारी को नहीं दिया जाता। कारखाने में ए. वी. ओ. या उसके जैसे किसी तत्त्व को प्रवेश नहीं मिलता। और, छुट्टियाँ तथा चिकित्सा-जैसी सभी अच्छी चीजों का उपभोग सब समान रूप से करते। हम उस बारे में पूर्णतः दृढ़निश्चय थे।

२ नवम्बर के अपराह्नकाल तक, सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए, ज्योर्जी जाबो और उसकी समिति के पास ठोस प्रस्ताव थे। सरकार का रूप कैसा हो, इस बारे में भी जाबो के पास सुझाव थे। "हमारा खयाल था कि उदार श्रमिक दलीय सरकार, जो जनता के उपभोग और खाने के लिए चीजों के उत्पादन पर जोर देती, सबसे अच्छी होती। हमारा विचार था कि रूस के लिए शस्त्रास्त्रों का उत्पादन नहीं होना चाहिये। हम व्यक्तिगत स्वतंत्रता, न्यायालय, राजनीतिक दल, समाचारपत्र और स्वतंत्र रेडियो चाहते थे। हम एक अधिकार पर विशेष जोर देते थे, जिसकी आवश्यकता हमें बुरी तरह अनुभव होती थी। वह था, विदेशों की यात्रा का अधिकार। हम यह जानना चाहते थे कि विदेशों के मजदूर क्या कर रहे थे।" नये हंगेरी को निर्देशित करनेवाली साधारण भावना के बारे में जाबो का प्रस्ताव था—"हम नहीं चाहते थे कि हमारे यहाँ फिर कुलीनतन्त्र लौटे या वे स्वार्थी पूँजीवादी फिर अड्डा जमायें, जिनका

अनुभव हमें अतीत में प्राप्त हो चुका था। हम चाहते थे कि यदि गिरजाघर राजनीति में हस्तक्षेप न करे, तो वह जैसे पहले था, वैसे फिर आ जाये। हम सब एक सुन्दर स्वस्थ सरकार के लिए काम करना और आस्ट्रिया या स्विट्जर-लैण्ड, या स्वीडेन की तरह अपनी स्थिति बनाना चाहते थे।"

जब गेलर्ट पहाड़ी पर स्थित रूसी तोपखाने ने, जिसके गोले रैकोजी मेटल वर्क्स तक पहुँचते थे, उन मधुर स्वप्नों को नष्ट कर दिया, तब जाबो एक दीर्घ-कालीन और खूनी लड़ाई के बीच, जो क्रान्ति की तीसरी अवस्था थी, फँस गया और मजदूरों की एक दृढ़-संकल्प फौज ने रूसियों का सामना किया। सीपेल का हर आदमी जाबो का साथ दे रहा था। मजदूरों के उस पराक्रमी गिरोह ने बुडापेस्ट की लड़ाई के सबसे कठोर संघर्ष से रूसियों की नाक में दम कर दिया। जाबो ने स्वयं सीपेल के शस्त्रागार की 'गनों' का प्रयोग किया, रूसी टैंकों पर गैसोलिन छिड़कने में सहायता पहुँचायी, सोवियत विमानों को धराशायी करनेवाली विमान-विध्वंसक 'गन' के लिए गोले-बारूद की व्यवस्था की और संघर्ष में काम आनेवाली एक अत्यन्त सुन्दर युक्ति को जन्म दिया। जब कभी सीपेल के लोग किसी ऐसे टैंक को अकेले में देख लेते, जिसे नष्ट करने में वे समर्थ नहीं थे, तब कुछ बहुत हिम्मती जवान कूद कर उसकी बुर्जी पर पहुँच जाते। वहाँ टैंक की कोई भी 'गन' उन पर गोली नहीं चला सकती थी। अतः वे बड़े इतमीनान से उस पर हंगेरियन झंडा फहरा देते। यदि अन्दर बैठे रूसी, झंडे को हटा देने के विचार से प्रवेश-द्वार खोलते, तो वे मार दिये जाते और अविलम्ब ही टैंक को नष्ट कर दिया जाता। लेकिन यदि वे झंडे को रहने देते, तो आगे जो रूसी टैंक उन्हें मिलता, वह दुश्मन समझ कर उन पर गोली-वर्षा शुरू कर देता और इस प्रकार टैंक का विध्वंस हो जाता। अवश्य ही यह युक्ति कुछ समय तक ही चलनेवाली थी, लेकिन रूसियों के समझने के पूर्व तक यह बड़ी सुन्दर और सीधी-सी तरकीब थी।

लेकिन अन्त में रूसियों की विजय हुई और सीपेल के विनाश के साथ ही ज्योर्जी जाबो और उसके साथियों की अवस्था विपन्न हो गयी। जैसा कि हमने पहले ही देखा, वे शांतिपूर्वक गाँवों की ओर भाग गये और इस प्रकार गिरफ्तारी से बच गये। उसके बाद उन्होंने जो किया, वह बुडापेस्ट के संघर्ष का बड़ा वीरतापूर्ण अध्याय है। उनकी वीरता को ठीक-ठीक समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम उस स्थिति का किंचित् विवेचन कर लें, जिससे होकर वे गुजर रहे थे।

नगर पर वास्तविक शासन रूसियों का था और वे एक कठपुतली सरकार के माध्यम से जिन्दगी और मौत के फैसले सुनाते थे। सभी खाद्यपदार्थ रूसियों के अधिकार में थे और केवल उन्हीं हंगेरियनों को भोजन मिलता था, जिन्हें रूसी देना चाहते थे। पुलिस, स्वास्थ्य-सेवाओं और नगर के अस्तित्वमूलक सारे तत्त्वों पर भी रूसियों का ही नियंत्रण था। इस रूसी नियंत्रण का विरोध करना भुखमरी, कैद या प्राणदण्ड का खतरा मोल लेना था।

इनके अलावा, रूसियों के हाथ में एक और भयानक अस्त्र था, जिससे हंगेरियन किसी भी अन्य चीज की अपेक्षा अधिक डरते थे। ६ नवम्बर के अपराह्नकाल, जबकि सीपेल का युद्ध जारी ही था, रूसियों ने हंगेरियनों की धर-पकड़ शुरू कर दी और उन्हें ट्रकों में भर कर गुप्त रेलवे-गुदामों में भेजने लगे। वहाँ से उन्हें बन्द गाड़ियों में ठूँस-ठूँस कर आजन्म गुलामी करने के लिए साइबेरिया भेज दिया जाता था। सम्भवतः जान-बूझ कर ही रूसियों ने उनमें से कुछ को भाग जाने का अवसर दिया, ताकि उस अमानवीय दण्ड का समाचार सम्पूर्ण हंगेरी में फैल जाये। अधिकांश हंगेरियनों के लिए देशनिकाला देकर साइबेरिया भेजा जाना मौत से भी बढ़ कर था और इसीलिए बहुत-से लोगों ने वहाँ जाने की बजाय मरना ही पसन्द किया, जैसा कि गोलियों से छलनी हुई उनकी लाशों से सिद्ध हुआ।

अतएव वास्तविक लड़ाई की समाप्ति के बाद ज्योर्जी जाबो ने जो-कुछ किया, वह मौत, भुखमरी, फिर से बनाये गये ए. वी. ओ. द्वारा गिरफ्तारी और देश से निकाले जाने के भय से प्रताड़ित होकर किया। उसने जो-कुछ किया, वह इस प्रकार है।

११ नवम्बर को सीपेल के मजदूर काम पर हाजिर हुए। हंगेरियन सरकार और उसके रूसी स्वामियों ने भारी उद्योगों के मजदूरों से, उत्पादन-कार्य आरम्भ करने के बारे में, बड़ी तत्परता से अनुरोध किया था, ताकि मुद्रास्फीति फैलने से देश की हालत खराब न हो जाये। कम्यूनिस्ट नेताओं ने खानों और विद्युत्-मजदूरों को फुसला कर क्रांति से पहले की मात्रा में काम कराने का प्रयत्न किया और यह वादा किया कि यदि वे वैसा करेंगे, तो उन्हें भोजन और यथेष्ट मजदूरी दी जायेगी।

जाबो ने इन सरकारी प्रलोभनों का मुकाबला एक साधारण हड़ताल में सहयोग पहुँचा कर किया। उक्त विचार लगभग एक ही समय जिन अनेक लोगों के दिमाग में आया, जाबो भी उनमें से एक था; परन्तु अपने कारखाने में

स्पष्ट रूप से नेतृत्व करने का साहस उसी ने दिखाया। वह जानता था कि कारखाने में पुनः नियुक्त किये गये ए. वी. ओ. के गुप्तचर अवश्य ही इस आशय की रिपोर्ट भेजेंगे कि वह लोगों को उभाड़ता है, लेकिन अब उसे इसकी परवाह न थी। उसने स्पष्ट कह दिया—"पुलिसवालों ने स्वातंत्र्य-सैनिकों से जो तीन हजार बाइसिकिलें छीनी हैं, उनकी पूर्ति करने के बाद हम काम बन्द कर देंगे।"

दूसरे कारखानों में भी उसी की तरह हिम्मती लोग उठे और उन्होंने भी उसी तरह के प्रस्ताव रखे। हालाँकि मजदूर नेताओं को बराबर मौत की धमकी दी जा रही थी, फिर भी उक्त हड़ताल सम्पूर्ण हंगेरी में आश्चर्यजनक सफलता के साथ सम्पन्न हुई।

सम्पूर्ण राष्ट्र का आर्थिक जीवन जहाँ-का-तहाँ रुक गया। गाड़ियाँ रोक दी गयीं और उन संकटपूर्ण घड़ियों में उद्योग-धंधों को बिजली मिलनी बन्द हो गयी। ट्रकवालों ने साफ जवाब दे दिया कि यदि कम्यूनिस्टों के हाथ में बाँटने का अधिकार रहेगा, तो वे अन्न की कमी से भूखे मरनेवाले नगर में खाद्यान्न नहीं लायेंगे। औरतों ने मकानों की सफाई बन्द कर दी। सीपेल के कारखाने पूर्णतः बन्द हो गये और निकटवर्ती कोबन्या के कारखाने केवल इसलिए खुले रहे कि मजदूरों के उपयोग की बहुत जरूरी वस्तुएँ जुटाई जा सकें।

फलतः सरकार ने क्रुद्ध होकर नयी धमकियाँ दीं; लेकिन फिर शीघ्र ही उसने विनीत स्वर में प्रार्थना की—"प्यारे मजदूरो, कृपा करके काम पर वापस लौटो। ऐसा न होने दो कि मुद्रास्फीति हमें विनष्ट कर दे।" जब यह अपील भी बेकार गयी, तो पारिश्रमिक में वृद्धि की घोषणा की गयी और अतिरिक्त खाद्यपदार्थों की भी व्यवस्था हुई। कहा गया कि नयी सुविधाएँ 'उन मजदूरों के लिए हैं, जो मजदूरों की एकता और विश्व-शान्ति में निष्ठा रखते हैं।'

लेकिन किसी भी अपील का सीपेल के लोगों पर तनिक भी प्रभाव नहीं हुआ। यही नहीं, उन्होंने लापरवाही के साथ, सरकारी प्रस्तावों का जवाब तक देने से इन्कार कर दिया। जाबो कहता है— "हम ऐसे हो गये थे कि किसी भी व्यक्ति को इस बात की परवाह नहीं थी कि उसे गोली मार दी जायेगी, अथवा भूखों मरना पड़ेगा। हम अपने हत्यारों के साथ सहयोग करने के लिए तैयार नहीं थे।" उन्होंने एक पोस्टर भी प्रकाशित किया, जिसमें लिखा था—"आवश्यकता है, सरकार गठन करने के लिए ६ वफादार हंगेरियनों

की। केवल यही योग्यता पर्याप्त होगी कि वे सब सोवियत रूस के नागरिक हों।"

दिन-पर-दिन बीतते गये और हड़ताल जारी रही। सीपेल से फैल कर वह नगर के दूसरे भागों में पहुँची और वहाँ से ग्रामीण इलाकों में। लेकिन जितना साहस ताताबन्या की कोयला-खानों में दिखाया गया, उतना हंगेरी के और किसी भाग में नहीं। वहाँ उन मजदूरों ने, जिन्हें बाद में बहुत यंत्रणा दी गयी, नये कम्यूनिस्ट स्वर्ग-लोक को गरम तथा प्रकाशित रखने के लिए, खानों में जाकर कोयला लाने से इन्कार कर दिया। उन खान-मजदूरों के विरुद्ध उन्मत्त रूसियों ने अपनी सम्पूर्ण प्रतिरोधात्मक शक्ति लगा दी। ताताबन्या को खाद्यान्न भेजे जाने पर रोक लगा दी गयी और यदि कोई नवजवान अपने साथियों के गिरोह से अलग छिटक जाता, तो उसे पकड़ कर साइबेरिया भेज दिया जाता। सैनिकों और टैंकों का भी प्रयोग किया गया, पर निष्फल। खानें बन्द ही रहीं। जब उपहासात्मक वादों से हठीले मजदूरों को आकर्षित करने में रूसी असमर्थ रहे, तब उन्होंने प्राण लेने की धमकियाँ देनी शुरू कीं, लेकिन उन्होंने जवाब दिया—"यदि एक भी व्यक्ति को गोली मारी गयी, तो हम सब सभी खानों पर धावा बोल देंगे।"

अब यहाँ इस साधारण हड़ताल के मन्तव्यों पर विचार कर लेना उचित होगा। क्रान्ति की तीनों ही अवस्थाओं में बराबर इस बात की सम्भावना थी कि सोवियत-प्रचार इस घोर नैतिक पराजय को अपनी विजय का रूप देने की कोशिश करेगा। वे यह दावा कर सकते थे कि क्रान्ति का नेतृत्व प्रतिक्रियावादी तत्त्वों ने किया था। वे एशिया और यूरोप के अनभिज्ञ राष्ट्रों को बतला सकते थे कि असन्तुष्ट लोगों ने सरकार को उलट देने का षड्यन्त्र रचा था। वे कह सकते थे, और कहा भी, कि कार्डिनल मिंद्सजेन्ती के वक्तव्य इस बात के प्रमाण हैं कि गिरजावाले, अथवा धार्मिक लोग, हंगेरी को अपने नियंत्रण में करने का प्रयास कर रहे थे। वे वैधानिक, पर मिथ्या, यह दावा भी कर सकते थे कि हंगेरी की सरकार ने—जानोस कादर की कठपुतली सरकार ने—उन्हें प्रतिक्रान्तिवादी संघर्ष को दबाने के लिए निमंत्रित किया था। मिथ्याचार का ही सहारा लेकर वे यह भी कह सकते थे कि सन् १९५४ की वारसा-संधि की शर्तों के अनुसार, वापस लौटना उनका अधिकार ही नहीं, बल्कि कर्त्तव्य भी था। और, अन्त में, वास्तविक संघर्ष में छात्रों लेखकों, नवजवानों और मजदूरों के भाग लेने की सफाई भी वे इस रूप में दे

सकते थे—उन्होंने यह सफाई देना आरम्भ कर भी दिया था—कि छात्र उग्र हो गये थे, यह सही है, पर हृदय से वे विशुद्ध कम्यूनिस्ट थे; लेखकों ने मानसिक संतुलन खोकर, यह न जानते हुए कि वे क्या कर रहे हैं, वैसा किया था; नवजवान दुष्ट प्रौढ़ों-द्वारा बहकाये गये थे और मजदूरों ने जो-कुछ किया, वह क्षणिक आवेश में आकर, परन्तु उचित देशभक्ति की भावना से अभिप्रेरित होकर। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि सम्भवतः इन बहानों पर भारत, फ्रांस के कुछ हिस्सों, इटली के कुछ भागों और हिन्देशिया में विश्वास कर लिया जायेगा, जहाँ इनके कारण भारी क्षति पहुँच सकती है।

लेकिन कोई भी प्रचार, चाहे वह कितनी ही कुशलता से तैयार किया गया हो, सीपेल के लोगों की इस पूर्णतः विवेकपूर्ण हड़ताल की यथार्थता पर पर्दा नहीं डाल सकता। भावना की उमंग में वह हड़ताल नहीं हुई थी। इसका आयोजन विशुद्ध मजदूरों ने—भारी उद्योगों के मजदूरों ने—किया था। इसमें न तो लेखकों का हाथ था, न छात्रों का और न धर्म-गुरु पादरियों का। और, सबसे महत्त्व की बात तो इसका लम्बे समय तक चलना एवं इसकी दृढ़ता है, जिससे यह साबित होता है कि न तो यह हड़ताल जल्दीबाजी में की गयी थी और न क्षणिक आवेश के वशीभूत होकर।

सीपेल की हड़ताल संसार के लिए इस आशय का एक शान्तिमय सन्देश थी कि वे लोग, जिन्हें कम्यूनिज्म से सर्वाधिक लाभ पहुँचने की आशा की जाती है, उस व्यवस्था को आजमा चुके थे और उन्होंने उसे पूर्णतः धूर्ततापूर्ण पाया था। सीपेल की इस हड़ताल के अधिकांश नेता कम्यूनिस्ट-पार्टी के सदस्य थे। उन्होंने अन्दरूनी रूप से दस वर्ष तक उसे पहचाना था और कुछ मामलों में उसे निर्धारित मार्ग पर चलने में सहायता भी पहुँचायी थी। जहाँ तक मैंने अध्ययन किया है, इसमें स्वतंत्रता के इच्छुक किसी बुद्धिवादी या साहसी दार्शनिक ने कोई हिस्सा नहीं लिया था।

यह तो स्वयं कम्यूनिज्म-द्वारा कम्यूनिज्म का अस्वीकार किया जाना था। यह एक गम्भीर भविष्यवाणी थी कि यदि भारत, इटली, फ्रांस, या हिन्देशिया में कभी कम्यूनिज्म आ जाये, तो स्वयं वहाँ के कम्यूनिस्टों को क्या करने के लिए विवश होना पड़ेगा। सोवियत कम्यूनिज्म की यह इतनी बड़ी नैतिक पराजय थी कि इसका बयान नहीं किया जा सकता।

जब संसार-भर के कम्यूनिज्म के प्रचारक हर बात की, अपने सन्तोष के अनुरूप, व्याख्या कर चुकेंगे, तब वे इस बात की सफाई कैसे देंगे कि सीपेल

के १५ हजार मजदूरों में से केवल ४० ही कम्यूनिज्म के प्रति निष्ठावान् क्यों बच गये थे? वे इस तथ्य के समर्थन में क्या दलील देंगे कि बाकी मजदूरों ने खाली हाथ सोवियत टैंकों का मुकाबला क्यों किया था? और, वे ज्योर्जी जाबो-सदृश व्यक्ति के आचरण के बारे में क्या कहेंगे, जो प्रतिरोध की सभी सम्भावनाओं के समाप्त हो जाने पर भी, सोवियत व्यवस्था के विरुद्ध साधारण हड़ताल का नेतृत्व करने का साहस कर रहा था?

उदाहरणस्वरूप, बुडापेस्ट की स्थिति से परिचित कोई भी समझदार व्यक्ति क्या सोवियत रूस के श्रमिक-संघटनों-द्वारा, यूरोप के मजदूरों को दिये गये इस वक्तव्य पर विश्वास करेगा, जो एक नगर की सामूहिक हत्या के लिए प्रस्तुत सफाई के जैसा है? वह वक्तव्य था—"प्रिय कामरेडो, आप जानते हैं कि हंगेरियन सरकार के निमंत्रण पर, प्रतिक्रान्तिवादी तत्त्वों को कुचलने और हंगेरियन जनता तथा यूरोप की शान्ति के हितों की रक्षा के लिए, सोवियत सैनिक सहायतार्थ आये थे। सोवियत सशस्त्र सेनाओं के लिए अलग रह सकना सम्भव भी नहीं था; क्योंकि वैसी स्थिति में न केवल और अधिक रक्तपात होता, बल्कि मजदूर-वर्ग के हितों को भारी क्षति भी पहुँचती। सोवियत श्रमिक-संघटन यह वस्तुस्थिति आपके समक्ष प्रस्तुत करना चाहते हैं कि सोवियत सेना ने किसी अनुचित उद्देश्य से कदापि संघर्ष नहीं किया।"

जब ऐसी मिथ्या बातें सीपेल के लोगों को असह्य हो उठीं और जब कठ-पुतली सरकार ने यह घोषणा करने का साहस किया कि बुडापेस्ट का सारा उपद्रव उन असंतुष्ट सामन्तों अथवा कुलीनों का कराया हुआ था, जो सीधे-सादे कम्यूनिस्ट मजदूरों पर अपनी इच्छा लादना चाहते थे, तब ज्योर्जी जाबो और उसके साथियों के लिए और कुछ सहन करना असम्भव हो गया। उन्होंने एक पोस्टर तैयार किया, जिसमें कहा गया था—"सीपेल के ४० हजार सामन्त, जिनमें से प्रत्येक के पास रैकोजी मेटल वर्क्स के निकट अपने-अपने किले और असंख्य नौकर-चाकर हैं, सरकार का विरोध करते हैं।" आगे, अपनी बात स्पष्ट करने के लिए, उन्होंने घोषणा की थी—"सीपेल की इमारतों के नीचे हमने सुरंगें बिछा दी हैं। यदि उन्हें हस्तगत करने या हमें काम करने के लिए मजबूर किया जायेगा, तो हम उन्हें उड़ा कर खंड-खंड कर देंगे।"

लेकिन सीपेल में हुए प्रतिरोध का महत्त्व इस बात में निहित नहीं था कि मजदूरों ने अतुलनीय वीरता दिखलायी थी, बल्कि इस बात में निहित था कि बहुत धीरे-धीरे और सिलसिलेवार ढंग में इसका आयोजन किया गया था।

संसार ने इस बात को सुना और इस प्रकार कम्यूनिज्म के आदमियों-द्वारा ही उसका विरोध किया जाना आश्चर्यजनक था। यदि हड़ताल नहीं होती, तो रूसी यह दलील पेश करते—और वास्तव में उन्होंने इसका प्रयत्न किया भी—कि हालाँकि वहाँ एक दुर्भाग्यपूर्ण उपद्रव हो गया था, फिर भी उसमें किसी मजदूर ने भाग नहीं लिया था। यदि क्रान्ति अचानक और शान्तिपूर्वक समाप्त हो जाती, तो तरह-तरह की युक्तिसंगत सफाइयाँ रोम, पेरिस और नयी दिल्ली में प्रचारित की जातीं। लेकिन यह हड़ताल, जिसमें ज्योर्जी जाबो-सदृश लोगों ने भाग लिया और जो कम्यूनिज्म की दुधारी के बीच, दिन-दिन आगे बढ़ती हुई, एक महीने से दूसरे महीने में पहुँचती गयी, केवल आकस्मिक कह कर नहीं टाली जा सकती थी। हड़ताल कम्यूनिज्म के विरुद्ध थी, यह बात अकाट्य थी। इस पुस्तक की समाप्ति तक, अर्थात् सन् १९५७ के जनवरी महीने के अन्त तक, सीपेल के व्यवस्थित और स्थिर चित्त मजदूर दिखा रहे हैं कि कम्यूनिज्म के बारे में उनका क्या खयाल है? उनके विरोध-प्रदर्शन का अब चौथा महीना आरम्भ हो रहा है।

हाल के वर्षों में मैंने कई साहसिक कार्रवाइयाँ—युद्ध में, कोरिया में, म्युनिसिपल संघर्षों में एवं एक और अवसर पर, जिसकी चर्चा ऍंडाऊ के पुल के बारे में लिखते समय करूँगा—देखी हैं, लेकिन सीपेल के लोगों की शान्त और सुयोजित हड़ताल से अधिक साहसिक मुझे कुछ भी प्रतीत नहीं हुआ। एक लम्बे अर्से से मेरी यह धारणा रही है कि जिस तरह के साहस की आवश्यकता किसी टैंक को उड़ाने में पड़ती है, वह बहुत-कुछ कच्चा साहस है; मतलब यह कि किसी व्यक्ति में जोश का उफान आता है, तो वह चमत्कारपूर्ण कार्य कर देता है—इसे दुनियावाले साहस कहते हैं। लेकिन सीपेल की मजदूर-समितियों ने जैसा साहस दिखलाया, वह वैसा नहीं हैं। वह हृदय और संकल्प पर आधारित है। इन लोगों ने स्वेच्छा से घोषणापत्रों पर हस्ताक्षर किये, हा ाँकि वे जानते थे कि उनके नाम रूसियों द्वारा दर्ज किये जा रहे थे। बिना किसी आपत्ति के उन्होंने चित्र खींचे जाने की अनुमति दे दी, जबकि उन्हें ज्ञात था कि उन फोटोग्राफों को इकट्ठा किया जायेगा और बाद में हड़तालियों से बदला लेते समय उन्हें पहचानने के काम में उनका उपयोग किया जायेगा। वे अब खुलेआम सामने आकर अपने रूसी स्वामियों के प्रति विरोध-प्रदर्शन करना चाहते थे। इसी को मैं वास्तविक एवं पूर्ण साहस कहता हूँ।

२२ नवम्बर को, जबकि हड़ताल बड़े जोरों से चल रही थी, ज्योर्जी जाबो

एक लम्बी बैठक में भाग लेने के बाद घर लौटा। उस बैठक में उसने खुले रूप से कहा था कि "रूसी जो भी करें, उसकी परवाह न की जाए और हड़ताल जारी रखी जाए।"

जैसे ही वह अपने गन्दे निवास-स्थान में प्रविष्ट हुआ, उसने देखा कि उसकी पत्नी घबड़ायी हुई है। उसने काँपती आवाज में कहा—"ज्योर्जी, कल रात उस फारकस-बालक को देश-निकाला दे दिया गया।"

एक कुर्सी पर बैठते हुए उसने उत्तर दिया—"देर-सवेर हमें भी देश-निकाला दिया जायेगा!"

यह सुन कर श्रीमती जाबो ने बेचैन-सी होकर अपने हाथों को मलते हुए कहा—"मेरा खयाल है कि हमें बच्चों-सहित आस्ट्रिया भाग जाना चाहिये!"

ज्योर्जी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया—केवल अपनी हथेलियों के सहारे सिर को टिका कर वह कुछ सोचने की कोशिश करने लगा। पिछले कुछ दिनों से वह समझ रहा था कि यह प्रश्न उठेगा। उसने दो बार इस तरह की बातचीत की पूर्व कल्पना भी की थी। अब उसने रुखाई से जवाब दिया—"मैं हंगेरियन हूँ, आस्ट्रियन नहीं।"

उसकी पत्नी का स्वर भी कुछ तेज हुआ, बोली—"मैं भी वही हूँ, लेकिन मैं अपने बच्चों का पालन-पोषण हंगेरी में नहीं कर सकती।"

"लेकिन यही हमारा देश है।"—जाबो ने हठपूर्वक कहा।

उसकी पत्नी ने दलील पेश की—"ज्योर्जी, आस्ट्रेलिया में तुम्हारे-जैसे लोगों की जरूरत है। आज बी. बी. सी. (रेडियो) ने भी कहा कि अमेरिका शरणार्थियों को आश्रय दे रहा है।" अब उसके स्वर में काफी विनम्रता और आग्रह था।

"मुझे नहीं चाहिये अमेरिका..."

लेकिन उसकी बात पूरी होने के पहले ही वहाँ एक कठोर चीख गूँज उठी। श्रीमती जाबो कुर्सी छोड़ कर खड़ी हो चुकी थी। उसके हाथ अपने बालों पर थे और वह विक्षिप्त की तरह बक रही थी—"मैं यहाँ अब और नहीं रह सकती। मैं यहाँ भयपूर्वक यह सुनने के लिए नहीं रह सकती कि किसी रात को हमारे घर के सामने एक कार आकर खड़ी हो और पुलिसवाले..." वह पुनः अपनी कुर्सी पर बैठ गयी और सिसकियाँ लेती हुई बोली—"ज्योर्जी, कुछ ही दिनों के अन्दर वे तुम्हें पकड़ ले जायेंगे।..."

अपनी माँ की चीख सुन कर एक बच्चा कमरे में आ गया था। उसे लक्ष्य

कर श्रीमती जाबो ने उत्तेजित स्वर में कहा—"जाकर अपने कपड़े पहन लो और अपने भाइयों को भी पहनने के लिए कह दो।"

कम्यूनिज्म के परम प्रिय, बहुत बड़े उद्योग के विश्वासी मजदूर तथा एक भले कम्यूनिस्ट, ज्योर्जी जाबो ने अपनी पत्नी पर एक शान्त दृष्टि डाली। अब उसके साथ बहस करना निरर्थक था। अतएव रात की उस सर्द हवा में वह बाहर निकल गया।

उसके चारों ओर के दृश्य उसके परिचित थे और उन पर उसका ममत्व था। यह उसका सीपेल था। उसने पूँजीवादियों, नाजियों और रूसियों से इसकी रक्षा की थी। यहीं वह बचपन से पल कर सयाना हुआ था। यहाँ की एक-एक इमारत और उनमें बनी वस्तुओं से उसे स्नेह था। अन्धकार में खड़े उस कारखाने के निर्माण और सोवियत टैंकों से उसकी रक्षा में भी उसने मदद पहुँचायी थी। उसकी भद्दी दीवारों के अन्दर उसने मैत्री और प्रसन्नता का काफी उपभोग किया था। यह एक अच्छा द्वीप था—अच्छा स्थान था। सम्भव है, आगे चल कर यहाँ की स्थिति सुधर जाये।

दूर में उसे एक कार की रोशनी दिखाई पड़ी और वह तुरन्त आड़ में हो गया; क्योंकि कम्यूनिज्म में किसी मोटर-कार का मतलब ही खतरा था। केवल पुलिस और पार्टी के अधिकारियों के पास मोटर-कारें थीं। और, वैसे लोग निश्चय ही विपत्तिसूचक थे। अपने 'स्पाटलाइट' की रोशनी इधर-उधर हिलाती-डुलाती कार नजदीक आ गयी और ज्योर्जी ने देखा कि उस पर गश्ती-पुलिस की राइफलें चमक रही हैं। वह पूर्णतः शान्त खड़ा रहा और इस प्रकार कारवालों की नजर से बच गया। धीरे-धीरे कार अपनी ड्यूटी पर आगे बढ़ गयी और तब उस अँधियारे में जाबो ने अनुभव किया कि वह कितना अधिक भयभीत हो गया था।

बाद में उसने स्वीकार करते हुए कहा—"मैं वस्तुतः बहुत डर गया था। अनेक वर्षों से मैं एक घोर निराशापूर्ण दुनिया में रह रहा था। जो चीजें मैं खरीदना चाहता था, उनके लिए आवश्यक रकम बचा सकने की मेरे पास कोई सम्भावना न थी—एकदम ही कोई सम्भावना न थी। लेकिन उससे भी बदतर था अपना आन्तरिक खोखलापन। वे सभी वादे, जिन पर मैं एक बच्चे की तरह निर्भर रहा था, समाप्त हो गये थे। कम्यूनिस्टों ने जो-जो वादे किये थे, उनमें से एक भी पूरा नहीं हुआ। आप नहीं समझ सकते कि निराशापूर्ण भविष्य पर दृष्टिपात करना कितना क्लेशकारी होता है। क्रान्ति के आरम्भ में

हममें से अधिकांश लोग बड़े साहसी थे—लेकिन जानते हैं क्यों? इसलिए कि हमें अपने मरने-जीने की कतई परवाह न थी। उसके बाद के कुछ दिन आशा में बीते और उस अवधि में हम एक नयी ईमानदार व्यवस्था की चर्चा करते रहे। लेकिन जब पुनः रूसी लौट आये, तो मुझे पता चल गया कि फिर वही रूखे दिन लौटने वाले हैं। उस समय भी मुझमें साहस था; क्योंकि मैं साइबेरिया की तनिक भी परवाह नहीं करता था। साइबेरिया सीपेल से बुरा नहीं हो सकता था; क्योंकि वहाँ तो स्थिति स्पष्ट रहती होगी कि आप कारागार में हैं। इसीलिए जब मैं उस मोटर-कार के भय से छिप गया और मेरी पत्नी की तेज आवाज मेरे कानों में गूँज उठी, तब मैंने यह निश्चय किया—'यदि कनाडा या आस्ट्रेलिया में अच्छा जीवन बिताने की सुविधा है, तो मैं वहाँ जाऊँगा।' मैं बुरी तरह भयभीत था!"

उस व्यक्ति ने, जिसने नलों के सहारे गैसोलिन छिड़क कर टैंकों को विनष्ट किया था और जिसने अत्यन्त साहसपूर्वक अपने को हड़ताल का नेता घोषित किया था, अपने हाथों अपना मुँह पीट लिया और कहा—"मैं भयभीत था।"

फिर आड़ में छिपते हुए ही वह अपने घर लौटा, जहाँ उसकी पत्नी और बच्चे, जितने भी गर्म कपड़े वे पहन सकते थे, पहने हुए तैयार थे। श्रीमती जाबो अब नहीं रो रही थी; क्योंकि उसने निश्चय कर लिया था कि उसका पति साथ दे या नहीं, उस रात को वह बुडापेस्ट छोड़कर आस्ट्रिया चली ही जायेगी। उस आतंकपूर्ण वातावरण को त्यागने का उसने निश्चय कर लिया था, जिसमें उसके बच्चे रह रहे थे और यदि बुडापेस्ट में रहते तो उन्हें अपना शेष जीवन उसी आतंक में बिताना पड़ता।

जाबो ने अपनी पत्नी पर एक दृष्टि डाली और अपने गर्म कपड़ों की ओर बढ़ते हुए कहा—"हम सब लोग यहाँ से चले जायेंगे।"

ज्योर्जी जाबो और उसके परिवार ने हंगेरी को छोड़ दिया। वे अपने साथ केवल एक थैला ले गये, जिसमें बच्चों के लिए भोजन था। १० वर्ष तक कम्यूनिज्म की अनवरत सेवा करने के बाद उस कुशल कारीगर के पास बच गया था, केवल खाद्य सामग्रियों का एक थैला और भय की विरासत। जब वह सीपेल से चल कर मुख्य भूमि और फिर पेस्ट का पुल पार कर बुडा पहुँचा, तो उसने एक बार भी घूम कर पेस्ट की सुन्दरता देखने की चेष्टा नहीं की—वह जानता था कि पेस्ट नष्ट हो चुका है।

८. पेटोफी की एक कविता

बुडापेस्ट की सड़कों पर जो रूसी टैंक जलाये गये थे, उनमें से ८५ प्रतिशत का विनाश २१ वर्ष से कम उम्र के नवजवानों ने किया था।

इस तथ्य के वास्तविक रूप को समझने के लिए एक २०-वर्षीय हंगेरियन के जिन्दगी के अनुभवों को समझना आवश्यक है। सन् १९३६ में पैदा हुए उस बच्चे को पाँच वर्ष की उम्र में ही राजनीति के प्रभाव में आना पड़ा—उस समय द्वितीय विश्व-युद्ध के कारण हंगेरी की अवस्था बड़ी अस्त-व्यस्त थी और जीवन सर्वदा संकटपूर्ण बन गया था। आठ वर्ष का होने पर उसने नाजी-शासन के कठोर अनुभव प्राप्त किये और जब वह दस वर्ष का हुआ, तब कम्यूनिज्म के शासन में पहले की अपेक्षा कुछ शान्त वातावरण कायम हुआ।

यह स्मरण रखना आवश्यक है कि वह २०-वर्षीय हंगेरियन, अपने कुछ पूर्वजों की भाँति, अतीत पर दृष्टि डालने पर, अपेक्षाकृत अधिक आह्लादमय जीवन का अनुभव नहीं कर सकता था। उसके जीवन के आरम्भिक वर्ष ऐसी अवस्था में व्यतीत हुए थे, जबकि किसी बात का निश्चय नहीं था, किन्तु कम्यूनिज्म ने उसमें एक स्थिरता ला दी थी। आरम्भ में उसे भूख का सामन करना पड़ता था, परंतु कम्यूनिजम ने भोजन की व्यवस्था कर दी थी। इसके अतिरिक्त, चूँकि कम्यूनिस्ट विचारकों ने अपने राज्य का आधार इस विश्वास पर कायम किया था कि जिन बच्चों में कम्यूनिज्म के सिद्धान्तों का प्रवेश उचित रूप से करा दिया जायेगा, वे कभी उसका विरोध नहीं करेंगे, कम्यूनिज्म बच्चों के हितों पर विशेष ध्यान देता था। आबादी के किसी भी दूसरे वर्ग की अपेक्षा बच्चों पर अधिक ध्यान दिया जाता था और इसके लिए यथासम्भव अवसर प्रदान किये जाते थे कि बच्चे कम्यूनिज्म से परिचित हों और उससे स्नेह करें।

उदाहरणस्वरूप, उस १०-वर्षीय बालक को 'रूसी पायनियर्स' के समकक्ष हंगेरियन संघटन में शामिल कर लिया गया। वहाँ उसे गले में बाँधने के लिए एक लाल रूमाल दिया गया और सप्ताह में दो घंटे उपदेश दिये जाने लगे। इन उपदेशों में इसी बात की लम्बी-चौड़ी चर्चा की जाती थी कि रूस में

रहना कितना आनन्ददायक है। उसे प्रचारात्मक फिल्में देखने के लिए मुफ्त 'पास' भी मिलते थे। उसे और भी बहुत-सी चीजें--जैसे सन्तरे, चाकलेट और मिश्री—दी जाती थी, जिन्हें उसके परिवारवाले न तो पा सकते थे और न अर्थाभाव के कारण खरीद सकते थे। उक्त चीजें देते समय उसे बताया जाता था—"ये चीजें तुम्हारे भले दोस्त—रूसी लोग—भेजते हैं।"

१४ वर्ष की उम्र में वह 'सोवियत काम्जोमोल' की समकक्ष हंगेरियन संस्था में प्रविष्ट हुआ, जहाँ उसने कम्यूनिज्म की सैद्धान्तिक शिक्षा पायी। वहाँ पश्चिमी जगत् से घृणा करने पर विशेष जोर दिया जाता था। उसके शिक्षकों ने उससे यह भी कहा कि एक दिन उसे हंगेरी की, अमेरिकी फासिस्टों से, रक्षा करनी पड़ेगी, जो हंगेरी का विनाश करने के लिए आस्ट्रिया में अड्डा जमाये बैठे हैं।

इसके बाद शीघ्र ही वह स्वातंत्र्य-संघर्षकारी संघ में शामिल हुआ, जहाँ उसने सैनिक कवायद, रिवाल्वर का प्रयोग, लम्बी राइफल को तोड़ कर छोटी करना और नकशा समझना, आदि उत्तेजनापूर्ण विषयों का गहराई से अध्ययन किया। उसके शिक्षकों ने उससे कहा—"अमेरिकी आक्रमणकारियों को नष्ट करने के लिए तुम्हें ये सब बातें जानना आवश्यक हैं।" इस पाठ्यक्रम में भी पश्चिमी संसार से घृणा करने को बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था—हाँ, सैनिक गान गाने और ठीक रीति से कवायद करने-जैसी मनोहर बातें भी इसमें शामिल थीं। जो होनहार बालक यह साबित कर देते थे कि वे पश्चिमी जगत् से घृणा करते हैं और अमेरिका से लड़ते हुए अपने प्राण देने को तैयार हैं, उन्हें एक विशेष प्रकार की शिक्षा दी जाती थी, जैसे किस तरह हाथ के बनाये गैसोलिन-बम से किसी अमेरिकी टैंक का विध्वंस किया जा सकता है।

उन्हें कुछ कम कठोर विषयों की भी शिक्षा दी जाती थी, जैसे विमान-संचालन, शिविर-आयोजन और खेल-कूद; लेकिन इस अन्तिम विषय में भी सैनिक 'गन' से निशाना लगाना, संघर्ष के बीच सैनिक 'ट्रक' का संचालन औ छतरी सैनिकों का मुकाबला-जैसी बातें सिखायी जाती थीं। उस भावी कम्यूनिस्ट को बतलाया जाता था कि सोवियत संघ से मैत्री के कारण ही हंगेरी शक्ति सम्पन्न है। एक छोटी-सी पुस्तक में युवा-संघटन के उद्देश्य इस प्रकार बताये गये थे—"समाजवादी देशभक्ति के सिद्धान्तों के अनुरूप भावी पीढ़ी और सभी मजदूरों की शिक्षा; हंगेरियन कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रति भक्ति और प्रेम एवं युद्ध-सम्बन्धी जागरण व युद्ध-तत्परता की भावना लेकर महान् सोवियत संघ के प्रति असीम निष्ठा।" जो नवजवान सोवियत संघ पर बिल्कुल विश्वास नहीं

करता था, उसे खतरनाक माना जाता था और उस पर ए. वी. ओ. निगरानी रखता था।

स्कूलों में कम्यूनिस्ट प्रचारों का और भी जोर था। शिक्षकों को अपनी कक्षा के विद्यार्थियों को कम्यूनिज्म से अच्छी तरह परिचित कराना पड़ता था। वे रूस के गौरव के बारे में व्याख्यान देते और हंगेरी के कम्यूनिस्ट इतिहास की शिक्षा। वे अपने छात्रों को कम्यूनिस्ट परेडों में भाग लेने, प्रचारात्मक फिल्में देखने और अमेरिकी साम्राज्यवाद का विरोध करने के लिए ले जाते थे। शिक्षक उन बातों की प्रशंसा करते, जिनकी प्रशंसा करने के लिए कम्यूनिज्म का आदेश होता और उसके शत्रुओं की निन्दा करते। पहली कक्षा से लेकर उच्चतम कक्षा तक कम्यूनिज्म का ऐसा जोर था; अतः कोई भी छात्र इससे बच नहीं सकता था।

लेकिन इसका पालन सभी शिक्षक नहीं करते थे। उन शिक्षकों में से ही अनेक, क्रान्ति में असाधारण पुरुषार्थी साबित हुए। यह काम साधारणतः कुछ कट्टर शिक्षक करते थे, जो ए. वी. ओ.—द्वारा हर स्कूल में नियुक्त किये गये थे और जो अपने सहयोगी शिक्षकों की गुप्त पुलिस से शिकायत करते रहते थे। फलतः ऐसे अनेक शिक्षकों को, जो अपने हृदय में कम्यूनिज्म से घृणा करते थे, इन स्थायी गुप्तचरों के भय से अपने विद्यार्थियों में ब्रिटेन और अमेरिका के प्रति घृणा और रूस में अन्धविश्वास पैदा करने के लिए विवश होना पड़ा।

एक बात की तो हर शिक्षक से अनिवार्य रूप से अपेक्षा की जाती थी—वह यह कि हर कक्षा में कम्यूनिस्ट नेताओं की तीन बड़ी तसवीरें अच्छी जगह पर लगी रहें। इसके लिए मार्क्स, लेनिन और स्टालिन की ही तसवीरों का साधारणतः उपयोग किया जाता था, परन्तु कुछ राष्ट्रीय विचार के शिक्षक लेनिन, स्टालिन और रैकोजी की तसवीरें भी लगाते थे। स्कूल-विद्यार्थी आम तौर पर इन तसवीरों को 'पवित्र त्रिमूर्ति' के नाम से पुकारते थे। आगे चल कर, उस समय तो सभी स्कूलों में लोग पशोपेश में पड़ गये, जब स्टालिन की विशाल तसवीर उतार दी गयी और उसके स्थान पर गोल चेहरे-वाले मालेनकोव और ठिंगने खुश्चेव की तसवीरें लगायी गयीं। स्कूलों में नकशे भी ऐसे लगाये जाते थे, जिनमें कम्यूनिज्म के गौरव और गणतंत्र-पद्धति की दुर्बलताओं का उल्लेख रहता था।

पाठ्य पुस्तकों में कम्यूनिस्ट अपनी सबसे अधिक युक्ति भिड़ाते थे। किसी

भूगोल की पुस्तक में ७५ प्रतिशत पृष्ठों में रूस की चर्चा रहती और बाकी २५ प्रतिशत पृष्ठों में शेष देशों की। द्वितीय विश्व-युद्ध की समीक्षा करनेवाले एक एटलस में इंग्लैण्ड और अमेरिका के सैनिक कार्यों का विवरण प्रस्तुत करते हुए शीर्षक दिया गया था—"मित्र राष्ट्र होने के नाते कर्त्तव्य-पूर्ति में आंग्ल-अमेरिकी प्रतिज्ञा-भंग।" एक दूसरा शीर्षक था—"युद्ध के द्वितीय श्रेणी के और अमहत्त्वपूर्ण मोर्चों पर आंग्ल-अमेरिकी सैनिकों की प्रगति।" और, जापान की पराजय का विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा गया था कि केवल युद्ध की आरम्भिक अवस्था में अमेरिका ने मिडवे और सोलोमन्स में छोटी-छोटी विजय हासिल की। जापान को अन्तिम रूप से कुचलने का काम रूसी सेनाओं ने ही किया था।

सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों में से एक परिवर्तन था, छात्रों की परस्पर-भावना। छात्रों से प्रायः कहा जाता था—"यदि कम्यूनिस्ट राज्य के लिए हानि-प्रद कोई गतिविधि देखो, तो उसकी सूचना अवश्य दो।" अतः प्रत्येक छात्र को यह भय बना रहता कि कहीं उसके साथी इस उपाय से अपना बदला न लें। यद्यपि अधिकांश हंगेरियन छात्र अपने साथियों की शिकायत करने को तैयार न थे, तथापि उनमें से एक-दो तो ऐसे थे ही, जिन्हें ए.वी.ओ. अपने पक्ष में मिला लेता था और कभी-कभी तो उनके वास्तविक स्वरूप का भी किसी को पता नहीं रहता था, इसलिए सबको सबसे सतर्क रहना पड़ता था।

लेकिन सबसे अधिक भयावने मामले तो वे थे, जो कभी-कभी प्रकाश में आते थे। इनका स्वरूप कुछ इस प्रकार का था, कि कोई छात्र अपने माँ-बाप के धर्म-प्रेम या पुराने विचारों के बारे में शिकायत करके ए. वी. ओ. की कृपा प्राप्त करता था। ए. वी. ओ. वाले शिक्षक ऐसे आचरण को अच्छा कम्यूनिस्ट होने की निशानी मानते थे।

ए. वी. ओ. की जाँच-पड़ताल के अन्तर्गत तो स्कूल हर गृहस्थ के लिए जबर्दस्त फंदा-स्वरूप थे। शिक्षक अपने छात्रों से पूछते—"क्या तुम्हारे पिता ने तुम्हारे घर में कामरेड स्टालिन की तसवीर रखी है?" "तुम्हारी माँ रेडियो पर कौन-सा स्टेशन सुनना सबसे अधिक पसन्द करती है?" "क्या तुम्हारे पिता ऐसा मानते हैं कि कामरेड रैकोजी सदा ठीक काम करते हैं?" "क्या तुम्हारी माँ कभी रात में तुम्हें धार्मिक गोष्ठियों में ले जाती है?"

धार्मिक शिक्षा की समस्या बड़ी नाजुक थी। कुछ स्कूलों में यह शिक्षा दी जाती थी; पर तभी, जब माँ-बाप लिखित रूप में अपने बच्चों के लिए इसकी

व्यवस्था चाहते थे। वैसी अवस्था में बच्चे को धर्म का विकृत रूप समझाया जाता था और माँ-बाप के पत्रों को उनके मालिकों तथा ए. वी. ओ. के पास भेज दिया जाता था, जिनका आदेश था कि यदि जिम्मेदार ओहदे पर प्रतिष्ठित कोई व्यक्ति अपने बच्चों के लिए धार्मिक शिक्षण चाहता है, तो उसे डाटा-फटकारा जाये और तुरन्त उस पद से हटा कर उसे साधारण मजदूर-वर्ग में रख दिया जाये। सचमुच शहरों में तो प्रतिशोध इतनी क्रूरता से लिये जाते थे कि सतर्क माँ-बाप शीघ्र ही स्कूल की इस पाखण्डपूर्ण घोषणा की उपेक्षा करना सीख गये—"यदि कोई माता-पिता अपने बच्चे के लिए धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था चाहते हों, तो उन्हें सिर्फ इतना करना है कि उस आशय का एक पत्र लिख कर भेज दें।"

इस प्रकार, बीस वर्ष के किसी भी हंगेरियन नवजवान के जीवन का पहला आधा भाग युद्ध, भुखमरी और अशान्ति में बीता था और दूसरा आधा भाग कम्यूनिज्म के दुलार और प्रलोभनों के बीच। ऐसी स्थिति में वे शीघ्र ही यह समझ गये थे कि यदि जीवन को सुन्दर बनाना है, तो एक अच्छा कम्यूनिस्ट बनना आवश्यक है। यदि वह खेल पसन्द करता, तो केवल कम्यूनिस्ट ही खिलाड़ियों की टीम में रह सकते थे। यदि वह गर्मियों में शिविर-जीवन बिताना चाहता तो बिना कम्यूनिस्ट बने वह सम्भव न था। यदि वह विश्वविद्यालय की शिक्षा पाना चाहता, तो एक कम्यूनिस्ट के रूप में उसका अच्छा रिकार्ड होना आवश्यक था। सम्पूर्ण हंगेरी में, इस कुचल डालनेवाले प्रचार के बोझ से, जो उनके व्यक्तित्व-निर्माण के रास्ते में आकर उपस्थित हो जाता था, मुक्ति का कोई उपाय नहीं था। यदि मनुष्य की आत्मा बदली जा सकती होती, तो कम्यूनिज्म उसे भी बदल कर कम्यूनिस्ट आत्मा बना डालता।

ऐसे किसी भी नवजवान या नवयुवती का, जिसने अपने दस वर्ष इस प्रकार के कड़े दबाव में गुजारे थे, जोसेफ स्टालिन की आत्मश्लाघा का जीवन्त प्रतीक बनना स्वाभाविक ही था। स्टालिन ने एक बार दम्भपूर्वक कहा था—"शिक्षा! यह केवल एक अस्त्र है, जिसका असर इस बात पर निर्भर करता है कि उसको कौन संचालित कर रहा है और किस पर।" हंगेरियन लड़कों और लड़कियों को स्टालिन ने इतनी कड़ाई से प्रशिक्षित करवाया था, जितनी कड़ाई से कम्यूनिज्म के शत्रुओं पर प्रहार करने के लिए कोई मानव किया जा सकता है। वे नैतिक, आध्यात्मिक और आर्थिक दृष्टि से हंगेरियन शिक्षा

के दो स्तम्भों से बँधे थे—पहला रूस से प्यार करो और दूसरा कम्यूनिज्म की रक्षा करो।

फिर भी, जब परीक्षा की घड़ी आयी, तब शत-प्रति-शत हंगेरियन युवकों और युवतियों ने रूस के प्रति घृणा दिखायी और कम्यूनिज्म का विनाश करने का प्रयत्न किया।

यह तथ्य इतना चमत्कारपूर्ण है और इसमें विश्व के इतिहास के लिए इतने मसाले हैं कि, रूसी योजना क्यों असफल हो गयी, इसके कारण का पता हमें अवश्य लगाना चाहिए। उन युवा लोगों ने ठीक आशा के विपरीत काम क्यों किया? वे उस विष के प्रभाव से अपने को मुक्त कैसे रख सके, जो उनके अन्दर नित्य ही प्रविष्ट कराया जाता था? पहले प्रश्न के उत्तर के लिए हमें हंगेरियनों के स्वभाव और उनके अतीत के इतिहास का अध्ययन करना पड़ेगा। दूसरे प्रश्न के उत्तर के लिए हम एक परिवार की चर्चा करेंगे, जो हंगेरियन दलदल से निकल कर ऐंडाऊ के पुल के निकट, स्वतंत्र वातावरण में जाने के लिए संघर्ष करता है। इन बातों के अवलोकन से हम यह समझ सकेंगे कि लोग रूसियों के विरुद्ध क्यों चले गये थे।

उस संकट-काल में ही, कई दिनों के काम से थके हुए, एक अमेरिकी कूटनीतिज्ञ ने हंगेरियनों की सर्वाधिक सुन्दर चर्चा की। उसने बड़े कोमल स्वर में कहा—"काम के इस बोझ से जरा छुट्टी मिल जाये, तो एक काम करूँ। अपने शरीर में हंगेरियन रक्त दिलवाऊँगा। मैं अपने को फिर एक मनुष्य के रूप में अनुभव करना चाहता हूँ।" पर्यवेक्षक इस बारे में एकमत थे कि हाल के वर्षों में हंगेरियन सर्वाधिक तगड़े मनुष्यों में अपना स्थान रखते थे।

उन दिनों ऐसी बहुत-सी चीजें लिखी गयीं, जो इतिहास की उपेक्षा करके हंगेरियन अभिमान को ऊँचा उठाती थीं। यह सही है कि हंगेरियन सदा से बहादुर रहे हैं, लेकिन साथ ही असाधारण रूप से झगड़ालू भी हैं। उनके पड़ोसियों ने उनके साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखना सदा ही असम्भव पाया है। कभी-न-कभी, और हाल के वर्षों में तो प्रायः, हंगेरी ने अपनी सीमा से संलग्न सभी देशों के साथ युद्ध या झगड़ा किया है।

पूरब में, रूमानिया के साथ हंगेरी का संघर्ष ऐतिहासिक और कभी न समाप्त होनेवाला रूप धारण कर चुका है। इस संघर्ष का मूल कारण ट्रान्सिलवेनिया प्रदेश पर दोनों देशों का दावा है और यदि अवसर मिल जाये, तो निश्चित रूप से कल ही यह संघर्ष फिर आरम्भ हो सकता है। जर्मनी के साथ हंगेरी ने

जो कई विचित्र सन्धियाँ कीं, उनके मूल में रूमानिया से बदला लेने की ही भावना निहित थी।

दक्षिण में, हंगेरी का अपने सर्बियन पड़ोसियों के साथ भी बड़ा बुरा सम्बन्ध रहा है। फलतः सर्ब-हंगेरी-सीमा का इतिहास ही युद्ध और प्रतिशोध का एक विलक्षण नमूना बन गया है। इस सीमा पर सर्वाधिक भयंकर संघर्ष सन् १९४२ में हुआ, जब हंगेरियनों पर कम-से-कम १० हजार सर्बों की हत्या करने का आरोप लगाया गया। युगोस्लाविया के साथ स्थायी मित्रता की सन्धि करने के चार महीने के अन्दर ही हंगेरी ने उस देश पर आक्रमण कर दिया, जो अन्तर्राष्ट्रीय नैतिकता के इतना अधिक विरुद्ध था कि तत्कालीन हंगेरी के प्रधानमंत्री काउण्ट पाल तेलेकी ने उसके विरोध में आत्महत्या कर ली।

दक्षिण-पूर्वी सीमा पर स्थित क्रोशिया और उत्तर में स्लोवाकिया के साथ हंगेरी के सम्बन्ध अवश्य कुछ अच्छे रहे; जबकि आस्ट्रियनों का कहना है कि मध्य यूरोप को एकताबद्ध रखनेवाले आस्ट्रिया-हंगेरी-साम्राज्य के पतन के मुख्य कारणों में से एक यह था कि हंगेरी साम्राज्य के कार्यों में अनुचित हस्तक्षेप करता था और अल्पसंख्यकों के साथ सद्व्यवहार के प्रश्न पर समझौता करने को तैयार नहीं था। स्वार्थपरता का इससे भी बुरा या लम्बा रिकार्ड रखनेवाले, नमूने के ही तौर पर, और कुछ देश हैं।

बाल्कन-मामलों का एक लम्बी अवधि तक अध्ययन करनेवाले एक छात्र ने कहा है—"इस क्षेत्र में हंगेरी का एक ही पुराना विश्वासी मित्र राष्ट्र है, और वह है बल्गेरिया। वह भी शायद इसलिए, कि हंगेरी और बल्गेरिया की सीमा कहीं नहीं मिलती।" चूँकि विश्व के इस भाग के अधिकांश इतिहास वैसे विद्वानों–द्वारा लिखे गये हैं, जिनकी सर्बिया या रूमानिया के प्रति सहानुभूति रही है, अतः यह अनुमान करना आसान है कि किस देश को वे बुरा कहते। लेकिन कार्लटन जे. एच. हेस–जैसे निष्पक्ष अमेरिकी विद्वान ने भी हंगेरियन आचरण को इस रूप में प्रस्तुत किया है—

"मगयार (हंगेरी-निवासियों का पूर्व नाम) कुलीनतंत्र ने हंगेरी की व्यवस्था में अपने ही आदमियों के साथ हिस्सा बँटाने में कोई रुचि नहीं दिखायी—शासितों के साथ मिल कर उनके कुछ करने की बात तो दूर रही, उन्होंने सम्पूर्ण राज्य के अधिकांश क्षेत्र पर अपना कब्जा जमा रखा था। सारे राज्य के सार्वजनिक स्कूलों में वे जबरन अपनी ही भाषा का प्रयोग करवाते थे। उन्होने अपने उत्तर में स्थित प्रदेशों के स्लावक किसानों को और दक्षिण की

सर्ब आबादी को मगयार-नुमा बनाने का भरसक प्रयत्न किया। उन्होंने पूरब में रूमानियन भाषा-भाषी विशाल ट्रान्सिलवेनिया प्रदेश से स्थानीय शासन का नामो-निशान तक मिटा दिया। पश्चिम में, क्रोशिया को सन् १८६८ में उन्होंने जो आंशिक शासनाधिकार प्रदान किये थे, उन पर भी अधिकाधिक प्रतिबन्ध लगा दिये। उन्होंने हंगेरियन पार्लियामेण्ट (संसद) और मंत्रिमंडल को बुडापेस्ट में, अपने नियंत्रण में, रखा। संसदीय चुनावों के लिए मताधिकार को उदार करने से भी उन्होंने बराबर इन्कार किया। मताधिकार प्राप्त करने के लिए आवश्यक योग्यता का स्तर इतना ऊँचा था और निर्वाचन-सम्बन्धी कानून इतने गूढ़ थे कि सन् १९१० में जो निर्वाचन हुए, उनमें हंगेरी की कुल आबादी २ करोड़ में से १० लाख से भी कम मतदाता थे और हालाँकि कुल आबादी में मगयारों और गैर-मगयारों की संख्या बराबर-बराबर थी, फिर भी पार्लियामेण्ट की लगभग सभी सीटों पर मगयारों ने ही कब्जा किया।

"फलतः हंगेरी की शासित जातियों में आस्ट्रिया के अल्पसंख्यकों से भी अधिक असन्तोष फैला। बुडापेस्ट की हंगेरियन पार्लियामेण्ट में बिल्कुल ही स्थान न मिलने से वे आस्ट्रिया के अल्पसंख्यकों से भी गये-गुजरे हो गये, क्योंकि आस्ट्रियावालों को कम-से कम वियेना की पार्लियामेंट में स्थान तो प्राप्त था, किन्तु उन्हें उस केन्द्र में कोई स्थान न मिला, जहाँ वे साथ मिल कर वर्तमान शासन का विरोध करते और सारे संसार को अपनी शिकायतों और मांगों से परिचित करा सकते।

"हंगेरियन सरकार के सामन्तशाही आचरण से मगयारों के निर्धन वर्गों और अल्पसंख्यक जातियों को काफी परेशानी उठानी पड़ती थी। यद्यपि हंगेरियन पार्लियामेण्ट ने लोकप्रिय शिक्षा चालू करने के लिए बहुत-कुछ किया और जमींदारों के प्रति किसानों की जो बहुत ही छोटी शिकायतें थीं, उनमें से भी कुछ को दूर कर दिया, तथापि सन् १८६७ से १९१४ के बीच हंगेरी में जो उल्लेखनीय कृषि-विकास-कार्य हुए, वे मुख्यतः जमींदारों और विशिष्ट सरकारी कर्मचारियों के ही लिए आर्थिक दृष्टि से लाभदायक थे। इस बात का प्रमाण था—देश से भारी संख्या में लोगों का पलायन। सन् १८९६ से १९१० के बीच लगभग १० लाख लोग देश छोड़ कर भाग गये थे। इसके अतिरिक्त एक और बात इसके समर्थन में प्रस्तुत की जा सकती है—वह यह, कि बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में निर्वाचन-सम्बन्धी सुधार के लिए बड़ा व्यापक जन-आन्दोलन आरम्भ हुआ, जिसके चलते देश में गृह-युद्ध-जैसी स्थिति उत्पन्न हो गयी।"

यहाँ मैं यह कहना चाहूँगा कि ऐसे भद्दे प्रमाण की सफाई हंगेरियनों के पास भी है, लेकिन चूँकि हंगेरी ने बहुत कम प्रभावकारी इतिहासज्ञ पैदा किये हैं, इसीलिए किसी संघर्ष में उनका पक्ष लोगों के सामने पेश नहीं हो सका है। इस उग्र देश से मेरे परिचय की ही मिसाल लीजिये। सन् १९३० से ३५ के बीच, जब मैं यूरोप में शिक्षा प्राप्त कर रहा था, कुछ महीनों तक मुझे एक ट्रान्सिलवानिया-निवासी के साथ रहना पड़ा, जिसकी मातृभूमि कभी तो हंगेरी में चली जाती थी और कभी रूमानिया में। उस समय ट्रान्सिलवानिया का अधिकांश भाग रूमानिया के अधिकार में था, लेकिन उसका अपना गाँव हंगेरी में ही था। प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति के बाद विजयी मित्र राष्ट्रों के आदेशानुसार ट्रान्सिलवानिया का इस प्रकार बँटवारा हुआ था। मेरा हठी मित्र एक क्रांतिकारी था, जो बँटवारे की इस भूल को सुधारने के सपने देखता था। उसने मेरे समक्ष हंगेरी की इतनी अधिक निन्दा करनी शुरू की कि अपने पक्ष की रक्षा के उद्देश्य से मैंने उन घटनाओं की हंगेरियन व्याख्या का अध्ययन आरम्भ कर दिया और हालाँकि वे विवरण बहुत कमजोर ढंग से लिखे गये थे और उनमें प्रभावोत्पादन की क्षमता भी बहुत कम थी, फिर भी मैं उस छोटे-से राष्ट्र के पक्ष में आकर्षित होने लगा। अपने बाद के जीवन में मेरे ट्रान्सिल-वानियन क्रांतिकारी मित्र को अवश्य ही अनेक झंझावाती प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ा होगा; क्योंकि हिटलर के शासन-काल में सम्पूर्ण ट्रान्सिल-वानिया हंगेरी के अधिकार में आ गया और सोवियत-शासन में वह रूमानिया को लौटा दिया गया, जिसके अधीन वह अब तक है। कुछ भी हो, उसकी भावुकतापूर्ण गाली-गलौज ने मुझे हंगेरी का समर्थक बना दिया।

मैंने हंगेरियनों को समझदार और असाधारण किस्म का व्यक्ति पाया। सन् १९५६ में कम्यूनिज्म के विरुद्ध हुए आन्दोलन से पूर्व का भी उनका इतिहास इस बात का प्रमाण है कि वे बहुत साहसी थे और एक राष्ट्र के रूप में कायम रहने के लिए दृढ़संकल्प थे। यदि कम्यूनिज्म उन शक्ति-सम्पन्न लोगों के साथ स्थायी रूप से घुलमिल जाता, तो पश्चिमी जगत् के विरुद्ध वह एक मजबूत घेरेबन्दी कर सकता था; क्योंकि हंगेरियनों का इतिहास स्वयं व्यक्त करता है कि वे वैसे लोग थे, जो मजे में या तो पश्चिमी यूरोप के देशों के साथ, जिनके साथ उनका धर्म (कैथोलिक धर्म) और संस्कृति का सम्बन्ध था, रह सकते थे, या किसी एशियायी-यूरोपीय गुट के साथ, जिसके साथ उनका भाषागत और वंशगत सम्बन्ध था, रह सकते थे।

९-वीं शताब्दी के आरम्भ में किसी समय, यूराल पर्वत की पश्चिमी ढालों पर निवास करनेवाले, मध्य-एशिया के लगभग २० हजार बंजारे उस क्षेत्र पर नजर गड़ाये थे, जो आगे चल कर यूरोप में परिणत हुआ। पश्चिम की ओर होने वाले कई साहसिक आक्रमणों में अग्रियन-तुर्की वन्य-जाति के थोड़े से लोग सफलतापूर्वक चार नदियों—वोल्गा, डान, नीपर और निस्टर—को पार कर गये। इस प्रकार ये लोग डेन्यूब के मुहाने के निकट पहुँच गये, लेकिन जब उन्होंने उन क्षेत्रों पर पहले से ही दूसरों को बसा हुआ पाया, तो उन्होंने उन स्थानों में ही बस जाने का फैसला कर लिया, जहाँ प्रतिद्वंद्विता कम थी।

९-वीं शताब्दी के मध्यकाल तक एशियायी वन्य-जातियों ने कारपेथियन पहाड़ को वीरतापूर्वक पार कर आना आरम्भ कर दिया था और सन् ८९२ तक वे मध्य-यूरोप की गौरवपूर्ण भूमि में, जो पहाड़ों से सुरक्षित थी, पहुँच गये थे। इस क्षेत्र के पूरब में प्रतिरोधक पूर्वी कारपेथियन पर्वतमाला, उत्तर में पश्चिमी कारपेथियन पर्वतमाला, दक्षिण में दिनारिक आल्प्स पर्वत और पश्चिम में उच्च शिखरोंवाला आल्प्स स्वयं खड़ा था। यह एक शानदार चौरस भूमि थी, जिसे लगभग बीचोबीच से मनोरम डेन्यूब नदी काटती थी और यहाँ एक अनोखी अदा से ९० अंश का कोण बना कर दक्षिण की ओर मुड़ जाती थी।

इस विस्तृत और सम्पन्न क्षेत्र की आबादी बहुत ही थोड़ी थी। मृतप्राय रोमन साम्राज्य ने डेन्यूब के दायें तट पर अपने दो छोटे उपनिवेश—वियेना और बुडा ग्राम—बसाये थे। इनके अतिरिक्त यहाँ शायद ही और कुछ था। अतः अग्रियन-तुर्की वन्य जाति के लोगों ने यहाँ पहुँच कर ही अपना कब्जा जमा लिया। डेन्यूब के दूसरी ओर के उनके पड़ोसी जर्मनों ने उन्हें 'हंगरिक' (भूखे लोग) के नाम से पुकारा और वही नाम कायम रह गया; हालाँकि उन्होंने सदा ही अपना उल्लेख अपने सही नाम 'मगयार' के रूप में किया।

इस प्रकार इतिहास की एक दुर्घटना और प्रथम हंगेरियनों की बहादुरी के कारण कुछ एशियायी लोग यूरोप के मध्य में खदेड़ दिये गये। उनके उत्तर और दक्षिण में स्लाव लोग, पश्चिम में जर्मन और पूरब में जर्मनों तथा रोमनों की मिश्रित जाति बसी थी। उन्होंने अपने कई एशियायी रिवाजों और भाषाको कायम रखा। यूरोपीय भाषाओं में हंगेरियन भाषा का सम्बन्ध केवल फिनलैंड की भाषा से है, वह भी शायद इसलिए कि फिन लोग भी एशिया के उसी भाग से किसी दूसरे मार्ग से होकर फिनलैण्ड पहुँचे थे। हंगेरियन लोग काफी तगड़े

और रूखे थे—वे सदा मृत्यु का आलिंगन करने को तैयार रहते थे और एक स्वतंत्र हंगेरी की कल्पना उनके मन में बैठी हुई थी।

यूरोप हंगेरी का बहुत ऋणी है—पश्चिम की सुरक्षा के लिए हंगेरी ने अनेक बलिदान किये हैं। एशिया से आये हुए बंजारों के इस समुदाय ने सदियों तक आक्रमणकारी मंगोलों से लड़ाई की। यदि ये उनका सामना न करते, तो वे पेरिस और रोम को कुचल कर रख देते। बाद में, तुर्की के मुसलमानों से यूरोप की लड़ाई में हंगेरियनों ने काफी आघात सहन किया। उन्होंने ईसाई धर्म को, जिसे उन्होंने सन् १००० के आसपास ग्रहण किया था, त्यागने और यूरोपीय ढंग के रहन-सहन से अलग होने से साफ इन्कार कर दिया।

लेकिन एशियायी आक्रमणकारियों को पश्चिमी यूरोप में पहुँचने से रोकने-वाले हंगेरियनों ने आगे चल कर सोचा कि वे स्वयं ही क्यों नहीं पश्चिमी यूरोप पहुँचें। और, कुछ लड़ाइयाँ लड़ कर वे जर्मन, स्लावी और इटालियन भूमि में पहुँच गये। तब पश्चिमी राष्ट्रों ने मिल कर उनसे अनुरोध किया—"हंगेरियन भूमि आप की है। आप वहीं रहें।" इस समझौते के बाद स्थिति संतुलित हो गयी और हंगेरी, जिसके निवासी एशियायी वंश के थे, एक मध्यवर्ती राज्य बन गया। उसने तुर्की को जर्मन-क्षेत्रों से अलग कर दिया और उत्तर में स्थित रूसी स्लावों एवं दक्षिण में स्थित युगोस्लाव स्लावों की सटी हुई सीमा को समाप्त कर दिया। अब पूर्णतः यूरोपीय रूप अख्तियार कर लेने के बाद, हंगेरी का ऐतिहासिक कार्य हो गया, यूरोप को एशिया से अलग रखना—चाहे हमले का खतरा रूस से होकर हो या एशियायी तुर्की से होकर। हंगेरी को बीच का पत्थर कहना अधिक उपयुक्त होगा; क्योंकि वह पश्चिमी और पूर्वी यूरोप के बीच की कड़ी का काम करता है।

हंगेरियन एक उल्लेखनीय रूप से आकर्षक व्यक्तित्व में निखरे। ठिंगने, गठीले और शीघ्र ही क्रुद्ध हो जानेवाले हंगेरियनों के चेहरे की आकृति साफसुथरी और शरीर खिलाड़ियों-जैसा चुस्त होता है। वे संगीत और शिकार बहुत पसन्द करते हैं और ग्रामीण कलाओं, प्राचीन राष्ट्रीय पहनावों तथा गहरे रंगों की सजावट में अधिक रुचि रखते हैं। लगभग एक हजार वर्ष तक यूरोप में रहने के कारण उन्होंने अपनी एशियायी रूपरेखा बहुत-कुछ खो दी है, फिर भी कभी-कभी आप किसी ऐसे हंगेरियन को पायेंगे, जिसके गाल की हड्डियाँ उभरी होंगी और आँखों पर का चमड़ा तन कर पीछे की ओर खिंचा होगा। यद्यपि अपने पड़ोसी राष्ट्रों के प्रति उनका रुख हिंसात्मक

रहा है, तथापि वे आपस में मिल-जुल कर शान्तिपूर्वक रहते हैं। उनका पारिवारिक जीवन अत्यधिक घनिष्ठतापूर्ण था और पारिवारिक लोगों के प्रति उनकी वफ़ादारी ने जागीरदारी प्रथा को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया। इस प्रथा के अन्तर्गत उन्होंने यूरोप के कुछ सर्वाधिक शक्ति-सम्पन्न और ज़िद्दी सामन्तों को जन्म दिया। उन सामन्तों ने उन परिवर्तनों का जबर्दस्त प्रतिरोध किया, जो हंगेरी को एक आधुनिक राष्ट्र का रूप प्रदान करते। फलतः प्रथम विश्व-युद्ध के बाद हुई शान्ति-सन्धियों के द्वारा हंगेरी के सीमान्त-क्षेत्रों के एक बड़े भाग को पड़ोसी राष्ट्रों ने हथिया लिया। सन् १९१८ में हंगेरी को जितनी क्षति उठानी पड़ी, उतनी और किसी देश को नहीं।

इतना होने पर भी सामन्त-परिवारों ने, जिनके हाथों में राष्ट्र का नियंत्रण-सूत्र था, शासन के आधुनिक सिद्धान्तों को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और इस प्रकार एक वीर राष्ट्र को कलह, युद्ध और अधिनायकशाही में बाँध रखा गया। द्वितीय विश्व-युद्ध की समाप्ति पर, हंगेरी ने अपनी नीति में कुछ उदार परिवर्तन किये और हाथ से निकल गये सीमान्त-क्षेत्रों पर पुनः अधिकार करने के निष्फल प्रयत्न में वह लुढ़क-पुढ़क कर कम्यूनिज्म के फंदे में जा फँसा।

ऐसे कट्टर और बहादुर लोगों को रूस ने एक आदर्श कम्यूनिस्ट अनुगामी राष्ट्र के रूप में ढालने का निश्चय किया और हर बात रूस के अनुकूल साबित भी हुई। हंगेरियन भूमि ने उन किसानों की सावधानीपूर्ण देखरेख में, जो स्वभावतः ही अच्छे कृषक थे, आवश्यकता से अधिक अन्न का उत्पादन किया। खनिज सम्पत्ति भी काफी मूल्यवान साबित हुई और नगरों के निवासी आश्चर्य-जनक रूप से प्रौद्योगिक कार्यों के योग्य निकले; क्योंकि हंगेरियन लड़कों की मशीनों में अधिक रुचि थी और वे अच्छे इंजीनियर के रूप में तैयार हुए। आखिरी बात, जो उस राष्ट्र ने अपने एक हजार वर्ष के जीवन में साबित कर दी थी, यह कि उसकी वफादारी को यदि उचित रूप से ग्रहण किया जाये, तो यूराल पर्वत से आये हुए कबायलियों की उन असाधारण और कट्टर सन्तानों से बढ़ कर अच्छे आदमी सम्पूर्ण यूरोप में नहीं पाये जा सकते थे।

दूसरी ओर, हंगेरी के पड़ोसियों ने यह बात आजमा ली थी कि हंगेरी की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचानेवाले किसी राष्ट्र के लिए उससे निबटना बहुत ही कठिन था। हंगेरियन लोग स्वभाव से कट्टर, विचार से देशभक्त और प्रशिक्षण से बहादुर थे। उनके मित्र उन्हें 'पूर्व के आयरिश' के नाम से पुकारते थे और शत्रु 'बाल्कन के प्रशियन' के नाम से। ये विभिन्न विशेपताएँ, संयुक्त

रूप से, कैसे एक हंगेरियन परिवार को अभिप्रेरित करती थीं, यह समझने के लिए हम ऐंडाऊ के पुल तक चलें, जहाँ मध्य नवम्बर में हंगेरियनों का एक समुदाय हंगेरियन सीमा के अन्तिम कुछ मील के क्षेत्र में संघर्षरत था।

उस दिन बड़ी ठंड पड़ रही थी, जब जानोस हैजोक और उसकी पत्नी इरेन ने अपने दो बच्चों—एक ९-वर्षीय पुत्र और १३-वर्षीया पुत्री के साथ आखिरी हंगेरियन दलदल को समाप्त करने के बाद उस जर्जर पुल को भी पार कर लिया। वे लोग तो काफी तेजी से बढ़ सकते थे, पर श्रीमती हैजोक के भाई ज्योर्जी लुफजिन की हालत खराब थी—वह गिरने-गिरने हो रहा था। दो बार वह गिरा भी और स्वयं उठने में अशक्त-सा अनुभव करने लगा। उसका चेहरा दो दिनों की बढ़ी हुई दाढ़ी के कारण और भी भयावना दिखाई पड़ रहा था—लगता था, मानो वह मौत के बहुत निकट पहुँच गया था।

"आखिर तुम्हें चलना ही है। किसी तरह चलने की कोशिश करो।" —जानोस हैजोक ने अपने साले से कहा।

"नहीं, मुझे यहीं छोड़ दो और तुम लोग जाओ।"—रोगी साले ने कहा।

"हम तुम्हें नहीं छोड़ेंगे!"—हैजोक-दम्पति ने कहा और उसे सहारा देकर स्वतंत्रता दिलानेवाले पुल की ओर ले चले। लेकिन वहाँ पहुँच कर उसके अंगों ने पूर्णतः जवाब दे दिया और वह मौत के निकट प्रतीत होने लगा। "मुझे छोड़ कर तुम लोग आगे बढ़ो।"—उसने कातर स्वर में कहा।

"नहीं, ज्योर्जी। हम तुम्हें किसी अस्पताल में ले जायेंगे।"—उसके बहनोई ने उसे आश्वासन दिया। आस्ट्रियन उद्धारकर्ताओं की सहायता से वह छोटा-सा परिवार रुग्ण व्यक्ति को ऐंडाऊ के एक रेस्तराँ में ले गया और वहाँ एक कोने में उसे लिटा दिया।

वहाँ सौभाग्य से उनकी मुलाकात, यूरोप-स्थित ए. एफ. एल. सी. आई. ओ. के प्रतिनिधि इर्विंग ब्राउन की अति आकर्षक पत्नी श्रीमती लिलि ब्राउन से हुई। इत्तफाक से वह भी हंगेरियन वंश की थी—इस शताब्दी के आरम्भ में उसके पिता अमेरिका जाकर बस गये थे। श्रीमती ब्राउन ने रुग्ण व्यक्ति से अपनी मातृभाषा में ही बातचीत की तथा पाया कि उसके पेट में घाव कर दिया गया था और फिर जल्दीबाजी में सिलाई कर दी गयी थी। स्वतंत्रता की इस लम्बी यात्रा में उसके क्षतिग्रस्त अंग पर भार पड़ा था और अब लग रहा था कि सारी आँतें बाहर निकल आयेंगी। उसका चेहरा बड़ा भयानक लग रहा था और ऐसा प्रतीत होता था, मानो कुछ घंटों के अन्दर ही वह मर जायेगा।

"मैं तुम्हें आइजेनटाट के अस्पताल में ले चलूँगी।"—उसने कहा।

"परिवार के दूसरे लोग भी जायेंगे न?"—उसने कमजोर वाणी में पूछा।

"ना, वहाँ परिवारवालों को नहीं ले जाया जा सकता। उन्हें दूसरी जगह जाना पड़ेगा।"

"तब मैं नहीं जाऊँगा।"—उसका सीधा-सा उत्तर था।

श्रीमती ब्राउन जितनी उत्साही है, उतनी ही कड़ी भी। उसने हंगेरियन भाषा में तुरन्त कहा—"तुम तो यहाँ मर रहे हो और चिन्ता कर रहे हो उन लोगों की, जो बिल्कुल ठीक हैं। पागल हुए हो क्या?"

"वे लोग यदि मेरे साथ नहीं होते, तो मैं मर जाता।...मैं अकेले नहीं जाऊँगा।"—उसने फिर जिद्द की।

अब श्रीमती ब्राउन अधीर हो गयी और वह एक चौकीदार से चिल्लाकर बोली—"इस आदमी को कार में रखो और जल्दी अस्पताल ले चलो।"

"मैं नहीं जाऊँगा।"—उसने प्रतिवाद किया।

अन्त में, श्रीमती ब्राउन ने पूछा—"अच्छा, तुम्हारे परिवारवाले कहाँ हैं?"

"वहाँ।"—उसने इशारा किया।

और तब, श्रीमती ब्राउन की समझ में यह बात आयी कि क्यों प्राण लेने-वाली पीड़ा में पड़ा व्यक्ति अपने सम्बन्धियों के लिए इतना जोर डाल रहा था। श्री हैदोक ३०-३५ वर्ष की उम्र का एक सुन्दर-स्वस्थ नवजवान था और श्रीमती हैजोक भी लगभग उतनी ही उम्र की बड़ी हँसमुख हंगेरियन गृहिणी थी। लेकिन बच्चे तो और भी आकर्षक थे। शीतकालीन भूरे रंग की पोशाक में सजी हुई वेरा अपरूप सुन्दरी थी और उसके ऊपरी होंठ पर का वह छोटा-सा मस्सा तो उसे एकदम ग्रेटा गार्बो की तरह बना देता था; जबकि छोटा जोहान, जिसकी उम्र ९ वर्ष की थी, बहुत ही गोरा और आकर्षक लड़का था। ऐंडाऊ का पुल पार करने वाले बच्चों में वही दोनों सर्वाधिक मनमोहक थे। आइजेनटाट-स्थित अस्पताल जाने के लम्बे मार्ग में श्रीमती ब्राउन को उस हंगेरियन परिवार से घना परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला।

उसने देखा कि भारी कठिनाइयों के बावजूद, जिनमें एक साधारण जाति के लोग पिस जाते, हैजोक-परिवार ने एक साथ रह कर एक-दूसरे की रक्षा की थी और ऐसी श्रेष्ठ पारिवारिक एकता दिखाई थी, जिसे देख कर एक साधारण व्यक्ति, जिसे किसी बहुत ही सुसम्बद्ध परिवार का अनुभव नहीं हो, दाँतों-तले उँगली दबा लेता। अस्पताल का यह नियम था कि आपरेशनवाले मरीज के

परिवार को साथ आने की अनुमति न दी जाये, किन्तु श्रीमती ब्राउन ने वहाँ के अधिकारियों से इस विषय में बहस-मुबाहिसे की कोशिश नहीं की। उसने केवल इतना कहा—"देखो, नर्स! मैं तुम्हारे यहाँ के नियमों से परिचित हूँ और यह भी मानती हूँ कि वे सही हैं, लेकिन इस परिवार को एक साथ ही रखना है।" नर्स ने इसके विरुद्ध बोलना शुरू किया, तो रुग्ण व्यक्ति ने साफ-साफ कह दिया कि यदि चालू नियम के विरुद्ध हैजोक-परिवार के चारों सदस्यों को नहीं आने दिया जायेगा, तो वह अस्पताल में भरती नहीं होगा। अन्त में वह नियम तोड़ दिया गया और हैजोक-परिवार अस्पताल में ही रहा।

जब उस व्यक्ति के घाव की पुनः सिलाई कर दी गयी और वह पूर्णतः स्वस्थ हो गया, तब श्रीमती ब्राउन ने सम्पूर्ण परिवार को अपने खर्चे पर वियेना के एक होटल में ले जाकर ठहराया और एक दिन कुछ ऐसे जिज्ञासु लोग, जो कम्यूनिज्म के अन्तर्गत पारिवारिक स्थिति की जानकारी चाहते थे, हैजोक-परिवार से पूछताछ करने के लिए पास के ही एक रेस्तराँ में एकत्र हुए।

परिवार के मुखिया जानोस हैजोक ने कठोर वाणी में कहा— "जिस दिन कम्यूनिज्म हंगेरी में पहुँचा, उसी दिन से हमारा सारा परिवार उससे घृणा करने लगा। हमने तीन बार भागने की कोशिश की। सन् १९४८ में, जब जोहान गोद में ही था, हमने भाग कर युगोस्लाविया चले जाने का प्रयत्न किया, लेकिन पकड़ लिये गये। फिर सन् १९४९ में, जब जोहान चलने लगा था, हमने कोशिश की, पर फिर पकड़ लिये गये और ए. वी. ओ. वालों की सजा भुगती। जिस दिन क्रान्ति शुरू हुई, उस दिन हमने एक-दूसरे से कहा—'अब सम्भव है कि हमारा देश अच्छा बन जाये।' लेकिन जब रूसी पुनः लौट आये, तो हम सर्वसम्मति से इस निश्चय पर पहुँचे कि अब किसी-न-किसी तरह यहाँ से चले ही जाना पड़ेगा। और, हम पैदल ही ऐंडाऊ की ओर चल पड़े।"

"क्या आपके बच्चे भी ऐसा ही अनुभव करते थे?"—एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया।

इस प्रश्न ने सुन्दरी वेरा को क्रुद्ध बना दिया। उसने अपना खूबसूरत चेहरा उठा कर जोर देते हुए कहा—"स्कूल में हमें रूसी भाषा और रूसी इतिहास पढ़ाया जाता था तथा यह बतलाया जाता था कि रूसी कम्यूनिस्ट-राज्य कितना महान् है। लेकिन हम सब चुपचाप बैठे-बैठे भीतर-ही-भीतर कुढ़ते रहते थे। हमें उन शिक्षकों से भी घृणा थी, जो वैसी मिथ्या बातें हमें सिखाते थे।"

सम्भवतः एक १३-वर्षीया लड़की के ऐसे भावुक उद्गारों को सुन कर कुछ

प्रश्नकर्ताओं को इस बात का सन्देह हो गया कि वेरा ने वैसे शब्द नहीं कहे थे, बल्कि दुभाषिये ने अपनी तरफ से उन्हें उस रूप में प्रस्तुत किया था। अतः उन्होंने दूसरा दुभाषिया बुलवाया, लेकिन उससे वेरा ने और भी कठोर शब्दों में कहा—"रूस या हंगेरियन कम्यूनिस्ट, कोई भी हमें उन मिथ्या बातों का विश्वास नहीं दिला सकते थे।"

"तुमने कैसे जाना कि वे बातें मिथ्या थीं?"—एक ने प्रश्न किया।

श्रीमती हैजोक ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया—"रात को ऊपरी मंजिलों की बत्तियाँ बुझाने के बाद हम लोग तहखाने में एकत्र होते थे और मैं बच्चों को हंगेरी का सही इतिहास बतलाती थी। हम लोग नैतिकता, कैथोलिक धर्म और पादरी मिंद्सजेन्ती के उपदेशों पर भी चर्चा करते थे। हम लोग बच्चों को तब तक नहीं सोने देते थे, जब तक उन सारी बुरी बातों का असर समाप्त नहीं हो जाता था, जो वे दिन-भर में सीखते थे।"

यह सुन कर रेस्तराँ में एक क्षण के लिए पूर्णतः सन्नाटा छा गया और तब किसी ने पूछा—"क्या सभी परिवार ऐसा ही करते थे?"

इसका उत्तर दिया श्री हैजोक ने—"हमें यह पता नहीं। आप जानते हैं कि हमें इस बात का कतई पता नहीं था कि हमारे समाज में कौन-कौन व्यक्ति ए.वी.ओ. से सम्बन्धित था। अतः अपने अच्छे-से-अच्छे मित्र से भी यह सब कहना खतरा मोल लेना था। लेकिन जहाँ तक मेरा खयाल है, अधिकांश परिवार गुप्त रूप से ऐसा ही करते होंगे।"

"आप इतना इतिहास जानती हैं कि बच्चों को पढ़ा सकें?"

श्रीमती हैजोक ने उत्तर दिया—"सन् १८४८ की क्रान्ति का सही विवरण देनेवाली पुस्तकें गुप्त रूप से बाँटी जाती थीं और मेरे पास भी उसकी एक प्रति थी। मैंने अपने बच्चों को उसे, खासकर अपने महान् देशभक्त लुई कोसुथ से सम्बन्धित अध्यायों को, कंठस्थ करा दिया था। लोग उस पुस्तक को बहुत पवित्र मानते थे; क्योंकि हमारी दुनिया में एक वही ऐसी चीज थी, जिसमें सच्चाई के दर्शन मिलते थे।"

बीच में ही श्री हैजोक ने गर्व का अनुभव करते हुए कहा—"इसके अलावा, मेरे पिताजी व्यक्तिगत रूप से लुई कोसुथ के पुत्र से परिचित थे और यदि हम उस परम्परा को विनष्ट होने देते, तो यह हमारे लिए शर्म की बात होती।"

एक प्रश्नकर्ता ने अपनी उँगली से खूबसूरत बच्ची वेरा की ओर इशारा

किया, जो यदि किसी उदार वातावरण में रहती होती, तो अभी गुड़ियों से खेलती, और पूछा—"तुम्हें मालूम है, कोसुथ कौन था ?"

तुरन्त ही वेरा अपनी माँ की बगल में खड़ी हो गयी और मधुर, किन्तु तेज स्वर में बोलने लगी। उसकी आवाज रेस्तराँ में गूँज उठी—"लुई कोसुथ हंगेरी का सबसे बड़ा वीर पुरुष था; क्योंकि उसने एक राष्ट्र के लिए स्वाधीनता और जनता के लिए आशा लाने का प्रयत्न किया।" वह दस मिनट तक बोलती रही—तहखाने में उसने जो-कुछ सीखा था, यह उसी का सुमधुर धारा-प्रवाह पाठ था।

जब उसने बोलना बन्द किया, तो एक प्रश्नकर्ता ने उससे प्रश्न पूछने शुरू किये—"क्या कोसुथ अपनी क्रान्ति में सफल हुआ ?"

"नहीं, उसे असफलता मिली।"

"वह विशेष रूप से क्या-क्या सुधार चाहता था ?"

"स्वाधीनता, पृथक् विधान मंडल, अच्छा न्याय, जमींदारी प्रथा का अंत।"

"यदि वह असफल रहा, तो उसने काम कौन-सा किया ?"

"उसने आगे के लिए हमें मार्ग दिखला दिया।"

"कितने साल पहले कोसुथ हुआ था?"

"एक सौ वर्ष पहले।"

इतने महत्त्वपूर्ण प्रश्न वेरा से किये गये थे और उसने उन सबका उत्तर दे दिया था। जब वह बैठ गयी, तब उसके पिता ने गर्वपूर्वक कहा—"यदि आप इससे धर्म या नीति-विषयक प्रश्न करते, तो भी यह इतनी ही अच्छी तरह उत्तर देती। मेरी पत्नी एक गर्व करने-योग्य शिक्षिका है।" फिर अन्त में उसने एक वाक्य कहा—"और, वह बहादुर भी कम नहीं है!"

रूसियों के अधिकार में आने से पहले, १५ मार्च को सभी हंगेरियन अपना राष्ट्रीय स्वाधीनता-दिवस मनाते थे और उस दिन, प्रचलित रिवाज के अनुसार बच्चे राष्ट्रीय पोशाक पहन कर सड़कों पर निकलते थे। सयाने लोग राष्ट्रीय रंगों —लाल, सफेद और हरा—के कृत्रिम गुलाब के फूल अपने बटन के छेदों में लगाते थे और कभी-कभी बच्चे अपनी बाँहों पर बड़ी-बड़ी चमकदार पट्टियाँ धारण करते थे। लेकिन कम्यूनिज्म के आने पर यह समारोह दब गया; क्योंकि अब 'लाल सेना-दिवस' और 'मई-दिवस'-जैसे अधिक महत्त्वपूर्ण उत्सव मनाये जाने लगे थे। सन् १९५३ के १५ मार्च को श्रीमती हैजोक ने अपने ६—वर्षीय पुत्र को राष्ट्रीय पोशाक पहना कर और बाँह पर इतना बड़ा

पट्टा लगा कर, जो दूर से ही स्पष्ट दिखाई पड़ जाता, सारे परिवार को आश्चर्यचकित कर दिया।

"ए. वी. ओ. वालों ने देख लिया तो?"—मित्रों ने चेतावनी दी।

"आज यह छः वर्ष का हुआ।"—उसने कहा—"और मैं चाहती हूँ कि यह हमेशा यह बात याद रखे कि अपने छठे जन्म दिवस के समय वह एक हंगेरियन था।"

फिर उसने गर्वपूर्वक उसे सड़क पर बाहर भेज दिया। जिस पहले व्यक्ति ने उसे वहाँ देखा, उसकी आँखों में आँसू भर आये। दूसरा व्यक्ति एक पुलिस का आदमी था। उसने बच्चे को रोक कर पूछा—"कहाँ जा रहे हो?"

जोहान ने उत्तर दिया—"आज हमारा राष्ट्रीय दिवस है न! तुम्हारे रँगीन गुलाब कहाँ हैं?"

"मेरे हृदय में हैं, मेरे बच्चे!"—पुलिस के आदमी ने उत्तर दिया और इस आशंका से, कि वह कहीं किसी विपत्ति में न फँस जाये, उसे उसके घर पहुँचा गया।

उस दिन के बाद से जोहान हंगेरियन ही रहा। तहखाने में उसके माँ-बाप ने उसे हंगेरी की पुरानी तेजस्वी कविता सिखायी। उसका पाठ करने में वह अत्यधिक आनन्द अनुभव करता था, लेकिन उसे सिखला दिया गया था कि बाहर, लोगों के सामने, वह उस कविता का पाठ न किया करे; क्योंकि ए.वी.ओ. को खबर मिल जाने का भय था। लेकिन आठ वर्ष की उम्र में वह १० वर्ष तक की उम्र के लड़कों और लड़कियों की वाक्-प्रतियोगिता में शामिल हुआ और उस विशाल स्कूल में उसने नाटकीय ढंग से एक उत्कट देशभक्ति-पूर्ण कविता पढ़ी। शिक्षकों पर इसका अद्भुत असर पड़ा और कई तो मन-ही-मन रो भी पड़े। जब उसने कविता-पाठ समाप्त किया, तो एक प्रौढ़ शिक्षक ने खुले रूप से उसकी प्रशंसा की। स्पष्ट था कि भेदिये उस शिक्षक की शिकायत ए. वी. ओ. से कर देते। वैसा ही हुआ भी; क्योंकि कुछ ही समय बाद वह लापता कर दिया गया।

श्रीमती हैजोक ने कहा—"हमारे बच्चों का स्कूल जाना सरल न था। हमने धार्मिक शिक्षा के लिए आवेदन करने की भी हिम्मत की, पर वेरा को साफ-साफ कह दिया गया कि यदि वह उन वर्गों में जायेगी, तो अगली कक्षा में वह न चढ़ सकेगी। स्कूल के प्रमुख ने तो और भी आगे बढ़ कर कह डाला कि यदि वह धर्म का अध्ययन करेगी, तो उसका स्कूल आना ही रोक दिया

जायेगा। लेकिन बाद में, जब वह शिक्षक, जिसने जोहान के कविता-पाठ की प्रशंसा की थी, ए.वी.ओ. से वापस लौटा, तब उसने साहसपूर्वक धर्म की शिक्षा देने के लिए गुप्त वर्ग आरम्भ कर दिये; हालाँकि उसे मालूम था कि यदि वह पुनः पकड़ा जाता, तो इस बार पीट-पीट कर उसकी जान ही ले ली जाती। वह एक बहुत ही अच्छा आदमी था।"

स्कूल और बच्चों के माता-पिता के बीच का संघर्ष कभी भी शान्त नहीं हुआ। हैजोक ने स्पष्ट किया—"कम्यूनिस्टों की ओर सब-कुछ था—मिश्री, फल, खेल, आतंक, आदि। हमारे पास सिर्फ एक चीज थी—रात की पढ़ाई।"

श्रीमती हैजोक ने कहा—"हम बच्चों को सबसे अधिक ईश्वर में विश्वास करना सिखाते थे। लेकिन लगभग उतनी ही कड़ाई से हम उन्हें एक परिवार के रूप में मिल कर रहना भी सिखाते थे।"

हैजोक ने स्पष्टीकरण किया—"कम्यूनिस्ट हमारे पारिवारिक जीवन को जितना नष्ट करना चाहते थे, हम उतना ही पारिवारिक निष्ठा पर जोर देते थे। दिन-भर, हर दृष्टि से, हम उनके द्वारा दबाये जाते थे; पर रात में हम फिर पूर्णतः सशक्त हो जाते थे।"

अब श्रीमती हैजोक के भाई ने कहा—"वेरा को ही लीजिये। जब वह छः वर्ष की थी, तब रूसी उसे नापसन्द थे। जब ९ वर्ष की हुई, तो वह उनसे घृणा करने लगी। दस वर्ष की उम्र में वह कम्यूनिज्म की बुराइयों को समझने लगी और अब तो १३ वर्ष की उम्र में वह एक विशुद्ध देशभक्त है और मुझसे भी ज्यादा जानती-समझती है।"

श्रीमती हैजोक बोली—"जब बच्चों को कम्यूनिस्ट शिक्षक पढ़ाते थे, तब लड़के-लड़कियाँ, शिक्षक की बात समाप्त होने से पहले ही, यह समझ जाती थीं कि उनके सामने क्या-क्या मिथ्या बातें कही जा रही हैं।"

एक प्रश्नकर्ता ने सवाल किया—"क्या आपको कभी ऐसी आशंका नहीं होती थी कि बच्चे ही कहीं धोखा न दे जायें—मेरा मतलब है, अकस्मात् किसी कारणवश ही?"

इस पर काफी देर तक वहाँ सन्नाटा छाया रहा और इस बीच हैजोक-परिवार के पाँचों सदस्य उन घटनाक्रमों के चिन्तन में लीन हो गये, जो कम्यूनिज्म के अन्तर्गत धार्मिक और बौद्धिक जीवन की रक्षा के समय उनके समक्ष उपस्थित हुए थे। हर सदस्य इस बात को जानता था कि क्या-क्या निर्णय किये

गये थे, कौन-कौन मूलभूत खतरे मोल लेने पड़े थे और सबसे ऊपर, बच्चों में कितना सम्पूर्ण विश्वास कायम किया गया था। इन नाजुक निर्णयों के सम्बन्ध में बोलने में हैजोक-परिवार असमर्थ था; क्योंकि वैसा करने का अर्थ परिवार की मूल आत्मा को ही प्रकाश में ला देना था। लेकिन तभी, अकस्मात् दुभापिये ने अत्यधिक भावुकता में आकर कहा—"शायद मैं आपको बता सकूँ कि एक हंगेरियन परिवार को कैसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था। मैं अँग्रेजी में बोलूँगा; इसलिए इन लोगों को क्लेश भी नहीं पहुँचेगा।"

दुभाषिये ने हंगेरियन परिवारवालों की ओर से कहा—"ज्यो-ज्यों हमारे बच्चे बड़े होते थे, त्यों त्यों हमारी चिन्ता भी बढ़ती जाती थी। हमारे बच्चे स्कूल से लाल 'टाई' बाँधे और कम्यूनिस्ट मिथ्या बातों को दुहराते हुए घर वापस आते। जब हम उनसे पूछते कि वे किसको सबसे अधिक प्यार करते हैं, तो वे उत्तर देते—'माँ को, पिता को और भाई स्टालिन को।' वे घर में टाँगने के लिए स्टालिन के चित्र लाकर हमें देते। हमें मालूम था कि उनके शिक्षक प्रति दिन उनसे पूछते थे—"क्या तुम्हारे माता-पिता कामरेड स्टालिन को प्यार करते हैं?" अतः हमें उन्हें झूठा विश्वास दिलाना पड़ता था कि हम स्टालिन को प्यार करते हैं। लगभग हर रात को सोने के समय हम पति-पत्नी, जिनके बच्चे थे, आपस में धीरे-धीरे बात करते—'तुम्हारा क्या खयाल है—अब वे जानने-योग्य हो गये हैं?' और साधारणतः पति का उत्तर होता—'अभी नहीं।'

"लेकिन माँ प्रायः ही बोल उठती—'अब मैं अधिक दिनों तक अपने बच्चे को गुमराह नहीं देख सकती। आज रात हम लोग उसे सच्ची-सच्ची बातें बतला देंगे।' और पिता विरोध करता—'अभी नहीं, अभी वह आठ ही वर्ष का तो है।' और तब, माँ-बाप दोनों अपने बच्चे का इतनी गम्भीरता से निरीक्षण करते, जिसे दूसरे माँ-बाप शायद ही लक्ष्य कर पाते। माँ कहती—'वह बहुत अच्छा, ईमानदार लड़का है।' पिता कह उठता—'काफी तगड़ा और सम्मानप्रिय भी है।' तदुपरान्त, रात में और भी बातें इस सम्बन्ध में होतीं और माँ सदा ही इस बात पर जोर देती कि परिवार को एक साहसिक कदम उठाकर बच्चे की रक्षा करनी चाहिये।

"अब परिवार बुडापेस्ट के किसी ऐसे परिवार की खोज में लग जाता, जिस पर वे विश्वास कर सकते। बात करते समय कुछ ऐसे प्रसंग छेड़े जाते, जिनके क्रम में यह बात प्रकट हो जाये कि किस उम्र में बच्चे पर, परिवार की सुरक्षा को दृष्टि में रखते हुए, विश्वास किया जा सकता है। कोई व्यक्ति अपने

हार्दिक मित्र से बात करता, तो भी अधूरे वाक्यों में। वह कहता, क्या आठ वर्ष के बच्चे पर...' और, वह मित्र बात पूरी करता—'जब मेरा बच्चा ९ वर्ष का हुआ, तब मैंने उससे बात की थी।' भय के कारण इतनी ही बातें वे कर पाते थे। लेकिन उधर माँ भी किसी ऐसी महिला से बात करती, जिसने अपने बच्चे को आठ वर्ष की उम्र में ही सब-कुछ बताया था। या फिर कोई दूसरी गृहिणी मुर्झाया चेहरा लिये बोलती—'१० के पहले नहीं...'

"इस प्रकार, आप देखते हैं कि, एक परिवार को उस सही वक्त का निश्चय करना पड़ता था, जब किसी बच्चे को कम्यूनिज्म से बचाने का प्रयत्न किया जाता। और फिर, इस बात का ध्यान रखना पड़ता था कि कहीं जल्दीबाजी न हो जाये और बच्चा बात को खोल कर सारे परिवार को ही नष्ट न कर दे; क्योंकि यदि ए. वी. ओ. वालों को सन्देह हो जाता, तो वे किसी रात आ पहुँचते और बच्चे के पिता को पकड़ ले जाते। कभी-कभी तो ऐसा भी होता था कि वह फिर कभी नहीं लौटता था।

"उन दिनों अधिकाधिक कानाफूसी और अधिकाधिक सलाह-मशविरा होता था। मुझसे ही कम-से-कम मेरे छः मित्रों ने पूछताछ की और तीन बार मैंने पहली पारिवारिक बैठक में भाग लिया। साधारणतः रात में ही यह कार्य होता था। माँ-बाप अपने बच्चों को इकट्ठा करते और बातों-बातों में ही प्रश्न करते—'आज तुमने स्कूल में क्या सीखा?' बच्चा बतलाता कि केवल रूस और स्टालिन ही ऐसे हैं, जिन पर हंगेरी विश्वास कर सकता है। इस पर पिता प्रेम से बोल उठता—'नहीं बेटा, यह सब झूठ है।'

"यह घड़ी बड़ी भयावनी होती थी। लगता था, जैसे मौत कमरे में आ गयी है। थोड़ी-बहुत इधर-उधर की बातें करने के बाद मैंने कहा—'इस्तवान, जानते हो—मौत क्या है?' और इस्तवान के उत्तर की परवाह किये बिना ही मैं कह देता—'यदि तुम आज रात की बात किसी से कहोगे, तो तुम्हारा पिता मर जायेगा।'

"बच्चे सदा ही बात समझ जाते थे। और प्रश्न करना आरम्भ कर देते थे। कुछेक क्षणों के बाद ही माँ कहती—'हम तुम्हारे मन में कुछ ऐसी बातें बैठा देना चाहते हैं, जिनसे तुम्हें सहायता मिलेगी।' और, साधारणतः उसे 'बाइबिल' का कोई भाग या पेटोफी की कोई कविता सिखा दी जाती।

"लेकिन ऐसे अवसर अक्सर ही आते थे, जब ऐसे पिता को अपने पुत्र को अनुशासन में रखने की आवश्यकता महसूस होती थी। ऐसी स्थिति में

पिता, यह बात ध्यान में आते ही कि बच्चा यदि चाहे, तो परिवार से बदला ले सकता है, अपना उठा हुआ हाथ रोक लेता। लेकिन फिर उसे अपने पूर्व-निश्चय पर विश्वास हो आता था। मुझे याद है, जब मैं अपने बच्चे को सजा देने जा रहा था। जब मैं क्रोध में था, वह चुपचाप मुझे देखता रहा और समझ गया कि मैं भयभीत था; लेकिन वह यह भी जानता था कि चूँकि मैं भयभीत था, मैं उसे तब तक नहीं पीट सकता था, जब तक वह अत्यन्त जरूरी नहीं हो जाता। साथ ही, उसे यह भी पता था कि मैं अपनी जिन्दगी से भी बढ़ कर उसे एक अच्छे मनुष्य के रूप में देखने का इच्छुक हूँ। ऐसे क्षणों में से होकर हमारा पारिवारिक जीवन गुजर रहा था।"

दुभाषिया एक क्षण के लिए रुका और जोहान हैजोक के झुके हुए खूबसूरत सिर पर हाथ रख कर बोला—"यह परिवार भी जानता था कि जब इस छोटे बच्चे को सचाई की शिक्षा दी जाने लगी, तब यह पूरे परिवार को विनष्ट कर सकता था।"

हैजोक-परिवार अब अँग्रेजी अच्छी तरह समझने लगा था; अतः जब सब लोग बालक जोहान को देखने लगे, तब श्रीमती हैजोक बोल पड़ी—"हमने वह एक खतरा मोल लिया था।"

अतएव, एक अत्यन्त ही सुसम्बद्ध गिरोह ने क्रांति के सूत्रपात का सामना किया। श्रीमती हैजोक ने कहा—"इसका प्रथम समाचार मिलने पर हमारे कुछ कहे-सुने बिना ही, वेरा और जोहान ने अपनी रूसी पुस्तकें जला डालीं। बच्चों ने सौगन्ध ली—'अब हम इन्हें फिर कभी नहीं पढ़ेंगे।' अनेक दूसरे परिवारों में भी ऐसा ही हुआ।"

"लेकिन क्रान्ति की सर्वाधिक रोमांचक बात मेरे लिए यह थी कि जोहान, बिना किसी के प्रोत्साहन के, पेटोफी की एक कविता का जोर-जोर से पाठ करने लगा, मानो अब उसे किसी बात का भय रह ही नहीं गया था।" हैजोक ने कहा

"पेटोफी कौन था?"—एक प्रश्नकर्ता ने पूछा।

तुरन्त ही जोहान ने उत्तर दिया—"सैण्डर पेटोफी सन् १८४८ की क्रान्ति का शानदार कवि था—वह एक बहादुर योद्धा और सज्जन पुरुष था।"

"यह तो ऐसा लगता है, जैसे तुम कोई कविता पढ़ रहे हो। तुम अपने शब्दों में बताओ कि वह कौन था?"—जिज्ञासु व्यक्ति बोला।

रेस्तराँ हंगेरियनों से भरा था। जब चमकदार भूरे बालोंवाला वह ९-वर्षीय बालक, उस अपरिचित व्यक्ति पर एक दृष्टि डाल कर, स्पष्ट वाणी में बोलने

लगा, तब वहाँ सन्नाटा छा गया। उसने कहा—"पेटोफी एक युवा कलाकार था, जिसने कभी भी प्रचुर धन नहीं कमाया। क्रान्ति-काल में उसने संघर्ष भी किया, लेकिन उसने जो सबसे अच्छा काम किया, वह था कविता लिखना। सड़कों के मोड़ों पर खड़ा होकर वह अपनी कविता का पाठ करता और सारे बुडापेस्ट के लोग उसे दुहराते। मुझे जो कविता सबसे अधिक पसन्द है, वह यह है।"

बाल-स्वर में, पर पूरे जोश के साथ, जोहान हैजोक हंगेरियन स्वतंत्रता से सम्बन्धित उन सुन्दर और नवजागरण पैदा करनेवाले शब्दों को दुहराने लगा। सारा रेस्तराँ उसकी वाणी से गूँज उठा—

"पितृभूमि की है पुकार, हंगेरियनो, तुम जागो।
यही समय है—अभी नहीं तो कभी नहीं।
क्या रहना है दलित, या कि स्वच्छंद?
आज इसी का हमें-तुम्हें निर्णय करना है।
सभी हंगेरियन देवों की है शपथ, सुनो जी,
दासता की बेड़ियों को तोड़ ही दम लेंगे।"

जब वह रुका, तो सारा रेस्तराँ निःशब्द था। श्रीमती हैजोक अपने धैर्यपूर्ण प्रशिक्षण-काल को स्मरण करके रो पड़ी। श्री हैजोक ने अपनी नाक साफ की और गर्व में भर कर अपने बेटे को देखा। कुछ जिज्ञासु लोग, जो प्रश्न कर रहे थे, होंठ चबाते नजर आये और पास की मेजों पर बैठे हंगेरियन, जिन्हें पेटोफी के आदर्शों के अनुकूल शिक्षा मिली थी, पूर्णतः शांत बैठे थे।

इस गम्भीर वातावरण को समाप्त करने के उद्देश्य से जिज्ञासुजन आपस में बोले—"चिन्ता की कोई बात नहीं। एक हंगेरियन तब तक खुश नहीं होता, जब तक वह रोता नहीं।"

इस आंशिक रूप से सच्ची टिप्पणी पर लोग हँस पड़े और तब श्री हैजोक ने यह कह कर लोगों में बिजली-सी भर दी—"ऐसे बच्चों के मुकाबले में कम्यूनिज्म भला क्या कर सकता था? क्या इससे यह स्पष्ट नहीं हो गया कि बुडापेस्ट की लड़ाई में क्यों किसी बच्चे ने रूसियों का साथ नहीं दिया?"

एक प्रश्नकर्ता ने पूछा—"लेकिन क्या मार्क्स-लेनिन इन्स्टिटयूट के कुछ छात्रों ने स्वातंत्र्य-सैनिकों के विरुद्ध मोर्चा नहीं लिया?"

हैजोक ने चकित हो उसकी ओर देखते हुए पूछा—"सच? क्या उन्होंने ऐसा किया?"

"हाँ।"

"क्या अधिक संख्या में?"

"नहीं, बहुत थोड़ी।"

"वे अभागे बालक!"—हंगेरियन हैजोक ने कहा—"कैसे उन्होंने ऐसा किया?" वह कुछ देर तक इस प्रश्न पर सोचता रहा और तब बोला—"सम्भवतः इसलिए कि उनके माँ-बाप ने उन्हें पेटोफी की गौरवपूर्ण कविता नहीं सिखाई होगी।"

"कौन-सी गौरवपूर्ण कविता?"—एक अपरिचित ने प्रश्न किया।

"वेरा, तुम सुना दो।"—श्री हैजोक बोले।

पुनः अशान्त हो उठे उस रेस्तराँ में वेरा हैजोक, जो बचपन के नृत्य से भी अधिक सुन्दर थी, उठी और उसने अपने दोनों हाथ बगल में लटका कर, पहले धीमे से और फिर तेज स्वर में उन पंक्तियों को सुना डाला, जो पेटोफी ने अपने शिशु पुत्र को देखने पर लिखी थीं। बीच-बीच में दुभाषिया लोगों को अर्थ समझाता जा रहा था। पुनः रेस्तराँ में एकदम सन्नाटा छा गया। इस बार की कविता युद्ध की ललकार न थी और न शत्रु के प्रति क्रोध ही पैदा करनेवाली थी। यह कविता एक ऐसे व्यक्ति के उद्गारों को व्यक्त करती थी, जो एक नये हंगेरी की कल्पना करता था तथा जो अपने प्रिय राष्ट्र के भविष्य की एक झाँकी देखना चाहता था। दुभाषिये ने समझाया—"वह अपने पुत्र को एक अच्छा आदमी बनने की सीख देता है। वह चाहता है कि उसका बेटा आजन्म एक सत्पुरुष रहे। वह कहता है कि यह लड़का पेटोफी से भी अच्छा बनेगा। वह पेटोफी की अपेक्षा एक अच्छे हंगेरी को देखेगा।"

जब वेरा ने कविता-पाठ समाप्त किया, तब कोई एक-दूसरे की ओर नहीं देख रहा था। वहाँ सुनसान क्षेत्र की-सी नीरवता व्याप्त थी। तभी वेरा ने संतापपूर्ण स्वर में कुछ चकित कर देनेवाली एक सूचना दी—"हमें हंगेरी छोड़ना पड़ा, आप जानते हैं। हम छोड़ना तो चाहते ही थे, लेकिन जोहान ने कुछ किया, उसके चलते हमें शीघ्रातिशीघ्र वहाँ से चल देना पड़ा।"

"उसने क्या किया?" एक अपरिचित ने प्रश्न किया।

किंचित् झिझक के साथ श्री हैजोक ने बताया—"स्कूल में एक सयाने रूसी लड़के ने, जो एक अधिकारी का लड़का था, हंगेरी के प्रति अपमानजनक शब्द कहे और जोहान ने उसका कान काट लेने का प्रयास किया।"

इसके बाद पुनः नीरवता छा गयी, लेकिन कुछ ही क्षण बाद एक प्रश्नकर्ता ने वेरा से पूछा— "पेटोफी मरा कैसे?"

शुद्ध हंगेरियन भाषा में उत्तर मिला—"इस बारे में दो तरह के विचार हैं। वास्तव में, कोई जानता तो नहीं; लेकिन जब सन् १८४८ की क्रान्ति को कुचल डालने के लिए रूसियों ने हंगेरी पर आक्रमण किया, तब, ऐसा समझा जाता है कि, पेटोफी कुछ रूसी घुड़सवार सैनिकों से लड़ते हुए मारे गये। वे रूसी उनकी छाती पर से घोड़े दौड़ा कर निकल गये। दूसरे लोगों का कहना है कि रूसियों ने उन्हें घायल कर दिया और चूँकि वे बराबर उन लोगों का अपमान करते रहते थे, अतः उन्होंने उन्हें जीवित ही गाड़ दिया। जो भी हो, इतना निश्चित है कि वे २६ वर्ष की उम्र में मारे गये।"

यह स्पष्ट है कि हैजोक-दम्पति अपने बच्चों को कम्यूनिस्ट बनने से रोकने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थे और हालाँकि उन्होंने अपने पड़ोसियों से छिप कर तथा अलग रह कर यह सब किया; फिर भी, जैसा कि दुभाषिये ने अपने अनुभवों को व्यक्त करते हुए कहा, अनेक दूसरे हंगेरियन परिवार भी इसी प्रकार इस बारे में दृढ़प्रतिज्ञ थे। यदि इन तथ्यों पर अलग से विचार किया जाये, तो रूसियों का यह दावा, कि इस अध्याय का अधिकांश मिथ्या है, उचित जान पड़ेगा।

मैंने पहले कहा है कि नवजवानों पर आश्चर्यजनक रूप से दबाव डाले जाने के बावजूद, कम्यूनिज्म हंगेरी के नवजवानों को अपने पक्ष में मिलाने में असमर्थ रहा। मैंने यह भी दावा किया है कि स्टालिन की यह गर्वोक्ति, कि बच्चों के कोमल मस्तिष्क को वह जैसा चाहे बना सकता है, गलत साबित हो चुकी थी।

लेकिन मुझे आशंका है कि कम्यूनिज्म, यह दावा करेगा कि हंगेरी में वैसा कुछ नहीं हुआ। इसे साबित कर देने पर कम्यूनिस्ट यह दावा कर सकेंगे कि प्रतिक्रियावादी, पूँजीवादी और धार्मिक गुरुओं से प्रभावित फासिस्ट माँ-बाप अपने बच्चों के मस्तिष्क को गुलाम ही बनाये रखने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थे और ऐसे दुष्टों के विरुद्ध ईमानदारी से परिपूर्ण कम्यूनिज्म विशेष-कुछ नहीं था। कम्यूनिस्ट परिभाषा के अनुसार जानोस हैजोक और उसकी पत्नी, दोनों दुष्ट थे।

इस रिपोर्ट में मैंने जो तथ्य दिये हैं, केवल उनके आधार पर ही, कम्यूनिस्टों को ऐसा लग सकता है कि हैजोक-दम्पति प्रतिक्रियावादी थे; क्योंकि वे अपने बच्चों को इतिहास पढ़ाते थे। वे पूँजीवादी थे, क्योंकि कभी उनका एक छोटा-सा व्यवसाय था। वे धर्मगुरुओं से प्रभावित थे, क्योंकि वे

ईश्वर में विश्वास करते थे और वे खूनी फासिस्ट थे, क्योंकि उनके पुत्र ने एक भले कम्यूनिस्ट के कान काटने का प्रयत्न किया था।

लेकिन हंगेरियन नवजवानों की गाथा का सबसे शोचनीय भाग अभी बाकी ही है। यह सत्य है कि हैजोक-परिवार के बच्चों को कम्यूनिज्म के विपरीत शिक्षा भी दी गयी थी, अतः उनका कम्यूनिज्म से संघर्ष करना उतना आश्चर्य-जनक नहीं था। लेकिन वैसे बच्चों की संख्या कहीं अधिक थी, जिनके माँ-बाप हैजोक-दम्पति से कम साहसी थे और बच्चों को रात में पुनः शिक्षा नहीं देते थे। वैसे बच्चों ने भी कम्यूनिज्म से मोर्चा लिया।

ऐसे लाखों बच्चे थे, जिनके माँ-बाप या तो कट्टर कम्यूनिस्ट थे अथवा रूसियों के पदचिह्नों का अनुसरण करनेवाले थे; लेकिन उन्होंने भी उस दोषपूर्ण व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष किया। ऐसे कई प्रमाणित उदाहरण हैं, जिनमें ए. वी. ओ. वालों के बच्चों ने कम्यूनिज्म से मुँह फेर लिया और स्वातंत्र्य-सैनिकों के साथ मिल कर लड़ाई की। कुछ अत्यन्त उच्चपदस्थ अधिकारियों के भी ऐसे लड़के थे, जिन्होंने अपने पिता की सरकार से लोहा लिया—उदाहरण-स्वरूप, इम्रे होरवाथ को ही ले लीजिये।

ये तथ्य यह प्रमाणित करते हैं कि सम्पूर्ण हंगेरी में ऐसे कुछ ही नव-जवान थे—जैसे मार्क्स-लेनिन इन्स्टिटयूट के कुछ छात्र—जो उस व्यवस्था के प्रति वफादार रहे, जिसने उन्हें लालच देकर कैद-सा कर रखा था। बाकी सब, अपने माँ-बाप के विचारों की परवाह न करते हुए, संकट की घड़ी में कम्यूनिज्म के विरुद्ध हो गये थे।

९. ऐंडाऊ का पुल

ऐंडाऊ में एक पुल था, जहाँ पहुँच जानेवाला हंगेरियन लगभग आजाद हो जाता था।

यह साधारण पुलों की तरह नहीं था। इसकी चौड़ाई इतनी कम थी कि एक कार भी प्रवेश नहीं कर सकती थी। न यह इतना मजबूत ही था कि कोई मोटर-साइकिल उस पर से गुजर सकती। यह पैदल चलने का पुल था, जो जर्जर तख्तों से बना था। इस पर हाथ रखने की रेलिंग बनी थी, पर वह इतनी ऊँची थी कि बच्चे उसे छू भी नहीं सकते थे।

यह पुल वस्तुतः ऐंडाऊ में नहीं था और न उसके निकट ही था; फिर भी वह सम्पूर्ण हंगेरी में 'ऐंडाऊ का पुल' के नाम से प्रसिद्ध था और हंगेरी के सभी भागों से आनेवाले हजारों शरणार्थी इसकी ओर बढ़ रहे थे। रूसियों से पल्ला छुड़ा कर, लोग केवल कागज-पत्र रखने का एक थैला लिये या खाली हाथ ही, इस महत्त्वहीन पुल की ओर, अर्थात् आजादी की ओर बढ़ रहे थे।

ऐंडाऊ निश्चय ही हंगेरी में नहीं है। यह आस्ट्रिया का एक गाँव है, लेकिन चूँकि पुल के सबसे निकट यही बस्ती थी और इस छोटे-से गाँव ने अपने यहाँ बहुत अधिक शरणार्थियों को स्थान दिया था, इसे एक ऐसे पुल से प्रसिद्धि प्राप्त हुई, जो किसी भी तरह इसका नहीं था।

यह पुल न तो किसी महत्त्वपूर्ण नदी पर बना था और न यह किसी छोटी नदी या नाले को पार ही करता था। यह केवल कीचड़ से भरी इन्जर (प्रथम) नहर पर बना था, जो कई पुश्त पहले, आसपास के दलदल को सुखाने के लिए बनायी गयी थी। अब यह नहर आस्ट्रिया और हंगेरी के बीच की सीमा के एक अंग के रूप में थी।

इस पुल तक न तो कोई सड़क आयी थी और न कोई रेल-मार्ग ही। वर्षों पूर्व इसका निर्माण स्थानीय चारा-उत्पादक किसानों की सुविधा के लिए किया गया था, जो नहर के निकटवर्ती दलदल-क्षेत्र में बहुतायत से उपजनेवाली घास के स्वामी थे और जिन्होंने आस्ट्रिया और हंगेरी के बिलगाव की साधारणतः कभी विशेष चिन्ता नहीं की थी। यथार्थतः, चूँकि यह पुल पूर्णतः

हंगेरी में था, इसलिए जब कोई व्यक्ति इसे पार कर लेता था, तब भी आस्ट्रिया पहुँचने के लिए उसे कुछ सौ गज की दूरी तय करनी पड़ती थी।

आप सहज ही समझ सकते हैं कि ऐंडाऊ का यह पुल यूरोप का लगभग सबसे महत्त्वहीन पुल था और यदि इसे यहाँ के सन्तुष्ट किसानों और उनके चारावाले खेतों के भरोसे छोड़ दिया जाता, तो यह और कई पुश्तों तक, जब तक इसकी लकड़ियाँ सड़ कर नहर में नहीं गिर जातीं, चलता। यह कब नष्ट हो जाता, इसकी किसी को खबर भी नहीं होती।

लेकिन इतिहास की एक घटनावश, कुछ सप्ताह तक यह पुल संसार के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुलों में से एक हो गया; क्योंकि इसके कमजोर और ढीले तख्तों पर से होकर एक राष्ट्र की आत्मा दूसरी ओर चली गयी। ऐंडाऊ के इस पुल से होकर २० हजार से भी अधिक लोगों ने, जिन्होंने कम्यूनिज्म को पहचान लिया था और उसे नापसन्द किया था, पलायन किया। जीवन के उस नये ढंग के वे बहुत निकट रहे थे और उन्होंने खेदसहित यह अनुभव किया था कि वह भयानक नये वेश में केवल पुराना आतंकवाद था; क्योंकि वह एक व्यक्ति को उसकी सांसारिक सम्पत्ति से ही वंचित नहीं करता था, बल्कि उसके मानस, नये जीवन की हर आकांक्षा और समस्त आशाओं को भी हर लेता था। ऐंडाऊ में ही पहुँच कर, रूसी आतंक से प्रपीड़ित शरणार्थी अपनी गाथाएँ सुनाते थे। यहीं विश्व को यह स्पष्ट जानकारी प्राप्त हुई कि एक शासन-व्यवस्था के रूप में कम्यूनिज्म कितना बड़ा दिवालिया साबित हुआ था।

बहुत समय पहले जिन लोगों ने ऐंडाऊ में इस छोटे-से लकड़ी के पुल का निर्माण किया होगा, उन्होंने सम्भवतः कभी इस बात की कल्पना भी नहीं की होगी कि उनके द्वारा निर्मित उस पुल से होकर यह कहानी ले जायी जायेगी। उन्होंने यह भी न सोचा होगा कि उनके पुल से होकर हंगेरी के मानवता-प्रेमी अपनी उस मातृभूमि को त्याग कर भागेंगे, जिसके लिए उन्होंने तथा उनके पूर्वजों ने लगातार संघर्ष किया था। बड़ी अनिच्छा और क्लेश के साथ, हंगेरी के बहादुर लोगों ने अन्त में यह निर्णय किया कि उन्हें अपने शस्य श्यामल और प्रिय देश को छोड़ कर बाहर निकल जाना चाहिये।

ऐंडाऊ के नाटक को समझने के लिए इसके विचित्र सीमा-क्षेत्र को समझना आवश्यक है। आस्ट्रिया का यह क्षेत्र एक निम्नवर्ती फुटबाल-मैदान की भाँति लगता है। एक दिन रात को इस मैदान के बीच में एक आस्ट्रियन पहरेदार मेरे साथ था। उसने कहा—"हमारे दक्षिण में हंगेरी है। पूरब में भी हंगेरी

ही है। हंगेरी से घिरा हुआ, यह एक छोटा सा स्वतंत्र क्षेत्र है।"

दक्षिण में फुटबाल-मैदान की लम्बाई की तरफ, एक ऊँचा नहर-तट था, जो सम्पूर्णतः हंगेरी में था। इस तट से सटे दक्षिण में, नीचे की ओर, मंद प्रवाहवाली इन्जर नहर बहती थी, जो छलाँग मार कर पार नहीं की जा सकती थी। साथ ही, अधिकांश स्थानों पर वह इतनी गहरी थी कि इसे चल कर भी पार नहीं किया जा सकता था। इससे भी आगे हंगेरियन दलदल-क्षेत्र था, जो नरकट, सरपत, आदि की झाड़ियों से भरा था। हंगेरी की इस सीमा से होकर निकल भागना वास्तव में बड़े जीवट का काम था।

आस्ट्रियन फुटबाल-मैदान की चौड़ाई की ओर, पूरब में, स्थिति कुछ दूसरी थी। आस्ट्रिया की इस ओर की सीमा एक नाली-नुमा खाई के रूप में थी, जिसे चल कर पार किया जा सकता था। यदि कोई शरणार्थी इसे पार करना चाहता, तो उसे केवल कुछ स्थानों पर छाती-भर पानी पार करना पड़ता, अन्यथा साधारणतः घुटना-भर पानी ही मिलता था। लेकिन इस खाई तक पहुँचने के लिए एक शरणार्थी को, सिर के बराबर ऊँची नरकट की झाड़ियों से भरे भयंकर हंगेरियन दलदल को पार करना पड़ता था।

पूरब की यह खाई दक्षिण की ओर बढ़ कर नहर में मिल जाती थी। आस्ट्रियाई मैदान के इस कोने के पास, दो हंगेरियन सीमा-रक्षक तैनात रहते थे। और, उनसे आगे, लगभग आध मील की दूरी पर, एक विषादपूर्ण मशीन-गन-मीनार थी, जहाँ ए. वी. ओ. के आदमी तैनात रहते थे। इस मीनार से भी कुछ सौ गज आगे ऐंडाऊ का पुल था।

आस्ट्रिया की ओर भागने के मार्ग में एक और कठिनाई थी। जब कोई शरणार्थी हंगेरियन दलदल-क्षेत्र को पार कर आस्ट्रिया में पहुँचता था, तब वहाँ भी उसे दलदल-क्षेत्र का ही सामना करना पड़ता था। लगभग एक मील इस दलदल-क्षेत्र में चलने के बाद वह एक सड़क के पास पहुँचता था। सड़क के पास एक उद्धार-शिविर था, जहाँ सुरक्षित स्थान में स्त्रियों और बच्चों को ले जाने के लिए स्विट्जरलैण्ड और जर्मनी के रेडक्रास के ट्रक तैयार मिलते थे। लेकिन पुरुषों को पैदल ही पाँच मील की दूरी तय करके ऐंडाऊ पहुँचना पड़ता था। वहाँ जाकर वे पूर्णतः स्वतंत्र हो जाते थे।

इन सब बाधाओं के बावजूद, ऐंडाऊ के पुल के पास, समय-समय पर ऐसे दिन भी आते थे, जब उनका भागना एक खूबसूरत जुलूसे की तरह नजर आता था। उन दिनों, कुछ रहस्यमय कारणों से, ए. वी. ओ. के पहरेदार अपनी

मीनार में नहीं होते थे, पुल खुला रहता था और दलदल-क्षेत्र लोगों से भरा होता था। चूँकि रूसी 'गन' शान्त रहते थे, शरणार्थी निडर रूप से चौड़े नहर-तट पर चल सकते थे। ऐसे ही एक दिन, हजारों लोग गाते-बजाते उस मार्ग पर खुशी-खुशी चल रहे थे, जब आस्ट्रिया के इस सुदूर कोने पर, मुझे अपने जीवन का एक बहुत ही विस्मयकारी अनुभव प्राप्त हुआ।

अपने जीवन में मैंने कई अवसरों पर निष्क्रमण के दृश्य देखे हैं—पाकिस्तान से भारतीयों का हृदयद्रावक पलायन, कम्यूनिस्ट-अधिकृत उत्तरी कोरिया से अधमरी कोरियाई स्त्रियों का घिसट-घिसट कर निकलना और जापान के प्रशान्त द्वीप के मूलनिवासियों का निष्क्रमण—लेकिन हंगेरियन निष्क्रमण की तरह कोई चीज मैंने नहीं देखी थी। पहली बात यह, कि निष्क्रमणार्थियों में अनुमान से अधिक नवजवान भरे थे। दूसरे निष्क्रमणार्थी-दलों में मुख्यतः बूढ़े व्यक्ति ही होते थे, लेकिन ऐंडाऊ में मैंने देखा कि उस देश के सर्वोत्तम नवजवान भागे आ रहे थे—उनकी औसत आयु २३ वर्ष ही होगी। दूसरी चीज थी, उनका उत्साह। वे न तो उदास थे, न घायल, न अंगहीन और न पंगु ही। वे रूसियों और कम्यूनिस्ट धोखाधड़ी की ओर से मुँह मोड़ कर चले आ रहे थे। तीसरी बात, उन नवजवानों के सामने एक उद्देश्य था। वे दुनिया को अपने देश के साथ हुए विश्वासघात की कहानी बताना चाहते थे। सीमा पर उपस्थित कोई भी व्यक्ति उन्हें दर्जनों बार यह कहते सुन सकता था—"मैं तो चाहता हूँ कि फ्रांस और इटली के कम्यूनिस्ट भी कुछ दिन कम्यूनिज्म के अधीन रह कर देख लें—ज्यादा नहीं, तो छः महीने ही।" तभी कोई व्यक्ति, बीच में ही, बोल उठता—"नहीं भाई, हमें वैसी कामना नहीं करनी चाहिए। किसी को भी वैसा दुर्भाग्य प्राप्त न हो।" चौथी बात, उन लोगों में ऐसे किसी व्यक्ति को पा सकना कठिन था, जो प्रतिक्रियावादी या अपने अतीत के गौरव पर दृष्टि रखनेवाला पराजित व्यक्ति हो। दुनिया-भर के कम्यूनिस्ट लोगों में यह विश्वास पैदा करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि हंगेरी से पलायन करनेवालों में केवल फासिस्ट, पूँजीवादी, अमेरिकी गुप्तचर, कैथोलिक पादरी और प्रतिक्रियावादी थे। लेकिन मैं तो चाहता हूँ कि वे हम लोगों में से किसी से, जिन्होंने उन शरणार्थियों का स्वागत किया, यह पूछें कि उस निकृष्ट व्यवस्था को छोड़ कर किस तरह के लोग भाग रहे थे। वे उस देश के सर्वोत्तम लोग थे—बहुत ही उदार विचारवाले।

लेकिन यदि वे लोग वैसे ही थे, जैसा मैं उन्हें बताता हूँ, तो फिर उनके स्वतंत्र वातावरण में आगमन के अवसर पर, उनका स्वागत करने के लिए सीमा

पर एकत्र, हम सभी लोगों को क्लेश क्यों होता था? मुझे कोई ऐसा पाश्चात्य व्यक्ति नहीं मिला, जिसे यह दृश्य देख कर महान क्लेश नहीं पहुँचा हो। मैंने कुछ बहुत कठोर स्वभाव के समाचारपत्र-प्रतिनिधियों, शरणार्थियों की सहायता करनेवाले लोगों, दुर्घटना-अधिकारियों और फोटोग्राफरों को भी इस आनन्ददायिनी सीमा पर खड़े होकर आँसू बहाते देखा।

मेरा ख्याल है कि वे उन शरणार्थियों से अधिक हंगेरी की बात सोच कर क्लेश पा रहे थे। उस राष्ट्र का यह कितना बड़ा दुर्भाग्य था कि उसके वैसे नवजवान उससे मुँह मोड़ कर भागे जा रहे थे। उदाहरणस्वरूप, अपनी जन्मभूमि को त्यागनेवाले उन ११ समुदायों पर विचार कीजिये और उनके कारण उस राष्ट्र को हुई क्षति की जरा कल्पना कीजिये।

पहला समुदाय—साप्रोन-विश्वविद्यालय के ५०० छात्र तथा अपने परिवारों-सहित ३२ प्राध्यापक कम्यूनिज्म के अन्तर्गत अच्छा जीवन विताने की आशा छोड़ कर सीमा पार कर गये। मुझे इस बात का खेद है कि कोई भी अमेरिकी विश्वविद्यालय उन सबको एक साथ अपने यहाँ स्थान न दे सका; लेकिन इस बात की खुशी भी है, कि कनाडा के ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय ने उन सब को रख लिया। इसका हंगेरी पर कितना महत्त्वपूर्ण असर पड़ेगा, यह स्पष्ट है।

दूसरा समुदाय—बुडापेस्ट-आपेरा की सर्वोत्तम नर्त्तकी अपने अनेक सहायकों के साथ हंगेरी से चली आयी।

तीसरा समुदाय—बहुत-से फुटबाल-खिलाड़ी विश्व-चेम्पियन स्तर की अनेक टीमें बनाने के लिए हंगेरी को छोड़ आये।

चौथा समुदाय—हंगेरी की तीन सर्वोत्तम जिप्सी आर्केस्ट्रा (संगीत-वादक) पार्टियाँ वहाँ से सामूहिक रूप से निकल आयीं और अब यूरोप के बड़े-बड़े रेस्तराँओं में वे अपना कार्यक्रम चला रही हैं।

पाँचवाँ समुदाय—सीपेल के कारखानों के अति कुशल कारीगर भी चले आये, जिनको हंगेरी से आते ही जर्मनी, स्विट्जरलैण्ड और स्वीडेन के कारखानों में काम मिल गया।

छठा समुदाय—उद्योग और अनुसन्धान के सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित प्रशिक्षित इन्जीनियर और वैज्ञानिक एक बड़ी संख्या में हंगेरी से चले आये। उनमें से कुछ तो अपने साथ अपने विषय-विशेष से सम्बन्धित नियम और तालिकाएँ भी ले आये और कुछ खाली हाथ आये। स्वयं मैं ३० वर्ष से कम उम्र के कम-से-कम ५० इन्जीनियरों से मिला होऊँगा। अगर उनकी ठीक

से गणना की जाये, तो उनकी संख्या ५००० से भी अधिक ठहरेगी। उनके अभाव से हंगेरी को भयानक रूप से क्षति पहुँचेगी।

सातवाँ समुदाय—बुडापेस्ट की दोनों लब्धप्रतिष्ठ आर्केस्ट्रा-पार्टियों के अधिकांश लोग निकल आये, जो हंगेरी से निकलने के बाद पाश्चात्य देशों में अपना संगीत-कार्यक्रम करने का इरादा रखते थे। उनके साथ सुयोग्य संगीत-निर्देशक भी चले आये थे।

आठवाँ समुदाय—हंगेरी के सर्वोत्तम कलाकारों ने भी हंगेरी की सीमा पार कर जाने में ही अपनी भलाई देखी।

नौवें समुदाय में वहाँ के अनेक प्रसिद्ध लेखक थे।

दसवाँ समुदाय हंगेरियन आलिम्पिक टीम के लोगों का था, जिनमें से अनेक ने आस्ट्रेलिया में बसने का निश्चय किया; दूसरे कुछ लोगों ने स्वदेश लौटते समय, मार्ग में ही, विचार-परिवर्तन कर लिया और बाकी कुछ लोगों ने तो कम्यूनिज्म में फिर से लौटने से साफ-साफ इन्कार ही कर दिया। यह प्रचारात्मक कार्रवाइयों की बहुत बड़ी पराजय थी।

ग्यारहवाँ समुदाय सबसे अधिक प्रभावकारी था, जिसमें नवदम्पति और बच्चे थे। शरणार्थियों का ऐसा कोई गिरोह ऐंडाऊ के पुल पर नहीं आया, जिसमें कुछ-न-कुछ नवविवाहित दम्पति न हों। कुछ डाक्टरों ने इस अवसर पर आश्चर्यजनक रूप से साहस दिखाया। वे सीमा से १५ मील दूर, हंगेरी में ही भावी शरणार्थियों के बीच पहुँच कर प्रत्येक माता को, उनके बच्चों के लिए, निद्रा लानेवाली गोलियाँ देते, जिससे कि सोवियत पहरेदारों के पास से गुजरते समय, उस संकटापन्न घड़ी में, वे सोये रहें; क्योंकि उनके रोने-चिल्लाने से सम्पूर्ण गिरोह के लिए खतरा पैदा हो सकता था। फिर, आस्ट्रिया में, दूसरे डाक्टर उन बच्चों को होश में ले आते थे, जिससे उनकी नींद बहुत लम्बी न हो जाये।

किसी अमेरिकी के लिए इस भारी भगदड़ का वास्तविक अर्थ समझना शायद कठिन हो; अतः उनकी सुविधा के लिए यह तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत है। उन पलायनकारियों की अन्तिम रूप से गणना होने पर सम्भवतः यह व्यक्त होगा कि उस राष्ट्र की सम्पूर्ण आबादी के दो प्रतिशत भाग ने देश छोड़ दिया था। इसका मतलब यह हुआ कि यदि यह काण्ड अमेरिका में हुआ होता, तो ३४ लाख लोग देश छोड़ कर भाग गये होते। इतनी संख्या का मतलब है—फिलाडेल्फिया, बोस्टन, प्राविडेन्स और फोर्टवर्थ की सम्पूर्ण

आबादी। यदि ऐसा हुआ होता, तो यह स्पष्ट हो जाता कि अमेरिका में अवश्य ही कोई-न-कोई दोष है।

लेकिन इस सीधी-सादी तुलना में भी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य छूट ही गया; वह यह कि हंगेरीवासियों का पलायन केवल एक बोस्टन-जैसे नगर की कुल आबादी– जवानों और बूढ़ों– का पलायन नहीं था। वहाँ से भागनेवाले मुख्यतः जवान लोग ही थे, जो यथार्थतः किसी राष्ट्र के प्राण होते हैं।

उससे भी अच्छी तुलना यह रहेगी। कल्पना कीजिए कि अमेरिका में अवस्था इतनी खराब हो गयी कि निम्नलिखित कोटि के लोगों ने उस दूषित प्रणाली को तिलांजलि दे देने का निश्चय कर लिया—दक्षिणी कैलिफोर्निया-विश्वविद्यालय के सभी अध्यापक और छात्र, नात्रे-दाम फुटबाल टीम के खिलाड़ी, बेनी गुडमैन की आर्केस्ट्रा-पार्टी, वर्तमान सर्वाधिक बिक्रीवाली दस पुस्तकों के लेखक, ब्राडवे की छः नाट्यशालाओं के कलाकार, हेनरी फोर्ड तृतीय और वाल्टर रूथर, शिकागो सिम्फोनी आर्केस्ट्रा, मैसाचुसेट्स टेक्नोलाजी इन्स्टीटयूट के हाल के सभी स्नातक, जनरल मोटर्स कम्पनी के पाँच सौ दक्ष कारीगर, सुसंगठित १८ श्रमिक-यूनियनों के मंत्री और अपने बच्चों के साथ लाखों नवविवाहित दम्पति।

अब यह भी कल्पना कीजिये कि स्वदेश छोड़नेवाले उन अमेरिकावासियों की औसत उम्र २३ वर्ष है और वे उस तरह के लोग हैं, जिनके आगे शानदार भविष्य की सम्भावनाएँ थीं। साथ ही, उनमें कोई वृद्ध, बीमार या विक्षिप्त नहीं है—सब-के-सब सर्वोत्तम कोटि के लोग हैं। ऐसी अवस्था में क्या आप यह नहीं कहते कि उस तरह के लोगों-द्वारा ठुकराये जाने का अर्थ अमेरिका का किसी भयानक गड़बड़ी में फँस जाना होता। हंगेरी की स्थिति यही थी।

एंडाऊ का नाटक कभी समाप्त नहीं हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय यूरोपीय निष्क्रमण-समिति के बहुत ही मेहनती व्यवस्था-अधिकारी राबर्ट मार्टिन ग्रे एक नौ वर्षीय बालक और उसकी माँ को शिविर में ले आये। उस लड़के ने जो कहानी सुनायी, वह इतनी विस्मयपूर्ण थी कि ग्रे ने कई बार उसकी उम्र के बारे में पूछताछ की। बच्चे ने कहा—"जब हम लोगों के पास गैसोलिन की कमी पड़ गयी, तब हमने अपने बमों में पानी का उपयोग किया। उनसे भी काफी अच्छा काम निकलता था; क्योंकि जब हम उन्हें किसी टैंक पर फेंकते थे, तब रूसी डर जाते थे और बाहर निकलने का प्रयत्न करने लगते थे। तभी सयाने लड़के उन्हें गोलियों से मार डालते थे।"

बच्चे की माँ ने कहा—"जब यह रात-भर बाहर रहा था, तब मैंने इसे पीटा था। एक नौ-वर्षीय बच्चा रात-भर सड़कों पर घूमे! लेकिन इसने कहा—'मैं तो टैंकों का ध्वंस कर रहा था, माँ!' तब भला, जो लड़का टैंक उड़ाता रहा हो, उसे कैसे पीटा जा सकता है?"

वहाँ हर कहानी एक-दूसरे से बढ़-चढ़ कर उपस्थित होती थी। एक दिन सन्ध्या-समय, गोधूलि-वेला में, एक लम्बा-सुन्दर जवान वहाँ आया, जिसने विशुद्ध अँग्रेजी में कहा—"पीछे जो लोग छूट गये हैं, उनके लिए यदि आप लोग कुछ कर सकें, तो अच्छा है। अभी-अभी हम लोगों के गिरोह पर गोलियाँ चलायी गयीं। फलतः कुल ११० में से हम लोग २९ ही आ सके।"

जब हमने उसका नाम पूछा, तो उसने दृढ़तापूर्वक कहा—"मेरा नाम जोसेफ कोरमानी है। मैं कनाडा का नागरिक हूँ। मेरा घर ओंटारियो के नार्थ हैमिल्टन नगर में ८२, एमेराल्ड स्ट्रीट में है।" उसकी कहानी हृदयद्रावक थी और उसके कहने का ढंग कटुता से इतना दूर था कि हमें इन दोनों ही बातों का आश्चर्य हुआ कि वह वैसी परिस्थितियों में जिंदा कैसे रहा और अब तक उसमें इतनी अधिक सीधाई कैसे रह सकी।

उसने कहना आरम्भ किया—"मुझे कनाडा के 'जनरल मोटर्स' में बड़ा अच्छा काम मिला हुआ था और साथ ही मैं सी.आई. ओ. के यूनाइटेड आटो वर्कर्स लोकल १९९ का एक उच्चाधिकारी भी था। मैं अपने समस्त जीवन में यूनियन का एक अच्छा कार्यकर्ता रहा। इनके अतिरिक्त सी.के.टी.बी. रेडियो-स्टेशन के हंगेरियन भाषा के कार्यक्रमों का मैं प्रबंधकर्ता भी था।

"फिर मैं हंगेरी क्यों गया था? हंगेरी मेरी जन्मभूमि थी और मैं यह देखना चाहता था कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत वहाँ क्या हो रहा है। वहाँ मैं गया, किन्तु ए.वी.ओ. वालों ने मेरा पासपोर्ट ले लिया और कहा कि अब मैं कनाडा का नागरिक हूँ, हंगेरी का नहीं। अतएव मैंने भागना चाहा; पर उन लोगों ने सवाल किया—'तुम्हें किसने यहाँ खुफियागीरी के लिए भेजा है—टीटो ने या ट्रूमैन ने?' खैर, उन्होंने मेरे साथ जो-कुछ किया, वह मैं आप लोगों के समक्ष विस्तार से नहीं कहूँगा।

"इतना ही जान लेना काफी होगा कि उन्होंने मुझे पीटते-पीटते बेहोश कर दिया और एक गुलाम मजदूर के रूप में एक कोयला-खान में भेज दिया। वहाँ मुझे सचमुच कुछ बहुत ही क्लेशकारी अनुभव हुए, लेकिन जानते हैं,

किस बात ने मुझे सबसे अधिक क्रुद्ध किया? पा जाऊँ, तो अब भी मैं उस पहरेदार को गला घोंट कर मार डालूँ।...

"जरा उस दानव की कारगुजारी सुनिए। हम उस खान में गुलाम ही नहीं, गुलामों से भी बदतर थे। हम वहाँ प्रति दिन १२ घंटे काम करते थे और दिखाने के लिए वे हमें एक बँधी हुई मजदूरी देते थे। पर मजदूरी की वह पूरी रकम वे हमसे भोजन, निवासस्थान, कैदीनुमा वस्त्रों का भाड़ा और पहरेदारों के वेतन के रूप में ले लेते थे। यदि हम उस नियमित समय से कुछ और अधिक घंटे काम करते थे, तो जो रकम वे हमें देते थे, उससे कुछ सिगरेट और थोड़ा मुरब्बा-मात्र ही खरीदा जा सकता था। रोटी के एक टुकड़े और थोड़े मुरब्बे के लिए वहाँ लोग किस कदर हाय-तोबा मचाते थे, उसे आप देखते, तो दंग रह जाते।

"सिगरेट और मुरब्बा खरीद कर रखने के बाद, जब हम लोग खान में काम के लिए चले जाते थे—जहाँ एक भी स्वतंत्र व्यक्ति के दर्शन नहीं होते थे और केवल काम-ही-काम रहता था—तब वह पहरेदार, ईश्वर उसे नरक भेजे, हमारी कैदखाने की कोठरियों में जाता और सिगारेटों को चूर करके मुरब्बे में मिला कर गन्दे फर्श पर बिखेर देता।"

इस पर किसी ने कुछ नहीं कहा और पूर्णतः निस्तब्धता व्याप्त रही। तब एक क्षण बाद जोसेफ कोरमानी, जिसने मुझे अपने वास्तविक नाम का प्रयोग करने के लिए कहा था, सौगन्ध लेते हुए बोला—"कनाडा में हंगेरियन भाषा के दो पत्र थे, जो कम्यूनिस्ट-विचारधारावाले थे। अब जीवन में मेरा एक ही उद्देश्य है। मैं उन पत्रों से संघर्ष करने के लिए कनाडा जा रहा हूँ। मैं पहले भी समझता था कि वे मिथ्या-प्रचार करते थे। उनके कुछ वादों को देख कर मुझे आश्चर्य भी होता था। लेकिन अब आश्चर्य-जैसी कोई बात नहीं रह गयी।

"सन् १९५१ से १९५६ तक हंगेरियन कम्यूनिस्टों ने मुझे जेलों में—इतने बुरे जेलों में, जिनका मैं वर्णन भी नहीं कर सकता—बन्द रखा। क्यों? इसलिए कि उन्होंने यह समझ लिया कि मैंने कम्यूनिस्ट-शासन के मिथ्यापन को भाँप लिया है। मैं आपको एक बात बतलाऊँ। उन्होंने मेरे साथ कितना भी बुरा बर्ताव किया, मैं यह कभी नहीं भूल सका कि मैं एक कनाडियन नागरिक हूँ। मैं जानता था कि एक-न-एक दिन मुझे मुक्ति मिलेगी ही। अब ईश्वर ही उस हंगेरियन की मदद करे, जो अब भी कम्यूनिज्म के प्रचार में लगा है और जिससे मैं कनाडा में मिलनेवाला हूँ।"

उसका नाम था जोसेफ कोरमानी और वह ओंटारियो के नार्थ हैमिल्टन-नामक स्थान का निवासी था। एक विशेष कारण से वह मेरे लिए बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण था। कुछ समय पूर्व, मैंने एक खिलाड़ी से क्रूर जेल-कर्मचारिणी मेजर मीट बाल के लोहर्षक कारनामों के विषय में सुना था। मुझे उस कहानी के बारे में लोगों को बताने की बड़ी इच्छा थी, लेकिन इस आशंका के कारण मैं हिचकिचा रहा था कि कहीं मुझे निराधार बातें तो नहीं बतायी गयी थीं, अथवा एक क्षुद्र सच्चे तथ्य को बहुत अधिक नमक-मिर्च लगा कर तो नहीं पेश किया गया था। अतएव मैंने दर्जनों शरणार्थियों से पूछा था—"तुमने मेजर मीट बाल के बारे में कभी कुछ सुना था?" लेकिन किसी ने 'हाँ' नहीं किया। फलतः मैंने उस कहानी का उपयोग न करने का निश्चय किया। तभी जोसेफ कोरमानी आया और मेरे पूछने पर उसने कहा—"उसे जानने की बात पूछते हैं? मैं बाजी लगा सकता हूँ—मैं उसे जानता हूँ। वही न, जो ६०, स्टालिन स्ट्रीट में काम करती थी; लगभग ३५ वर्ष की उम्र थी; चेहरे पर चेचक के दाग थे; मोटे होंठ थे और लाल बाल थे? ६०, स्टालिन स्ट्रीट ले जाया जानेवाला मेरे जैसा कोई भी व्यक्ति मीट बाल से अपरिचित नहीं है।"

"क्या वह बहुत क्रूर और कामुक थी?"—मैंने पूछा।

"ओह, मत पूछिये। वह क्या-क्या करती थी; मैं आपसे भी, लज्जावश, नहीं कह सकता।"

अतएव यदि किसी को मेजर मीट बाल के सम्बन्ध में मेरी रिपोर्ट में शंका हो, तो वह स्वयं जोसेफ कोरमानी को लिख कर पूछ ले। कोरमानी आपको बतलायेगा कि मैंने तो उस आतंक का एक चुना हुआ अंग-मात्र ही प्रस्तुत किया है—विशेष विवरण वह स्वयं बतला सकेगा।

अँधियारे में शरणार्थी आते थे। वे बुडापेस्ट से ११० मील पैदल चल कर वहाँ पहुँचते थे। प्रायः वे अपने साथ एक कागज भी लाते थे, जो स्वातंत्र्य-संग्राम में उनके सम्मानपूर्वक भाग लेने के प्रमाण-स्वरूप होता था। वे क्षीण उजाले में वह मुड़ा हुआ और गंदा-सा कागज पेश करते, जिसे वे लोग अपने जूतों में छिपा कर लाते थे। कागज में लिखा होता—"लाजोस बारतक ने किलियन-बैरक में तीन दिनों तक संघर्ष किया।—क्रान्तिकारी समिति। ८१, क्वीन स्ट्रीट, लास ऐंजिल्स, में इसका एक भाई है।"

ऐसी ही झिलमिल रोशनी में, एक रात, एक मजदूर, जिसकी आँखें

भूरी और बाल लाली लिये हुए थे, अपने तीन बच्चों और पत्नी के साथ आया और उसने अपना कागज पेश किया—"प्रशंसापत्र। सन्देश—३ नवम्बर, १९५६। सीपेल की क्रान्तिकारी समिति ने ज्योर्जी जाबो को यह अनुमति दी है कि क्रान्ति की रक्षा के लिए कार्य करते समय वह अपने साथ एक गन रखे और यदि आवश्यक हो, तो कार का भी उपयोग करे।—इवानिच इस्तवान, राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष।" उस कागज पर एक मुहर भी लगी थी। यह वही जाबो था, जिसकी कहानी मैंने 'सीपेल का आदमी'-शीर्षक अध्याय में पेश की है। उस रात, जब उसकी पत्नी अड़ गयी, तब उसका परिवार १०० मील पैदल चल कर स्वतंत्र क्षेत्र में आ गया—दो बच्चों को तो वह दम्पति, लगभग सम्पूर्ण रास्ते, गोद में ही लेकर चला।

दूसरे लोगों के आगमन में और भी नाटकीयता थी। बेकार राइफल और होंठों में लटकते सिगरेट के साथ, बहादुर जवान इम्रे जीजर चमत्कारपूर्ण ढंग से खुले रेल-मार्ग से होता हुआ निकेलसडर्फ पहुँचा। रूसियों का पहरा होने के कारण, यह रेल-मार्ग पलायन की दृष्टि से बहुत ही खतरनाक था। पर वह जवान लड़का अपनी राइफल लिये हुए एक आस्ट्रियन चौकी की ओर बढ़ रहा था, जहाँ युद्ध के नियमों के अनुसार, उसे गिरफ्तार कर लिया जाता और निःशस्त्र करके हंगरी वापस भेज दिया जाता।

यह देख, एक दूसरा शरणार्थी, जो रेल-मार्ग से ही होकर सकुशल आस्ट्रिया पहुँच गया था, झपट कर जीजर के पास पहुँचा और बोला—"अरे, राइफल फेंक दो!"

"नहीं। क्यों फेंक दूँ?"—गठीले जवान का उत्तर था।

"नहीं फेंकोगे, तो वे तुम्हें वापस हंगरी भेज देंगे!"

यह सुन कर, इम्रे जीजर निकेलसडर्फ के रेल-मार्ग पर ठमक कर खड़ा हो गया। उसे गोली क्यों नहीं मार दी गयी, यह शायद मैं कभी नहीं जान सकूँगा। रूसियों के उस सम्भावित शिकार ने खड़े-खड़े पल-भर सोच कर कहा—"क्या वे मुझे वापस भेज देंगे?"

"भागो! भागो!"— बोल कर उसका सलाहकार सुरक्षित स्थान की ओर बढ़ गया और वहाँ से भयत्रस्त-सा उसकी ओर देखने लगा, जो अब भी, खुले आकाश के नीचे खड़ा, अपनी राइफल की ओर निहार रहा था। अन्त में, मानो वह शस्त्र से नहीं बल्कि अपनी माँ से बिछुड़ रहा हो, उसने भरे हृदय से राइफल को फेंक दिया और पुनः चलने लगा। उसकी-जैसी बहादुरी के साथ

कोई भी शरणार्थी हंगेरी से नहीं आया। यह सोच कर, वास्तव में, बड़ा आश्चर्य होता है कि जब गुप्त रूप से और शान्तिपूर्वक दलदल-क्षेत्र से होकर आनेवाले सतर्क गिरोहों के लोग पकड़ लिये जाते थे, तब राइफल टाँगे हुए रूसियों के बीच से होकर वह कैसे चला आया था।

वहाँ हर रात एक नया चमत्कार सामने आता था। एक प्रातःकाल चार बजे, जब मैं न्यूयार्क के 'हेरल्ड ट्रिब्यून' के बेरेट मैकगर्न के साथ खड़ा शरणार्थियों का आना देख रहा था, तब मुझे बहुत परेशानी अनुभव हुई। शरणार्थियों की भीड़ गाती-बजाती और एक-दूसरे को चूमती आ रही थी—उनमें से कुछ के पास शराब की बोतलें भी थीं, ताकि आस्ट्रियन भूमि पर कदम रखते ही वे स्वतंत्रता का आनन्द ले सकें। वे अकेले नहीं, बल्कि गिरोहों के रूप में चल रहे थे, ताकि दलदल-क्षेत्र से होकर आने के लम्बे मार्ग में उनकी हिम्मत बँधी रहे।

वह एक असह्य रूप से उत्तेजनापूर्ण रात्रि थी, जब हम लोग अन्धकार में ढँकी हुई नहर-रूपी कब्र से आत्माओं के निकलने और गायन आरम्भ करने की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। लगभग उषाकाल में, जब शरीर को जकड़ देनेवाली सर्दी के कारण नहर के पास एक मिनट भी खड़ा रहना असम्भव हो रहा था, एक आकृति अन्धकार से बाहर आयी, जिसे मैं और मैकगर्न दोनों ही आजीवन नहीं भूल सकेंगे।

उस घनघोर अन्धकारपूर्ण रात्रि में आयी वह एक अकेली स्त्री थी। वह कद में लम्बी थी, उसके बाल भूरे और चेहरा सुन्दर था। उसने एक कोट पहन रखा था, जो सन्ध्या-समय किसी आपेरा में जाने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त था। कोट पर थोड़ा 'फर' भी था, परंतु उसमें गर्मी पैदा करने की क्षमता न थी। उसकी पोशाक झीने कपड़े की थी और स्कार्फ (गले का रूमाल) मौसम के उपयुक्त नहीं था।

शेक्सपियर के किसी नाटक की उन्मत्त रानी की तरह वह अन्धकार से सहसा निकली। वह अकेली क्यों थी, हम कभी नहीं जान सके। जब उसकी नजर हम लोगों पर पड़ी, तब वह कुछ सकपकायी। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हम लोगों के स्थान पर रूसी सैनिक होते, तो वह तुरन्त ही नहर में कूद कर भागने की चेष्टा करती; लेकिन जब उसने हमें अंग्रेजी में बातें करते सुना, तो वह उस बर्फीली हवा में चल कर हमारे पास आयी और प्रवाहपूर्ण फ्रेंच भाषा में बोली—"मैं तीन दिनों से चल रही हूँ। उससे पहले रूसियों ने

हममें से कुछ को पकड़ लिया और ४८ घंटे तक एक कोयला-गुदाम में बन्द कर रखा। हममें से कुछ को गोली मार दी गयी। मैं किसी तरह भाग आयी। मुझे और कितना चलना पड़ेगा?"

मैकगर्न ने उसे बढ़ावा देने के उद्देश्य से झूठ-मूठ कहा..."बस, आधा मील और चलने पर शिविर मिल जायेगा।"

"ओह, चल लूँगी। जब तीन साल तक जिन्दा रह गयी, तब इस अंतिम आधे मील की दूरी तय करने तक भी जीवित ही रहूँगी।"

तदुपरान्त वह उस सर्द कुहरापूर्ण वातावरण में चल पड़ी। वह कौन थी, हम कभी नहीं जान सके। किन उत्पीड़नों से वह भाग रही थी, हम केवल अनुमान ही कर सकते थे। संताप-प्रपीड़ित वह कृशकाय महिला जब सुनसान नहर से उतर कर, घने अन्धकार से पूर्णतः अकेली संघर्ष करती चलने लगी, तब मैंने एक ऐसी चीज देखी, जो अब भी मेरे मस्तिष्क में चक्कर काटती है। वह ऊँची एँड़ी के जूते पहने हुई थी—उन्हीं जूतों को पहन कर वह मीलों चली थी—रूसी कारागार से पलायन और दलदल-क्षेत्र से गुजरते समय भी वह उन्हीं जूतों को धारण किये हुई थी।

ऐंडाऊ की एक सर्वाधिक वीरत्वपूर्ण घटना देखने से मैं चूक गया। लेकिन लाल चेहरेवाले सी.बी.एस. के एनाउन्सर डान करासिक ने न केवल उसे देखा, बल्कि उसके कुछ चित्र भी लिये। एक बरसाती दिन में, जब दलदल-क्षेत्र दक्षिण की ओर से बिल्कुल प्रवेश-योग्य नहीं रह गया था, काफी संख्या में हंगेरियनों ने, जिनमें कई परिवार भी थे, पूरब की ओर से उसमें घुसने का प्रयत्न किया और उस क्षेत्र की घनी-ऊँची झाड़ियों में आने के बाद रास्ता भूल गये। इस बात का पता चलते ही ए. वी. ओ. वाले, रूसी आज्ञा से, भागनेवालों की खोज में लग गये और उन्हें पकड़-पकड़ कर कारा-शिविरों में भेजने लगे।

ऐसे ही अवसर पर, करासिक ने लगभग २० वर्ष के एक हंगेरियन जवान को सिर के बराबर ऊँची झाड़ियों को चीर कर निकलते देखा। उसने न तो कोई टोपी ही पहन रखी थी और न ओवरकोट ही। वह भरे शरीरवाला एक जवान था। जब वह पूर्वी झाड़ीवाले क्षेत्र से आस्ट्रिया को पृथक करनेवाली छिछली नालीनुमा नहर के पास पहुँचा, तो प्रसन्नचित्त उसमें कूद गया। उसे पार करने के बाद, पास आकर, उसने केवल एक प्रश्न पूछा—"आस्ट्रिया?"

"हाँ!"—करासिक ने उत्तर दिया।

"ठीक है!"—युवक जर्मन भाषा में बोला और तब पीछे की ओर मुड़

गया। उस बर्फ-सदृश ठंडे पानी को उसने पार किया और लगभग १० मिनट में ही कोई १५ हंगेरियनों को लेकर, जो ठंड के कारण नीले पड़ गये थे, लौट आया।

उसने शरणार्थियों से कहा—"आस्ट्रिया!" और इसके पहले कि वे उसे धन्यवाद दें, वह पुनः झाड़ियों में समा गया। करासिक उसके उस झाड़ी में चलने की खरखराहट कुछ देर तक सुनता रहा। थोड़ी देर बाद, वह फिर शरणार्थियों के एक गिरोह को लेकर नाटकीय ढंग से उपस्थित हुआ और "आस्ट्रिया!" बोल कर, मानो वह कोई जादू का शब्द हो, लौट गया।

उसने इसी तरह शरणार्थियों के तीन और झुंडों को आस्ट्रियन सीमा में पहुँचाया; लेकिन उसके बाद जब वह पुनः झाड़ी में गया, तब पहरे की मीनार पर नियुक्त लोगों ने उसे देख लिया और उन्होंने इशारों तथा 'गन' की आवाज के सहारे दो सीमान्त रक्षकों और एक ए.वी.ओ. वाले को उस झाड़ी में बढ़ने का निर्देश दिया, जहाँ वह नवजवान स्काउट शरणार्थियों के छठे गिरोह को लाने गया हुआ था। कुछ गोलियाँ चलीं, थोड़ी हाथापाई हुई और तब आस्ट्रियन सीमा में खड़े तीन अमेरिकियों ने परेशान होकर देखा कि तीनों पहरेदार उस हंगेरियन को अपना बन्दी बनाये लिये जा रहे थे।

वे उसे नहर-मार्ग से मीनार की ओर ले गये, लेकिन वहाँ पहुँचते-पहुँचते उसने एक झटका मारा और भाग कर नहर की बगल की झाड़ियों में घुस गया। उसे पकड़ने के लिए पहरेदार, पागलों की तरह, भाग-दौड़ करने लगे। उन चन्द रोमांचकारी मिनटों के बाद वह नवजवान एक बार पुनः झाड़ियों से प्रकट हुआ और तेजी से सुरक्षित स्थान में चला आया। करासिक कहता है—"उस समय बड़ी तीव्र हर्षध्वनि हुई, जो बिल्कुल स्वाभाविक थी।"

इसी तरह की आपदाओं का सामना अनेक बहादुर लोगों ने किया। लेकिन इस नवजवान की अगली कार्रवाई ने इसे उन लोगों से पृथक् कर दिया। करासिक कहता है—"जब वे पहरेदार निराश होकर मीनार की ओर चले गये, तब वह नवजवान बैठ कर अपने गीले जूतों को उतारने लगा। उसने मोजे नहीं पहन रखे थे; फलतः उसके पैर अवश्य ही ठंड से सिकुड़ गये होंगे। जूतों को उतारने के बाद उसने अपने गले में लटके हुए सूखे जूतों की दूसरी जोड़ी निकाली और उसे पहन लिया। हमने अनुमान लगाया कि अब वह ट्रकों की ओर बढ़ेगा और सूखे हुए कपड़े पहनेगा।

"लेकिन इसके विपरीत वह नहर के किनारे, आस्ट्रियन क्षेत्र में, खड़ा होकर

ध्यान से कुछ सुनने लगा। झाड़ियों में उसने कुछ शोर-गुल सुना और वह पुनः हंगेरी की सीमा की ओर बढ़ गया। हमने उसे वैसा खतरा उठाने से मना किया, लेकिन उसने हंगेरियन भाषा में कहा—'उंगर्न।' इसका अर्थ यह था कि अब भी कुछ हंगेरियन वहाँ खोये भटक रहे हैं। और, हमारे चुपचाप आश्चर्यचकित देखते-देखते, उसने दलदल के बर्फ-सदृश ठंडे पानी से होकर तीन चक्कर लगाये और अपने सभी स्वदेशवासियों को साथ लाकर आस्ट्रिया में पहुँचा दिया।"

यह ठीक है कि मैं इस उल्लेखनीय घटना को देखने में चूक गया, किन्तु मैंने एक दूसरी ऐसी घटना अवश्य देखी, जो सीमान्त-क्षेत्र में एक पौराणिक कहानी की तरह प्रसिद्ध हुई। जब रूसी पुल पर पहरा दे रहे थे और वहाँ का तापमान शून्य से केवल ९ डिग्री ऊपर था, तब हम यह कामना कर रहे थे कि दक्षिणी दलदल-क्षेत्र को काटनेवाली गहरी नहर का पानी जम कर बर्फ हो जाये, ताकि एक नया मार्ग निकल आये। लेकिन वैसा नहीं हुआ—केवल नहर के पानी की ऊपरी सतह पर अत्यन्त पतली बर्फ की परत जम गयी। नहर की लगभग इसी आधी जमी हुई अवस्था में, उसके किनारे एक विवाहित पुरुष, उसकी दुर्बल पत्नी और दो बच्चे पहुँचे। उसे पार कर सुरक्षित क्षेत्र में आने का उनके पास कोई चारा न था—दूसरे, यह भय भी था कि ए.वी.ओ. वाले कुत्तों के साथ किसी भी क्षण वहाँ आ सकते थे।

अतः उस व्यक्ति ने अपने कपड़े उतार दिये और अपनी छोटी बच्ची को एक हाथ में लेकर वह उस गहरी नहर में उतर गया। अपनी छाती से बर्फ को चीरता और एक हाथ से पानी को काटता हुआ वह नहर के दूसरे किनारे पर पहुँच गया। फिर उस दलदलीय चढ़ान को चढ़ कर वह अपनी बच्ची को आस्ट्रिया में छोड़ गया।

तदुपरान्त वह हंगेरी लौट गया और अपने कपड़ों को लपेट कर उसने अपने पुत्र के हाथ में थमा दिया। फिर अपने पुत्र को ऊपर उठाये वह पुनः नहर के ठंड से जम रहे पानी को पार कर इस ओर आ गया। इस बार भी उसने दलदलीय ढलुवे तट को पार किया और अपने बच्चे को स्वतंत्रता देवी की गोद में डाल गया।

अब, अपनी दुर्बल पत्नी को बाँहों के सहारे लाकर सुरक्षित स्थान में रखने के लिए, वह फिर नहर में प्रविष्ट हुआ। इतनी सावधानी से वह अपने परिवार-वालों को नहर पार करा लाया था कि उनमें से किसी का एक पैर तक नहर के

सर्द पानी में नहीं भीगा था। यदि वह व्यक्ति अब भी जीवित हो—जिसमें मुझे सन्देह दीखता है; क्योंकि तभी जब मैंने उसे देखा था, उसका शरीर नीला पड़ गया था—तो वह वस्तुतः प्रेम शब्द का चलता-फिरता जीवन्त प्रतीक है।

नरकटों और झाड़ियों से होकर, कीचड़ और कूड़े-करकट से होकर, दलदलों और नहर से होकर तथा उस जर्जर पुल से होकर आनेवाले वे लोग हंगेरी के सर्वोत्तम नागरिक थे। एक बार तो उन्हें देख कर नार्वे के रेडक्रास से सम्बन्धित एक महिला मेरी बाँह पकड़ कर चीख पड़ी—"कोई राष्ट्र कैसे ऐसे आदमियों को जाने दे सकता है?"

अपने चेहरों पर सम्मान का भाव लिये कितने गर्व के साथ वे लोग आये थे! एक बार मैं उनमें से ४४ अत्यधिक सुन्दर, बहादुर और आनवाले नव-जवानों से मिला। वैसे जवान मैंने पहले नहीं देखे थे। वे हंगेरी के विभिन्न भागों से आये थे। किसी ने उनका नेतृत्व नहीं किया था, किसी ने उन्हें निकाला नहीं था—विभिन्न प्रकार के परिवारों से आकर वे ऐंडाऊ के पुल पर जमा हुए थे। वे जब अपने प्रवास पर जाते समय मेरे पास से गुजरे, तब मैंने उन वस्तुओं को लक्ष्य किया, जो वे अपने साथ ले जा रहे थे। उन ४४ व्यक्तियों के पास कुल मिला कर दो महिलाओं के हैण्डबैग, दो छोटे सूटकेस और एक रोटी रखने का गत्ते का बक्स था। इसी अवस्था में उन्होंने देश-त्याग किया था—यथार्थतः उनके पास केवल वही वस्त्र थे, जो वे पहने हुए थे।

मैंने एक से पूछा—"आप लोग इतना कम सामान क्यों लाये?"

उसने उत्तर दिया—"जो-कुछ कम्यूनिस्ट लोग हमारे पास रहने देते थे, वही लेकर तो हम आ सकते थे।"

वे केवल अपना सम्मान अपने साथ लाये थे।

इस भारी भगदड़ की विचलित कर देनेवाली नाटकीयता ने मुझ पर इतना जबर्दस्त प्रभाव डाला, जितना अतीत का कोई भी निष्क्रमण-कांड नहीं डाल सका था। मैंने उन पलायनकारियों को सीमा पर जाकर, ले आने में कई-कई रातें गुजार दीं। इस पुस्तक में वर्णित अधिकांश कहानियाँ मुझे मुख्यतः ऐंडाऊ में ही सुनने को मिलीं। मैंने यहाँ जिन हंगेरियनों की चर्चा की है, उनमें से भी अनेक से मेरी पहली मुलाकात ऐंडाऊ में ही, रात के समय, हुई थी।

रेडियो-स्टेशन पर होनेवाले हमले के समय घायल हुए युवा जोसेफ टोथ-जैसे लड़कों को यहाँ उनके मित्रों ने सहायता पहुँचायी और उन्हें स्वतंत्र

वातावरण में पहुँचाया। जोल्तान और इवा पाल-जैसे दम्पति पैदल चल कर सीमा पर पहुँचे और शान्ति का क्षणिक आस्वादन करने के बाद हंगेरी से निकल गये। 'चाकलेट का छोटा टुकड़ा' जोकी भी पुल पार करके निकल गया। वैसा ही, विश्वविद्यालय के छात्र इस्तवान बालोग ने भी किया। कम्यूनिस्ट बुद्धिवादी पीटर जीजेती एक दूसरे मार्ग से बाहर निकला। निस्सन्देह, जानोस हैजोक और उसके पंगु साले का परिवार सर्वाधिक स्मरणीय था, लेकिन ऐसे अन्य परिवार भी थे, जिनकी दुःखद गाथा ने उनके सम्पर्क में आनेवाले सभी लोगों को व्यथित कर दिया।

वह एक सर्द रात थी और सुबह के लगभग चार बजे होंगे, जब कुहरे को चीरता हुआ एक मध्यम कद का व्यक्ति, उसकी आकर्षक और सुन्दरी युवा पत्नी तथा दो बच्चे प्रकट हुए। मैंने पुल के पास उनका स्वागत किया और बतलाया कि आस्ट्रिया अब केवल कुछ सौ गज दूर रह गया था। मुझे तब आश्चर्य हुआ, जब उस व्यक्ति ने सुन्दर अँग्रेजी में कहा—"यह अच्छा समाचार दिया आपने!" उसकी पत्नी उत्तेजनावश खुशी में भर कर बोली—"अब मेरे दोनों बच्चे सुरक्षित हैं।" तदुपरान्त वे चारों स्वतन्त्र क्षेत्र की ओर बढ़ गये। उनके साथ उस भगदड़ की सम्भवतः सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गाथा थी, जो मैं तब नहीं जान सका था।

उस यात्री का नाम जान साण्टो था और शीघ्र ही उसकी कहानी, जिससे पता चलता था कि हंगेरी में क्या हो रहा है, सारे विश्व में फैल गयी। साण्टो कभी न्यूयार्क में ट्रान्सपोर्ट वर्कर्स आफ अमेरिका (सी.आई.ओ.) का मंत्री-कोषाध्यक्ष था और सन् १९४९ में उसे कम्यूनिस्ट होने के आरोप में देश से निकाल दिया गया था। उस समय हंगेरी ने बड़ी शान के साथ उसे तथा ब्रुकलिन में पैदा हुई उसकी पत्नी को राजनीतिक शरण दी थी और उसके बाद उसे एक उच्च राजनीतिक पद पर प्रतिष्ठित किया था—वह सम्पूर्ण हंगेरी के माँस-उद्योग का सर्वेसर्वा बनाया गया था।

उसकी कहानी वैसी होने ही वाली थी। वह कम्यूनिज्म के व्यावहारिक पक्ष से असन्तुष्ट होकर उस देश को छोड़ रहा था और अमेरिका में शरण पाने के लिए जा रहा था। अब वह एक पश्चाताप करनेवाला कम्यूनिस्ट था और अमेरिका में चल रहे षड्यंत्रों के रहस्योद्घाटन में सहायता करने का इरादा रखता था। उसने कहा—"कम्यूनिज्म निम्न वर्ग, किसानों, भूतपूर्व कारखाना-संचालकों, कुलीनतन्त्र, सबके विरुद्ध एक अधिनायकशाही है।" उसने उस

व्यवस्था के आर्थिक आतंक को, जितना सम्भव हो सका, उतना बर्दाश्त किया और अंत में वहाँ से हट जाना ही उचित समझा।

इस भारी भगदड़ के कई कौतूहलपूर्ण पहलू थे। किसी की भी समझ में यह बात कभी नहीं आयी कि रूसियों ने इतने सारे हंगेरियनों को क्यों भाग जाने दिया। अच्छे दिनों में आठ हजार लोग तक बिना किसी बाधा के सीमा पार कर जाते थे। वे सीमा से कुछ ही मील पहले तक ट्रेनों और ट्रकों पर सवार होकर आते थे, जिन्हें रूसी यदि चाहते, तो रोक सकते थे। इस निर्बाध पलायन को दृष्टिगत रख कर ही, यह अफवाह फैल गयी थी कि रूसी एक लाख गुप्तचर आस्ट्रिया भेज रहे थे। यह बात तो प्रायः निश्चित ही है कि अधिकांश शरणार्थी, यदि रूसी सहमति से नहीं, तो उनकी पूर्ण जानकारी में अवश्य ही हंगेरी से भागे थे। इसीलिए लोगों ने यह राय कायम की कि कम्यूनिस्टों को हंगेरियनों ने इतना परेशान किया था कि हंगेरियनों से हंगेरी खाली भी हो जाता, तो उन्हें इसकी कोई परवाह नहीं थी। सचमुच यदि पहले दो महीनों की रफ्तार से लोगों का निकलना आगे भी जारी रहता, तो आठ वर्षों से भी कम समय में हंगेरी पूर्णतः खाली हो जाता।

लेकिन बाकी दिनों में, जिनकी जानकारी किसी को नहीं रहती थी, रूसी लोग मशीनगनों, पुलिस के कुत्तों, मशालों, पथावरोध, भूमिगत सुरंगों और विशेष गश्ती दस्तों की व्यवस्था करते थे। वैसी अवस्था में बुडापेस्ट से निकलना और सीमान्त-क्षेत्रों में प्रवेश करना सर्वाधिक कठिन कार्य हो जाता था। फलतः बहुत-से भावी शरणार्थी या तो ए. वी. ओ. के हाथों में पड़ जाते थे, अथवा अपने पथ-निर्देशकों-द्वारा विश्वासघात किये जाने के कारण, जैसी कि बच निकलनेवालों को आशंका है, साइबेरिया भेज दिये जाते थे।

अतएव, कोई व्यक्ति तो बुडापेस्ट से आनन्दपूर्वक सैर करता हुआ निकलता था और कोई स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए कठिनाइयों, कीचड़ और नरक को पार करने के लिए मजबूर होता था। शरणार्थियों के बारे में यह ठीक ही कहा जाता था—"हर व्यक्ति, जो सीमा को पार करता है, एक उपन्यास है और किन्हीं भी दस शरणार्थियों को मिला कर एक महाकाव्य तैयार हो सकता है।"

हमें प्रायः ऐसा सन्देह होता था कि सीमा पर नियुक्त हंगेरियन पहरेदार भी उस निकृष्ट व्यवस्था से, जिसके वे एक अंश थे, ऊब गये थे। एक दिन जब मैं जाँच-केंद्र पर खड़ा, पुल से उतर कर नहर की ओर आनेवाले शरणार्थियों को आवश्यक निर्देश दे रहा था, एक व्यक्ति अपने दो बच्चों के साथ उपस्थित

हुआ—बड़ा लड़का लगभग १३ वर्ष का और स्वस्थ था एवं छोटा लड़का ९ वर्ष का था। वह व्यक्ति गम्भीर आकृति का था और उसने फरवाली टोपी पहन रखी थी। जब सभी शरणार्थियों को नहर की बगल के पद-मार्ग से होकर आस्ट्रिया जाने की इजाजत दे दी गयी, तब जाँच-केन्द्र पर नियुक्त हंगेरियन पहरेदारों ने उसे तथा उसके बच्चों को रोक लिया।

हम देखनेवालों ने अनुमान लगाया कि पहरेदारों ने उस व्यक्ति को जाने की अनुमति नहीं दी। यह सोच कर हम सब चिन्तित हो गये, लेकिन तभी उन हंगेरियन पहरेदारों में से एक ने अपना छोटा मशीनगन उठा कर पीठ पर रख लिया और सीमा पर नियुक्त अन्तर्राष्ट्रीय उद्धार समिति के एक अधिकारी, क्लेबोर्न पेल के पास आकर जर्मन भाषा में बात करने लगा।

पहरेदार की बात सुनकर पेल अचम्भित रह गया। उसने कहा "छोटा बच्चा अपनी माँ के आने तक हंगेरी नहीं छोड़ना चाहता। पर हो सकता है कि वह कभी आये ही नहीं। आप जरा प्रयत्न कीजिये, ताकि बच्चा हंगेरी छोड़ने को राजी हो जाये। हंगेरी से ये लोग निकल जायें, यही अच्छा है।"

यद्यपि मैं हंगेरियन भाषा नहीं जानता था, तथापि मुझे उस लड़के से बात करने का काम सौंपा गया। चूँकि मैंने एक अच्छा ओवरकोट पहन रखा था, बच्चे ने मुझे कोई कम्यूनिस्ट अधिकारी समझा और जब मैं उससे बातें करने के लिए झुका, तो उसने बड़ी बहादुरी से अपनी कमीज खोल दी और अपने हाथ ऊपर उठा दिये—यह दिखाने के लिए, कि उसके पास कोई शस्त्रास्त्र या सरकारी कागजात छिपा कर नहीं रखे हुए थे।

मैं उस गीली धरती पर घुटने के बल बैठ गया और उस जिद करनेवाले बालक को अपनी बाँहों में समेट कर बोला—"अच्छा हो कि तुम इस रेखा के पार चले जाओ।" मैंने उसे मारा-पीटा नहीं, यह देख कर बालक ने समझ लिया कि मैं कोई अधिकारी नहीं था। इतना ही उसके लिए काफी था—वह मेरी बाँहों में सिमट कर रोने लगा। मैंने उसके पिता से कहा—"इससे कहिये कि इसकी माँ बाद में चली आयेगी।"

वह व्यक्ति और बड़ा लड़का आस्ट्रिया में चले गये, हंगेरियन पहरेदार पीछे लौट गया और मैं रोते हुए बच्चे को लेकर उसके पिता की ओर बढ़ा। अभी मैं कुछ ही कदम चला होऊँगा कि मशीनगन चलने की आवाज सुनायी पड़ी और मैं भयभीत-सा मुड़ कर पीछे देखने लगा। क्लेबोर्न पेल हँस रहा था। उसने स्थिति स्पष्ट की—"मीनार में नियुक्त पहरेदारों को यह जताने के लिए

कि वह अपना काम कर रहा था, उस पहरेदार ने हवाई फायर किया है।"

जब पेल और वह टोपीधारी व्यक्ति अपने दो बच्चों के साथ सीमा-क्षेत्र से आगे बढ़ गये, तब कम्यूनिस्ट पहरेदार और मैं, दोनों एक-दूसरे को कुछ देर तक देखते रहे और तब वह मेरा हाथ पकड़ कर मुझे हंगेरी में ले गया। मशीनगनों से सजी पहरे की मीनार की बगल से होते हुए हम पुल पार कर गये। वहाँ एक महिला दो बच्चों के साथ बैठी थी—उसकी एक लड़की आगे चलने म पूर्णतः अशक्त थी। वहाँ रूसी कभी भी पहुँच सकते थे; इसलिए उस परिवार को जल्दी-से-जल्दी हटा देने में ही बुद्धिमानी थी।

अतएव पहरेदार ने छोटी बच्ची को उठा कर मेरे कंधे पर बैठा दिया। तदुपरान्त उसने उस महिला और दूसरे बच्चे को पुल पर चढ़ा दिया और इस प्रकार हमें आस्ट्रियन क्षेत्र में ले आया। अपने ए. वी. ओ. के उच्चाधिकारियों को यह जताने के लिए कि वह अपनी ड्यूटी पर सतर्कतापूर्वक तैनात था, उसने सीमा पर पहुँच कर पुनः फायर किया और मैं उस बीमार लड़की को लिये हुए स्वतंत्र क्षेत्र में आ गया।

एक स्वातंत्र्य-सैनिक के दोनों पैर नहीं थे और न पैरों के स्थान पर लगाने के लिए उसके पास लकड़ी के ही पैर थे। यह व्यक्ति बुडापेस्ट से एक बस में चढ़ कर सीमा से १५ मील की दूरी तक पहुँचा था। ये बाकी १५ मील वह अपने हाथों के बल चल कर आया। जब हम इसके पास पहुँचे, तब इसके पैरों के ठूँठे भाग बुरी तरह खुरचे हुए थे और बर्फीली मिट्टी से रगड़-रगड़ कर इसके हाथ कट गये थे तथा उनसे खून निकल रहा था। इस व्यक्ति के बारे में किसी ने विशेष कुछ नहीं कहा; क्योंकि उसकी दुर्दशा का और अधिक वर्णन शब्द कैसे कर सकते थे।

एक रात एंडाऊ में, लगभग २४ वर्ष का एक अत्यधिक सुन्दर नवजवान इस प्रकार मस्तानी चाल से चलता हुआ आया, मानो दुनिया की किसी बात की उसे परवाह नहीं थी और न उसके पास भूल जाने को अतीत की कुछ दुःखद स्मृतियाँ ही थीं। मैंने उसका परिचय जानना चाहा और पाया कि हंगेरी के अत्यधिक कुलीन नामों में से एक उसका था। यह नाम फेस्टेटिक, या टीजा, या अण्ड्रासी, या कैरोली, या एस्टरहेजी की तरह का था। व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए इन नामों में कोई आकर्षण नहीं था, क्योंकि अंशतः इन्हीं कुलीनों के प्रतिक्रियावादी सिद्धान्तों की वजह से हंगेरी वे आवश्यक कदम नहीं उठा सका, जो कम्यूनिज्म को रोक सकते थे।

लेकिन मैं इस नवजवान से बड़ा प्रभावित हुआ। थोड़ी देर के लिए उसका नाम एस्टरहेजी मान लीजिए। वह काफी चतुर, फुर्तीला और हँसमुख स्वभाव का था—दुःखी होना तो मानो वह जानता ही नहीं था। उसने कहा—"मेरा खानदान सोलहवीं शताब्दी से भी पहले का है। हमारे पास ५० खेतिहर मजदूर और बुडापेस्ट के पास चार हजार खेतों के टुकड़े थे। जब हमारी भूमि छीनी गयी, उस समय मैं १४ वर्ष का ही था; लेकिन यह समझता था कि वैसा क्यों करना पड़ा था। फिर भी जब छः व्यक्तियों के मेरे परिवार को दो कमरेवाले किसानों के मकान में भेजा गया, तब मैंने पाया कि किसानों का बर्ताव हमारे प्रति बहुत अच्छा था; हालाँकि उसमें भी कुछ खतरे शामिल थे। वे लोग हमारे लिए भोजन और वस्त्र की व्यवस्था कर देते थे और मेरे पिताजी के साथ इस तरह बैठते थे, मानो वे उनके बराबरी के मित्र हों।

"जब मैं बड़ा हुआ, तब जो-कुछ किया गया था, उसे मैंने पसन्द किया। मैं कालेज में भर्ती हुआ, लेकिन जब उन्होंने जाना कि मैं एक एस्टरहेजी था, तब मुझे निकाल दिया गया। मुझे मित्रों के साथ अपना परिचय छिपा कर देना पड़ता था, लेकिन जब कोई यह पता पा लेता था कि मैं एस्टरहेजी था, तो मुझे उससे अलग हो जाना पड़ता था। यद्यपि मेरे मित्र मेरे लिए खतरा मोल लेने के लिए भी तैयार रहते थे, किन्तु मैं नहीं चाहता था कि मेरे कारण उन्हें किसी संकटपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़े।

"मैंने विश्वविद्यालय में प्रवेश पाना चाहा, तब मुझसे कहा गया—'हंगेरी में तुम-जैसे लोगों के लिए कोई स्थान नहीं है।'

"मैंने पूछा—'तब क्या मैं हंगेरी छोड़ दूँ और अमेरिका जाकर कोई काम खोजूँ?'

"उत्तर मिला—'नहीं, अमेरिका जाकर तुम नये हंगेरी के बारे में झूठी बातें प्रचारित करोगे।'

"जब मैंने पूछा—'तब मैं क्या करूं?' तो उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।"

लेकिन चूँकि उसने हंगेरी छोड़ने के बारे में पूछने का साहस किया था—जो उस देश में एक भयंकर अपराध माना जाता था, क्योंकि वहाँ के नेता वहाँ हर किसी के सुखी होने की बात कहते हैं—ए. वी. ओ. ने उसे परेशान करना शुरू किया और ईख के खेत में काम करनेवाले बेगारों के गिरोह में उसे शामिल कर लिया। मुझे नहीं मालूम कि इसके आगे की उसकी बातें सच

हैं या नहीं; क्योंकि वे बड़ी अविश्वसनीय-सी प्रतीत होती हैं, लेकिन युवा एस्टरहेजी कहता है—"हम लोगों को सुबह तीन बजे बिस्तर से उठा दिया जाता था और दिन-भर में एक बार खाना खिला कर आधी रात तक काम कराया जाता था। तीन घंटे बाद फिर जगा कर वे हमें काम पर भेज देते थे। यह सिलसिला तीन महीने तक जारी रहा और जब ए. वी. ओ. ने सोचा कि हम उचित सजा पा चुके, तब हमें मुक्त कर दिया गया।

"लेकिन तब भी हमें कोई काम नहीं मिलता था—समाज में हमारे लिए कोई स्थान न था। मैं निराश होकर प्रश्न करता कि मैं अपना जीवन कैसे बिताऊँ और वे उत्तर देते—'मजदूरों की सेना में।'

"इस सेना में मेरा जीवन बड़ा ही दुःखदायी था। अफसर लोग मेरा नाम देखकर पुकारते—'अच्छा, एस्टरहेजी! तुम पाखाना साफ करो।' मुझे ऐसे काम सौंपने में वे दिन-दिन आनन्द का अनुभव करते थे, लेकिन मैंने देखा कि श्रमिक-सेना के मेरे दूसरे साथी इन क्लेशदायक कार्यों को अच्छा नहीं समझते थे। उनका रुख ऐसा प्रतीत होता था—'सही है कि वह एक एस्टरहेजी है, पर इसका मतलब यह नहीं कि उसे जीने का अधिकार नहीं है।"

फिर भी, रूसियों के विरुद्ध हुए विद्रोह में श्रमिक-सेना के इन्हीं लोगों ने, जो कि अत्यधिक जबर्दस्त संघर्षकारी थे, एस्टरहेजी से सहायता नहीं ली। उन्होंने उससे कहा—"हम नहीं चाहते कि किसी को यह कहने का मौका मिले कि भूतपूर्व कुलीनों ने हमारी सहायता की। हमारी विजय होने तक रुको, तब हर किसी की अवस्था अच्छी हो जायेगी।"

इस नवजवान की कहानी को इस पुस्तक में शामिल करने में मैं एक लम्बे अरसे तक हिचकिचाता रहा। मेरे मन में आता—"यदि मैं किसी एस्टरहेजी का तनिक भी उल्लेख करूँगा, तो रूसी कह उठेंगे—'देखो, वह पुराना शासन वापस लाना चाहता है।'" लेकिन फिर मैंने सोचा—"कोलोरैडो के मेरे पुराने छात्र, जिन्हें मैंने सन् १९३८ में बताया था कि यदि हंगरी के कुलीन लोग अपनी भूमि को बाँट नहीं देंगे, तो क्रान्ति अवश्यम्भावी है, तो यह जानते ही हैं कि कभी भी फेस्टेटिकों और एस्टरहेजियों के प्रति मेरे मन में विशेष सहानुभूति नहीं रही।" मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि युवा एस्टरहेजी भी उनके प्रति बहुत अधिक सहानुभूति नहीं रखता था।

इस कहानी का महत्त्वपूर्ण पहलू यह था कि यह नवजवान, जो मुझे एंडाऊ में मिला, एक शानदार आदमी था। वह एक अच्छा इन्जीनियर, एक योग्य

प्राध्यापक, या किसी किराया-दफ्तर का कुशल व्यवस्थापक हो सकता था। मशीन के कामों से उसे दिलचस्पी थी। उसने स्वयं ही जर्मन और फ्रेंच भाषाएँ सीखीं। अंकगणित में भी उसकी प्रतिभा असाधारण थी। मैं नहीं समझता कि हंगेरी का कोई भी व्यक्ति युवा काउण्ट एस्टरहेजी को, १९३८ की भाँति, खेतिहर-मजदूरों का स्वामी बनाने के पक्ष में था, या उसे बुडापेस्ट के पास चार हजार खेतों की टुकड़ियाँ सौंपना चाहता था। वे दिन चले गये थे, इस बात को वह मुझसे भी अच्छी तरह समझता था।

लेकिन किसी भी समाज के लिए यह बात अशोभनीय है कि किसी खास वर्ग में जन्म लेने के कारण वह किसी व्यक्ति को हीन बना दे। किसी राष्ट्र-द्वारा किसी व्यक्ति की योग्यताओं का कुचल दिया जाना वस्तुतः सम्पूर्ण समाज के प्रति एक बड़ा पाप है। और, यदि कोई व्यवस्था ऐसी है, जो किसी व्यक्ति की क्षमताओं का उपयोग करने से केवल इन्कार ही नहीं करती, बल्कि उन्हें नष्ट कर डालने का वातावरण तैयार करती है, तो ऐसी व्यवस्था का पतन अवश्यम्भावी है।

क्रान्ति के संगठन या संचालन में युवा एस्टरहेजी ने कोई भाग नहीं लिया था। यह कार्य दूसरे लोगों ने किया था, जो अपने राष्ट्र का हर तरह से तिरस्कार देख कर निराश हो गये थे। जब मैंने एस्टरहेजी को देखा, तब वह इंग्लैंड जा रहा था। उसने कहा—"प्लास्टिक, या मोटर-इन्जीनियरिंग, या अणु-सम्बन्धी किसी भी उद्योग में, जो संसार के लिए हितकारी हो, मैं काम करना पसन्द करूँगा।"

कोई कितनी भी लम्बी अवधि तक सीमा पर क्यों न रहा हो, प्रायः उसे चमत्कारी प्रसंगों को देख कर आश्चर्यचकित होना ही पड़ता था। एक रात लगभग ३० वर्ष के एक हंगेरियन ने, जो अँग्रेजी बोलता था, अनुवाद के काम में मेरी सहायता की और मैंने उसकी उदारता का बदला देना चाहा।

जब उस गीले दलदलीय क्षेत्र में सवेरा होने लगा, तब मैंने उससे कहा—"तुम्हें कुछ पैसों की जरूरत है?"

उसने उत्तर दिया—"मुझे धन तो नहीं चाहिए; लेकिन वियेना का आपेरा (संगीतमय नाटक) देखने की मेरी बहुत दिनों से लालसा है।"

"ठीक है, आज रात देख लेना।"

दूसरों की ही तरह वह भी केवल एक सूट के साथ, जो वह पहने था, आया था, लेकिन उसने किसी तरह उस दिन उस पर लोहा करवाने की

व्यवस्था कर ली। जब हम वियेना के आपेरा की चमकदार नयी इमारत में प्रविष्ट हुए, तब उसने कहा—"मैंने कारमेन की इस नयी रचना के बारे में सुना है। हंगेरी में हम लोग यूरोप के कला-सम्बन्धी समाचार जानने के लिए लालायित रहते थे।"

"कैसी नयी रचना?"—मैंने पूछा।

"वियेना ने एक सम्पूर्ण नये 'कारमेन' की सजावट के लिए जार्जेस वाखेवित्स्क-नामक एक प्रतिभाशाली युवा रूसी को नियुक्त किया है। उम्मीद है कि यह बड़ी शानदार रचना होगी।"

जब यवनिका उठी, तब वाखेवित्स्क के 'कारमेन' ने मेरी आँखों को ही मोह लिया। यह अत्यन्त चमत्कारपूर्ण था। पहली बात तो यह कि डिजाइनर (सजावट करनेवाले) ने रंगमंच पर कई मकानों की रचना की थी, जिनकी छतें ऊपर की ओर खुली हुई थीं। उन मकानों और ग्रामीण पथ के बीच विस्तृत बाजारी क्षेत्र बनाये गये थे, ताकि तीन ओर खेल हो सके। दूसरी विशेषता यह थी कि उसने सैकड़ों अतिरिक्त कलाकारों और समूह-गायिकाओं को भड़कदार वस्त्र पहनाये थे, जिससे कि रंगमंच पर अभिनय होते समय दर्शकों को रंगों का अद्भुत सम्मिश्रण दिखाई पड़े। अन्तिम बात, उसने आपेरा की व्यवस्था इस प्रकार की थी कि उसमें अधिक-से-अधिक कलाकारों का समावेश हो सके। 'कारमेन' में इतने अधिक कलाकारों के समावेश की कल्पना मैंने कभी नहीं की थी।

वाखेवित्स्क का 'कारमेन' स्पेनिश आपेरा तो नहीं था, लेकिन अत्यन्त भव्य था। आल्प्स-क्षेत्र की एक अति सुन्दरी अल्पवयस्का जर्मन कन्या माइकेला उसमें थी। समूह-गायिकाएँ भी, जो गोरी और सुन्दर बड़ी लड़कियाँ थीं, म्यूनिक से सेविले आयी हुई थीं। आपेरा की गति बड़ी संतुलित थी—वाद्य-वृन्द और गायक बड़ा मधुर संगीत प्रस्तुत कर रहे थे, जो आपेरा के गति पकड़ लेने पर उसके साथ एकाकार हो जाता था।

मेरे हंगेरियन साथी ने कहा—"जर्मन भाषा में गाये जानेवाले गीतों के बोल तो मैं नहीं समझ पाता, लेकिन एक तरह से ये स्पेनिश प्रभाव ही पैदा कर रहे हैं।" मैंने उससे सहमति व्यक्त की। वस्तुतः वे प्रचलित फ्रेंच शब्दों की अपेक्षा आइबेरियन की तरह अधिक ध्वनित हो रहे थे।

मैंने अनुभव किया कि वाखेवित्स्क ने स्पेन के साँड़ लड़ानेवालों के गीत को प्रस्तुत करने में बड़ी कुशलता दिखायी थी। इस गीत के समय रंगमंच के

ऊपरी हिस्से में स्पेनिश छैले भरे थे, जिन्होंने काली पोशाकें पहन रखी थीं और जिनके हाथों में दर्जनों मोमबत्तियाँ थीं। लेकिन मेरे शरणार्थी साथी का विचार था कि आपेरा का तीसरा अंक सर्वाधिक सुन्दर था, जबकि रंगमंच के नीचे के प्रकाश का उपयोग नहीं किया गया था, केवल ऊपर से, मुख्य कलाकारों के साथ-साथ प्रकाश चल रहा था, जिसके कारण 'कारमेन' का 'भाग्य और मृत्यु' वाला गीत अत्यन्त प्रभावशाली हो गया था।

इस गम्भीर और शोकपूर्ण अंक की समाप्ति के बाद लघुविराम-काल में मेरे हंगेरियन साथी ने शान्त स्वर में कहा—"आज कला की इस दुनिया में लौट कर मैं कैसा अनुभव कर रहा हूँ, इसका अन्दाज आप नहीं लगा सकते। वास्तव में, यह 'कारमेन' का अति आधुनिक रूप है!...पहले हम शेष यूरोप के समाचार जानने के लिए कितनो उत्सुक रहा करते थे!" वह बाइजे का संगीत सुन कर यथार्थतः प्रसन्नता में निमग्न हो रहा था। विराम-काल जब लगभग समाप्ति पर था, तब वह बोला—"आज, जीवन में प्रथम बार, मैं आपेरा देख रहा हूँ—वह भी ऐसे मौके पर, जबकि एक नया कलाकार कुछ नवीनता प्रस्तुत करने के लिए प्रयत्नशील है। ओह, कितना आह्लादकारी है यह!"

लेकिन इस शानदार नये 'कारमेन' के अन्तिम दृश्य के लिए हममें से कोई भी प्रस्तुत न था। विस्तृत नृत्य (बैले) के लिए बाइजे के 'फेयर मेड आफ पर्थ' से संगीत लिया गया था। यवनिका उठते ही सेविले का दृश्य रंगमंच पर उपस्थित हुआ। इस दृश्य में रंगमंच के सम्पूर्ण क्षेत्र का उपयोग किया गया था—मकानों के आगे के हिस्सों का निर्माण किया गया था और साँड़ों के युद्धस्थल की भी व्यवस्था की गयी थी। मंच पर बायीं ओर अनेक स्पेनवासी सामूहिक रूप से गाने गा रहे थे और मंच के एकदम पिछले भाग से ६० नर्तकियाँ आती दिखाई पड़ रही थीं। मंच पर बहुत दूर से आती दिखायी जाने के कारण वे छोटी बच्चियों की तरह प्रतीत हो रही थीं। उनके बाद साँड़ों से लड़नेवाले १६ गिरोह आये और उनके पीछे अधिकारीगण, नागरिक, नौकर-चाकर एवं अन्त में एस्केमिलो तथा कारमेन। रंगमंच के ऊपर लगी धरनों से, विभिन्न गहरे रंगों के कपड़ों की, दो दर्जन धज्जियाँ वाखे-वित्स्क ने लटकायी थीं, जो देखने में साँड़ों से लड़नेवालों के आस्तीनहीन लबादों की तरह लगती थीं। यह एक पूर्णतः बेसुध कर देनेवाला दृश्य था और अंतिम शोकपूर्ण दृश्य को गम्भीरतम बनाने के लिए तैयार किया गया था।

यदि पाठकों को यह आश्चर्य हो रहा हो कि क्रान्ति का बयान करते-करते

'कारमेन' का इतना वर्णन करने में क्यों उलझ गया, तो मैं केवल इतना कहूँगा—सीमा पर या वियेना में हम लोगों में से जो कोई भी शरणार्थियों से मिला, उसे यह पता नहीं था कि शरणार्थियों में आध्यात्मिक क्षुधा कितनी थी, जो कला, विचार, राजनीति और मानवीय अनुभूतियों के बारे में उनसे बातचीत करते समय प्रकट होती थी। हंगेरियन क्रान्ति के सर्वाधिक आशाप्रद पहलुओं में से एक यह भी था कि इसका आरम्भ वैसे लोगों-द्वारा हुआ था, जो मानवीय आत्मा को जिज्ञासु और स्वतंत्र रखना चाहते थे। वे वाक्-स्वातंत्र्य, ईमानदार समाचारपत्र और विभिन्न विचारों की स्वतंत्रता के पक्षपाती थे।

इस क्रान्ति के जिस पहलू ने मुझे सर्वाधिक चकित किया, वह है हंगेरियन बुद्धिवादियों की वह तीव्र उत्कंठा, जिसके साथ वे यूरोपीय राष्ट्रों के समुदाय में स्थान प्राप्त करना चाहते थे। अनेक लोगों ने इस बारे में उत्साहपूर्वक बतलाया। उस रात भाग्यवश मिले हुए मेरे दुभाषिये ने मुझे बतलाया—"रूसियों ने हम लोगों से जो कुछ छीना, उनमें सबसे मूल्यवान वस्तु थी, हमारे यूरोप के साथी नागरिकों के साथ संवादों का आदान-प्रदान।" क्रान्ति आरम्भ होने से कुछ ही समय पहले एक हंगेरियन कवि, तमास ऐजेल, ने अपनी कविता 'यूरोप-गान' में, इस सम्बन्ध की अपनी उत्कंठा व्यक्त की थी। उस कविता की कुछ पंक्तियों का अनूदित रूप यह है:—

ओ यूरोप, हम सब की जननी! लौट रहे हम तेरे द्वार।
दृष्टान्त एक दर्शाओ, हमें बताओ—
जैसे सदियों तक तुमने है मार्ग दिखाया।
साथ हमारा दो, यूरोप तुम।
समान भाग्य, प्रेम, कार्य और भविष्य—लालायित हम।
सच कहता हूँ, हृदय हमारा उद्वेलित है—
जोतने को, बोने को, फसल उपजाने को,
मरने को और फिर जीने को साथ-साथ—
हजार बार—हजार बार।

आपेरा समाप्त होने के बाद मेरे साथी ने कहा—"बुद्धिवादियों ने छात्रों को प्ररणा दी और छात्रों ने सीपेल के मजदूरों को अभिप्रेरित किया। लेकिन जानते हैं, छात्रों ने ऐसा क्यों अनुभव किया कि उन्हें विद्रोह करना है? इसलिए कि जब कभी वे संसार की किसी महत्त्वपूर्ण पुस्तक को पढ़ना चाहते, तो उन्हें रोक

दिया जाता था। लेकिन, साथ ही, उस पुस्तक की किसी कम्यूनिस्ट-द्वारा की गयी टीका पढने के लिए वे स्वतंत्र थे। शापेनहावर में कम्यूनिज्म क्या दोष देखता है, यह तो हम जान सकते थे; लेकिन शापेनहावर ने वस्तुतः लिखा क्या, यह नहीं जान सकते थे। ऐसे ही किसी ऐरे-गैरे कम्यूनिस्ट ने उनके बारे में जो-कुछ लिख दिया, बस उतनी ही जानकारी हो सकती थी।

"उदाहरण के लिए, जार्जेस वाखेवितस्क एक गैर-कम्यूनिस्ट रूसी है। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मैं चाहता, तो बुडापेस्ट में, उसके द्वारा किये गये 'कारमेन' के रूपान्तर की बुराइयों को मजे में पढ़ सकता था। वास्तव में, यह एक भ्रष्ट पूँजीवादी कार्य है, जो श्रमजीवियों की महान आत्माओं के प्रति अन्याय-स्वरूप है। वियेना में आप लोग जैसा करते हैं, वही मुझे पसन्द है। 'कारमेन' में क्या गड़बड़ी है, इस बारे में आप हमें भाषण नहीं देते; बल्कि मुझे स्वयं ही उसे देख कर निर्णय करने का अवसर देते हैं।

"'कारमेन' के बारे मैं जो इतना बके जा रहा हूँ, इससे आप ऊब तो नहीं रहे हैं?"—अन्त में शरणार्थी ने मुझसे पूछा, फिर कहना शुरू किया—"आप नहीं जानते कि शराब का गिलास हाथ में लिए हुए यहाँ बैठे बैठे बातें करने का अवसर पाना मेरे लिये कितनी बड़ी बात है। और फिर, यदि 'कारमेन के बारे में बातें करते-करते हम आइजनहावर या बुल्गानिन की निन्दा पर उतर आयें, तो भी हमें गिरफ्तार करनेवाला यहाँ कोई नहीं है। बातचीत के सिलसिले में नये विचारों की ओर बढ़ने का अवसर देना आह्लादकारी है! लेकिन बुडापेस्ट में यदि आप 'कारमेन' के बारे में बातचीत करते, तो संगीत तक ही उसे सीमित रखना पड़ता—उस पर भी केवल वही बात कह सकते थे, जो उस समय मानी हुई होती।"

यदि अमेरिकी लोग इस बात को भूल जायें कि हंगेरी ने कम्यूनिज्म के विरुद्ध विद्रोह मुख्यतः इस लिए किया कि उस राष्ट्र के नवजवान बौद्धिक स्वतंत्रता चाहते थे, तो हम क्रान्ति के एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य से वंचित रह जायेंगे। हमें यह बात अवश्य ही याद रखनी चाहिये कि दुनिया में ऐसे लोग भी हैं, जो समाचारपत्र पढ़ने और विचार विमर्श करने के अधिकार के लिए संघर्ष करने को तत्पर हैं। बुडापेस्ट के अनेक नवजवानों ने केवल इसलिए अपने प्राण दे दिये कि वे एक ऐसी व्यवस्था कायम करना चाहते थे, जिसमें एक व्यक्ति अपने मित्रों के साथ बैठ कर, 'बियर' पीते हुए, बिना किसी बंधन के विचार-विमर्श कर सके।

ऐंडाऊ के निकटवर्ती एक शिविर में एक कैथोलिक पादरी ने शरणार्थी छात्रों के पास जाकर पूछा—"अब तो तुम लोग स्वतंत्र हो। क्या तुम लोग चाहोगे कि अगले रविवार को मैं यहाँ धार्मिक कार्यक्रम रखूँ?"

पहले तो लड़के पेशोपेश में पड़ गये, पर बाद में एक ने कहा—"फादर, अभी तो हम एक साथ बैठ कर बातचीत करना ही ज्यादा पसन्द करेंगे?"

पादरी ने स्थिति समझ ली और हँस कर कहा—"अच्छा, अच्छा! काफी समय तक तुम लोगों को मौन रहना पड़ा है!"

ऐंडाऊ-गाथा की चरमावस्था बुधवार, २१ नवम्बर को उपस्थित हुई, जब इन्जर नहर को पार कर सर्वाधिक संख्या में शरणार्थी लोग आस्ट्रिया आये। वह एक ठंडा और परम सुहावना दिन था—उस दिन हजारों हंगेरियन शरण लेने आये। उस दिन ऐसा दृश्य उपस्थित था, मानो बीथोवेन के 'फिडेलियो' में वर्णित कारागार से कैदियों का जुलूस निकल कर दिन के उजाले में आ रहा हो।

गोधूलि-वेला आते-आते जुलूस समाप्त हो गया। नहर-तट पर पहले से खड़े लोग हमारे पास से होकर गुजरे, पर कोई नया व्यक्ति उस पार से नहीं आया। नहर के पार्श्ववर्ती क्षेत्रों में कानाफूसी के ही रूप में यह अफवाह फैली कि ए. वी. ओ. वाले आ गये हैं। आध घंटे तक वहाँ पूरा सन्नाटा छाया रहा, केवल दलदल-क्षेत्र से आनेवाली हवा नहर के किनारे-किनारे लगे भोजपत्र के सफेद पेड़ों की ठूँठी डालियों से आकर टकराती रही। हममें से जो लोग निगरानी के काम पर नियुक्त थे, उन्होंने धुँधली रोशनी में आँखें गड़ा कर यह देखने का प्रयत्न किया कि पुल पर क्या हो रहा है।

अकस्मात् 'गड़-गड़-गड़ाम्' की एक तेज आवाज हुई। हमने उस अन्धकार में अपनी दृष्टि गड़ा कर देखने की कोशिश की, पर कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा। तभी एक शरणार्थी, जो भागने के अवसर की ताक में था, भागता हुआ नहर-तट से नीचे आ गया और जोर से बोला—"उन्होंने पुल को 'डाइनामाइट' से उड़ा दिया!"

पुल को कितनी क्षति पहुँचायी गयी थी, यह देखने के लिए दो हिम्मती गुप्तचर नहर की बगल-बगल आगे बढ़े और लगभग हंगेरी के अन्दर चले गये। पहरे की मीनार की मंद रोशनी में उन्होंने देखा कि वास्तव में ऐंडाऊ का पुल नष्ट कर दिया गया है। दोनों किनारों पर सिर्फ दो खंभे खड़े थे—पुल का कुछ भाग भी शेष था। यदि ऐसा मान लिया जाये कि ऐसे मामूली पुल में

भी दो पट्टियाँ हो सकती थीं, तो उसकी दक्षिणी पट्टी पूर्णतः उड़ गयी थी। निराश गुप्तचर ने आकर उस कुसंवाद की पुष्टि की—"अब पुल काम का नहीं रहा।"

अब तक रात्रि का पूर्ण अन्धकार छा गया था और हम उन हजारों शरणार्थियों के बारे में सोच रहे थे, जो विभिन्न टुकड़ियों में उस समय भी हंगेरियन दलदल-क्षेत्र को पार करने में व्यस्त थे। वे लोग स्वतंत्रता से केवल कुछ ही फुट दूर थे और अन्तिम बाधा, उस नहर, को पार करने का कोई उपाय बड़ी बेचैनी से ढूँढ़ रहे थे। आस्ट्रिया पहुँचने के लिए नहर को पार करना आवश्यक था। लेकिन अब पुल बेकार हो गया था और जब तक कोई दूसरा उपाय नहीं ढूँढ़ा जाता, तब तक वे शरणार्थी स्वतंत्रता के दर्शन केवल दूर से कर सकते थे।

शान्त नहर के ऊपर, आकाश में, चाँद उठा। ठंडे दलदल-क्षेत्र पर ओस गिरने लगी। किसी व्यक्ति के गुजरने से कभी कभी नरकट कड़कड़ा उठते थे। उस दिन हमें मध्य-यूरोप की कहानियों में वर्णित श्वेत रात्रि का अनुभव होने लगा, जब भोजपत्र के पेड़, प्रकाशमान बर्फीले दलदल-क्षेत्र और पीले चाँद ने मिल कर एक ऐसा दृश्य उपस्थित किया, जो मेरे-द्वारा देखे गये प्राकृतिक दृश्यों में सर्वाधिक सुन्दर था। केवल मेरा ही ऐसा अनुभव नहीं था; बल्कि विश्व के विभिन्न देशों के समाचारपत्रों के पाँच युद्ध-अभ्यस्त संवाददाताओं की भी यही धारणा थी। दिन-भर के आह्लादकारी आलापों के पश्चात्, इस मनोहारिणी रात की शान्ति ने एक ऐसे वातावरण को जन्म दिया, जिसमें भावनाओं का तीव्र प्रवाह अवश्यम्भावी था।

कई घंटे तक हम संतापपूर्ण चर्चा करते रहे। पलायन-पथ पूर्णतः निर्जन था; क्योंकि लोगों के एक बड़े समुदाय की बाढ़ रोक दी गयी थी। मैं कह नहीं सकता कि उस अद्भुत रात को हमने कितनी पीड़ा अनुभव की। सूने मार्गों के ठीक विपरीत, वे नैसर्गिक वस्तुएँ भारी संख्या में हमारी आँखों के सामने थीं। ऊपर, आकाश में हँसता हुआ चाँद और असंख्य तारे तथा नीचे, धरती पर शुभ्र चाँदनी की चादर। उस रात ठंड बड़ी भयानक थी, जो दक्षिण की झाड़ियों और उत्तर के आस्ट्रियाई दलदल में भारी मात्रा में पाला पड़ने की पूर्वसूचना दे रही थी। लेकिन सबसे अधिक स्मरणीय चीज थी वह दुखद शान्ति, जो उस क्षण वहाँ विराजमान थी। जहाँ दिन-भर कम्यूनिज्म से मुक्ति पा कर आये हुए लोगों की हँसी और अपरिमेय प्रसन्नता से भरी ध्वनियाँ गूँजती रहती थीं, वहाँ अब नीरव शान्ति उपस्थित थी।

लगभग आधी रात के समय तीन आस्ट्रियाई कालेज छात्रों ने कोई-न-कोई मार्ग निकालने का निश्चय किया। वे आवश्यक लकड़ी के तख्ते लेकर हंगरियन क्षेत्र में प्रविष्ट हो गये और उन्होंने टूटे हुए पुल की मरम्मत की। हालाँकि वह मरम्मत कुछ अच्छी नहीं थी, फिर भी पुल, धीरे-धीरे चल कर पार करने-योग्य बन गया। इस व्यवस्था के द्वारा, उस रात, उन छात्रों ने दो हजार लोगों की रक्षा की।

वे कालेज के छोकरे-मात्र थे, जिनके पास मफलर तो थे पर टोपियाँ नहीं थीं। उनका साहस अपार था। उनके भीगे हुए कपड़े उनके शरीर से सट गये थे; फिर भी उसी अवस्था में उन्होंने अपने मरम्मत किये हुए पुल को पार किया और कम्यूनिस्ट पहरेदारों तथा रूसी चौकियों की आँखों में धूल झोंक कर हंगेरियन दलदल-क्षेत्र को छान डाला। इस प्रकार वे अनेक शरणार्थियों को पुल तक ले आये। हम उनके इस साहस पर चकित थे।

तदुपरान्त शरणार्थियों की बाढ़ आयी। हजारों शरणार्थी उस कमजोर पुल को पार करके चले आये। हालाँकि उन्होंने अपना सब-कुछ खो दिया था, फिर भी अपने उद्धार की बात लेकर वे बहुत प्रसन्न थे—बड़ी हर्ष-विभोर मुद्रा में वे नहर-तट की ओर बढ़ते थे। जब वे आस्ट्रियाई छात्रों को चिल्लाते हुए सुनते—"यह आस्ट्रिया है।" तब खुशी के मारे पागल हो उठते।

लेकिन उन्हें नहर के तट से होकर गुजरते देखकर कोई दूसरा अधिक सतर्क छात्र उन्हें सचेत करता—"तटवर्ती मार्ग से हो कर मत चलो। वह भी हंगेरी की ही सीमा में है। रूसी वहाँ भी गोली मार सकते हैं।" इस पर शरणार्थी उस मार्ग से उतर आते तथा आस्ट्रिया के गीले श्वेत दलदल क्षेत्र से होकर चलने लगते। उनके पलायन के एक पहलू ने उन्हें जादुई और अन्यलोकवासी प्राणी-जैसा बना दिया था। रात की ठंडी हवा के बीच गुजरते हुए वे इतनी अधिक दूरी तय कर आये थे कि उनकी पीठ पर तुषार कण भारी परिमाण में जम गये थे और वे परियों की कहानियों में वर्णित हिम-मानव-जैसे प्रतीत होते थे। भीषण रूप से ठंडी धरती से उठनेवाले कुहरे उन्हें पूर्णतः ढँक लेते थे, फिर भी वे नवम्बर महीने की उस चाँदनी रात में, किसी दूसरी दुनिया के प्रेत की तरह, बढ़ते जाते थे—स्वतंत्रता के आगे समय और स्थान का बन्धन तो वे भूल ही गये थे।

मैंने इससे अधिक सुन्दर कभी कोई चीज नहीं देखी। केवल यही नहीं कि उस रात प्रकृति शीतल आवरण धारण किये हुई थी; बल्कि उस तारों-भरी

रात की भावुकता इतनी तीव्र थी कि आदमी आसानी से उसे ग्रहण नहीं कर सकता था। एक महिला, जो भूख और थकावट के मारे लगभग बेहोश होनेवाली थी, हमारे पास से गुजरने लगी। मैंने सोचा कि बस अब यह गिरने ही वाली है, लेकिन उसने ज्यों ही 'आस्ट्रिया' शब्द सुना, त्यों ही उसमें नयी स्फूर्ति आ गयी। उसने अपनी सम्पूर्ण शक्ति बटोर कर सीमा-रेखा को पार कर लिया। इसके बाद, मानो किसी दिव्य शक्ति से अभिप्रेरित हो, वह बैरेट मैकगर्न के पास गयी, जिसने दुनिया के समक्ष हंगेरीवासियों की कष्ट-गाथा को प्रस्तुत करने के लिए उतना कुछ किया था। उसकी बाँहों में जाकर वह गिर पड़ी और दर्जनों बार उस महिला ने उसके ललाट, गालों और होठों को चूमा।

"ओह, भगवान! मैं आस्ट्रिया पहुँच गयी!"—वह बोली।

मैकगर्न ने, जो कई घंटों से सीमा पर था, उसे एक आस्ट्रियाई छात्र के हवाले किया। वह उसे सुरक्षित स्थान में ले गया। "अब मैं और नहीं रुक सकता।" मैकगर्न ने कहा और कुहरों को चीरता हुआ—आस्ट्रिया के गीले दलदल-क्षेत्र से होता हुआ—वह चल पड़ा।

इसी समय मेरी मुलाकात एक बहादुर और हिम्मती महिला फोटोग्राफर से हुई, जिसके चित्रों ने दुनिया के समक्ष स्वतंत्रता के लिए हंगेरी की विराट् लड़ाई को प्रस्तुत करने में बड़ी मदद पहुँचायी। वह कहीं भी जाने में नहीं हिचकिचाती थी। अगली कुछ रातें हमने साथ-साथ ही सीमा पर निगरानी रखने में गुजारीं और सैकड़ों हंगेरियनों को हम आस्ट्रिया ले आये। कभी-कभी तो हम हंगरी में भी प्रवेश कर जाते थे। साधारणतः हम पुल तक जाते थे। उस समय हमारे कान, रात्रि की नीरवता में आनेवाली स्वातंत्र्य-इच्छुक पुरुषों और महिलाओं की संयत, कोमल और मधुर आवाजों की ओर केन्द्रित रहते थे।

एक रात, जब बहुत अधिक ठंड पड़ रही थी और हम शरणार्थियों के आगमन की निगरानी पर नियुक्त थे, हमने उस अस्थायी पुल की ओर से आती हुई एक विचित्र तरह की आवाज सुनी। जहाँ तक सम्भव हो सका, हम उस ओर बढ़े। बड़ा ही खून खौला देनेवाला दृश्य था। कम्यूनिस्ट पहारेदार, जिन्होंने काफी शराब पी रखी थी, अपने पैर सेंकने के लिए पुल से लकड़ियाँ काट-काट कर जला रहे थे। अभी हम उनकी करतूत देख ही रहे थे, जब एक अत्यधिक मर्मान्तक दुर्घटना हमें देखने को मिली—उसे हम दोनों ही कभी नहीं भूल सकेंगे।

लगभग तीस शरणार्थियों का एक गिरोह, जिसका नेतृत्व फरवाली टोपी

पहने एक व्यक्ति कर रहा था, रहस्यमय ढंग से हंगेरियन दलदल-क्षेत्र से प्रकट हुआ और सीधे नशा पिये उन पहरेदारों की ओर बढ़ा। उन अभागे लोगों को यह मालूम करने का कोई उपाय तो था नहीं कि अब वह पुल स्वतंत्र क्षेत्र में जाने का मार्ग नहीं रह गया था और न ही उन्हें रोकने का हमारे पास कोई चारा था। उन्हें देख कर पहरेदारों ने बड़ी शीघ्रता से अपनी राइफलें सम्भाली और कुत्ते लेकर आगे बढ़े। फलतः ऐंडाऊ के पुल पर पहुँचनेवाला शरणार्थियों का अन्तिम गिरोह पकड़ लिया गया और उन सबको कारागार भेज दिया गया। वे न-जाने कितनी दूर से चल कर आये थे और स्वतंत्र-क्षेत्र से ५० गज की दूरी तक पहुँच गये थे। बड़ा दुःखी मन लिये वह फोटोग्राफर और मैं, दोनों लौट पड़े। अब भी हमारे कानों में कम्यूनिस्ट कुल्हाड़ियाँ चलने की आवाज पहुँच रही थी। जब तक हम लौट कर आस्ट्रिया के कोने पर पहुँचे, तब तक ऐंडाऊ का पुल सदा के लिए विनष्ट किया जा चुका था।

लेकिन अभी एक अन्तिम चमत्कार शेष ही था। पुल के जलाये जा चुकने के बहुत दिनों के बाद, जब कि ए. वी. ओ. पुलिस के आदमी और रूसी लोग साथ में कुत्ते लेकर सभी मार्गों पर गश्त लगा रहे थे, एक ऐसी रात आयी, जब घनघोर वर्षा के कारण दलदल-क्षेत्र से होकर गुजरना असम्भव हो गया। आस्ट्रियाई छात्रों ने भी आशा छोड़ दी। लेकिन तभी 'डेली एक्सप्रेस' की अँग्रेज महिला पत्रकार शेली रोदे, अन्तिम बार, अपने अर्द्ध रात्रि कालीन खोजकार्य पर निकली।

वह खाई की बगल-बगल चल कर एवं नरकट की झाड़ियों और दलदल-क्षेत्र को पार कर, हंगेरी में उस स्थान पर पहुँची, जहाँ कभी स्वातंत्र्य-पुल बना हुआ था। उस ठंडी-नीरव रात में केवल कभी-कभी कहीं मशीनगन चलने की आवाज सुनाई पड़ जाती थी अथवा पलायनकारियों को अचानक पकड़ने के लिए रूसियों-द्वारा जलायी जानेवाली मशालों का प्रकाश चमक उठता था। कुमारी रोदे ने उस निर्जन दलदल-क्षेत्र की कुछ अनुभूतियों को लिखने के बाद ऐंडाऊ की ओर लौटना आरम्भ ही किया था कि कुछ दूरी पर किसी शिशु के रोने की आवाज उसे सुनाई पड़ी।

वह पूर्णतः अकेली थी, परन्तु शिशु का रुदन इतना आग्रहपूर्ण था कि वह अपने को रोक न सकी और उस आवाज के आधार पर दिशा का ज्ञान करते हुए आगे बढ़ी। सौभाग्यवश शिशु की माँ उसका रुदन चुप कराने में असमर्थ रही; फलतः शीघ्र ही कुमारी रोदे २२ शरणार्थियों के एक गिरोह के पास

पहुँच गयी। वे सब-के-सब भूखे और पानी से भीगे हुए थे तथा ठंड से काँप रहे थे। उन्होंने बिना किसी पथ-प्रदर्शन के हंगेरियन दलदल-क्षेत्र में घुसने की चेष्टा की थी और जब यह अँग्रेज महिला वहाँ पहुँची, तब वे वहीं धरती पर पिछले दो दिनों से लेटे पड़े थे। वे एक बार आस्ट्रिया में पहुँच भी गये थे, परन्तु उन्हें इसका पता नहीं चला और अब वे अनजान में सीधे किसी रूसी शिविर के पीछे की ओर बढ़ रहे थे।

वे लोग ऐसी स्थिति में पहुँच गये थे कि अब शिशु के रोने-चिल्लाने से अपने पकड़े जाने की भी परवाह उन्हें नहीं थी। वे केवल उस दलदल-क्षेत्र से निकलना चाहते थे। उन्हें इस बात की कतई चिन्ता नहीं रह गयी थी कि वहाँ से निकलने पर वे आस्ट्रिया के स्वतंत्र-क्षेत्र में पहुँचेंगे या हंगेरी के कारागार में। पिछले दो दिनों से वे कमर-भर कीचड़ में पड़े थे और उनमें से कई तो ठंड के कारण मरने की स्थिति में पहुँच रहे थे। ऐसी ही अवस्था में शिशु ने, मृत्यु आने से पूर्व, अपने अन्तिम शस्त्र रोने का प्रयोग किया था और फलस्वरूप वह अँग्रेज पत्रकार उनसे मिलने के लिए पहुँची थी।

आस्ट्रिया पहुँचनेवाले दो लाख शरणार्थियों ने मुख्यतः तीन स्पष्ट खेवों में स्वदेश-त्याग किया था। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ५०० से भी कम शरणार्थी कम्यूनिस्ट यूगोस्लाविया गये। यह देश भी हंगेरी की सीमा से सटा हुआ है। जैसा कि मैंने बतलाया है, मेरा ऐंडाऊ का अनुभव प्रायः केवल दूसरे खेवे का था, जिसमें अधिकांशतः नवयुवक लोग ही आये थे। ये लोग आये थे खाली हाथ, परन्तु उनमें इन्जीनियरों और सुशिक्षित मशीन-कारीगरों की संख्या बहुत बड़ी थी। जैसा कि मैंने पहले भी कहा है, वे लोग उस राष्ट्र और क्रांति के आधार-स्तम्भ थे। अभी उनकी कमी हंगेरियन अर्थ-व्यवस्था में अनुभव की जा रही है और ज्यों-ज्यों समय बीतेगा, देश के नेतृत्व के क्षेत्र में भी उनका अभाव अनुभव किया जायेगा। शरणार्थियों का यह द्वितीय समुदाय बहुत ही महत्वपूर्ण लोगों का था। ऐसे लोगों का समुदाय शायद ही कभी मैंने देखा हो।

प्रथम खेवे में, जिसे मैं नहीं देख सका, दूसरी ही तरह के लोग आये थे। एक हंगेरियन समाज-शास्त्री ने, जो सीपेल के पतन के बाद बुडापेस्ट छोड़ आया था और बाद में गुप्त रूप से लौट गया, उस छोटे, किन्तु सप्राण प्रथम समुदाय का वर्णन इस प्रकार किया है—"उसमें अनेक वेश्याएँ थीं, जिन्हें सम्भवतः सारी दुनिया से अधिक इस बात का ज्ञान था कि कब कहाँ जाना

चाहिये। शान्ति के कुछ दिन बीच में आये, हम सब उसके धोखे में आ गये परन्तु वे लड़कियाँ नहीं। उन्हें ज्यों ही उस निराशामय नगर से निकलने का मौका मिला, वे निकल गयीं। फिर उस समुदाय में कुछ ऐसे साहसिक नव-जवान और नवयुवतियाँ थीं, जिनका कोई स्थायी घर-बार नहीं था और जिन्होंने पश्चिम के सम्पन्न देशों के बारे में बहुत-कुछ सुन रखा था। जिस प्रकार परियों की कहानियों में कुछ बच्चे साहसिक कदम उठाने के लिए निकलते दिखाये जाते हैं, वैसे ही वे हमें छोड़ कर निकल गये। और, अन्तिम बात, उन प्रथम दिनों में कुछ अत्यन्त ही डरपोक लोग भी हंगेरी से निकले थे, जो स्वतंत्र हंगेरी की आवश्यकताओं को पूरा करने से पीछे भागते थे। रूसियों के फिर लौटने पर, उनसे निबटने के लिए हम जो हंगेरियन बुडापेस्ट में रह गये थे, उन्हें उन लोगों के भाग जाने का तनिक भी मलाल न था; बल्कि हमें उन पर क्रोध आता था और अब भी आता है। यह हंगेरी का दुर्भाग्य है कि पहले-पहल उसके जो निवासी भाग कर विदेशों में गये, वे उसके अत्यन्त निम्न कोटि के प्रतिनिधि थे। मुझे आशंका है कि उन प्रथम हंगेरियन शरणार्थियों को जिन देशों ने शरण दी है, उन्हें उनसे परेशानी ही होगी। साथ ही, मुझे इस बात का भी खेद है कि उन्होंने ऐसे प्रतिनिधियों को स्थान दिया, जिनके कारण हम सबके अच्छे नाम पर धब्बा लगने की सम्भावना है।"

सौभाग्यवश प्रथम खेवे में हंगेरी से निकले हुए लोगों की संख्या बहुत बडी नहीं थी और हंगेरियन देशभक्तों को जितनी आशंका है, सम्भवतः उससे कहीं कम क्षति वे पहुँचा सकेंगे। मैं उन लोगों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में तो कभी नहीं आया, पर प्रायः ही मैंने उनकी गम्भीर शिकायतें सुनी हैं। बाद में आये हुए एक शरणार्थी ने, जिसने संघर्ष में काफी अच्छा हिस्सा लिया था, कहा—"आप उस आदमी को क्या कहेंगे, जो रूसियों के वापस लौटने से पहले ही भाग खड़ा हुआ? सिर्फ एक ही सम्बोधन है उसके लिए—'कायर'।" जब मैंने सारी बातें लिख लीं और उन्हें विचारार्थ और संशोधनार्थ हंगेरियन विशेषज्ञों के समक्ष प्रस्तुत किया, तब मुझे मालूम हुआ कि उन प्रथम शरणा-र्थियों ने लोगों के मन में, अपने बारे में, कितनी दुर्भावना पैदा कर दी थी। मैंने एक ऐसे नवजवान का उल्लेख किया था, जो अस्थायी विजय-काल में ही बुडापेस्ट से भाग गया था। एक आलोचक ने यह देख कर कहा—"कृपा करके इसे बदल दीजिये। जब हमारे सामने विजय की सम्भावनाएँ दिखाई पड़

रही थीं, तब कोई भी भला हंगेरियन वहाँ से नहीं भागा था।" मैंने अपने लिखे की जाँच की और तब जोर देकर कहा—"लेकिन यह बिल्कुल सही है। मुझे अच्छी तरह याद है- उसने ऐसा ही कहा था।" आलोचक ने पुनः उस पर विचार किया और तब उस पैराग्राफ पर रेखा खींचते हुए कहा—"यदि उसने ऐसा ही कहा था, तो भी अच्छा होगा कि हम उसका कोई उल्लेख न करें।"

यह तीसरा खेवा था, जब अधिकांश शरणार्थी हंगेरी से आये और उनके साथ ही अधिकांश समस्याएँ भी सामने आयीं। इस समुदाय-विशेष पर विचार करते समय, कतिपय आस्ट्रियाई देशान्तरवास-अधिकारियों के अनधिकृत आँकड़ों को ध्यान में रखना अच्छा होगा। सभी शरणार्थियों की गणना करने पर–उन शरणार्थियों को भी मिला कर, जिन्होंने अपने नाम दर्ज नहीं कराये–हम लोग सम्भवतः पायेंगे कि वे कुल दो लाख के लगभग थे। इस संख्या में से केवल तीन हजार लोग पहले अभियान में आये थे और उन्हें शीघ्र ही विदेशों में स्थान मिल गया था। वे सभी जा चुके हैं और उनके बारे में अब कुछ सोचना व्यर्थ है। द्वितीय अभियान में वास्तविक शरणार्थी आये (जैसा कि आपने ऐंडाऊ में देखा) और उनकी संख्या प्रायः २४ हजार थी। लेकिन यह स्मरणीय है कि इस महत्त्वपूर्ण शरणार्थी-समुदाय में से भी, दो हजार से अधिक लोगों ने क्रान्ति में कोई महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लिया था। बाकी बच गये लगभग १७३ हजार लोग, जो तीसरे अभियान में आये। वस्तुतः इनमें से किसी ने भी कभी किसी रूसी पर गोली नहीं चलायी और न क्रान्ति में ही किसी तरह का हिस्सा लिया। आपने उन्हें देखा है। वे भले, स्वच्छ, स्वस्थ और मध्यम वर्ग के लोग थे, जो कम्यूनिज्म से घृणा करते थे और भागने का अच्छा अवसर पाकर भाग आये थे। इसमें सन्देह नहीं कि उनमें से अनेक दस वर्ष पहले से ही हंगरी से निकलना चाह रहे थे और अब जा कर उन्हें इसका अवसर मिला था।

मैं समझता हूँ कि आस्ट्रियाई आँकड़े सही थे—लगभग दो लाख शरणार्थी हंगेरी से आये थे, जिनमें से लगभग एक प्रतिशत लोगों ने क्रान्ति में सक्रिय भाग लिया था। इससे दूसरे और तीसरे खेवे के शरणार्थियों के बीच का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। केवल दूसरे खेवे के सदस्यों का क्रान्ति से कुछ सम्पर्क था। (हालाँकि आये हुए इन २४ हजार लोगों में भी वास्तविक संघर्षकारियों की संख्या दो हजार से अधिक नहीं थी।) बहुत-से लोग तो हंगेरी से इस डर से निकल भागे कि वहाँ रहने का मतलब मौत को निमंत्रण देना अथवा रूस के

गुलाम श्रमिक-शिविरों में भेजे जाने के लिए मजबूर होना था। तीसरे खेमे के सदस्यों ने न तो क्रान्ति में हिस्सा ही लिया था और न उनके लिए किसी तरह के भय का कोई कारण ही था।

एक दूसरा अन्तर इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, हालाँकि न्यायतः यह पहले अन्तर से ही उत्पन्न होता है। दूसरे खेमे के सच्चे क्रान्तिकारियों को, जो कम्यूनिस्टों के विरुद्ध लड़ने का अपना दावा प्रमाणित कर सकते हैं, सम्भव है, एक दिन स्वतंत्र हंगेरी में सादर निमंत्रित किया जाये और हो सकता है कि शासन-व्यवस्था में हिस्सा लेने के लिए भी उनसे कहा जाये। लेकिन तीसरे खेमे के लोगों को, जिन्होंने मुख्यतः इस उद्देश्य से देश छोड़ा कि विदेशों में उनकी स्थिति अधिक अच्छी रहेगी, शायद कभी भी अपनी मातृभूमि में न लौटने दिया जाये। और, यदि वे आग्रह करके लौट भी जायें, तो हंगेरी की भावी शासन-व्यवस्था में तो उन्हें कोई स्थान नहीं ही मिल सकेगा।

बाद में आनेवाले इन्हीं शरणार्थियों को लक्ष्य कर टेक्साज के प्रतिनिधि ओमर बर्लेसन ने यह शिकायत की थी—"अमेरिका उन हंगेरियनों को वीरोचित सम्मान प्रदान कर रहा है, जो सोवियत संघ से संघर्ष जारी रखने के लिए वहीं रह जानेवाले अपने साथियों को अकेला छोड़ कर भाग आये हैं। जिन लोगों को हम आज अपने यहाँ स्थान दे रहे हैं, उनके बारे में हमें बहुत कम अथवा कुछ भी नहीं मालूम है। यह जानकारी प्राप्त करना वस्तुतः बड़ा दिलचस्प होगा कि हंगेरी छोड़नेवाले लोगों में से कितने यथार्थतः 'क्रान्तिकारी' हैं।"

प्रतिनिधि बर्लेसन की आशंकाएँ यद्यपि सही हैं, जैसा कि मैंने ऊपर बतलाया भी है कि उनमें से केवल एक प्रतिशत लोग क्रान्ति काल के संघर्षकारी थे (दो लाख में से केवल दो हजार क्रान्तिकारी थे), तथापि मैं उनसे सहमत नहीं हूँ। कारण, बाकी ९९ प्रतिशत लोगों में से भी अनेक स्वतंत्रता के सच्चे इच्छुक थे और उन्होंने संघर्षकारियों को अपना नैतिक सहयोग प्रदान किया था। अतः संसार ने उन्हें जो महत्व और शरण दी है, उसके वे निस्सन्देह अधिकारी हैं।

फिर भी, हंगेरी के मित्रों को, पलायन करनेवालों के प्रति—खास कर उन लोगों के प्रति, जो अपने व्यक्तिगत आर्थिक लाभ के लिए तीसरे खेमे में भाग निकले—वहाँ रुक कर संघर्ष करनेवालों की खीझ को कम नहीं समझना चाहिये। यह असन्तोष हंगेरी-सम्बन्धी कुछ राजनीतिक निर्णयों के लिए महत्व पूर्ण सिद्ध हो सकता है—स्वयं शरणार्थियों ने भी शीघ्र ही इस बात को समझ

लिया। द्वितीय खेवे में आनेवाले असंदिग्ध देशभक्त भी, जिन्होंने संघर्ष में जम कर भाग लिया था और बाद में अपनी जान बचाने के लिए भाग आये थे, उस खतरनाक कदम से परिचित थे, जो उन्होंने उठाया था। प्रायः वे मुझसे कहते—"हमने हंगेरी को उसकी संकट की घड़ी में त्याग दिया। अब हमें कभी वहाँ नहीं बुलाया जायेगा। हमसे बहादुर लोग ही, जो भागने की बजाय वहीं रुके रहे हैं, नये हंगेरी के स्वामी होंगे।"

बाद में इन शरणार्थियों ने अपनी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया को सुधारा—"सम्भव है, हममें से जो लोग अपने संघर्ष करने की बात प्रमाणित कर सकेंगे, वापस बुला लिये जायेंगे।" लेकिन मेरा खयाल है कि उनकी प्रथम प्रतिक्रिया ही सही थी। वही हंगेरियन, जो बुडापेस्ट में रह गये हैं और जिन्होंने रूसी क्रोधाग्नि को पूर्ण रूप से सहन किया है, उस देश के वास्तविक शासक बनेंगे और यद्यपि यह सम्भव है कि विषम परिस्थितियों में वे पलायन करनेवाले अपने भाइयों का भी सहयोग लें, तथापि यह बात कुछ जँचती नहीं कि वे उन शरणार्थियों के निर्देश स्वीकार करेंगे, जो भावी संघर्षों के समय फ्रांस या अमेरिका जैसे स्वर्ग में आनन्द से बैठे रहेंगे।

एक शरणार्थी ने, जिसने १९५६ की क्रान्ति में बड़ा महत्वपूर्ण हिस्सा लिया था, पश्चाताप करते हुए कहा—"हंगेरियन जीवन में प्रवेश करने के लिए अब मेरे पास केवल एक मार्ग है—वह यह कि आगे जो क्रान्ति हो, उसमें एक छोटी मशीनगन लेकर मैं एक स्वयंसेवक के रूप में भाग लूँ। अपनी वास्तविकता को प्रकट करने का केवल यही मार्ग शेष है। लेकिन केवल बातों से—खास कर फ्रांस या अमेरिका-जैसे सुरक्षित स्थानों में बैठ कर बातें करने से—मैं यह काम नहीं कर सकूँगा।"

हम अमेरिकनों को यह बात अवश्य ही समझनी चाहिये; क्योंकि हम अपनी पसन्द के शरणार्थियों की—खास कर उन शरणार्थियों की, जिनकी ख्याति थी और जिन्होंने बड़े व्यवसायों का संचालन किया था—खोज में लगे हैं और ऐसा समझते हैं कि यदि दूसरे देशों के लोग भी उन्हें पसन्द नहीं करते, तो वे अकृतज्ञ हैं। हम विदेशों में अपनी पसन्द की सरकारें स्थापित कराते हैं और जो लोग उन्हें स्वीकार नहीं करते, उन्हें 'रेडिकल' कह कर पुकारते हैं। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि न्यूयार्क और शिकागो की 'काकटेल' पार्टियों में शरणार्थी हंगेरियन चाहे जितने भी आकर्षक लगें, किन्तु जब नये हंगेरी का उदय होगा, तब वे उसका संचालन नहीं करेंगे।

हमें, वास्तव में, यह विवेकहीन कार्य रोकना चाहिये। हंगेरी का संचालन हमारी पसन्द के शरणार्थी नहीं, बल्कि वे बहादुर नवजवान करेंगे, जो वहाँ के विश्वविद्यालयों और सीपेल में अभी डटे हैं और जो अपने राष्ट्रीय समाज की परिस्थितियों के अनुकूल अपना विकास कर रहे हैं। फेरेंक नाज के मामले में जो-कुछ हुआ, उसे उन अमेरिकियों को चेतावनी-स्वरूप समझना चाहिये, जिन्होंने अपने मन्सूबे बाँध रखे हैं।

एक भूतपूर्व हंगेरियन अधिकारी, फेरेंक नाज, कई वर्षों से अपनी पितृभूमि के अनधिकृत प्रवक्ता के रूप में अमेरिका में रहते हैं। हंगेरियन समस्याओं के प्रति अमेरिका को जागरूक रखने की दिशा में उन्होंने बहुत-कुछ किया है और इस प्रकार उन्होंने हंगेरियन दृष्टिकोण की बहुत योग्यतापूर्वक रक्षा की है। अपने कार्यों के कारण वे 'अमेरिकियों के विश्वासपात्र हंगेरियन' बन गये हैं।

जब क्रान्ति का सूत्रपात हुआ, तो फेरेंक नाज को शीघ्र ही वियेना भेजा गया, जहाँ से उन्होंने वक्तव्य और निर्देश जारी करने शुरू किये। बुडापेस्ट के क्रान्तिकारी नेताओं में इसकी बड़ी भीषण प्रतिक्रिया हुई। एक संदेश प्राप्त हुआ, जिसमें कहा गया था—"यदि २४ घंटे के अन्दर नाज आस्ट्रिया नहीं छोड़ेगा, तो हम उसे गोली मार देंगे।" आस्ट्रिया की सरकार को, जो अपने यहाँ विदेशों में सरकार बनाने का सपना देखनेवाले लोगों की (इनमें से अनेक नाजियों के भूतपूर्व साथी भी थे) भीड़ पाकर ऊबी हुई थी, इस बात की खुशी हुई कि उसे इस बहाने अपने यहाँ से फेरेंक नाज को हटाने का अवसर मिल गया था। उसने नाज को २४ घंटे के अन्दर चले जाने का आदेश दे दिया। एक हंगेरियन देशभक्त ने कहा था—"हमें नाज फेरेंक से कोई दुश्मनी नहीं थी। हम केवल यह चाहते थे कि वह हमारी सरकार में हस्तक्षेप न करे।"

मैं जानता हूँ कि इस गम्भीर प्रश्न पर मेरी चेतावनी व्यर्थ साबित होगी। मेरा विचार है कि अभी पेरिस और न्यूयार्क में हंगेरी के लिए सरकारों की स्थापना की जा रही है। पेरिस में बन रही सरकार के सदस्य फ्रेंच भाषा बोलते हैं और न्यूयार्कवाली के सदस्य अँग्रेजी। निस्सन्देह वे लोग अच्छे आदमी हैं। फ्रांसीसी और अमरिकी उन्हें बहुत पसन्द करते हैं, परन्तु बुडापेस्ट की जनता को वे प्रिय नहीं हैं। हमें इस सम्बन्ध में सावधान रहना चाहिये और स्वतंत्र हंगेरियन जनता पर ऐसी कोई सरकार लाद कर हंगेरी में अपने अवसरों को विनष्ट नहीं कर देना चाहिये। ऐसी नीति कदापि फलपदायिनी नहीं होती—सम्भव है कि आगामी दो-तीन सौ वर्षों में हम इसका परित्याग करना सीख जायें।

हो सकता है कि अत्युत्तम रिकार्डवाले कुछ योग्य स्वातंत्र्य-सैनिकों को हंगेरी की किसी भावी सरकार में पूर्णतः भाग लेने के लिए आमंत्रित किया जाये; लेकिन यदि स्वतंत्रता-प्राप्ति में अधिक विलम्ब होगा, तो इसकी सम्भावना नहीं रह जायेगी। यह सचमुच शोचनीय बात है कि देश से बाहर निकल जानेवाले लोग कितनी जल्दी अपनी मातृभूमि की प्रचलित विचारधाराओं से सम्बन्ध-विच्छेद करके उनसे अनभिज्ञ-से बन जाते हैं। फिर भी, मेरा खयाल है कि कोई भी भावी हंगेरियन सरकार—चाहे वह घोर दक्षिणपंथी हो या वामपंथी—अपने हितों को दृष्टिगत रख कर, पलायन करनेवाले युवा वैज्ञानिकों को उदारतापूर्वक वापस बुला लेना पसन्द करेगी; क्योंकि उनको खो देने से स्वयं उसे ही भारी क्षति उठानी पड़ेगी। लेकिन आज विश्व के उद्योगों को वैज्ञानिकों की इतनी अधिक आवश्यकता है कि सम्भवतः एक साल के अन्दर ही उन पलायनकारी विशेषज्ञों को बर्मिंघम, या सिडनी, या डेट्रायट में अच्छे काम मिल जायेंगे। अतः मुझे इसमें सन्देह है कि हंगेरी उनमें से अधिकांश को फिर वापस पा सकेगा। जहाँ तक बच्चों का प्रश्न है, हंगेरी की कम्यूनिस्ट-सरकार अभी ही यह माँग कर रही है कि १८ वर्ष से कम उम्र के सभी लड़के और लड़कियाँ उसे वापस कर दी जायें। उसका दावा है कि उन बच्चों को उनकी इच्छा के विरुद्ध कम्यूनिज्म के सुफलों से वंचित करके भगा ले जाया गया है। आज वह यह भूल गयी है कि अधिकांश रूसी टैंक ऐसे ही नवजवानों द्वारा विनष्ट किये गये थे और उस समय उनकी इच्छा स्पष्ट थी। फिर भी, जन्मभूमि की पुकार में एक अद्भुत शक्ति होती है। अतः सम्भव है कि कुछ नवजवान हंगेरी वापस लौट जायें और वहाँ अपने लिए संतोषजनक स्थान प्राप्त कर लें।

सन् १९५६ के उत्तर-काल में जो लोग हंगेरी से निकल गये, उनके लिए एक ओर जहाँ क्षणिक विजय की स्थिति थी, वहीं दूसरी ओर खेदजन्य भावना भी विद्यमान थी। यह सही है कि वे स्वतंत्र वातावरण में प्रविष्ट हो रहे थे, पर साथ ही वे अपनी जन्मभूमि और उसके भविष्य से नाता भी तोड़ रहे थे, जो एक देशभक्त के लिए बड़ी ही दुःखद बात है।

पथ-प्रदर्शकों ने इस अवसर पर बड़ा ही अद्भुत कार्य किया था। प्रथमतः वे स्थानीय किसान थे, जिन्होंने अपनी सहृदयता के वशीभूत होकर हंगेरियनों का, सीमावर्ती कुछ खतरनाक मीलों तक पथ-प्रदर्शन किया। इसे एक ऐतिहासिक संयोग ही कहिये कि विशाल संख्या में निष्क्रमण आरम्भ होने से केवल तीन महीने पहले बुडापेस्ट के किसी कम्यूनिस्ट-अधिकारी ने आस्ट्रियाई सीमा के

पास की भूमिगत सुरंगों को नष्ट करने का आदेश दे दिया था। इस एकमात्र आदेश से प्रायः दस हजार लोगों की प्राण-रक्षा हुई; क्योंकि यदि सम्पूर्ण सीमा-क्षेत्र में सुरंगों की व्यवस्था बनी रहती, तो इतने आदमी मरते कि सुन कर आदमी काँप उठता। किसने उक्त आदेश जारी किया था, यह तो हमें नहीं मालूम, लेकिन एक शरणार्थी ने उसके बारे में कहा था—"मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि अब वह किसी नये काम की तलाश में है।"

दूसरे ने कहा—"नहीं, वह एक नये प्रधान की राह देख रहा है।"

लेकिन सुरंगों का खतरा नहीं रहने के बावजूद, दलदल-क्षेत्र और सम्भावित मोड़ों पर सही निर्देशन के लिए, पथ-प्रदर्शन का होना आवश्यक था। जब शरणार्थियों का निष्क्रमण बड़ी संख्या में निरन्तर होने लगा, तब वे इस खतरनाक काम के सम्पादन के लिए प्रति व्यक्ति ५० डालर तक लेने लगे। जिन महिलाओं और बच्चों के पास रकम नहीं होती थी, उन्हें वे बिना कुछ लिये सीमा तक पहुँचा देते थे। जिन लोगों ने पथ-प्रदर्शकों को कुछ देना उचित नहीं समझा, वे भी किसी तरह आस्ट्रिया पहुँचे तो, लेकिन कंजूसी करनेवाले इन गिरोहों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा—सीमा पर पहुँचने से पहले उन्हें हंगेरी में ही इधर उधर बहुत भटकना पड़ा।

जब पहले आये शरणार्थी वियेना में जम गये, तब एक नयी तरकीब उन्होंने शुरू की। दो या तीन हिम्मती नवजवान अपरिचित लगनेवाले लोगों के पास जाते और कहते—"क्या तुम्हारा कोई आदमी बुडापेस्ट में है, जिसे तुम बुलाना चाहते हो? एक हजार अमेरिकी डालर दो, तो हम तुम्हारा काम कर दें।"

तब ये निडर गिरोह हंगेरी की ओर चलते, सीमावर्ती सुरक्षा-व्यवस्था को पार करते, बुडापेस्ट की जाँच-चौकियों को चकमा देकर अन्दर प्रवेश करते और तब नगर के किसी मकान में जाकर चकित कर देनेवाला संवाद सुनाते—"वियेना से तुम्हारे भाई ने हमें तुम्हें ले आने के लिए भेजा है।" अब, तीनों पथ-प्रदर्शक अपने ग्राहक—कभी-कभी कई ग्राहकों—को लेकर अपनी खतरनाक यात्रा आरम्भ करते और इस प्रकार अपने समझौते की शर्तें पूरी करते। एक हजार डालर देनेवालों में कुछ ही आदमी असंतुष्ट होते थे; बाकी सब का खयाल था कि उनका पारिश्रमिक उचित ही है।

इस व्यवसाय के साथ-साथ, आगे चल कर एक घृणित कर्म का भी जन्म हुआ। कुछ रूसी अधिकारियों को निष्क्रमण-मार्ग की जानकारी हो गयी और

उन्होंने तय किया—"हंगेरियन तो किसी-न-किसी तरह भागेंगे ही। फिर क्यों न हम भी कुछ रकम बना ले।" और, उन्होंने निष्क्रमण के व्यवसाय में लगे लोगों से उनके पारिश्रमिक की रकम में से कुछ भाग प्राप्त करने की व्यवस्था की। आगे चल कर इसने एक विलक्षण प्रणाली को जन्म दिया, जिसके अन्तर्गत कुछ शरणार्थियों को रूसी अधिकारी स्वयं अपनी कारों में बैठा कर बुडापेस्ट से ले जाते और सीमा से दो मील दूर एक स्थान पर छोड़ देते। इस प्रकार का निष्क्रमण बड़े शानदार ढंग का होता था।

लेकिन सर्वाधिक मनोरंजक अनुभव मिला एक विलक्षण साहसी हंगेरियन कालेज-छात्र को, जिसने एक हजार डालर पर बुडापेस्ट से एक वृद्ध व्यक्ति को निकाल ले जाने का सौदा किया। वह एक आत्म-सम्मानी युवक था; अतः उसने कहा—"जब तक उक्त वृद्ध व्यक्ति को निकाल कर ले नहीं आता, तब तक मैं एक पेनी भी स्वीकार नहीं करूँगा। यदि मैं सफल हो जाऊँगा, तो सीमा पर पहुँचने के बाद आपको सूचित करूँगा और आप एक कार के साथ आकर उन्हें ले जायेंगे। तभी मैं अपनी रकम भी लूँगा।" इसके बाद वह हंगेरी में प्रविष्ट हुआ।

आठ दिनों की उत्सुकतापूर्ण प्रतीक्षा के बाद, वियेना के उस व्यक्ति को, जिसने एक हजार डालर पर सौदा किया था, उस हंगेरियन छात्र का फोन मिला, तो उसे राहत मिली। हंगेरियन छात्र ने दुर्बल-सी आवाज में कहा—"मैं उन्हें ले आया हूँ, पर अब आप कार के बदले एक बस लेकर आइये।" बात यह हुई कि जब उस वृद्ध व्यक्ति के निवास-स्थान से पलायन की बात जरा बाहर निकली, तो वहाँ रहनेवाले सभी व्यक्तियों ने उसके साथ ही, स्वतंत्रता का उपयोग करने के लिए, निकल जाने का निश्चय कर लिया। इस प्रकार उतने ही पारिश्रमिक में उक्त कालेज-छात्र एक दल शरणार्थियों को ले आया, जिनकी आयु ७१ वर्ष से लेकर आठ महीने तक की थी और कुल संख्या २७ थी।

सभी शरणार्थी बहादुर नहीं थे। कुछ ने तो यह प्रस्ताव भी रखा था कि स्त्रियाँ अपने बच्चे छोड़ कर चलें, क्योंकि उनके शोर-गुल से पहरेदारों का ध्यान आकृष्ट होने का भय था। अतः ऐसे अनेक मामले प्रकाश में आये, जिनमें माताएँ, अपने बच्चों की रक्षा के उद्देश्य से, अकेले ही दलदल-क्षेत्र को पार करके आयीं। लेकिन ऐसी एक युवा महिला को ऐंडाऊ के पास जैसे खतरे उठाने पड़े, वे असाधारण थे

आठ महीने की गर्भवती थी। हम नहीं चाहते थे कि वैसी अवस्था में वह घर से निकले, पर उसने जिद् पकड़ ली कि वह अब एक दिन भी कम्यूनिज्म के साये में नहीं रहेगी। वह यह भी नहीं चाहती थी कि उसका बच्चा वहाँ पैदा होता।

"हमारी यात्रा बड़ी दुरूह थी और हमें काफी दूर पैदल चलना पड़ा। अपने गिरोह के सभी लोगों ने उसकी मदद करने का प्रयत्न किया; पर एक समय ऐसा आ ही गया, जब वह एक कदम भी आगे बढ़ने में असमर्थ हो गयी। फलतः एक-एक करके गिरोह के सभी लोग आगे बढ़ गये। मैं अपनी पत्नी के साथ, अकेले, ऐंडाऊ से कुछ दूरी पर एक जंगल में रह गया। मैंने समझ लिया कि प्रसव-वेला आ पहुँची है। मेरी पत्नी ने कहा—'तुम जरा इधर-उधर बढ़ कर किसी किसान के मकान की तलाश करो—शायद कोई स्त्री मेरी मदद के लिए मिल जाये।'

"मैं उसे अकेले जंगल में नहीं छोड़ना चाहता था, लेकिन उसने मुझे चूम कर, इधर-उधर देखने के लिए कहा। मैं किसी किसान के मकान की खोज में निकल गया और काफी समय बीतने पर जब अपने साथ एक किसान को लेकर लौटा, तो देखा कि मेरी पत्नी ने बच्चे को जन्म दे दिया था और अब बेहोश पड़ी थी। लेकिन बेहोश होने से पूर्व उसने नवजात शिशु को अपने वस्त्रों में अच्छी तरह लपेट दिया था। हमने रात-भर प्रतीक्षा की और तब जच्चा-बच्चा दोनों को किसान के घर ले गये। किसान की पत्नी ने चार दिनों तक हमें छिपाये रखा और पाँचवें दिन उस किसान ने मुझे, मेरी पत्नी तथा बच्चे के साथ, आस्ट्रिया पहुँचा दिया।"

इस सम्बन्ध में सभी लोगों का एकमत है कि निष्क्रमण के क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय बहादुर साबित हुआ एक रेलवे-इंजीनियर, जिसकी [illegible] कारगुजारी ने सम्पूर्ण मध्य-यूरोप को हफ्तों हँसाया था। बुडापेस्ट पर रूस के पुनः अधिकार हो जाने के आरम्भिक दिनों में मिहाई कोवक्स को उसके पेस्ट-स्थित कार्यालय में बुलाया गया और आदेश दिया गया कि वह एक मुहर-बंद डब्बोंवाली ट्रेन लेकर रूस जाये। उसे यह अन्दाज तो था ही कि उनमें क्या है। जब वह रूस पहुँचा, [illegible] उसे इस बात का निश्चय हो गया कि वह हंगेरी के सैकड़ों सर्वोत्तम विद्रोहियों को लेकर साइबेरिया या मध्य-एशिया के श्रमिक-शिविरों में जा रहा था।

अतः उसने अपनी युक्ति लड़ायी। उसने अपने [illegible] साथी ट्रेन-चालक को

ट्रेन पर बड़े-बड़े काले अक्षरों में लिख कर एक साइन-बोर्ड लगाने का आदेश दिया। तदुपरान्त उसने अपनी ट्रेन को एक कम प्रयोग में आनेवाली लाइन पर ले जाकर, गाड़ी का रुख हंगेरी की ओर कर दिया। बुडापेस्ट और ग्योर आ जाने के बावजूद उसकी ट्रेन चलती ही रही। ट्रेन पर जो साइन-बोर्ड लगा था, उसके कारण सोवियत पहरेदार भी किसी तरह की बाधा नहीं डालते थे और मिहाई कोवक्स की गाड़ी को चुपचाप बढ़ने देते थे।

आस्ट्रियाई सीमा पर पहुँच कर उससे मुहरबंद डब्बोंवाली अपनी गाड़ी रोक दी और सभी डब्बे खोल दिये। तदुपरान्त उसने लोगों के समक्ष घोषणा की—"आप आस्ट्रिया पहुँच गये हैं। अब मैं आपका नेतृत्व करूँगा।" वह अपने उन सभी साथियों के साथ आगे बढ़ा—पीछे रह गयी वह ट्रेन और उसका भीमकाय चमकदार साइन-बोर्ड—"सोवियत रूस से हंगरी के लिए खाद्यान्न।"

ऐसे शरणार्थियों के लिए आस्ट्रिया ने अपनी सीमा कभी बन्द नहीं की। इसकी बजाय वह उनका इतना हार्दिक स्वागत करता था कि यूरोपवालों को आश्चर्य होता था। ऐसे अनेक कारण थे, जिनके आधार पर आस्ट्रिया कम्यूनिज्म से भागनेवाले हंगेरियनों को अपने यहाँ प्रवेश की इजाजत नहीं भी दे सकता था। उनमें एक कारण यह भी था कि आस्ट्रिया स्वयं हाल में ही रूसी चंगुल से मुक्त हुआ था और इस बात का खतरा अब भी उसके समक्ष विद्यमान था कि किसी बहाने रूसी फिर से वहाँ प्रवेश न पा लें। अतएव क्रान्तिकारियों को शरण देने का आस्ट्रिया ने जो कदम उठाया था, वह उसके लिए वस्तुतः बड़ा जोखिमवाला और साहसपूर्ण था। अमेरिका-द्वारा हंगेरियनों को स्थान दिया जाना जहाँ केवल दयालुता थी, वहीं आस्ट्रिया के लिए वैसा करना आत्मघात-स्वरूप हो सकता था।

दूसरा बात, अनेक वर्षों से आस्ट्रिया और हंगरी के बीच मनमुटाव चला आता था। दोनों देशों के बीच हुए युद्ध की समाप्ति को अभी कुछ ही समय बीता था और लोगों की भावनाएँ अब भी इतनी नाजुक थीं कि यदि आस्ट्रिया ने हंगेरियन शरणार्थियों के प्रति उदारता नहीं दिखायी होती, तो भी उसे क्षम्य माना जा सकता था। लेकिन इसके विपरीत आस्ट्रिया ने अपने हंगेरियन भाइयों का इस तरह स्वागत किया मानो वह सचमुच उन्हें प्यार करता था।

अन्तिम बात, आस्ट्रिया एक छोटा सा राष्ट्र है, जहाँ की आबादी कुल ७० लाख है और जिसके पास पर्याप्त साधनों का भी अभाव है। यदि आस्ट्रिया ने

कंजूसी दिखायी होती और इस आधार पर क्रान्तिकारियों को प्रवेश नहीं करने दिया होता कि उसके पास अपनी जरूरत से फालतू सामग्रियाँ नहीं हैं, तो भी उसके औचित्य को स्वीकार करने के सिवा कोई चारा न था। लेकिन ऐसा न करके उसने, उसके पास जो-कुछ था, उसमें हिस्सा बँटाने दिया। आस्ट्रिया-द्वारा, २ हजार शरणार्थियों को स्वीकार करके उनके लिए कपड़ा, भोजन और आवास का प्रबन्ध किया जाना, अमेरिका-द्वारा अप्रत्याशित रूप से आये हुए ५० लाख अतिथियों के लिए प्रबन्ध किये जाने के बराबर है। हालाँकि हमारा देश सम्पन्न है, फिर भी ५० लाख आगंतुकों के लिए व्यवस्था करना हमारे लिए आसान नहीं है। आस्ट्रिया कोई सम्पन्न देश नहीं है, फिर भी उसने किसी तरह सारी व्यवस्था की।

शरणार्थियों के आगमन के इस प्रवाह का सर्वाधिक भार प्राचीन बर्गेनलैण्ड प्रदेश (किलों का प्रदेश) ने अनुभव किया, जहाँ पूर्वी सीमा के पास ऐंडाऊ अवस्थित है। बर्गेनलैण्ड के किसान सम्पन्न नहीं हैं और वहाँ के गाँव भी विस्तीर्ण नहीं हैं, फिर भी ऐसा प्रतीत हुआ, मानो बर्गेनलैण्ड का हर निवासी शरणार्थियों के लिए अपने हृदय और सारे साधनों को उन्मुक्त लिये बैठा था। किसान अपने ट्रैक्टर लेकर सीमावर्ती सड़कों पर चक्कर लगाते और वहाँ मिलने-वाली महिलाओं को खोज-खोज कर सुरक्षित स्थानों में पहुँचाते। किसान-गृहिणियाँ आधी रात से सवेरे तक रसोई-घर में काम करती रहतीं। एक रात मैं, इत्तिफाक से, ऐंडाऊ के दक्षिण-पश्चिम में स्थित पामहेगेन-नामक एक छोटे-से गाँव में पहुँचा, जहाँ शरणार्थियों के असाधारण रूप से बड़ी संख्या में आगमन के कारण, आवश्यक व्यवस्था करने में बर्जेनलैण्डवासी पशुओं की तरह कार्य-संलग्न थे। सवेरे तीन बजे पामहेगेन का मेयर (नगर-पिता) स्वच्छ वर्दी में वहाँ पहुँचा और उसने प्रत्येक हंगेरियन का स्वागत किया। उसने कहा—"अपने घर आपकी सेवा में समर्पित करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता हो रही है।" उस रात पामहेगेन की स्त्रियाँ प्रत्येक नये हंगेरियन के कीचड़ से भरे जूते उतारने और उनके पैर धोने में व्यस्त रहीं।

बर्गेनलैण्ड के अनेक गाँवों की यह हालत थी कि वहाँ स्थानीय लोगों की अपेक्षा शरणार्थियों की ही संख्या अधिक हो गयी थी। अनेक स्कूलों में बच्चों को सुलाया गया था। बच्चों की संख्या इतनी अधिक थी कि वहाँ उन लोगों के एक-पर-एक सोने-जैसी स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। बर्गेनलैण्ड के अनेक किसानों के घरों में एक-एक कमरे में बीस-बीस हंगेरियनों के रहने की

व्यवस्था करनी पड़ी थी। संकट के क्षणों में विश्व की अनेक जातियाँ अप्रत्याशित और महान कार्य करती हैं, यह सही है; परन्तु १९५६ में बर्गेनलैण्ड के निवासियों ने जितना-कुछ किया, मैं नहीं समझता कि उससे अधिक कभी किसी ने कुछ किया होगा।

विदेशी पर्यवेक्षकों को सर्वाधिक असामान्य आचरण दिखाई पड़ा आस्ट्रिया-विश्वविद्यालय के छात्रों का। लगातार ६० रातें, उन हिम्मती किशोरों (१३ से १९ वर्ष की आयुवाले लोगों) ने, सीमा-क्षेत्र से शरणार्थियों को स्वतंत्र-सुरक्षित क्षेत्र में ले आने में बितायीं। मैं स्वयं अपने अनुभवों के आधार पर ही ऐसे एक दर्जन लोगों की मिसाल पेश कर सकता हूँ, जिनकी प्राण-रक्षा उन लोगों ने की—जबकि उनके कार्य देखने का मुझे बहुत ही कम अवसर मिला। कुछ छात्रों ने गश्त लगानेवाले गिरोह बना लिये थे, जो दलदल-क्षेत्रों में प्रवेश करके शरणार्थियों की खोज करते थे। कुछ दूसरे लोग रात में प्रकाश की व्यवस्था करते थे। इनके अलावा कुछ लोग ऐसे भी थे, जो नहर पर निगरानी रखते थे, ताकि कोई हंगेरियन उसमें डूब न जाये। उनके ये कार्य उनकी महान् परम्परा के द्योतक थे।

आस्ट्रियाइयों के उत्साहपूर्ण आचरण को अभिप्रेरित करनेवाली दया-भावना उस प्रातःकाल अच्छी तरह प्रकाश में आयी, जब भयानक ठंड पड़ रही थी और मैं अपने एक मित्र के साथ सीमा के दलदलीय क्षेत्र की निगरानी कर रहा था। एक आस्ट्रियाई सैनिक भी हमारे साथ था। वहाँ से हम तीनों ने हंगेरियनों के एक बड़े समुदाय को देखा, जो मार्ग भूल गया था और आस्ट्रिया को खोजने के लिए प्रयत्नशील था।

स्वभावतः ही हम तीनों उन लोगों की सहायता के लिए दौड़ पड़े, लेकिन वहाँ पहुँचते ही आस्ट्रियाई सैनिक रुका और मुझे अपने आगे करके बोला—"कृपा करके मुझे छिपा लीजिये। आस्ट्रिया के प्रथम दर्शन के समय उन्हें बंदूक न देखनी पड़े, तो अच्छा!"

उनकी स्वतंत्रता के लिए आस्ट्रिया का कितना बड़ा योगदान रहा, इसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने के लिए एक अलग पुस्तक ही लिखने की आवश्यकता होगी। संक्षेप में, मैं उसे इन शब्दों में व्यक्त करूँगा—"यदि भविष्य में मुझे कभी शरणार्थी बनना पड़े, तो मैं कामना करूँगा कि आस्ट्रिया ही जाऊँ।"

मैं यह अनुमान लगाने में असमर्थ हूँ कि इतिहास की कौन-सी करवट हंगेरी को पुनः स्वतंत्रता प्राप्त कराने में समर्थ होगी। मैं अब तक यह भी स्पष्ट रूप से

नहीं समझ पा रहा हूँ कि किन उपायों से हंगेरियन जनता के कंधों से रूसी जुआ हट पायेगा, लेकिन मुझे इतना विश्वास है कि विश्व के विभिन्न देशों में बसे हुए हंगेरियन ऐंडाऊ में एक स्मारक-पुल के निर्माण के लिए यथासाध्य रकम भेजेंगे। इस पुल के निर्माणार्थ फ्रैंक (फ्रांसीसी सिक्का), डालर (अमेरिकी सिक्का), आस्ट्रेलियाई पौण्ड और पेसो (दक्षिणी अमेरिका का सिक्का) पर्याप्त संख्या में उपलब्ध होंगे, इसका मुझे विश्वास है।

इस पुल को साधारण पुलों की तरह विस्तृत बनाने की आवश्यकता नहीं होगी—न कार चलने-योग्य इसके चौड़ा होने की ही जरूरत है और न मोटर-साइकिल पार करने के उपयुक्त मजबूत। इसे तो बस एक ऐसा रूप मिलना चाहिये, जिससे उस स्नेह का स्मरण हो आये, जिसके साथ आस्ट्रियाइयों ने अनेक हंगेरियनों को पुराने पुल से ले जाकर स्वतंत्र वातावरण में पहुँचाया था। इसके सिर्फ इतना ही चौड़ा होने की जरूरत है, जिससे होकर एक स्वतंत्र राष्ट्र की आत्मा मजे में गुजर सके।

१०. रूसी पराजय

सन् १९५६ की हंगेरियन क्रान्ति विश्व-इतिहास को एक नया मोड़ देनेवाली घटना थी। इस सम्बन्ध में सन्देह की कोई गुंजायश नहीं है। दुर्भाग्यवश अब तक हम यह भविष्यवाणी नहीं कर सकते कि कम्यूनिज्म का मार्ग अब किस दिशा में मुड़ेगा, लेकिन इतना निश्चित है कि वह अपनी पुरानी दिशा में नहीं चलता जायेगा। सम्भवतः रूसी सैनिकों को अब प्रत्यक्ष लौह अधिनायकवाद के रूप में (तलवार के जोर से) हंगेरी पर अधिकार रखना पड़ेगा और इस प्रकार देश आर्थिक और नैतिक दृष्टि से खोखला हो जायेगा। लेकिन दूसरी ओर, रूसियों को यह नीति धन-जन की दृष्टि से बहुत महँगी भी पड़ सकती है और उन्हें अपना अंकुश कुछ ढीला करना पड़ सकता है। सम्भव है कि उन्हें हंगेरियन जनता को किसी तरह का स्वशासनाधिकार और स्वतंत्रता भी प्रदान करनी पड़े। लेकिन चाहे वे जो भी नया मार्ग अख्तियार करें, इतना पूर्णतः स्पष्ट है कि रूस ने प्रचार-युद्ध में बुरी तरह मात खायी है और उसे जो क्षति उठानी पड़ी है, उसका परिणाम अब भी ठीक-ठीक नहीं आँका जा सकता।

फिर भी एक ऐसा उपाय है, जिससे यह बात समझी जा सकती है कि रूस को कितना बड़ा आघात पहुँचा है। सम्पूर्ण सोवियत-क्षेत्र को एक झील मान लीजिये, जिस पर झूठ, प्रचार, दिखावट और धोखा का हरा झाग फैलने दिया गया है। इस शान्त दीखनेवाली झील को, पिछले कुछ वर्षों से, कम्यूनिज्म के अन्तर्गत जीवन के निर्मल रूप में, दुनिया के समक्ष प्रस्तुत किया जाता रहा है। न केवल खुशहाल रूसी किसान, बल्कि उत्फुल्ल हंगेरियन, मंगोल, पूर्वी जर्मनी के निवासी एवं पोलैण्डवासी भी इसी शान्त, हरे, किन्तु प्राणनाशक झाग के नीचे रहते माने जाते हैं।

बुडापेस्ट की इस घटना के पहले भारतीयों, हिन्देशियायियों, इटालियनों और फ्रांसीसियों के लिए इस कल्पित कहानी पर विश्वास करना सम्भव था कि सोवियत-झील के अन्तर्गत जीवन उतना ही आदर्श था, जितना उसे बताया जाता था; क्योंकि उसकी सतह बराबर शान्त रहती थी। लेकिन हंगेरी उस झील के बीच में फेंका जानेवाला बड़ा पत्थर साबित हुआ; क्योंकि इसके

कारण सत्य को प्रकट करनेवाली लहरें नीचे से ऊपर आ गयीं। अब वे लहरें ज्यों-ज्यों आगे की ओर बढ़ेंगी और किनारों पर आयेंगी, त्यों-त्यों यह बात प्रकट होती जायेगी कि उस हरे झाग के नीचे जीवन का वास्तविक रूप क्या है। हंगेरियन बौछार से तत्सम्बन्धी ये बातें प्रकाश में आयीं।

प्रथमतः, स्वयं रूस पर ही इसका बड़ा भयानक प्रभाव हुआ। अब रूसी, अपने सीमान्तों पर नियुक्त किसी अनुगामी देश की सेनाओं पर विश्वास नहीं कर सकते। अब रूमानिया और बल्गेरिया की सेनाएँ न केवल रूस की रक्षा करने से इन्कार कर देंगी; बल्कि स्पष्टतः ही दुश्मनों के साथ मिल भी जायेंगी। सम्भवतः मध्य-एशिया की सहायक सेनाओं के बारे में भी यही बात लागू होती है। यह बात रूसी नेताओं के लिए न केवल हतोत्साहपूर्ण, बल्कि स्पष्ट रूप से भयप्रद भी है।

रूस अब अपने उन अनुगामी बुद्धिवादियों पर भी भरोसा नहीं कर सकता, जिन्हें वह अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए बाहरी देशों में नियुक्त करता था। हंगेरी में वे न केवल विद्रोह का मुकाबला करने में असफल रहे, बल्कि उन्होंने उसका नेतृत्व भी किया। अन्य अनुगामी देशों के बुद्धिवादी भी वैसा ही करने की प्रतीक्षा में हैं।

रूस की यह पराजय मुख्यतः युवा लोगों के कारण सम्भव हुई। हंगेरी के नवजवानों ने जिस तरह अपना आश्चर्यजनक रूप प्रदर्शित किया, सम्भवतः रूस के सीमावर्ती अन्य किसी देश के नवजवान वैसा नहीं कर सकेंगे। फिर भी, रूस के लिए यही अच्छा होगा कि वह लताविया, पोलैण्ड, तुर्कमानिया और मंगोलिया के नवयुवकों से रक्षा के लिए अपनी तैयारियाँ पूरी रखे।

निश्चय ही, रूस को सबसे बड़ी पराजय भारी उद्योगों के मजदूरों के हाथों मिली। यहाँ कम्यूनिस्ट विचारकों-द्वारा अतिप्रिय रूप में ग्रहण की गयीं सारी बातें शत प्रति-शत मिथ्या प्रमाणित हुईं। सीपेल के मजदूरों के द्वारा रूसी जितने अपमानित हुए, उससे अधिक अपमान की बात कोई सोच भी नहीं सकता। यहाँ रूसियों की जो करारी पराजय हुई, उसके अपरिमित परिणाम प्रकट होंगे।

स्त्रियों का भी समर्थन रूस ने पूर्णतः खो दिया। इसने उनके समक्ष चिकने चुपड़े और पाखण्डपूर्ण उपदेश दिये थे कि केवल कम्यूनिज्म ही स्त्रियों की भलाई करने में समर्थ है, जबकि साथ-ही-साथ वह उन्हें परेशान करता था और भुखमरी की स्थिति में रखता था। अतः स्वभावतः ही हंगेरी की स्त्रियाँ

उन मिथ्या प्रलोभनों के जाल में आकर मूर्ख नहीं बनीं और जब मौका आया, तो वे शत-प्रति-शत कम्यूनिज्म के विरुद्ध हो गयीं। यहाँ सोवियत रूस को प्रचार-युद्ध में दूसरी बड़ी पराजय का सामना करना पड़ा।

रूस को किसानों से भी, जो भारी उद्योगों के मजदूरों की तरह ही नये शासन-तंत्र के प्रिय माने जाते थे, समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। हंगेरी के एक क्षेत्र के बाद दूसरे क्षेत्र में, किसानों ने सामूहिक खेती की व्यवस्था को समाप्त कर देने के लिए तुरन्त ही कदम उठाये। उनमें से अधिकांश अब खुले तौर पर पुरानी प्रणालियों की ओर लौटना चाहते थे, जिनमें किसी व्यक्ति के पास अपने खेत होते थे। हाँ, वे उनमें थोड़ी-बहुत नवीनता अवश्य लाना चाहते थे, जैसे कीमती यंत्रों के प्रयोग के मामले में सामूहिक व्यवस्था। और, जब आम हड़ताल की धमकी दी गयी, तो किसान इस बात के लिए सहमत हो गये कि वे अतिरिक्त अन्न का, जिसके रूसियों के हाथों में जाने की सम्भावना थी, उत्पादन नहीं करेंगे। किसानों के हाथों हुई इस रूसी पराजय ने 'क्रेमलिन' को अवश्य ही परेशान कर दिया होगा।

रूस ने यह भी देखा कि किसी अनुगामी राष्ट्र की साधारण पुलिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता; क्योंकि बुडापेस्ट की तीन-चौथाई पुलिस ने अपने हथियार क्रान्तिकारियों के सुपुर्द कर दिये—साथ ही, स्वयं भी उनके साथ हो गये। केवल ए. वी. ओ. अपने रूसी स्वामियों के प्रति वफादार रहा। वह भी केवल इसीलिए कि ए. वी. ओ. वालों को यह बात ज्ञात थी कि उनके पास उसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग केवल मौत का था। वे जानते थे कि उन्होंने देश को इतना अधिक भ्रष्ट बनाया है कि उनके साथ स्वातंत्र्य-सैनिक किसी भी समझौते के लिए तैयार न होंगे।

अन्तिम बात, रूस को बुडापेस्ट की पराजय से यह भी पता चला कि यदि अपने ही सैनिकों को किसी उच्च संस्कृति और गौरवपूर्ण जीवन-स्तरवाले क्षेत्र में अधिक समय तक छोड़ दिया जाये, तो उनमें भी गड़बड़ी आ जाती है। सम्भवतः 'क्रेमलिन' के सैनिक नेताओं को इस बात का सन्देह पहले ही हुआ था, क्योंकि उनकी कतिपय कार्यवाहियों से ऐसे भय का आभास उन्हें मिला था, लेकिन अब तो उनके सामने स्थिति स्पष्ट हो गयी है। अब से हर सैनिक दस्ते के प्रधान को इस बारे में संदिग्ध रहना पड़ेगा कि उसके सैनिक क्या करेंगे, यदि उन्हें किसी ऐसे शत्रु से लड़ने का आदेश दिया गया, जिसके अपराध के बारे में रूस और उसके सभी अनुगामी राष्ट्र एकमत नहीं हैं।

ये पराजय बहुत ही विस्मित करनेवाली हैं, लेकिन इनका सम्बन्ध केवल रूस से है। हंगेरी के उपद्रव से उत्पन्न दूसरी प्रभाव-लहर बहुत ही गम्भीर है और यह रूस के सभी अनुगामी देशों में पहुँच रही है, जिसके परिणामस्वरूप गम्भीरतम फलाफल सामने आ सकते हैं। अनुगामी देशों को अपने नियंत्रण में रखने के, एक छोड़ कर, सभी रूसी उपाय प्रभावहीन प्रमाणित हो चुके हैं। प्रलोभन, धमकियाँ, शुद्धीकरण और वादे—सब समान रूप से निस्सार साबित हो चुके हैं। अब वह केवल शक्ति के बल पर ही किसी देश को अपना अनुगामी बनाये रख सकता है।

जहाँ तक वादों का सम्बन्ध है, हंगेरी की घटनाओं ने साबित कर दिया है कि वे कितने प्रभावहीन हैं। रूस को एक काफी सम्पन्न मित्र राष्ट्र मिला था, पर उसने उस पर बड़ी निर्दयता के साथ शासन किया। यदि वह धीरे-धीरे अपना नियंत्रण ढीला करता जाता और उनके हित-साधन में लगा रहता, तो वहाँ कम्यूनिज्म की स्थापना करने में अवश्य ही सफल हो जाता। लेकिन वहाँ तो हंगेरियन वास्तविक भलाई और राजनीतिक स्वतंत्रता-सम्बन्धी झूठे वादों से, जो कभी भी पूरे न हुए, इतना ऊब गये कि क्रान्ति अवश्यम्भावी हो गयी। अब दूसरे अनुगामी देश भी अवश्य ही इस बात की अपेक्षा करेंगे कि रूसी झूठे वादों और शक्ति-प्रयोग का अपना पुराना रवैया त्याग देंगे, जिसका उपयोग उन्होंने अब तक खुल कर किया है और शेष विश्व जिसका साक्षी है।

जिस तरह रूस के वादे उसका कल्याण करने में असफल रहे, उसी तरह उसका आतंक भी। हंगेरी का ए. वी. ओ., जैसा भयानक दीखता है, सम्भव है, अन्य अनुगामी देशों में उपस्थित आतंक से ज्यादा बुरा न हो और शायद स्वयं रूस में प्रचलित आतंक से कुछ कम ही हो; लेकिन यदि ऐसा आतंक हंगेरी में अच्छे कम्यूनिस्ट तैयार करने में असफल रहा, तो दूसरे अनुगामी देशों में व्याप्त आतंक भी सम्भवतः असफल ही रहे हैं और हमें आशा करनी चाहिए कि पोलैण्ड और पूर्वी जर्मनी-जैसे देशों में हमें न केवल गैर-कम्यूनिस्ट संघटन मिलेंगे, बल्कि कम्यूनिज्म के कट्टर विरोधी भी मिलेंगे, जिनका संकल्प हंगेरी की घटनाओं से और भी सुदृढ़ हो गया होगा। यही बात लाल चीन के बारे में भी लागू होती है, जो कि एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य है।

किसी भी अनुगामी देश का कोई भी सच्चा राष्ट्रवादी नेता हंगेरी की घटनाओं का अध्ययन करने के बाद सम्भवतः इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि स्वयं

उसके देश की राष्ट्रीय सेना और पुलिस भी, अवसर पड़ने पर, राष्ट्रवादियों के साथ मिल कर अपने रूसी स्वामियों के विरुद्ध संघर्ष करेगी। यह बात वास्तविक क्रान्तिकारियों के लिए—यदि कभी विश्व की स्थिति अनुकूल हुई—रूसियों के विरुद्ध प्राथमिक कदम उठाने में बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथा सहायक साबित होगी।

अब किसी अनुगामी देश की जनता के लिए रूस के इन प्रचारों पर विश्वास करना कठिन ही है कि उनका जीवन इससे अच्छा हो जायेगा, या सारे कम्यूनिस्ट-राष्ट्र परस्पर भाई-भाई हैं, या रूस बड़ी उदारता के साथ उनकी रक्षा करते हुए मित्रता निभायेगा। अतः अब एक कहीं अधिक व्यावहारिक नीति की आवश्यकता पड़ेगी। यही बात बच्चों की शिक्षा, श्रमिक-सम्बन्धी प्रचार और राष्ट्रीय सैनिकों को बतायी जानेवाली वाहियात बातों के बारे में भी लागू होगी। अतएव रूस को अपने वास्तविक दानव-रूप में ही अपने अनुगामी राष्ट्रों के समक्ष उपस्थित होना पड़ेगा।

अब अनुगामी राष्ट्र इस बात की भी बड़ी गम्भीरता और सावधानी के साथ जाँच करेंगे कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत उनके प्राकृतिक साधनों का कैसा उपयोग किया गया है। हंगेरियन क्रान्ति का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घोष तो सत्य ही है—"रूस ने हमारा यूरेनियम चुराया है।" क्रान्ति के पहले यदि कोई व्यक्ति ऐसा आरोप लगाता, तो उसको गोली मार दी जाती; हालाँकि अपने परिवार में लोग गुप्त रूप से इस सम्बन्ध में चर्चा करते थे। किन्तु अब यह बात खुली जानकारी में आ गयी है और प्रायः सभी अनुगामी देशों में रूस पर यह आरोप लगाया जानेवाला है; क्योंकि वह धीरे-धीरे और निर्दयता से बराबर अपने पड़ोसियों को लूटने में लगा रहा है।

शुद्धीकरण के सम्बन्ध में अनुगामी राष्ट्रों का नया दृष्टिकोण बड़े महत्व का होगा। सन् १९४५ के बाद हंगेरी के रूसी शासकों ने वस्तुतः आश्चर्यकारी संख्या में शुद्धीकरण-सम्बन्धी आदेश जारी किये थे और हंगेरियन कम्यूनिस्टों को यह मानने के लिए विवश किया गया था कि वह उन्हीं की सूझ थी। सबसे पहले ट्राट्स्कीवादियों की हत्या की गयी, फिर टिटोवादियों और राष्ट्रवादी कम्यूनिस्टों की और तब स्टालिनवादियों का नम्बर आया (जब कि पहले हत्या कर दिये गये टिटोवादियों के लिए कहा गया—"तुम अन्ततः ईमानदार कम्यूनिस्ट थे। हमें दुःख है कि हमने तुम्हें गोली मार दी। भूल से ऐसा हो गया।")। अंत में, उसी को गोली मार दी जाती थी, जिसे मार्ग-भ्रष्ट की

सजा मिल जाती थी। इन समस्त शुद्धि-आंदोलनों का वस्तुतः फल कुछ नहीं निकला और अब इसमें संदेह ही है कि अनुगामी राष्ट्र इसी तरह करते जायेंगे। अब से रूसियों को स्वयं अपनी हत्या करनी पड़ेगी।

इससे यह प्रकट होता है कि अनुगामी समाज का मूल ढाँचा ही विस्फोटक बन गया है और आगे भी बना रहेगा। अब रूस को हर अनुगामी राष्ट्र के सम्बन्ध में बड़े विकट निर्णय करने पड़ेंगे और इस प्रकार किया जानेवाला हर निर्णय उसकी पराजय का सूचक होगा, या तो सैनिक और आर्थिक दृष्टि से (यदि वह अनुगामी राष्ट्र की माँगों को स्वीकार कर लेगा) अथवा उसके शान्तिमूलक प्रचार की दृष्टि से (यदि वह अपने सैनिकों को लेकर अनुगामी राष्ट्र को कुचल डालने का प्रयत्न करेगा)। किसी भी रूप में, रूस को पराजित होना ही पड़ेगा।

हंगरी की घटनाओं के कारण उत्पन्न परिणाम की तीसरी लहर रूस के लिए सबसे अधिक क्षतिकारक होगी। इस लहर का सम्बन्ध उन देशों से है, जो सम्भवतः आगे चल कर कम्यूनिज्म को ग्रहण करते, जैसे यूरोप में इटली और फ्रांस, एशिया में भारत और हिन्देशिया तथा मध्य अफ्रीका के कुछ हिस्से। इसकी पहुँच उन देशों में भी हो रही है, जहाँ प्रबल कम्यूनिस्ट पार्टियाँ हैं, यथा उरुग्वे, आस्ट्रेलिया और जापान। यहाँ हंगेरियन क्रान्ति का परिणाम केवल एक लहर-जैसा नहीं है; बल्कि इसने एक झंझावात का रूप धारण कर लिया है और इसके प्रचंड वेग जो-कुछ प्रकट करते हैं, वे ये हैं।

यदि फ्रांस में कम्यूनिस्ट-सरकार अधिकार में आ जाये, तो उसके साथ ही एक आतंक-मूलक यंत्र भी अस्तित्व में आ जायेगा, जो सम्पूर्ण देश को अस्त व्यस्त कर देगा; जीवन के हर क्षेत्र को भ्रष्ट बना देगा और सभी फ्रांसीसियों की—अपने निर्माताओं की भी—आत्मा एवं प्रसन्नता को विनष्ट कर देगा।

यदि इटली में कम्यूनिस्ट-सरकार स्थापित हो जाये, तो इटली का आर्थिक जीवन बड़ी तेजी से बिगड़ने लगेगा और इसके सबसे बड़े शिकार होंगे बड़े नगरों के मजदूर।

फ्रांस हो या इटली, कम्यूनिज्म को पसन्द करने के बाद यह निश्चित है कि जैसे ही पार्टी का कोई उच्चपदाधिकारी अपना जोर कम पड़ते देखेगा, वैसे ही रूसी सहायता की पुकार करेगा। और, यदि सोवियत टैंक देश के अन्दर प्रविष्ट होंगे, तो वे बड़े मजे में पेरिस या रोम को नेस्त-नाबूद कर डालेंगे। बुडापेस्ट की यही महान् सीख है। रूसी टैंक किसी भी नगर को, जहाँ विरोध की भावना दिखाई पड़े, नष्ट कर देने को तत्पर हैं। और, यदि टैंक मुसीबत में पड़ेंगे, तो

जैसा कि उन्होंने बुडापेस्ट में किया, अगली कार्रवाई बड़े बमवर्षक विमान भेज कर पूरी की जाने की ही उम्मीद हम कर सकते हैं।

जिन देशों में कम्यूनिस्टों की विजय की सम्भावना थी, वहाँ रूस को सबसे बड़ी क्षति सार्वजनिक समर्थन के क्षेत्र में हुई है। कट्टर कम्यूनिस्ट, जो सत्ता को अपने हाथों में प्राप्त करना चाहते हैं, बुडापेस्ट के ध्वंस से प्रभावित नहीं होंगे —इससे उन्हें कोई आश्चर्य भी सम्भवतः नहीं हुआ होगा। लेकिन वे अनिश्चित विचारवाले मतदाता, जो सम्भवतः एक दिन कम्यूनिस्ट-उम्मीदवार को अपना मत देते, यह स्पष्टतः देखेंगे कि वैसी भूल करने पर उन्हें कितना दुःखदायी मूल्य चुकाना पड़ेगा। ऐसे लोगों के बीच अभी ही रूस को भीषण क्षति पहुँच चुकी है।

इन देशों की कम्यूनिस्ट-पार्टियाँ अपने ऐसे अनेक सदस्यों को अभी से ही खोने लग गयी हैं, जो नागरिकों की सामूहिक हत्या के लिए तैयार नहीं हैं। ये लोग, जो एक समय बड़े वफादार कम्यूनिस्ट थे, कहते हैं कि बुडापेस्ट में जो-कुछ हुआ, उसे देखने के बाद अब वे इस बात के लिए कतई तैयार नहीं हैं कि कोई क्रूर स्थानीय कम्यूनिस्ट-नेता केवल अपनी स्थिति की रक्षा के लिए देश में रूसी टैंकों को निमंत्रित करे। पेरिस और रोम-सदृश नगरों के भावी विध्वंस को देखनेवाले इन प्रमुख नेताओं की विमुखता से अभी ही कम्यूनिज्म को आघात पहुँचा है और जब बुडापेस्ट की पूरी गाथा प्रकाश में आयेगी, तब तो शायद ऐसे नेताओं की सूची और भी लम्बी हो जायेगी।

एशिया में विशेष महत्व की बात यह है कि जिस उपनिवेशवाद के विरुद्ध वह न्यायतः संघर्षशील है, उससे कहीं अधिक बर्बर सोवियत-कम्यूनिज्म ने अपने को बुडापेस्ट में साबित किया। अब तक रूसी प्रचार एशिया को यह जताने में असाधारण सफलता प्राप्त करता रहा है कि वह कतिपय यूरोपीय अनुगामी राष्ट्रों के बीच परम सज्जन बड़े भाई के सदृश है और वे राष्ट्र उसके साथ शान्तिपूर्वक रहते तथा उसकी उदारतापूर्ण मित्रता को पसन्द करते हैं। परोक्ष रूप से एशिया से लगातार यह प्रश्न भी किया जाता रहा है—"हमारे उत्फुल्ल भ्रातृ समुदाय में तुम भी शामिल क्यों नहीं हो जाते?" अब इस रिश्ते का वास्तविक स्वरूप प्रकट हो गया है।

अब विदेशी राष्ट्रों को और अधिक मूर्ख बनाना और स्थानीय विवेकी देश-भक्तों का समर्थन प्राप्त करना रूस के लिए बहुत ही कठिन हो गया है। अब उसे अवश्य ही उन कट्टर कम्यूनिस्टों पर सम्पूर्णतः भरोसा करना पड़ेगा, जो

अपने देशों को कम्यूनिज्म के अन्तर्गत लाना चाहते हैं। लेकिन अब इस तरह की गद्दारी का देश के बाकी लोग जम कर सामना करेंगे; क्योंकि उन्होंने देखा है कि उसका परिणाम क्या निकलता है। इस प्रकार मानव-मानस को अपने पक्ष में करने के विश्वव्यापी संघर्ष में रूस ने बड़ी करारी मात खायी है।

अब भविष्य में रूस अपना जहरीला प्रचार पहले की ही तरह सफलता के साथ क्यों नहीं कर पायेगा, इसका एक कारण यह भी है कि हंगेरी से निकल कर जो दो लाख शरणार्थी संसार के विभिन्न भागो में फैले हैं, वे कम्यूनिज्म के वास्तविक स्वरूप से सम्पूर्ण विश्व को परिचित कराने के लिए कटिबद्ध हैं। मैं डेट्रायट में सोवियत-पक्ष के समर्थन में कुछ भी कहने से नफरत करूँगा, यदि श्रोताओं में सीपेल के कुछ मजदूर होंगे। इन दो लाख संवाददाताओं का प्रभाव बहुत ही अधिक होगा और जैसे-जैसे इनकी कहानियाँ अमेरिका, या कनाडा, या आस्ट्रेलिया के एक गाँव से दूसरे गाँव में फैलेंगी, उन कम्यूनिस्ट-प्रचारों को भी, जिन्होंने कुछ जड़ जमा ली होगी, विकसित होने में कठिनाई होगी।

इस प्रकार हम हंगेरियन क्रान्ति के परिणाम की चौथी और बाह्य लहर के निकट आते हैं, जो विश्व-कम्यूनिज्म की शान्त झील में हलचल पैदा करती है—यही लहर अमेरिकी तट को भी छूती है। इसका संस्पर्श सभी राष्ट्रों—ब्रिटेन, ब्राजिल, न्यूजीलैण्ड, श्रीलंका—से है और इसका जो प्रभाव सारे विश्व पर पड़ा है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। लेकिन अमेरिका सबसे अधिक प्रभावित हुआ है।

जब बुडापेस्ट के देशभक्तों ने कार्रवाई की, तब हम उसके लिए प्रस्तुत नहीं थे। हम न यह जानते थे कि हमें क्या करना चाहिये और न कुछ करने की हमारी इच्छा ही थी। हम संसार के समक्ष, नैतिकता का बाना कस कर चुपचाप खड़े रहे और यदि फिर कभी ऐसा हुआ, तो हमें विश्व-नेता का पद त्याग देना पड़ेगा। यदि रूसी बुडापेस्ट में पराजित हुए, तो हम भी अपराजित न रहे। ऐंडाऊ में सेवा कार्य में लगे हुए हर अमेरिकी ने एक मानसिक पीड़ा अनुभव की, जो चार प्रकार के प्रभाव उस पर डालती थी।

प्रथमतः उसे उन लोगों के साहस पर अचम्भा होता था, जो उसकी ओर बढ़े आ रहे थे। बहुत-से अमेरिकी तो, जब हंगेरियन झाड़ीदार दलदल से निकल कर उनके पास से गुजरते थे, तब मूक सम्मान-प्रदर्शनार्थ एक ओर हट जाते थे। उन दिनों, जब शरणार्थियों को गहरे कीचड़ से होकर या नहर में तैर कर आना पड़ता था, अमेरिकी उन लोगों का विस्मय-सहित अध्ययन करते थे, जो अगली

परीक्षा के लिए तैयार होकर प्रसन्नचित्त और निडरता के साथ आगे बढ़ते आते थे। विशुद्ध साहस के साक्षात्कार से पराभवमूलक अनुभूति होना स्वाभाविक ही है।

दूसरी बात, इस आरम्भिक पीड़ा को अनुभव करने के बाद, एक भावुक अमेरिकी अपने से यह प्रश्न करता था—"इन बहादुर लोगों की मदद करने में हमारा देश असमर्थ क्यों रहा?" निस्सन्देह, इस प्रश्न के अनेक युक्तियुक्त उत्तर हो सकते हैं। अमेरिकी कह सकते थे—"हर कोई जानता है कि हमारा राष्ट्र शान्तिप्रिय है और युद्ध से अलग रहना चाहता है। हमने यह बात हर किसी के सामने पहले ही स्पष्ट कर दी है।" लेकिन तब यह आशंका सामने उपस्थित की जा सकती थी कि यद्यपि हम अपने लिए शान्ति पसन्द करते थे, तथापि सम्भवतः हमने हंगेरियनों को अपनी शान्ति खोने के लिए प्रेरित किया और उनकी कार्रवाई से अवैध रूप से कुछ लाभ भी उठाये। परन्तु यह आशंका इतनी भद्दी है कि इससे अधिक भद्दी आशंका किसी मनुष्य को हो नहीं सकती। अतः इसके उत्तर में यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता था—"इसके दोषी हंगेरियन स्वयं हैं। उन्होंने ऐसे समय में अपनी क्रान्ति का सूत्रपात क्यों किया, जब हम अपने राष्ट्रपति के निर्वाचन में व्यस्त थे। उन्हें यह सोचना चाहिये था कि उस समय अमेरिका अपने में ही बुरी तरह व्यस्त रहेगा।" लेकिन तब इसके उत्तर में पुनः यह आशंका उपस्थित की जा सकती थी कि कई वर्षों से हम वैसे विद्रोह की आशा कर रहे थे और निर्वाचन-कार्यक्रम के बावजूद हमें उसके लिए तैयार रहना चाहिये था। अन्त में, अमेरिकी यूरोप के नक्शे की ओर इंगित कर कह सकते थे—"आप हमारी अवस्थिति देख सकते हैं। हंगरी के पास कोई समुद्री बन्दरगाह नहीं है, जिससे होकर हम जरूरी सामग्रियाँ पहुँचाते। और, हमारे विमान सर्वप्रभुता-सम्पन्न राष्ट्र आस्ट्रिया और युगोस्लाविया से होकर तो जा नहीं सकते थे। वास्तव में, यदि हम चाहते भी, तो सहायता पहुँचाने के लिए हमारे पास कोई मार्ग नहीं था।" इस विवाद की दुर्बलता सदा अपने-आप में ही प्रकट थी; क्योंकि अमेरिकी सामान्यतः इसे ऊँची आवाज में प्रस्तुत करके इस आलंकारिक प्रश्न के साथ समाप्त करते—"समझे न?" और दूसरे पक्ष की प्रतिक्रिया संताप के साथ समाप्त हो जाती।

तीसरी बात, अमेरिकी दुर्बलता को दृष्टि में रख कर हंगेरियन इस बात के लिए बहुत प्रयत्नशील थे कि अमेरिकी मित्रों को परेशानी में न डाला जाये।

शरणार्थी सान्त्वना देते हुए कहते—"हमें मालूम था कि आप लोग हमारी सहायता करने की स्थिति में नहीं थे।" मानो सान्त्वना की आवश्यकता उन्हें न होकर अमेरिकनों को ही थी। कभी-कभी कोई बहुत सूक्ष्मदर्शी हंगेरियन कहता—"हम जानते हैं कि यदि आपको कोई मार्ग उपलब्ध होता, तो आप हमारी मदद अवश्य करते। रेडियो से प्रोत्साहनजनक शब्द प्रसारित करने में आप लोगों ने कितनी दृढ़ता दिखायी थी। हमें इस बात का खेद है कि हमारी क्रान्ति ऐसे असमय में हुई; लेकिन साथ ही, इस बात का गर्व भी है कि हमारे इस कार्य से शायद आपको कुछ सहायता मिले।" विद्रोह-काल में बुडापेस्ट में उपस्थित अमेरिकनों की तरह ही ऐंडाऊ के अमेरिकी भी अपने ऐसे हंगेरियन मित्रों के दृष्टान्त प्रस्तुत कर सकते हैं, जिन्होंने बिना किसी कटाक्ष के कहा—"इस बारे में परेशान न होइये। हमें मालूम है कि हमारी सहायता करने में आप असमर्थ क्यों हैं? लेकिन हमें इस बात की खुशी है कि हमने आपके हित के लिए संघर्ष किया।" कालांतर में अमेरिकियों ने इन वक्तव्यों की शरण ली और उनके मन को जो आघात पहुँचा था, उसकी परेशानी विलीन हो गयी—उसका स्थान उन हंगेरियनों के प्रति आत्मीयता की भावना ने ले लिया, जिन्होंने इतनी अधिक क्षति हँसते-हँसते उठायी थी। इस तृतीय मिथ्या कष्टानुभूति पर विचार करते समय मैं इतना ही कह सकता हूँ कि मैं उस अमेरिकी की प्रतिक्रिया से सहमत हूँ, जिसने कहा था—"क्रान्ति के सर्वाधिक चमत्कारी पहलुओं में से एक यह था कि यद्यपि हंगेरियनों का विश्व में किसी ने साथ नहीं दिया, फिर भी उन्होंने किसी के प्रति क्रोध का भाव नहीं दिखाया।"

यह ठीक है कि हंगेरियन खुले तौर पर अपना शोक व्यक्त नहीं करते थे, किन्तु आपस में गुप्त रूप से, जो कुछ बीता था, उस पर अपने कठोर उद्गारों का विनिमय तो करते ही थे—साथ ही, कभी कदा किसी अमेरिकी के समक्ष कठोर और कष्टकारी तथ्य उपस्थित भी करते थे। मैंने पहले-पहल ये गुप्त हंगेरियन टिप्पणियाँ फेरेंक कोझोल-नामक एक २६-वर्षीय शरणार्थी के मुख से सुनीं। पहले तो उसने मुझसे गोपनीयता का वचन लिया; क्योंकि वह नहीं चाहता था कि मैं हंगेरियनों को दुखड़ा रोनेवाले के रूप में चित्रित करूँ, लेकिन बाद में मैं उसकी टिप्पणियों से इतना प्रभावित हुआ कि मैंने उससे बहुत आग्रह किया कि वह मुझे मेरे वचन से मुक्त कर दे और मैंने उसके ही शब्दों में उसके कथन का सारांश लिखने की अनुमति भी माँग ली; क्योंकि मैं उसके कथन का ज्यों-का-त्यों उल्लेख करना चाहता था।

उसने कहा—"निस्सन्देह हंगेरियन इस बात से क्षुब्ध हैं कि आप अमेरिकियों ने उनके स्वातंत्र्य-संग्राम में दिलचस्पी नहीं ली। पिछले कई वर्षों से, मानव-मानस को अपने पक्ष में करने के लिए कम्यूनिज्म के विरुद्ध अपने संघर्ष के एक भाग के रूप में, आप लोग हमें आशा और आश्वासन देते आ रहे हैं। आप हमसे कहते रहे हैं—'आपको हमने भुला नहीं दिया है। अमेरिका का सर्वोपरि उद्देश्य आपके स्वतंत्रता-लाभ में सहायक होना है। आप अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकें, इसके लिए हम अपनी सामर्थ्य भर आपका साथ देंगे।'

"लौह-आवरण (कठोर रूसी नियंत्रण) के पीछे, हमारे पास, यह संदेश पहुँचाने के लिए अमेरिका ने लाखों डालर खर्च किये और हर मनोवैज्ञानिक युक्ति का प्रयोग किया। आपका 'वायस ऑफ अमेरिका' दिन-भर में पचास घंटे स्वातंत्र्य-सम्बन्धी कार्यक्रम प्रसारित करता था। आप ७० फ्रीक्वेन्सियों का उपयोग करते थे और कभी-कभी तो मैं आपको टैन्जियर्स, या म्यूनिक, या सालोनिका से भी ये कार्यक्रम प्रसारित करते हुए सुनता था। मुझे स्मरण है कि जब मैंने यह सुना कि आप अपने एक कोस्ट गार्ड कटर 'कोरियर' का प्रयोग अवरोधक स्टेशनों का मुकाबला करने के लिए कर रहे हैं, तो हमें कितनी प्रसन्नता हुई थी। आपने कहा था कि 'कोरियर' लौह-आवरण में छिद्र करके प्रवेश पा सकेगा।

"तब आपने सन् १९५० में 'रेडियो फ्री यूरोप' की स्थापना की और स्वातंत्र्य कार्य में पिल पड़े। आपके ११ विभिन्न स्टेशन थे, जो फ्रैंकफर्ट, म्यूनिक और लिस्बन से प्रति सप्ताह एक हजार घंटे उत्साह-प्रदायक कार्यक्रम प्रसारित करते थे। 'रेडियो फ्री यूरोप' ने अनेक बार हमसे कहा—'हमारा उद्देश्य लौह-आवरण के पीछे के पराधीन राष्ट्रों की जनता में कम्यूनिज्म के प्रति विरोध-भावना को जाग्रत रखना है। हम उन लोगों की सहायता करना चाहते हैं, ताकि वे शनैः शनैः अपने को इतना सशक्त बना लें कि सोवियत जुए को अपने कंधों से उतार कर फेंक सकें।'

"आपने हमें सशक्त बनने में किस प्रकार सहायता पहुँचायी? आप लगातार हमें यह आश्वासन देते रहे कि पश्चिमवाले हमें भूल नहीं गये हैं। आपने कहा था कि इतने अधिक अमेरिकी नागरिकों-द्वारा 'रेडियो फ्री यूरोप' के समर्थन से यह बात साबित हो जाती है कि अमेरिका आपके साथ है। हमने आपके कथन पर विश्वास किया।

"इसके बाद, आपने अपने संदेश को और भी स्पष्ट करने के लिए हमारे

देश पर 'बैलून' भेजने शुरू किये, जो अपने साथ पर्चे और एल्युमिनियम के पदक लाते थे। मुझे भी इनमें से एक प्राप्त हुआ था, जिस पर 'स्वतंत्रता का घंटा' खुदा होने के साथ-साथ लिखा था—'स्वतंत्रता के लिए हंगेरियन—हंगेरियनों के लिए समस्त स्वतंत्र संसार।'

"ये 'बैलून' हमारी मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण थे। उस समय मैंने जो सोचा था, वह मुझे अब भी याद है और वह यह था,—'अन्ततः कुछ तो स्पष्ट हुआ—केवल शब्दों के अलावा भी कुछ सामने आया। यदि अमेरिका हमारे पास एल्युमिनियम के पदक पहुँचा सकता है, तो क्रान्ति आरम्भ होने पर छतरी से अन्य सामग्रियाँ भला क्यों नहीं भेज सकेगा? निश्चय ही अमेरिका हमारी मदद करने का इरादा रखता है।'

"सन् १९५२ में आपके सभी रेडियो-स्टेशनों ने बार-बार आपके उन वादों को प्रसारित किया, जो आपने निर्वाचन-आन्दोलन के सिलसिले में किये थे। हमें कहा गया था कि अमेरिका लौह-आवरण को पीछे ढकेल देने का प्रयत्न करेगा और कम्यूनिस्ट-शासन में रहनेवाले ८० करोड़ लोगों में स्वातंत्र्य-आकांक्षा को मजबूत बनायेगा। हमें कई बार विश्वास दिलाया गया था कि आपके राष्ट्रपति रूस को शान्ति के पथ पर लाने के उपाय ढूँढ़ेंगे। दिन-प्रति-दिन आपके नेताओं के वक्तव्यों का हमारे समक्ष उल्लेख किया जाता था।

"तदुपरान्त विदेशों में रहनेवाले युवा हंगेरियन रहस्यमय ढंग से हमारे बीच आने लगे और उन्होंने वादा किया—'यदि कुछ गड़बड़ी शुरू हो जाये, तो चिन्ता की कोई बात नहीं। अमेरिका आप लोगों की सहायता के लिए तैयार रहेगा। लेकिन आप इस प्रतीक्षा में न रहें कि दूसरा पक्ष ही शुरुआत करे। आप स्वयं कुछ कीजिये। आखिर आपको दुनिया को यह दिखाना है कि आप किस योग्य हैं। आपको यह साबित करना है कि हंगेरी स्वतंत्रता के योग्य है, जिसकी माँग आप कर रहे हैं।'

"हमें कहा गया था कि सन् १९५३ में अनुगामी राष्ट्रों में कम्यूनिस्ट-शासन के विरुद्ध होनेवाली कार्रवाइयों में सहायता पहुँचाने के लिए अमेरिका ने १० करोड़ डालर अलग रख दिये थे। हमने इसका अर्थ यह लगाया कि आप लोग सक्रिय रूप से हमारे साथ हैं।

"फिर क्या हुआ? जब पूर्वी बर्लिन के जर्मनों ने रूसियों के विरुद्ध संघर्ष आरम्भ किया, तब आपके स्टेशनों ने हमें उसका एक-एक करके सम्पूर्ण विवरण सुनाया। इस वर्ष जब पोजनान में पोलैण्डवासियों ने रूसियों के विरुद्ध संघर्ष

छेड़ा, तब फिर हमें स्वतंत्रता-सम्बन्धी प्रचार पर्याप्त परिमाण में सुनने को मिले। क्या यह हमारा अपराध था कि हमने जो-कुछ सुना, उस पर विश्वास क्यों किया? आप जरा अपने को हमारे स्थान पर रख कर सोचिये। हमारे पास न तो अपना कोई ईमानदार समाचारपत्र था और न अपने ईमानदार रेडियो-स्टेशन ही। हम तो सिर्फ उसी पर विश्वास कर सकते थे, जो आप हमसे कहते थे और आपने हमें स्वतंत्रता से प्यार करने की सलाह दी।

"क्या आपको मालूम है कि मेरे-जैसे हंगेरियन अमेरिका के प्रति इतने रुष्ट क्यों हैं? छः वर्षों तक आपने हमारे बीच यह प्रचार किया। छः वर्षों तक रूसी हमें गंदगी में घसीटते रहे। लेकिन जब हमने उन्हीं चीजों के लिए, जिनके लिए संघर्ष करने को आपने कहा था, विद्रोह किया; तब कितने अमेरिकी हमारे सहायतार्थ आगे आये? एक भी नहीं। किसने हमारे पक्ष में आकर संघर्ष किया? रूसी सैनिकों ने। कितने अमेरिकी टैंकों ने हमारी मदद की? एक ने भी नहीं। किन टैंकों ने हमारे स्वातंत्र्य-संघर्ष में हमारा साथ दिया? रूसी टैंकों ने। यह एक भयानक अभियोग है।

"लेकिन जिस बात ने हमें लगभग निराशा के निकट पहुँचा दिया, वह सामग्रियों से हमारी सहायता करने में आपकी असफलता नहीं थी; बल्कि यह तथ्य था कि आप हमारी ओर से डट कर बोलने में भी असमर्थ रहे। मेरा देश चुपचाप मर गया। क्या पिछले अक्टूबर में अमेरिका से हमारे बारे में कोई स्पष्ट और गम्भीर वक्तव्य नहीं दिया जा सकता था? श्री बुल्गानिन ने स्वेज के बारे में अपना वक्तव्य दिया और इंग्लैण्ड तथा फ्रांस पीछे हट गये। हमारे आन्दोलन में दस दिनों का समय मिला था, जबकि एक साहसिक अमेरिकी वाणी बुल्गानिन को पीछे हटने को विवश कर देती। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। डेन्यूब तट पर भी शान्ति छायी रही और राष्ट्र-संघ में भी। कई दिनों के बाद जब केवल मुर्दे ही सुन सकते थे, अमेरिका अन्ततः बोला। और वह भी एक संवेदना का संदेश था!"

फेरेंक कोबोल किसी भी तरह एक उत्तेजित नवजवान क्रान्तिकारी नहीं था। वह एक विचारशील नवजवान था, जिसके मस्तिष्क में भ्रान्तियों के लिए स्थान न था और क्या उपलब्ध हो सकता है और क्या नहीं, इसका अनुमान करने की उसकी योग्यता काफी अच्छी थी। वह अमेरिका को समझता था। उसने कहा—"अमेरिका से हंगेरियनों को निराशा मिली है, लेकिन आप किसी को ऐसा कहते नहीं पायेंगे कि अब कभी हमें अमेरिकी नेतृत्व स्वीकार

नहीं करना चाहिये। हमें मालूम है कि आपके द्वारा ही हम स्वतंत्र हो सकते हैं। मैं नहीं जानता कि यह कार्य आप कैसे पूरा करने जा रहे हैं, लेकिन मैं इस बात से सहमत हूँ कि उद्‌जन बम के वर्तमान युग में केवल हंगेरी की मुक्ति के लिए विश्वयुद्ध ठानने की बात सोची भी नहीं जा सकती। हमें अमेरिका पर विश्वास करना है और हमें विश्वास है कि आपके राष्ट्रपति हम सब की—हंगेरी की, पोलैंड की, जर्मनी की—स्वतंत्रता के लिए कोई मार्ग ढूँढ़ेंगे। लेकिन मेरा खयाल है कि आपके यहाँ की जनता को दो समस्याओं का बहुत ही सतर्कतापूर्वक अध्ययन करना चाहिये।" और, इसके बाद वह उन दो तथ्यों पर प्रकाश डालने लगा, जो स्पष्टता की दृष्टि से भयानक और शकुन की दृष्टि से अशुभ हैं।

पहले उसने कहा—"कोई भी हंगेरियन 'रेडियो फ्री यूरोप' से क्षुब्ध नहीं है। हम अपनी आशाओं को जीवित रखना चाहते थे। सम्भवतः हमने उन बातों पर बहुत ही गम्भीरता के साथ विश्वास कर लिया, जिन्हें प्रसारित करने का उद्देश्य उतना गम्भीर नहीं था। यह गलती 'रेडियो फ्री यूरोप' की नहीं थी। शब्दों में विश्वास करने के कारण यह अंशतः हमारी भूल थी और अंशतः अमेरिका की, जो समझ-बूझ कर शब्दों का प्रयोग नहीं करता था। 'आजादी', 'राष्ट्रीय सम्मानार्थ संघर्ष', 'पीछे ढकेलना' और 'मुक्ति'-जैसे शब्द अपना कुछ विशेष अर्थ रखते हैं। वे किसी विशेषता के द्योतक हैं। विश्वास कीजिये, आप हंगेरियनों, या बल्गेरियनों, या पोलैण्डवासियों को छः वर्षों तक प्रतिदिन 'आजादी' से प्रेम करने के लिए कहने के बाद, दार्शनिक ढंग से पीछे हट कर यह नहीं कह सकते कि हंगेरियनों, बल्गेरियनों और पोलैण्डवासियों को आजादी के लिए कुछ नहीं करना चाहिये, उन्हें यह स्मरण रखना चाहिये कि हम केवल शब्दों का प्रयोग कर रहे थे। एक जंजीर में जकड़े पराधीन व्यक्ति के लिए ऐसे शब्द केवल शब्द नहीं रह जाते, वे अस्त्र बन जाते हैं, जिनसे वह अपनी जंजीरों को तोड़ सकता है।"

फेरेंक कोचोल ने अपने देश के स्वाधीनता-आन्दोलन में एक शानदार हिस्सा लिया था। उसने आजादी के लिए अपनी जान की बाजी लगा दी थी। उसने कहा—"मैं मुख्यतः उन शब्दों से ही उतना अनुप्राणित हुआ था। यदि अमेरिका पूर्वी और मध्य-यूरोप को ऐसे शब्द सुनाता है, तो उसे पूरी जिम्मेदारी भी स्वीकार करनी चाहिये। अन्यथा इसका अर्थ होगा कि आप राष्ट्रों को आत्महत्या करने के लिए उत्तेजित करते हैं।"

कोबोल-जैसे आलोचकों-द्वारा चुनौती दी जाने के कारण, अमेरिकी 'रेडियो फ्री यूरोप' पर इस बात के लिए नाराज होंगे कि जो बातें केवल अमेरिका के घरेलू आन्दोलनमूलक व्याख्यान के रूप में कही गयी थीं, उन्हें उसने शेष विश्व के लिए प्रसारित क्यों कर दिया। दूसरी ओर हंगेरियन 'रेडियो फ्री यूरोप' पर इस बात के लिए नाराज नहीं होंगे कि उसने प्रमुख अमेरिकी नेताओं की गृह-नीति-सम्बन्धी घोषणाएँ उन्हें क्यों सुनाई थीं; बल्कि वे अमेरिकियों पर क्रुद्ध होंगे; क्योंकि उन्होंने अपनी कही हुई बातों का पालन नहीं किया; भले ही वे केवल व्याख्यान की दृष्टि से कही गयी थीं।

अमेरिका को कोबोल की दूसरी चेतावनी और अधिक सतर्कतापूर्वक विचार किये जाने योग्य है। उसका कहना है—"हंगेरी के मामले में आपने कुछ नहीं किया, इसके लिए आपके पास अनेक अच्छे बहाने हैं; जैसे—आपके यहाँ एक राजनीतिक आन्दोलन चल रहा था, हंगेरी में आपका प्रवेश सम्भव नहीं था और आपने यह नहीं समझा था कि आपकी बातों को हंगरी ने इतनी गम्भीरता के साथ ग्रहण किया था। लेकिन जब पूर्वी जर्मनी या पोलैण्ड में आन्दोलन आरम्भ होगा, तब आपके पास बहाने नहीं रह जायेंगे; क्योंकि वहाँ आप तुरन्त प्रवेश पा सकने की स्थिति में होंगे, आपके यहाँ उस समय निर्वाचन-आन्दोलन नहीं चलता रहेगा और आपको यह चेतावनी मिल चुकी रहेगी कि आपके शब्दों को गम्भीरता के साथ ग्रहण किया जाता है। इसलिए अच्छा हो कि आप पहले से ही यह विचार कर लें कि यदि जर्मन या पोलैण्डवासी क्रान्ति आरम्भ करेंगे, तो आपको क्या करना होगा। कारण, जैसे शब्द आप सुनाते आ रहे हैं और जिन शब्दों पर अमेरिका ने हमेशा जोर दिया है, वे इस तरह के हैं, जिन पर आदमी सहज ही विश्वास कर लेना चाहता है।"

हंगेरियन क्रान्ति के सम्बन्ध में अमेरिका का आरम्भिक रुख अच्छा नहीं था। मैंने पहले ही स्पष्ट कर दिया है कि उस मामले में हमारी कुछ करने या कहने में असफलता को हंगेरियन और अमेरिकी, दोनों ही समान रूप से क्षम्य क्यों मान सकते हैं; लेकिन शरणार्थियों से सम्बन्धित हमारे बाद वाले कुछ आचरण ऐसे हुए हैं, जिनके लिए कोई सफाई देना अत्यधिक कठिन है। जार्ज वाशिंगटन के बाद, स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवाले जो थोड़े से श्रेष्ठ और दृढ़प्रतिज्ञ वीर संसार में हुए हैं, उन्हें अमेरिका में आने देने में हमने इस तरह आगा-पीछा किया, मानो स्वर्ग में प्रवेश पाने से भी अधिक पुण्यकार्य अमेरिका में प्रवेश पाना हो। हमने लिये जानेवाले शरणार्थियों को चुनने का काम स्वेच्छा से काम

करनेवाले धार्मिक समुदायों के सुपुर्द कर दिया, जिन्होंने प्रवेश पाने की योग्यता का अत्यन्त असाधारण मापदंड निर्धारित किया। उन्होंने यह सूचना प्रसारित की कि अमेरिका तलाक प्राप्त व्यक्तियों को प्रवेश की अनुमति नहीं देगा; क्योंकि वैसे लोगों ने स्पष्टतः ही धार्मिक शिक्षा का उल्लंघन किया है और अमेरिका वैसे किसी व्यक्ति को आने नहीं देना चाहता, जो पूर्णतः धार्मिक विचारवाला न हो। ऐसी सूचना निकाल कर उन्होंने वियेना में अपनी स्थिति अत्यन्त हास्यास्पद बना ली। इसके ठीक विपरीत, यूरोप के राष्ट्रों ने अपनी ट्रेनें शरणार्थी शिविरों के पास भेजीं और कहा—"इस ट्रेन में जो भी पुरुष, स्त्री या बच्चा स्थान पा लेगा, उसे इंग्लैण्ड, या फ्रांस, या स्विट्ज़रलैण्ड, अपने यहाँ स्थान देगा।"

जब हमारी हास्यास्पद नीतियों ने आस्ट्रिया में काफी क्षोभपूर्ण स्थिति उत्पन्न कर दी, तब हमारी सरकार के एक अधिकारी ने एक पत्र-प्रतिनिधि-सम्मेलन बुलाया, जिसमें उसने कहा—"शरणार्थियों को स्वीकार करने के मामले में भले ही हम धीमे हों, पर सीमा पार करके आनेवाले हर हंगेरियन को हमने एक-एक गर्म कम्बल दिया है।" यह सुन कर एक श्रोता इतना क्रुद्ध हुआ कि पूछ बैठा—"अभी तक कितने शरणार्थी सीमा पार कर आ चुके हैं?"

"९६ हजार।"

"इनमें से कितने को अमेरिका में जगह मिली है?"

"पाँच सौ को।"

"स्विट्ज़रलैण्ड ने कितने शरणार्थियों को अपनाया है?"

"चार हजार।"

इसके बाद और प्रश्न नहीं किये गये। लेकिन फिर शीघ्र ही शरणार्थियों के लिए अमेरिकी फाटक खुल गये और हम जो लोग सीमा पर थे, उन्हें अपना सिर कुछ ऊँचा उठाने का अवसर प्राप्त हुआ। लेकिन फिर भी, हंगरी-सम्बन्धी अमेरिकी नीति स्पष्ट नहीं प्रतीत होती थी। हम अपने हिस्से के हंगेरियनों को 'किलमर-शिविर' ले जाते थे और उन्हें ऐसी संकीर्ण अवस्था में रखते थे कि 'न्यूयार्क टाइम्स' (२८ नवम्बर, १९५६) को उसका विरोध इन शब्दों में करना पड़ा—"हंगेरियन शरणार्थियों के स्वागत और आवास की अभी जो व्यवस्था है—कम-से-कम न्यूयार्क-क्षेत्र में—वह इस देश के लिए अत्यन्त अशोभनीय है। यदि कभी इतने थोड़े-से लोगों की, जिनके साहस ने हर जगह के स्वातंत्र्य-प्रेमी लोगों के हृदय में एक स्फूर्ति भर दी, व्यवस्था में भी ढिलाई और

कुनिर्णय के दृष्टान्त उपस्थित हुए हैं, तो 'किल्मर-शिविर' उन सबमें आगे है।

"इस निन्दनीय कृत्य में प्रायः सभी शामिल हैं। जिस क्षण विमान नीचे उतरते हैं, तभी से इनका सेवा-कार्य सैनिक रूप धारण कर लेता है। फलतः शरणार्थियों को अमेरिकी जीवन का प्रथम अनुभव ही वर्दियों और चारों ओर सैन्य-व्यवस्था के रूप में होता है। शरणार्थियों को सैनिक बसें किलमर-स्थित बैरकों के ऊसर और सुनसान क्षेत्र की ओर ले जाती हैं,—जहाँ उन्हें सैनिक पुलिस की देखरेख में रखा जाता है। उनके रहने के मकान—सिलसिलेवार बैरक—यूरोप के कई डी. पी. शिविरों की तरह पुराने हैं। यद्यपि शिविर में शरणार्थियों से वर्षों तक सम्पर्क रखनेवाली गैरसरकारी और धार्मिक संस्थाओं के भी प्रतिनिधि हैं, तथापि उन्हें अपने बैरकों के परिवारों को खोजने, उनका स्वागत करने, उन्हें नागरिक अमेरिका की कुछ अनुभूति प्राप्त कराने, यहाँ तक कि उनके लिए धर्मपिता, घर और काम ढूँढ़ने के उद्देश्य से मुलाकात करने में भी सैनिकों और नौकरशाही लाल फीतेवालों का बुरी तरह सामना करना पड़ता है।

"न्यूयार्कवासी, शरणार्थियों के स्वागत के लिए क्या कोई अधिक माननीय उपाय नहीं अपना सकते थे? न्यूयार्क के अच्छे इरादों को बीच में ही क्या हो गया? इसे क्यों सेना और नौकरशाही का एक तमाशा बना दिया गया, जबकि इसे एक महान्, स्वैच्छिक और नागरिक कार्य का रूप मिलना चाहिये था और अब भी मिल सकता है?"

किलमर-शिविर की दुरवस्था की एक कहानी से यूरोप में लोगों का अच्छा मनोरंजन हुआ। हमें बतलाया गया कि जब प्रथम जत्थे के शरणार्थी वहाँ पहुँचे—जिनमें से कुछ ने दस दिनों तक रूसी टैंकों से संघर्ष किया था, सौ मील से भी अधिक दूरी पैदल तय की थी, दुर्गम दलदल-क्षेत्र को पार किया था और नहर में तैर कर सीमा पार की थी—तो एक अधिकारी उनके पास शिविर में पहुँचा और गर्वपूर्ण वाणी में बोला—"अब मैं आपको स्वतंत्रता के बारे में कुछ बातें बताना चाहता हूँ।"

यह सुन कर एक शरणार्थी-केन्द्र के एक हंगेरियन ने प्रश्न किया—"क्या वह किसी छज्जे पर खड़ा होकर बोल रहा था?"

क्रान्ति के बाद के प्रथम शोकपूर्ण दिनों में, पोलैण्ड के एक पत्रकार ने, जो-कुछ बीता था, उसकी समीक्षा की। वह इस बात से लज्जित था कि उसका देश हंगेरियनों की बहुत थोड़ी सहायता करने में सफल हुआ था और इस बात

से तो वह बहुत ही क्षुब्ध था कि उसके पड़ोसी राष्ट्र चेकोस्लोवाकिया ने वस्तुतः हंगेरियनों को क्षति पहुँचाने और रूसियों की सहायता करने का प्रयास किया था। उसने लिखा—"हमें सखेद यह बात अवश्य ही स्वीकार करनी चाहिये कि हंगेरियनों ने पोलैण्डवासियों की तरह काम किया, पोलैण्डवासियों ने चेकों की तरह और चेकों ने सूअर की तरह।" इस पर एक पर्यवेक्षक ने अपनी टिप्पणी दी—"लेकिन अमेरिकियों ने तो कुछ भी नहीं किया।"

इस बात से अपने राष्ट्र की कार्रवाइयों का अनुकरण करनेवाला एक अमेरिकी हक्का-बक्का रह जाता था, लेकिन चौथे मनोवैज्ञानिक परिवर्तन ने—राष्ट्रीय आत्मसम्मान की रक्षा ने—उसे बचा लिया; क्योंकि अमेरिकी सरकार अन्त में एक सबल और उदार कार्यक्रम के साथ उपस्थित हुई। अमेरिका में शरणार्थियों का प्रवेश रोकने के लिए जो कानूनी प्रतिबन्ध लगे हुए थे, वे या तो स्थगित कर दिये गये अथवा उनकी उपेक्षा की जाने लगी। वियेना-स्थित हमारे दूतावास ने निष्क्रमणार्थ आवश्यक कागजी कार्यवाहियों को निबटाने में तीव्रता दिखायी, कैथोलिक, यहूदी, प्रोटेस्टेण्ट और साधारण संकटकालीन सहायता-संघटनों ने आपस में समझौता कर लिया और शरणार्थी परिवारों को एकत्र करने तथा अमेरिका में उनके प्रवेश का विश्वास दिलाने का कार्य वस्तुतः चौबीसों घंटे करना आरम्भ कर दिया। अमेरिकी सहायक संस्थाएँ बड़े परिमाण में कम्बल, धन, दवा और खाद्य-सामग्रियाँ आस्ट्रिया भेजने लगीं। हमारे शैक्षणिक संस्थानों ने अमेरिकी कालेजों में छात्रवृत्तियों की व्यवस्था करने के साथ-साथ हंगेरियन छात्रों को स्थान देनेवाली आस्ट्रियाई शैक्षणिक संस्थाओं को भी, जिनका बोझ बहुत बढ़ गया था, नकद अनुदान दिये।

तब, जब ऐसा प्रतीत होने लगा कि अमेरिका जो-कुछ कर सकता था, कर चुका; क्रिसमस के अवसर पर अमेरिका के उप-राष्ट्रपति निक्सन की यात्रा हुई, जिन्होंने लाल फीताशाही में और भी कटौती करायी और आस्ट्रियाइयों को उनके प्रयासों में सम्पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया—साथ ही, अपनी सरकार को शरणार्थियों को स्वीकार करने के मामले में और भी उदार नीति बरतने की सलाह दी। विमान से शरणार्थियों को ले जाने के काम में तेजी बरती गयी और किलमर-शिविर को एक सहृदय सत्कार-केन्द्र में परिवर्तित कर दिया गया। अमेरिका के हजारों परिवारों ने, जिन्होंने पहले कभी किसी हंगेरियन को देखा भी नहीं था, सहसा अपने द्वार खोल दिये और उन अजनबी लोगों का स्वागत किया, जिनके साथ, भाषा न जानने के कारण, वे एक शब्द भी नहीं बोल

सकते थे। इस प्रकार जब अन्ततः अमेरिकी संगठन-कार्य पूरा हो गया, तब शरणार्थियों के साथ व्यवहार भी अच्छा होने लगा और १९५७ के आधे मार्च तक अमेरिका ३० हजार से ऊपर हंगेरियन शरणार्थियों को स्वीकार कर चुका था।

इस प्रकार भावनात्मक चक्र पूरा हुआ—प्रारम्भिक पीड़ा, निराशा, पुनः आश्वासन और अन्त में परम्परागत अमेरिकी सहृदयता का विनम्र गर्व।

लेकिन इस तथ्य से कि एक महान संकट के समय अन्ततः अमेरिका ने अपनी जिम्मेदारियाँ स्वीकार कीं; यह अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य गौण नहीं पड़ जाना चाहिए कि आरम्भ में हम संदिग्धावस्था में थे। शीत-युद्ध-सम्बन्धी अपने रुख पर हमें पुनः विचार करना ही चाहिये। 'रेडियो फ्री यूरोप'-द्वारा हंगेरी के लिए प्रसारित किये गये सभी संदेशों का सतर्कतापूर्वक अध्ययन करने से पता चलता है कि उनमें से कोई भी ऐसा नहीं था, जिसने क्रान्ति के लिए लोगों को अभिप्रेरित किया हो; लेकिन यह सही है कि इस रेडियो ने स्वतंत्रता के संदेश प्रसारित किये और सम्भवतः अब भी कर रहा है। अब क्या इन संदेशों की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने के लिए हम तैयार हैं? अपने शब्दों की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी अपने ऊपर लिये बिना आखिर कब तक हम ऐसे संदेश प्रसारित करते रहेंगे? अमेरिकी सरकार के अधिकारियों को अपनी जिम्मेदारी से क्यों पीछे हटना चाहिये और यह कार्य ऐसे आकस्मिक समुदायों के सुपुर्द क्यों कर देना चाहिये, जो अपने विश्वासों तथा नैतिक और धार्मिक मापदंड के अनुसार शरणार्थियों को चुनने के लिए स्वतंत्र हो जायें? जब किसी व्यक्ति ने अपने खून से यह बात साबित कर दी हो कि वह स्वतंत्रता-प्रिय है, तब अमेरिका में प्रवेश पाने के योग्य समझे जाने के लिए उसे और कितनी तरह की परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करनी चाहिये? और, समकालिक अमेरिकी जीवन के असाधारण गुणों का कितना अंश सन् १८४८ के महान् क्रान्तिकारियों के योगदान का फल है—इन क्रान्तिकारियों में से अनेक हंगेरी के थे—जिन्होंने कमजोर पड़ती हुई ऐंग्लो-सैक्सन जाति में एक नया और शक्तिशाली रक्त-संचार किया एवं उनमें वीरता की एक परम्परा कायम की? सम्भव है, आज फिर हमें हंगेरियन रक्त ग्रहण करने की आवश्यकता पड़ गयी हो।

एक दृष्टि से, अमेरिका ने अभी ही शीत-युद्ध-सम्बन्धी अपने रुख पर पुनर्विचार आरम्भ कर दिया है और अपनी राष्ट्रीय नीति के इस स्पष्टीकरण के लिए हमें अवश्य ही हंगेरियन संकट का आभार मानना चाहिए। आइजनहोवर-सिद्धान्त ने सोवियत-विश्व को सूचित कर दिया है कि मध्य-पूर्व के देशों में

कम्यूनिस्ट उस तरह कार्यरत नहीं रह सकते, जिस तरह वे हंगेरी में रहे थे। पोलैण्ट, चेकोस्लावाकिया, रूमानिया या बल्गेरिया की उसी तरह की घटनाओं के नियंत्रण के लिए अब भी हमारी कोई घोषित नीति नहीं है, लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि वैसी नीति अवश्य बनेगी और इसके लिए हमें पुनः हंगेरी का आभार मानना चाहिये; क्योंकि बुडापेस्ट से आनेवाली कष्टदायक लहरों ने अमेरिका को बहुत बुरी तरह प्रभावित किया है।

एशिया पहुँचनेवाले जिस चक्रवात की मैंने पहले चर्चा की है, उसके बड़े गम्भीर परिणाम हो सकते है। सन् १९४८ से १९५६ के बीच, अनेक अमेरिकी ऐसा अनुभव करने लगे कि एशिया के साथ सहयोग करने का यदि हम और अधिक प्रयास करेंगे, तो वह निरर्थक होगा। इसके कारणों में से एक यह था कि एशियायी नेता तथ्यों को स्वीकार करने से इन्कार करते थे। साधारण शब्दों का सामान्य अर्थों से अलग अर्थ निकाला जाता था और मेल-जोल बढ़ाना बहुत ही कठिन हो गया था; क्योंकि किसी तथ्य का स्वरूप चाहे जो हो, हमेशा यही साबित करने की कोशिश की जाती थी कि अमेरिकी दुष्ट हैं और रूसी संसार के दुर्बल तथा शान्तिप्रिय राष्ट्रों के संरक्षक हैं। ऐसे विचारवालों के साथ केवल साथ निभाने के लिए ही काफी शक्ति की आवश्यकता होती है—इसका मुकाबला करने का काम तो बहुत ही दुष्कर है।

उदाहरण के लिए, अभी हाल में ही एक एशियायी छात्र ने मुझसे काफी उत्तेजित शब्दों में बहस की। उसने कहा—"आपको यह बात अवश्य ही स्वीकार करनी चाहिये कि अमेरिका अपने साम्राज्य पर केवल साम्राज्यवादी उद्‌जन-बम के सहारे नियंत्रण रखता है; जबकि रूस ने अपने नेतृत्व में मैत्रीपूर्ण और शान्तिप्रिय राष्ट्रों के एक बड़े समूह को संगठित किया है, जिसकी एकता उद्‌जन बम के भय पर नहीं, बल्कि श्रमिक-वर्ग के लिए न्याय पर आधारित है। यह कितना बड़ा अन्तर है।"

"अमेरिकी साम्राज्य से आपका क्या तात्पर्य है?"—मैंने पूछा।

उसने जवाब दिया—"जापान, फारमोसा, फिलीपाइन्स, इंग्लैण्ड।"

"क्या आपको विश्वास है कि हम जापान और ब्रिटेन को यह बतलाते हैं कि उन्हें कौन-सा काम अवश्य करना चाहिये?"

"बेशक!"

"और, क्या आपको यह भी विश्वास है कि लौह-आवरण के देश रूसी शासन में प्रसन्न हैं?"

उसने उत्तर दिया—"मैं इसका जवाब नहीं दूँगा। आप लौह-आवरण के देशों की बात करते हैं, जिसका मतलब यह निकलता है कि हंगेरी और रूमानिया-जैसे देश रूस के साथ नहीं रहना चाहते, जबकि वस्तुतः वे उसके साथ हैं। फिर आप रूसी शासन की बात कहते हैं, जैसे यह एक वास्तविक तथ्य ही हो, किन्तु रूस अपने किसी मित्रराष्ट्र पर शासन नहीं करता।"

तब तक हंगेरियन क्रान्ति नहीं हुई थी, इसलिए मेरे पास मसाले जरा कम थे; फिर भी मैंने पूछा—"क्या लिथ्वानिया पर रूसी अधिकार बहुत ही पाशविक नहीं था?"

वह चीख पड़ा—"यह एक पूँजीवादी, लड़ाई लगानेवाला, झूठ है। लगता है कि आपने पड़ोसी देशों के साथ रूस के सम्बन्धों पर स्टालिन का वक्तव्य नहीं पढ़ा।"

"क्या कहा है उसने?"—मैंने पूछा।

"उसने कहा है—" और मास्को में प्रकाशित एक पुस्तिका से वह पढ़ कर सुनाने लगा—"'यदि आप यह समझते हैं कि सोवियत संघ के लोग अपने पड़ोसी देशों का स्वरूप बदल डालने का कोई इरादा रखते हैं, और वह भी शक्ति-प्रयोग के द्वारा, तो आप बुरी तरह गलतफहमी मे हैं। मैं नहीं समझ पाता कि हमारे पड़ोस के राष्ट्र—यदि वे पूर्णतः सुव्यवस्थित हैं—सोवियत जनता के विचारों में कौन-सा खतरा देखते हैं।' अपने पड़ोसी राष्ट्रों के प्रति रूसी आचरण इस प्रकार का है। लेकिन अमेरिका का अपने साथी राष्ट्रों के प्रति व्यवहार कैसा है? उद्‌जन-बमों का विस्फोट कर जापान में आणविक चूर्ण फैला दिया उसने।"

मैंने कहा—"मेरा खयाल है कि वह चूर्ण रूसी बमों के विस्फोट के कारण वहाँ पहुँचा था। क्या आप ऐसा नहीं मानते कि रूस भी वैसे बमों का विस्फोट कर रहा है?"

"हाँ, कर रहा है, पर केवल शान्ति के लिए।"

"क्या आप ऐसा नहीं सोचते कि रूस अपने बमों का प्रयोग अपने-द्वारा शासित लोगों को गुलाम बनाये रखने के लिए करता है?"

इस पर मेरा एशियायी साथी, जिसका मुझसे मतभेद था, हँसा और बोला—"आप लड़ाई लगानेवाले पूँजीवादी लोग सदा 'गुलाम'-जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं। रूस किसी को गुलाम नहीं बनाता। उसके सभी मित्र-राष्ट्रों में निर्वाचन-पर-निर्वाचन हुए हैं और वहाँ के लोगों ने बार-बार वोट देकर यह

सिद्ध कर दिया है कि वे कम्यूनिज्म और रूस के साथ मैत्री चाहते हैं। उन देशों के ९५ प्रतिशत लोगों की यही मंशा सदा प्रकट हुई है।"

"क्या आप इन आँकड़ों पर विश्वास करते हैं?"—मैंने पूछा।

"निस्सन्देह!"—उसने जवाब दिया। ऐसे अनेक विवादों में भाग लेने के बाद, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि रूमानिया, या पोलैण्ड, या हंगेरी-सम्बन्धी जो भी तथ्य एशियायी कम्यूनिस्ट जानते या कहते हैं, वे सब मास्को से आते हैं।

कालान्तर में, मैं उस चतुराईपूर्ण प्रचार के विरुद्ध बहस का प्रयत्न करते-करते थक गया—मेरे पास उन कठोर तथ्यों का अभाव था, जिन्हें मैं अपने विरोधियों से स्वीकार कराता। उनके पास सदा ही रूस-द्वारा तैयार किये गये आँकड़े होते थे और मेरे पास केवल तर्क और सहज विवेक होता था।

मुझे स्मरण है कि कुछ नवयुवा चीनियों से, जो सिंगापुर को कम्यूनिज्म में घसीटने का प्रयत्न कर रहे थे, उग्र वाद-विवाद के बाद यथार्थतः क्रुद्ध होकर मैंने कहा था—"मैं चाहूँगा कि आपको पोलैण्ड या लिथ्वानिया जैसे किसी कम्यूनिस्ट स्वर्ग में ले जाऊँ और पोलैण्डवासियों तथा लिथ्वानियों से जरा यह पूछ कर देखें कि रूसी कम्यूनिज्म के बारे में उनके क्या विचार हैं।"

अब हंगेरियनों से यह प्रश्न करना सम्भव है; क्योंकि हंगेरी ने विश्व की आँखों और बुद्धि के सामने यह बात स्पष्ट कर दी है कि किस तरह एक देश की सम्पूर्ण आबादी रूसी शासन को नापसन्द करती थी। हंगेरियन साक्षी पक्षपात, चतुरतापूर्ण अन्वेषण और प्रयत्नपूर्वक तैयार किये गये तर्कों से परे है। व्यक्तिगत साक्षियों द्वारा प्रस्तुत की गयी रिपोर्टों का भी इसमें पूर्ण अभाव है। हंगेरियन क्रान्ति केवल यही कहती है—"हर २० हंगेरियनों में से १९ को कम्यूनिज्म से घृणा थी।"

यह तथ्य निर्विवाद है और यदि इसका विवरण एशियायी जनता के समक्ष प्रस्तुत किया जाये, तो उस महादेश के इतिहास पर इसका गम्भीर प्रभाव पड़ेगा। एशियायियों को अपने तर्क-प्रेम का गर्व है। उनकी बुद्धि बड़ी तीव्र है और वे यह जानते हैं कि तथ्य उपलब्ध होने पर उन्हें किस रूप में ग्रहण किया जाना चाहिये। वैसे एशियायियों की संख्या बहुत अधिक है, जो अपनी मातृभूमि के कल्याण की कामना करते हैं; क्योंकि वे देशभक्त हैं। बहुत-कुछ उनकी इसी प्रगाढ़ देशभक्ति के कारण रूस को अमेरिका के विरुद्ध प्रचार की फसल बोने, बढ़ाने और उसका फल प्राप्त करने में बड़ी सुविधा हुई। रूस का

तर्क था—"आम एशियायियों ने भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद, हिन्दचीन में फ्रांसीसी उपनिवेशवाद और हिन्देशिया में डच उपनिवेशवाद का रूप देखा है। अमेरिका उन तीनों राष्ट्रों के संयुक्त रूप से भी दुगुना है और उसका औपनिवेशिक आतंक भी दूना बुरा है।" रूस की प्रचारात्मक विजय कितनी विराट थी, इसका अनुभव केवल उन्हीं लोगों को हो सकता है, जिन्होंने अपने कई वर्ष उससे संघर्ष करने में बिताये। एशिया के प्रखर-बुद्धि लोग, कोई और तथ्य उपलब्ध नहीं होने के कारण, प्रायः रूसी तर्क को स्वीकार कर लेते थे।

किन्तु अब उससे भी सबल एक तर्क, हंगेरी का तर्क, सामने उपस्थित है और यह आवश्यक है कि हंगेरी-सम्बन्धी तथ्य एशिया पहुँचें एवं सुदूरतम बाजारों तक उनका प्रसार हो। और, जिन तथ्यों पर हमें अवश्य ही जोर देना चाहिये, वे ये हैं—क्रान्ति का नेतृत्व करनेवाले बुद्धिवादी लोग थे, क्योंकि कम्यूनिज्म ने उनके साथ धोखेबाजी की थी; क्रान्ति का समर्थन सीपेल के मजदूरों ने किया था, क्योंकि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ, केवल यही बात नहीं थी, बल्कि जो-कुछ उन्हें पहले उपलब्ध था, उसे भी उन्होंने खो दिया; और एक पड़ोसी राष्ट्र की सरकार में बुरी तरह हस्तक्षेप करनेवाले वे रूसी टैंक थे, जिन्होंने बुडापेस्ट नगर का ध्वंस कर दिया। ये तथ्य यदि एशिया में लोगों को ज्ञात हो जायें, तो स्थिति में अन्तर आ सकता है।

लेकिन दुर्भाग्यवश, हंगेरियन क्रान्ति के एशिया में प्रभाव के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता; क्योंकि जब अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के बारे में किये जानेवाले रूसी प्रचार का पर्दा फाश हुआ, तब एशिया की दृष्टि किसी दूसरी ओर थी और हंगेरी के परिणाम, सुदूरतम बाजारों की तो बात अलग, मुख्य-मुख्य शहरों में भी नहीं पहुँच सके। इसका कारण यह था कि ठीक इसी बेसमय में गणतंत्र देशों ने मिस्र पर हमला कर दिया।

निस्संदेह, इस कार्रवाई ने हंगेरियन क्रान्ति के कारण एशिया में उपलब्ध हो सकनेवाले नैतिक मूल्यों को विफल कर दिया। बुडापेस्ट की क्रान्ति के प्रारम्भिक काल में मैंने एशिया के अपने कई मित्रों को पत्र लिखे थे, जिनमें मैंने कहा था—"मुझे आशा है कि इन दिनों आपको यह पढ़ने को मिल रहा होगा कि कम्यूनिज्म के बारे में हंगेरियन वस्तुतः क्या विचार रखते हैं। अब तो आप समझ रहे होंगे कि मेरे कहने का तात्पर्य क्या था।"

लेकिन इससे पहले कि मेरे पत्र भेजे हुए स्थानों में पहुँचते, मिस्र पर

हमला हो गया और मेरे पत्रों के उत्तर में मित्रों ने हंगेरी का उल्लेख तक नहीं किया। उनके सामने कुछ और बड़ी चीज उपस्थित थी और उल्टा उन्होंने मुझसे प्रश्न किया था—"अब आप देख रहे हैं कि साम्राज्यवाद से हमारा तात्पर्य क्या था?"

जब मिस्री आक्रमण के इतिहास को अन्तिम रूप प्राप्त हो जायेगा, तब निश्चय ही दोषों का बँटवारा, जिस रूप में आज हम उसे देखते हैं, उससे काफी भिन्न रूप धारण करेगा। लेकिन उस असाधारण कार्य का मूल्यांकन करनेवाले इतना अवश्य कहेंगे कि मिस्री समस्या ने गणतंत्रों को दो अप्रत्याशित क्षति उठाने के लिए बाध्य कर दिया। पहली यह, कि मिस्र ने विश्व का ध्यान हंगेरी की ओर से हटा दिया और इस प्रकार वह वीर राष्ट्र चुपचाप, दूसरों की गैर-जानकारी में, नष्ट होने के लिए विवश हो गया। उसकी वीरत्वपूर्ण कार्रवाई से जो नैतिक सबक उपलब्ध हो सकते थे, वे अधिकांशतः लुप्त हो गये और उनसे वे लोग अनभिज्ञ रह गये, जिन्हें सर्वाधिक लाभ पहुँच सकता था। दूसरी बात, साम्राज्यवादी आक्रमण की पुनरावृत्ति के कारण एशिया अपने उत्तर में स्थित उस अपेक्षाकृत बड़े साम्राज्यवाद से अनभिज्ञ रह गया, जिसकी कुछ विशेषताएँ अचानक ही प्रकाश में आ गयी थीं।

यह तथ्य और भी क्लेशकारी है कि ये भीषण क्षतियाँ एक ऐसे प्रयास के कारण हुईं, जो असफल हो गया। इस दोरुखी समस्या में अमेरिकी नीति का जो सारतत्त्व मेरे एक मित्र ने निकाला था, वह मुझे आज भी स्मरण है। अपने पक्ष के नैतिक पतन से दुःखी होकर उसने कहा था—"जब हमारे खुफिये इस बात का पता नहीं लगा पाते कि हंगेरी में हमारा शत्रु रूस क्या करने जा रहा है, तो निश्चय ही यह खेद की बात है। लेकिन जब हमारे कूटनीतिज्ञ इतना भी नहीं मालूम कर पाते कि हमारे मित्र राष्ट्रों ने मिस्र में क्या किया है, तब यह अत्यन्त भयानक बात हो जाती है।"

यह सम्भव है कि इस दुर्घटना के फलस्वरूप अमेरिका एक अधिक सुदृढ़ विदेशी नीति अपनाये और यद्यपि हंगेरी की साहसिक कार्रवाई के कारण एशिया में जो लाभ हमें स्वभावतः ही उपलब्ध होते, वे बहुत-कुछ विनष्ट हो गये हैं, तथापि हम धैर्यपूर्वक अपने एशियायी मित्रों के साथ, हंगेरी से प्राप्त हुए सबकों के बारे में, बातचीत आरम्भ कर सकते हैं। हम हार्दिक विनम्रता के साथ कह सकते हैं—जैसी कि मुझे आशा है—कि जिस तरह हमें उस कठिन मार्ग की जानकारी प्राप्त हुई, हमें विश्वास है कि आप भी उसे उसी रूप में ग्रहण करेंगे।

हमें इस बात का भी सदा ध्यान रखना चाहिये कि उससे जो मुख्य सबक हमें प्राप्त हुआ है, वह गौण न हो जाये—वह यह कि ११ वर्षों के बाद भी अधिकांश हंगेरियन कम्यूनिज्म से घृणा करने लगे; लेकिन इस तथ्य को अस्वीकार करके रूसियों ने वहाँ अपने टैंक भेजे और एक देश को नष्ट कर दिया।

हंगेरियन क्रान्ति के बारे में एक और ऐसा तथ्य है, जो एशिया पर लागू होता है, लेकिन इसका परिणाम इतना दुरूह है कि मैं केवल इसका उल्लेख-भर कर देना चाहता हूँ, यद्यपि यह इस योग्य है कि इसके विषय में अधिक विचार-विमर्श किया जाये। मेरा खयाल है कि वे राष्ट्र, जिनका एशिया से किसी भी तरह का सम्बन्ध है, आज अपने से ये सामयिक प्रश्न अवश्य कर रहे होंगे।

यदि ९५ प्रतिशत हंगेरियन अपने यहाँ के कम्यूनिज्म से घृणा करते थे, तो लाल चीन के कितने प्रतिशत लोग अपने यहाँ के कम्यूनिज्म से घृणा करते हैं? यदि हंगेरियन सेना के एक-एक व्यक्ति ने कम्यूनिज्म का साथ छोड़ दिया, तो कितने प्रतिशत चीनी सैनिक उसके प्रति वफादार रहेंगे? यदि हंगेरी में केवल पाशविक शक्ति-प्रयोग से कम्यूनिज्म को जिन्दा रखा जा सकता है, तब क्या लाल चीन में भी उसी तरह के शक्ति-प्रयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती होगी और क्या वहाँ के लोग भी उससे नफरत नहीं करते होंगे? और, इस प्रश्न को जरा विस्तृत रूप में देखें, तो यदि हंगेरियन क्रान्ति का एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य वहाँ आये हुए उत्तरी कोरियायी छात्रों का रूसियों से स्वेच्छापूर्वक संघर्ष करना था, तो उत्तरी कोरिया में कम्यूनिज्म की स्थिति कितनी सुदृढ़ है?

फिलहाल तो ये प्रश्न आलंकारिक-से प्रतीत होते हैं, पर कहा नहीं जा सकता कि कब ये वास्तविक स्थिति के रूप में प्रकट होंगे और सभी राष्ट्रों को इनका जवाब देना पड़ेगा। चूँकि ऐसे मामलों में सारा संसार परस्पर-सम्बद्ध है, अतः हम यूरोप में इनका जो उत्तर देंगे, वही उत्तर एशिया में भी लागू होंगे।

इस परस्पर-सम्बद्धता के बारे में एक बुद्धिमान हंगेरियन ने जो-कुछ कहा, उसका मुझ पर बड़ा असर हुआ है। उसने कहा—"कुछ लोगों का कहना है कि हमारी क्रान्ति सन् १८४८ में कोसुथ और पेटोफी से शुरू हुई और सदा चलती रहेगी। दूसरे लोग कहते हैं कि यह ६ अक्तूबर, १९५६ को आरम्भ हुई। उसी दिन लैज्लो रैक की कब्र को दो सौ देशभक्तों ने सलामी दी थी। लैज्लो रैक एक राष्ट्रवादी कम्यूनिस्ट था, जिसे विद्रोही मान कर स्टालिन ने प्राणदण्ड दिया था। उसकी स्मृति को ख्रुशेव ने स्पष्ट किया और उसके सम्मान की पुनःप्रतिष्ठा की। लेकिन कैसे? ३ अक्तूबर को उसकी विधवा पत्नी को

एक विशाल कब्र के पास, जो कई वर्ष पहले की थी, ले जाया गया। वहाँ उससे कम्यूनिस्ट-नेताओं ने कहा—'हम लोग तुम्हारे पति के सुनाम का पुनरुद्धार करने जा रहे हैं। इसमें से कुछ हड्डियाँ चुन लो, जिन्हें हम तुम्हारे पति की कह सकें।' अन्दाज पर चुनी गयीं उन्हीं हड्डियों को उस दिन हम लोगों ने, अपने हृदय में एक कसक लेकर, सलामी दी थी।

"यह सम्भव है कि रैक की शुद्धीकरण-विधि की भावना ही नागरिक उपद्रवों में परिणत हो गयी हो, लेकिन यह अधिक सम्भव प्रतीत होता है कि हमारी क्रान्ति सन् १९५३ में आरम्भ हुई, जब पूर्वी जर्मनी के आन्दोलन से हमें इस बात का ज्ञान हुआ कि कठोर अधिनायकवाद के विरुद्ध नागरिक क्या-क्या कर सकते हैं। इसके बाद हमारा संकल्प तब दृढ़ हुआ, जब पोजनान में पोलैण्डवासियों ने भी उन्हीं बातों को सिद्ध किया। आप समझ रहे हैं न, कि किस तरफ मेरा इशारा है? पूर्वी जर्मनी के जिन लोगों ने रूसी टैंकों पर पत्थर फेंके, वे बेचारे सफलता की कोई उचित आशा के बिना ही मारे गये, लेकिन अपने काम से उन्होंने पोलैण्डवासियों को प्रेरणा दी, जिन्होंने सफलता पायी। मुझे पूरा विश्वास है कि पोलैण्डवासी भी केवल पोलैण्डवासियों की ही तरह संघर्षरत हुए, लेकिन उनका सर्वाधिक प्रभाव हम हंगेरियनों पर पड़ा। अब यह कौन कह सकता है कि संसार को हमने जो सबक दिया, वह कहाँ जा कर समाप्त होगा? हमें यह नहीं मालूम कि हमारा क्रान्ति-बीज किस भूमि में जा कर पुष्टता प्राप्त करेगा, लेकिन इतना निश्चित है कि कहीं-न-कहीं जाकर वह विकास अवश्य पायेगा। यहाँ तक कि रूस में भी अब विस्फोट सम्भव है। क्योंकि हम हंगेरियनों ने जो-कुछ किया, वह पोलैण्डवासियों से सीख कर और उनकी जानकारी जर्मनों द्वारा साबित की गयीं बातों पर आधारित थी...कुछ भी हो, हमने रास्ता दिखा दिया है।"

जब हम अमेरिकी अपनी भावी जिम्मेदारियों पर विचार करें, तब हमें बुडापेस्ट की महिलाओं को अवश्य ही याद रखना चाहिये। उस विनष्ट नगर में, जहाँ मुर्दनी छायी थी, उस दिन धूप निकली हुई थी। छः क्लेशमय सप्ताह उस क्रान्ति को आरम्भ हुए बीत चुके थे और फिर भी सड़क पर के बच्चे और सीपेल के मजदूर रूसियों को ललकार रहे थे। बुडापेस्ट को 'आत्मघाती नगर' का नाम मिला था; क्योंकि वहाँ ऐसा प्रतीत होता था, मानो सारे लोग मृत्यु-पर्यन्त कम्यूनिज्म का विरोध करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हैं। ऐसे साहस को देख कर सारा संसार चकित था।

रूसी टैंकों की जबर्दस्त वापसी के ठीक एक महीना बाद ४ दिसम्बर को काली पोशाक पहने बुडापेस्ट की महिलाएँ श्रद्धा के पुष्प चढ़ाने एक अज्ञात हंगेरियन सिपाही के मकबरे के पास पहुँचीं। मशीनगनों और टैंकों से लैस रूसियों ने उन्हें रोकने का प्रयत्न किया, लेकिन वे फूलों के छोटे गुच्छे घुमाती हुई आगे बढ़ती गयीं। वे बोल भी रही थीं—"तुम्हारे पास गन हैं, हमारे पास केवल फूल। फिर तुम्हें भय किस बात का है?"

इस पर एक रूसी सैनिक ने उत्तेजना में आकर उन महिलाओं में से एक के पैर में गोली मार दी। लेकिन इसका उन काली पोशाकवाली महिलाओं पर कोई असर नहीं पड़ा—वे चुपचाप बढ़ती गयीं। एक दूसरा रूसी सिपाही महिलाओं को रोकने के लिए चिल्लाया, लेकिन जब उन्होंने उसकी भी अवज्ञा की, तो उसने एक महिला की बाँह पकड़ ली। महिला ने एक झटके के साथ अपने को उससे छुड़ा लिया, क्रोध से भर कर उस पर एक नजर डाली और तब उसके चेहरे पर थूक दिया।

११. क्या यह सब सच हो सकता था?

सम्भवतः दो दृष्टियों से मैं यह कहानी लिखने के लिए उपयुक्त लेखक था। मैं समकालीन समस्याओं के मूल्यांकन में सतर्कता बरतता हूँ और यदि कोई व्यक्ति अपने बारे में कोई शानदार कहानी सुनाता है, तो उस पर एकदम विश्वास न करके संदेहशील रहना मैंने सीखा है।

मुझमें यह सतर्कता की वृत्ति मेरी शिक्षा के कारण है। मैं एक छोटे उदार शांतिवादी कालेज में दाखिल हुआ था, जिसे अपने एक स्नातक ए. मिचेल पामर के कारण काफी क्षति पहुँची थी। उन्होंने उडरो विल्सन के युद्धकालीन एटर्नी-जनरल के रूप में कुछ कुख्याति प्राप्त की थी। श्री पामर ने, जो स्वयं एक अच्छे शांतिवादी थे, युद्धकाल में जो-कुछ सुना, उस पर विश्वास किया था और युद्ध के बाद कुछ ऐसी अबुद्धिमत्तापूर्ण कार्रवाइयों में भाग लिया था, जिन पर बाद में अमेरिकी सरकार और जनता ने खेद व्यक्त किया। उनके वैधानिक कार्यों की जो आलोचना हुई, स्वयं उनके भूतपूर्व प्राध्यापकों ने भी उनकी वैसी ही आलोचना की—उसे मैं कभी भूल नहीं सका हूँ।

जब मैं कालेज में था, तब युद्धकालीन प्रचार के लिए जार्ज क्रील समिति ने जो सेवा-कार्य किये थे, उनका मैंने व्यक्तिगत रूप से अध्ययन किया था और मुझे वे विपत्तियाँ भी दिखाई पड़ी थीं, जिनमें कोई लेखक—युद्धकाल में उसे बतायी जानेवाली बातों पर स्वयं गम्भीरतापूर्वक विचार न करके किसी निष्कर्ष पर पहुँचने के कारण—पड़ सकता था। मैंने बेल्जियम की भयावनी कहानियों के विवेचन के समय इसका बराबर ध्यान रखा और उन प्रथम अमेरिकी अवर-स्नातकों (अण्डर ग्रेजुएट्स) में स्थान प्राप्त किया, जो इतिहासज्ञों के पुनरावृत्ति-सिद्धान्तों का अध्ययन कर रहे थे और जिन्होंने प्रथम विश्वयुद्ध के समय बतायी गयीं कुछ बातों पर यथार्थतः सन्देह प्रकट करना आरम्भ कर दिया था।

इसी पृष्ठभूमि में मैंने हंगेरी की कहानी पर भी गौर किया। यदि मैंने कहीं कुछ असत्य बातें स्वीकार कर ली हैं, यदि मैंने अनभिज्ञतावश उनको दुहरा दिया है और यदि मैं चतुर प्रचारकों-द्वारा बेवकूफ बनाया गया हूँ, तो इन सब का दोषी मैं ही होऊँगा, दूसरा कोई नहीं। इतिहास के ज्ञान और अतीत की

बातों की जानकारी, दोनों ही मामलों में प्रारम्भ में मुझे सचेत कर दिया गया है। अतः यदि बाद में कोई बड़ा आलोचक यह साबित कर दे कि किसी ने मुझे बेवकूफ बनाया है, तो सार्वजनिक रूप से भले ही मुझे अपमानित न किया जाये, किन्तु इस गलती के लिए मेरी तीव्र निन्दा तो वांछनीय है ही।

अपने संदेहशील स्वभाव के कारण, जहाँ भी व्यक्तिगत कहानियों का प्रसंग आया है, मैंने पाया है कि अधिकांश लोग अपने बारे में बतलाते समय बहुत बढ़ा-चढ़ा कर बोलते हैं। इस तरह की अनेक कहानियों के सम्पर्क में आने के बाद मैं तो अब इस निष्कर्ष पर पहुँच गया हूँ—"यदि कोई मुझसे कहेगा कि आज कौन-सा दिन है, तो मैं उस पर विश्वास नहीं करूँगा।" मेरे साथ काम करनेवाले दुभाषिये इस बात के गवाह हैं कि किस धैर्य के साथ हम एक ही विषय को लेकर, एक की बजाय, दर्जनों हंगेरियनों से प्रश्न करते थे। हम चार-पाँच व्यक्ति वियेना में आपेरा हाउस के निकटस्थ जोसेफ स्मट्नी रेस्तराँ में एक बड़ी मेज के इर्द-गिर्द बैठते थे और एक ही समस्या पर चार-चार घंटे तक विचार करते थे। इसके बाद पुनः दूसरे चार शरणार्थियों को बुलाते और फिर दूसरे चार को, और इस प्रकार एक ही विषय पर काफी लम्बे समय तक विचार-विनिमय करते।

जब मैंने हंगेरियन विद्रोह की दुरूहता देखी, तो अपनी मदद के लिए एक अत्यन्त कुशल अनुसन्धान-विशेषज्ञ की, जो पाँच भाषाएँ बोलता था, माँग की। जिन हंगेरियनों से मैं वार्तालाप कर चुका था, उनसे उसने कभी बातचीत नहीं की। वह अनायास ही शिविरों से कुछ शरणार्थियों को बुला लेता था और उन्हीं प्रसंगों को लेकर उसी ढंग से प्रश्न करता था। यदि कहीं उसके विवरण से मेरा विवरण मेल नहीं खाता था, तो हम चार-पाँच नये हंगेरियनों को बुलाते थे और उनके समक्ष दोनों के अंतर को पेश करते थे। हर प्रश्न को लेकर हम विचार करते थे और इस प्रकार अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचते थे। साथ ही, लगभग हर मामले में हम उन प्रमाणित चित्रों और कागजों पर भी गौर करते थे, जिनसे इस बात की परीक्षा हो जाती थी कि एक व्यक्ति जो-कुछ कह रहा था, वह सही था या नहीं; या फिर उसके कथनों की पुष्टि किसी तीसरे व्यक्ति से करा लेते थे। इसका सर्वाधिक नाटकीय उदाहरण, कुख्यात मेजर मीटबाल की कहानी की प्रामाणिकता के विषय में मेरे द्वारा दो सप्ताह तक किया गया अनुसन्धान था। और, सबसे अधिक विश्वसनीय उदाहरण था, श्रीमती मैरोथी का यह असाधारण दावा कि इम्रे होरवाथ के पुत्र ने उसके साथ भागने का निश्चय किया था और जिसकी पुष्टि सात सप्ताह बाद हुई थी।

जब प्रत्येक घटना के सम्बन्ध में मेरी अन्तिम रिपोर्ट तैयार हो गयी, तब उस पर हंगेरियन विशेषज्ञों के दो नये समुदायों ने पुनः विचार किया। उन्होंने पूर्णतः स्वतंत्र रूप में यह काम किया और मेरे एक-एक शब्द पर गौर किया। उनमें से प्रत्येक समीक्षक उस समय बुडापेस्ट में ही था, जब ये घटनाएं घट रही थीं और कई मामलों में तो वे उन घटनाओं का दिन और समय तक जानते थे तथा उन व्यक्तियों से भी परिचित थे, जिनके विषय में मैंने लिखा था।

अब इन कहानियों में से प्रत्येक की प्रामाणिकता पर मैं जरा अपने व्यक्तिगत विचार व्यक्त कर दूँ। युवा जोसेफ टोथ उन तीन १८ वर्षीय स्वातंत्र्य-सैनिकों के अनुभवों का प्रतिनिधित्व करता है, जिनसे मैं ऐंडाऊ-सीमा पर मिला था। वे अपनी माँ या बाप के कहने पर बुडापेस्ट से भागे थे और उनमें से प्रत्येक केवल क्रान्ति में एक बड़ा हिस्सा लेनेवाला ही न था, बल्कि अपने भाइयों और बहनों को भी अपने पीछे छोड़ आया था, जिन्हें ए. वी. ओ. पकड़ सकता था। उन तीनों लड़कों ने 'जोसेफ टोथ' नाम की सृष्टि अपनी ही उम्र के उन दो लड़कों के सम्मान में की थी, जो क्रांति में मारे गये थे। उनके द्वारा बुडापेस्ट में किये गये साहसिक कार्यों में से केवल कुछ अंशों का मैंने यहाँ उल्लेख किया है, वह भी काफी जबर्दस्त जाँच-पड़ताल के बाद। वे लड़के जानते थे कि मैं उनमें से किसी एक लड़के का, केवल एक वास्तविक नाम का, ही उपयोग करना चाहूँगा; लेकिन उन्हें प्रतिशोध का भय था; अतः इस काल्पनिक नाम पर उन्होंने यह समझौता किया।

इस्तवान बालोग और पीटर जीजेती बड़े साहसी व्यक्ति थे। लेकिन ये दोनों ही बनावटी नाम हैं—जीजेती के मामले में तो घटनाएँ भी बदल देनी पड़ीं; क्योंकि ऐसा न होने से दूसरे कुछ लोगों के भी फँस जाने की आशंका थी। फिर हर कहानी की दूसरे बुद्धिवादियों से पुष्टि करवायी गयी, जिन्होंने कुछ सामग्रियाँ भी दीं।

'चाकलेट का छोटा टुकड़ा' जोकी एक बहुत ही बहादुर नवजवान था। उसने कहा—"अवश्य, आप पुस्तक में मेरा असली नाम दीजिये। मैं चाहता हूँ कि वे जानें कि उनकी सड़ी-गली व्यवस्था के विरोध में मैंने क्या-क्या किया।" जब कई घंटे बातचीत करने के बाद मुझे ज्ञात हुआ कि उसकी माँ और भाई बुडापेस्ट में ही रह गये थे, तब मैंने उसे अपना विचार बदलने के लिए कहा; लेकिन वह ज्यों-का-त्यों सब-कुछ प्रस्तुत करने के लिए जोर देता रहा। उसने कहा—"ऐसा करने से मेरे साथियों को यह मालूम हो जायेगा कि

मैं सकुशल वहाँ से निकल आया और वे मेरी माँ को इसकी सूचना दे देंगे।" मेरा खयाल है कि जोकी ने मुझसे जो-कुछ कहा, उसमें से अधिकांश सत्य था, लेकिन मैंने उसके उन तूफानी दिनों में से केवल किलियन-बैरक से सम्बन्धित भाग का ही उपयोग किया। उस आक्रमण के तथ्यों और उसमें जनरल मेलेतर के भाग लेने की बात का वहाँ उपस्थित चार अन्य सैनिकों और समीक्षकों में से भी एक ने समर्थन किया है। जब जोकी ने मुझसे कहा कि वह अमेरिका जाने का विचार रखता है, तो मुझे खुशी हुई। वह बिना किसी कठिनाई के बोस्टन की नृत्यशाला या हुल्लास के किसी विश्राम-कक्ष के उपयुक्त बन जायेगा और आज से दस वर्ष बाद उसके पास अपनी कार हो जायेगी तथा वह रिपब्लिकन उम्मीदवार को मतदान करेगा।

जोल्तान और इवा पाल, तीन युवा दम्पतियों की, जिनमें से दो से मेरी भेंट ऐंडाऊ में हुई, मिश्रित काल्पनिक सृष्टि हैं। वे छहों युवा प्राणी इस बात से भयभीत थे कि उन्हें बुडापेस्ट में पहचान लिया जायेगा, तो उनके माता-पिता को परेशान किया जायेगा। इन दम्पतियों के साथ मैंने कई घंटे बिताये और मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि उन्होंने जो-कुछ भी कहा, सही था; लेकिन जो सर्वाधिक मर्मभेदी कहानी उन्होंने मुझे सुनायी, उसका मैंने उपयोग नहीं किया है। दो दम्पतियों से एक लम्बी वार्ता के पश्चात् मैंने लक्ष्य किया कि दोनों ही पत्नियों में से किसी की उँगली में विवाह की अँगूठी नहीं थी; इसलिए बिना किसी हिचकिचाहट के, क्योंकि स्वभावतः ही किसी व्यक्ति को ऐसी चालों पर संदेह हो उठता है, मैंने कहा—"आप लोग वस्तुतः विवाहित नहीं हैं! ठीक है न? आप लोग साथ-साथ आये और ये कहानियाँ गढ़ लीं—क्यों, यही बात है न?"

इस पर वे चारों विस्मित हो मेरी ओर देखने लगे और बोले—"हम... यह तो साबित नहीं कर सकते कि हम विवाहित हैं, लेकिन इतना अवश्य है कि हम शादीशुदा हैं।" तभी एक पत्नी ने अपने पति से कहा—"अरे हाँ, तुम्हारे पास वह कागज तो है।" और, उसने एक सरकारी कागज उपस्थित किया, जिससे यह प्रकट हो जाता था कि वह और उसकी पत्नी विवाहित दम्पति थे।

"लेकिन आपने ऐसा प्रश्न क्यों किया?"—उसने पूछा।

"इसलिए कि इन दोनों लड़कियों में से किसी के भी पास मैं विवाह की अँगूठी नहीं देख रहा हूँ।"—मैंने जवाब दिया।

लड़कियों ने जवाब दिया—"कम्यूनिज्म में हमारे-जैसे युवा दम्पति विवाह की अँगूठी खरीदने की हैसियत नहीं रखते।"

लेकिन बाद में, तीसरे दम्पति के पास, जिनका उपयोग मैंने कहानी के एक भाग के लिए किया है, मैंने विवाह की अँगूठी देखी। उस वधू ने कहा—"हाँ सही है, लेकिन जो दम्पति विशेष धार्मिक प्रवृत्ति के होते थे, वे सब-कुछ खोकर भी विवाह की अँगूठी खरीदने की व्यवस्था कर लेते थे।" इसी कारण कुछ दम्पतियों के पास अँगूठियाँ थीं।

सिगरेट और राइफलधारी इम्रे जीजर को, जो मौत को गले से लगाये फिरता था, मैंने उसी समय देखा, जब निकेल्सडर्फ में उसने सीमा पार की थी। मैंने उसे रेल की पटरियों के बीच से होकर आते देखा और मैं नहीं कह सकता कि इस तरह आने पर भी वह गोलियों का शिकार होने से कैसे बच गया। वार्तालाप में वह बड़ा प्रफुल्ल जवान था। उसने मुझसे अपने असली नाम का ही प्रयोग करने को कहा, लेकिन उसके भी माँ-बाप और मित्र बुडापेस्ट में थे, जिन्हें क्षति पहुँचायी जा सकती थी और चूँकि परवर्ती दिनों के संघर्ष में उसने बड़ा जबर्दस्त हिस्सा लिया था, हम दोनों ही इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उसे गुमनाम ही रहना चाहिये।

सीपेल का आदमी, ज्योर्जी जाबो, उन अत्यधिक भले लोगों में से था, जिनसे मिलने का सौभाग्य मुझे अब तक प्राप्त हुआ है। अपनी अधिकांश बातों के प्रमाण-स्वरूप उसके पास कागजात थे और उसके चेहरे पर सच्चाई की एक ऐसी छाप थी, जिससे हम सब लोग, जिन्होंने उससे बातें कीं, प्रभावित हुए बिना न रह सके। दूसरे लोगों ने भी उसकी सभी बातों की—केवल उसके हंगरी छोड़ने के कारणों को छोड़ कर—पुष्टि की; लेकिन उन बातों में से कई को मैंने जान-बूझ कर बदल दिया है।

हैजोक-परिवार, निस्संदेह, अपने नाम के अनुरूप एक विलक्षण परिवार था। मैं पहले उस परिवार के लोगों से पुल के पास मिला और फिर उस रेस्तराँ में, जहाँ श्रीमती लिलि ब्राउन ने उन्हें ले जा कर रखा था। बाद में, मैंने उन्हें वियेना में देखा। मुझे इसका विश्वास नहीं होता था कि ९ और १३ वर्ष के बच्चे उतनी बातें जान सकते थे, जितना वे जानते थे। इसीलिए मैंने उनसे एकान्त में भी प्रश्न किये। इस कहानी की सच्चाई के बारे में कोई प्रश्न नहीं उठ सकता।

श्रीमती मेरिया मैरोथी भी एक सच्चा नाम है और उन्हीं के अनुरोध पर

प्रकट किया गया है। कोयला-खान का मजदूर, जिसकी अमेरिकी सूट की कहानी ने सभी सुननेवालों को भयभीत कर दिया, पारिवारिक कारणों से अपने असली नाम को प्रकट करने का साहस न कर सका; लेकिन अपने कथन के बारे में उसके पास भी संतोषजनक प्रमाण थे और उसकी बातों की दूसरे लोगों-द्वारा पुष्टि भी हुई।

अब बच जाते हैं वे दुःखी लोग, जो, ए.वी.ओ. के सदस्य के रूप में उपस्थित होते हैं। फेरेंक गबर, रेज्क में उसने जो प्रतिशोधात्मक कार्रवाईयाँ देखी थीं, उनसे इतना भयभीत था कि उसके बारे में हमने जो प्रारम्भिक 'नोट' तैयार किये, उनमें भी उसके असली नाम का प्रयोग नहीं किया। रेज्क में उसके जीवन से सम्बन्धित बातें भले ही कपोल-कल्पना हों; लेकिन रेज्क में उपलब्ध साधारण वातावरण की बातें नहीं। उसका अस्तित्व था और ठीक उसी रूप में, जिस रूप में मैंने उसका उल्लेख किया है। विश्व-चेम्पियन खिलाड़ी की कहानी मेरे लिए विशेष रूप से बड़ी मर्मान्तक थी; क्योंकि इसे बहुत अधिक सादगी से मेरे समक्ष प्रस्तुत किया गया था। खिलाड़ी के रूप में उसके रिकार्ड का प्रमाण, उसके गोली के घावों के निशानों का प्रमाण, बलात् श्रम कराये जाने के बारे में उसके कथन का प्रमाण और मेजर मीटबाल के बारे में उसकी रिपोर्ट पर और साक्षियाँ तथा प्रमाण प्राप्त करने पर मैंने काफी बल दिया। लेकिन यह उसका दुर्भाग्य ही था कि सारी बातें सच प्रमाणित हुई। ए.वी.ओ. का आदमी टिबर डोनाथ, जैसा कि मैंने पहले कहा है, एक सर्जित पात्र है, जिसके लिए केवल मैं जिम्मेदार हूँ। उसकी सृष्टि काफी अनुसन्धान, कुछ गुप्त कागजात और ए. वी. ओ. का उल्लेख करनेवाले हर हंगेरियन से मेरे द्वारा किये जानेवाले निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर के आधार पर की गयी है। वह प्रश्न था—"आप कहते हैं कि हंगेरी के नवजवान इतने देशभक्त और पराक्रमी थे; लेकिन ये ए. वी. ओ. के १५ आदमियों के चित्र हैं—ये सब नवजवान हैं और साथ ही हंगेरियन भी; इनके बारे में आप क्या कहते हैं?"

तदुपरान्त हम उन हंगेरियनों की जानकारी के ए. वी. ओ. वालों के खाके प्रस्तुत करते—मोड़ पर पुलिस के खड़े होने की जगहवाला ए. वी. ओ. का आदमी; कारखाने में स्थित ए. वी. ओ. का आदमी; लोगों के निवासस्थान की जाँच करनेवाला ए. वी. ओ. का आदमी; रेज्क-स्थित ए. वी. ओ. का आदमी; ए. वी. ओ. का वह आदमी, जिसने एक कोयला-खान के मजदूर को इसलिए ३३ दिनों तक मारा-पीटा कि उसका सूट उसे पसन्द न था और ए. वी. ओ.

का वह आदमी, जिसने एक महिला का हाथ तोड़ दिया और दाँत तोड़ डाले। मेरा खयाल है कि एक ए. वी. ओ. के आदमी की सही-सही कल्पना मैं कर सकता हूँ।

यहाँ मैं एक अतिरिक्त तथ्य का उल्लेख करना चाहूँगा। इनमें से अधिकांश आदमियों के हंगेरी से बाहर निकलने में मैंने व्यक्तिगत रूप से सहायता पहुँचायी थी। मैंने उन्हें ऐंडाऊ में, उन जाड़े के दिनों में, नहर के तट पर पाया और पुल पार करने में उनकी मदद की। जिन हंगेरियनों से मैंने बातचीत की, उनके चुनाव में मैं अपनी पसन्दगी-नापसन्दगी को कोई स्थान नहीं देता था। उदाहरणस्वरूप, मुझे अपना सर्वोत्तम दुभाषिया सीमा से १०० फीट इधर, उसके स्वतंत्र क्षेत्र में आने के कुछ ही मिनट बाद, प्राप्त हुआ।

मुझे ये कहानियाँ केवल संयोगवश ही मिलीं और जब मैं सैकड़ों हंगेरियनों से बातचीत कर चुका तथा जब मैंने काफी परिश्रम करके यह पता लगा लिया कि उनकी कहानियाँ परस्पर-सम्बद्ध थीं एवं एक-दूसरे की पुष्टि करती थीं, तब मैं दो निष्कर्षों पर पहुँचा।

प्रथम, यह बहुत सम्भव है कि जिस किसी से भी मैं मिला, उसने मुझसे झूठी कहानी ही कही हो; लेकिन सम्भावना का यह एक नियम है कि यदि किसी सत्य प्रतीत होनेवाली बात की अस्वीकृति से स्पष्टतः मूर्खता प्रदर्शित होती हो, तो जाँच करनेवाले को उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। यदि आप यह कहना चाहते हैं, जैसा कि रूसी कहेंगे, कि ये सारी कहानियाँ मनगढ़न्त हैं, तो आप को यह भी कहना चाहिये कि दो लाख हंगेरियन, जो आस्ट्रिया भाग आये, मार्ग में किसी एक स्थान पर एकत्र हुए और उन्होंने एक भयानक असत्य के प्रचार की योजना बनाई, जिसे उन्होंने अक्षरशः याद रखा। यह बात, निश्चय ही, मूर्खतापूर्ण प्रतीत होती है।

दूसरा निष्कर्ष यह, कि जब मैं सब साक्षियों का अध्ययन कर चुका और जब मैंने अपने को ए. मिचेल पामर तथा झील समिति के दृष्टान्तों से सचेत कर दिया, तब मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि सम्भवतः मैं एक जोखिम उठाने जा रहा हूँ, लेकिन यदि सचमुच मैंने यह जोखिम नहीं उठाया, तो—मेरे हंगेरियन सूचनादाताओं-द्वारा उठाये जोखिम को दृष्टिगत रखते हुए,—स्वतंत्र विश्व के नागरिकों के बीच, लज्जावश, चलने-फिरने के योग्य भी मैं नहीं रह जाऊँगा।